श्री नारायण चरितामृत

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ।।

- श्रीमद्भगवद्गीता १८:६६

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते । तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।।

- श्रीमद्भगवद्गीता ९:२२

लेखिका

प्रो० राशि अमित शर्मा

श्री ओम दरबार

नन्दाचौर धाम, जिला होशियारपुर, पंजाब ।

प्रकाशक

श्री ओम दरबार नन्दाचौर

जिला होशियारपुर, पंजाब

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस ग्रंथ के किसी भी अंग की किसी भी रूप में प्रतिकृति करना या किसी भी साधन फोटोकापी, रिकार्डिंग, इलेक्ट्रानिक या मेकैनिकल द्वारा प्रयोग करना या ग्रंथ अथवा उसके किसी भी अंश का किसी भी अन्य भाषा में अनुवाद करना धर्मार्थ पैरीटेबल ट्रस्ट श्री ओम दरबार (रजि.) की लिखित अनुमति के बिना मना है।

प्रथम हिन्दी संस्करण: 2012

मुद्रणभिकार

(श्री ओम दरबार नन्दाचौर द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित)

श्री ओम दरबार नन्द्राचौर द्वारा भारत में प्रकाशित

मुद्रक.

मूल्य: ₹ 500

योगेश प्रिंटिंग प्रेस, जालन्धर।

आभार

सर्वप्रथम मैं अपने गुरु परम बन्दनी। बापू श्री हरभगवान जी महाराज जी की नमन करते हुए उन्हें यह ग्रन्थ समर्पित करती हूँ। मेरे प्रिय गुरुदेव के पल-पल मार्गदर्शन और काशीर्वाद से ही यह कार्य सम्भव हुआ है। कलम मेरी हो सकती है, पर बलाने वाले मेरे सुरुदेव ही हैं। अक्षर भी उन्हीं के हैं और भावाभिव्यक्ति भी उन्हीं की ही हैं।

इस ग्रन्थ के लेखन-कार्य में जिन भक्तों ने मेरी सहायता की, उन सभी का में तहेदिल से धन्यवाद करती हूँ। गुरु-वन्दना की सुन्दर रचना के लिए में अम्बाला निवासी डॉ० वेदप्रकाश वेदालंकार जी की अति आभारी हूँ, जिन्होंने अति प्रभावपूर्ण ढंग से समस्त महान गुरुओं का प्रशस्ति-वाचन किया। मैं अपनी हिन्दी शिक्षिका प्रो० मुक्ता अरोड़ा जी की अति कृतज्ञ हैं जिनके मार्गदर्शन से इस ग्रन्थ की भाषा सुललित एवं भावपूर्ण बन पड़ी है।

मैं सोनीपत निवासी रेखा घुम, उनके सुपुत्र सौरभ घुघ और अमृतसर निवासी समीर बोपड़ा का भी हार्दिक धन्यवाद करती है जिन्होंने असंख्य भक्तों के चमत्कारों को मुझ तता पहुँचाने में अपना योगदान दिया। मैं जी. डी. आर स्कूल की प्रिंसीपल सरिता सूद का भी उनके अपूर्व सहयोग के लिए धन्यवाद वाररती हूँ।

मैं अपने पति एडवोकेट अमित शर्मा और माता-पिता श्रीमती (प्रो०) रवि कांता शर्मा एवं श्री (प्रो०) अमित शर्मा और श्री शशि मोहन शर्मा एवं श्रीमत शशि शर्मा की विशेष धन्यवादी हूँ जिनके अपूर्व

सहयोग में इस पन्थ का लेखन कार्य समय पर पूरा हो सका।

इस ग्रन्थ की रचना में आवश्यक तथ्य और सामग्री रेन कचि श्री आत्मा सिंह कृत 'हंस चमत्कार, दरबार महाराज 108 संत देव गिरधारी जी महाराज दीनानगर (गुरदासपुर) के ग्रन्य गुरु महिमा, अमृतसर दरबार के ग्रन्थ पं० गौरीशंकर बृजवासी कुल 'समया जीवन, संत अमर सिंह रचित ग्रन्थ आत्म-बोध माधना एक परिचय, पं० [दाकिशन विरचित संत महिमा ज्याला ज्याति और हरिपुर खालसा दरबार की पुस्तक श्री ठाकुर महिमा के फूल और विशेष सोवीनर ऋषि महिमा से ली गई है।

मैं सभी ग्रन्धकारों और सभी दरबारों का विशेष तौर पर आभार मानती हैं। इसके अतिरिक्त में बापू परिवार के समस्त भक्तों का धन्यवाद करती है जिन्होंने मुझे अपने अनुभव बता कर इस दुस्तर कार्य में योगदान दिया।

मैं पोंगेश प्रिंटिंग प्रैस के मालिक श्री श्याम लाल हांडर और उनके पुत्र श्री दीपक हांडा और चन्दन हांडा अथवा उनकी पूरी टीम सरबजीत, अगस्वीत और जय चन्द्र के प्रति आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने दिन-रात एक करके इस ग्रन्थ को इसके वर्तमान प्रारूप तक पहुँचाया।

मैं उम्मीद करती हैं कि इस सुजन से हमारे देश की संस्कृति और बौद्धिक आत्मिक तथा आध्यात्मिक सम्पदा गौरवान्वित होगी।

Ji

ग्रन्थकार

आशीर्वचन

स्वामित्रमस्ते नतलोकबन्धो ।

कारुण्यसिन्धो पतितं भवाब्धौ ।

मामुद्धरात्मीयकटाक्षदृष्टया ऋज्व्यातिकारुण्यसुधाभिवृष्टया । ।।

शिष्य अपने गुरु से प्रार्थना करता हुआ कहता है कि है गुरुदेव आप सभी भक्तों के बन्धु हैं, मैं आपको नमन करता हूँ। हे अनन्त करुणा के सिन्धु, मैं इस संसार रुपी समुद्र में गिर गया है अपनी ज्या करुणामयी दृष्टि से मेरा उद्धार कीजिए जिनसे सदैव करुणा के अमृत की कभी न समाप्त होने वाली वर्षा होती है।

गुरु में उपस्थित दया और करुणा का भाव ही शिष्य का सर्वतोमुखी कल्याण कर सकता है। ईश्वर स्वयं ही गुरु रूप में प्रकट हो मानय का उद्धार करते हैं और उसके जीवन की आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग प्रशरत करते हैं। भक्त अपने गुरु, अपने आराध्या, अपने ईश्वर को विभिन्न नामों और उपाधियों से पुकारता है। कोई उनके प्रति पितृ भाव स्वखते हुए उन्हें 'बापू कहता है ती कोई मातृ-भाव रखते हुए मॉ कह कर पुकारता है। भक्त भले ही किसी भी भाय का आश्रय ले कर अपने ईश्वर को पुकारे, यदि उसका मन पत्रिक है और उसकी पुकार में प्रभु-मिलन की प्रबल व्याकुलता है जो प्रभु तत्काल उसकी पुकार का उत्तर देते हैं।

पंजाब के जिला होशियारपुर के नन्दाचौर गाँव में परमपिता ईश्वर ने स्वयं पित भाव का अवलम्बन करते हुए बापू रूप में स्वयं को प्रकट किया सौर अपनी सान्तानों पर अवगरत अपने दिग्म आशीर्वाद की वर्षा की। परम कृपालु बापू श्री ओम नारायण जी से लेकर बापू भानुदत जी तक सभी महापुरुषी ने जिस मुख्य भाव से आवेष्टित हो कर अपने भक्तों का उद्धार किया है वह है दया का भाव। जो मनुष्य दया के मर्ग को समझ लेता है यह साधारण शारीरिक संवेदनाओं के तल से ऊपर उठ कर विचार और बुद्धि के भी जल का अतिक्रमण कर परम आनन्द के तन का स्पर्श कर और फिर उसमें विलीन होकर परम तत्व को ही प्राप्त कर लेता है।

प्रस्तुत ग्रन्थ श्री ओम नारायण चरितामृत में ईश्वर स्वरुप गुरुओं के पश्चिजीवन चरित्र और उनकी सुन्दर एवं लोक कल्याण कारक नीलाओं का सुमधुर वर्णन है। जो भी भक्त श्रद्धापूर्वक इन महान् महापुरुषों की गौरव-गाथा कर पठन-पाठन करेगा, उसकी आध्यात्मिक उन्नति में उसे अवश्य सहायता मिलेगी और बापूजी का वरदहस्त सदैव उस पर बना रहेगा।

शुभाशीष

अनुक्रमणिका

1. गुरु-वन्दना.....1

2. पुरोवाक.....14

3. अथ बापू श्री पानप देव-श्री परमहंस ठाकुर कथामृत.....27

4. अथ बापू श्री ज्वाला सिंह - कथामृतम्.....47

5. अथ बापू श्री ओम नारायण दत्त - चरितम्.....77

6. अथ बापू श्री हरनाम दास - गुणानुवादः..... 221

7. अथ बापू श्री श्रद्धाराम - उपाख्यानम्.....277

8. अथ बापू श्री गुरदास राम - संकीर्तनम्.....405

9. अथ बापू श्री भानुदत्त - प्रशस्ति वचनम्..... 469

ओम वाटिका के महकते कुमुद

1. संत श्री ठाकुर दास जी महाराज
.....523

2. संत श्री देव गिरधारी जी महाराज
.....559

3. संत श्री सन्त राम जी महाराज
.....581

4. संत गोस्वामी श्री रामलाल जी महाराज.....587

5. संत श्री देसराज जी महाराज 609

6. संत श्री सत्यप्रकाश जी महाराज
.....621

7. संत श्री बनवारी लाल जी महाराज
.....633

8. संत श्री हेमराज जी महाराज
.....639

9. संत पंडित श्री दया किशन जी महाराज.....645

10. संत श्री सुभाष जी महाराज
.....661

11. संत श्री ऋषि ठाकुर दास जी महाराज.....665

12. संत श्री अमर सिंह जी महाराज
.....693

13. संत श्री महिन्द्र सिंह जी महाराज.....703

कविताएं.....704

गुरु-वन्दना

ॐॐ

श्री नारायण चरितामृत

ॐ

गुरु-वन्दना

१.

वसन्ततिलका छन्दसि

यद्यप्यमन्दमतिमन्दिरचन्दिराणां सारस्वताऽमृतजुषां विदुषां पुरस्तात् । वैयात्यमेति लिखितं कटु मादृशानां आज्ञा तथापि महतां ह्यविचारणीया ।।

२.

भुजंगप्रयातं छन्दसि

षडंगो न वेदो ह्यधीतो जनेन निपीतोऽपि साहित्यकोशोऽपि येन । अधीता न काचित् कला कामधेनुः कथं तस्य लोके भवेन्मंगलाप्तिः ।।

३.

अनुष्टुप् छन्दसि

मंगलायतनाः सर्वे पीठाधीशाः महात्मनः। जयन्ति रससिद्धास्ते साध्याश्च समदर्शिनः ।।

श्री नारायण चरितामृत

४.

अनुष्टुप् छन्दसि

क्व ते प्रथिताः गुरवः क्वाहं बालमति र्बालः । जिह्वा जिहेति जल्पन्ती अन्वयं वक्ष्यतो मम ।।

4.

अनुष्टुप् छन्दसि

सर्वतः प्रथमं राशिः श्रद्धाभावसमन्विता । प्रणामं सांजलिबद्धं करोति स्वगुरुन् प्रति ।।

६.

अनुष्टुप् छन्दसि

'श्री ओं दरबार नन्दा चौर' पीठः नाम्ना प्रकीर्तितः । पुरा संस्थापितो ह्येषः अस्माकं पूर्वसूरिभिः ।।

७.

अनुष्टुप् छन्दसि

वेदवेदांगनिष्णातः पानपदेवस्तु नायकः। पीठं संस्थापयामास आद्याय गुरवे नमः ।।

श्री नारायण चरितामृत

८.

अनुष्टुप् छन्दसि

श्री ठाकुराः परमहंसाः नीरक्षीरविवेकिनः। दुःखं हरन्ति भक्तानां केवलं नामकीर्तनात् ।।

९.

अनुष्टुप् छन्दसि

अधिगतपरमार्थाः (श्री) ज्वालासिंहाः मनीषिणः। ज्ञानाग्निना विभूषिताः वन्द्याः नम्याश्च सर्वदा ।।

१०.

अनुष्टुप् छन्दसि

श्री ओं नारायणोदत्तः साक्षात् नारायणो भुवि। ओंकारस्य स्वरूपाय प्रणवाय नमो नमः।।

११.

अनुष्टुप् छन्दसि

हरनामो गुरुः शम्भुः सदाचारपरायणः । आर्तानां पापहरणात् हरनामा हि सार्थकः ।।

श्री नारायण चरितामृत

१२.

अनुष्टुप् छन्दसि

तीर्थं श्रद्धावताराणामाधारः करुणाम्भसाम् सेतुः सत्यधर्मस्य श्रद्धारामो विशिष्यते ।।

१३.

उपजाति छन्दसि

संसारसारस्य रहस्यवेत्ता बापू सुनाम्ना प्रथितोऽनवद्यः ।। सदाप्रसन्नः स्मितपूर्वभाषी सः मे नमस्यः गुरुदासरामः ।।

१४.

अनुष्टुप् छन्दसि

सन्ति यद्यपि सर्वत्र ग्रन्थाः शास्त्राण्यनेकशः । रमते नहि रामस्य मानसं मानसं विना ।।

१५.

वसन्ततिलका छन्दसि

गीतैश्च कीर्तनपरैः ननु दिव्यभावैः चैतन्यवत् भवति यस्य च ईशभक्तिः ।

श्री नारायण चरितामृत

आनन्दवाष्पपरिपूर्णसमाधिजातं स्वान्तः प्रधानचरितं गुरुमानतोऽस्मि ।।

१६.

मन्दाक्रान्ता छन्दसि

भानौ लोकान्तरमुपगते मुद्रिता पद्मिनीव यत् सम्पर्काद् विकचवदना भारती भारतीया। कंठेऽकुंठा न्यवसदनिशं ब्राह्मणं ब्रह्मनिष्ठं वन्दे द्वन्द्वपदकमलयोः शर्मणं भानुदेवम् ।।

१७.

उपजाति छन्दसि (वंशस्थ इन्द्रवंश मिश्रणम्)

पीठासनाधिष्ठितसाम्प्रतं यतिः विशारदः श्री हरभगवान् गुरु : । सेवां परहितं बहुमन्यमानं प्रणमामि चान्ते गुरुमन्त्रदं तम् ।।

१८.

इन्द्रवज्रा छन्दसि गायन्ति भक्ताः किलगीतकानि धन्याः वयं पीठशताब्दिवर्षे ।

श्री नारायण चरितामृत

येषान्तु सन्तः सुमहन्महान्तः तेषां समेषां प्रणताः पुरस्तात् ।।

१९.

समर्पणम् अनुष्टुप् छन्दसि अवाप्तुं सच्चिदानन्दं गुरुस्तवः प्रकीर्तितः । राशि-श्रद्धा-प्रसादोऽयं यं देवभाषा-सुवासितः ।।

इति शम् वन्दना - स्तुतिः ।

गुरु-वन्दना

('हिन्दी रुपान्तर')

(1)

जो संत निपुणमति ज्ञान मन्दिरों के प्रबल संरक्षक (दिग्गज) हैं। जो सरस्वती देवी के पुत्र हैं, अमृत का सेवन करने वाले हैं, ऐसे मेधावी विद्वानों के सामने, मेरा यह लेखन कार्य त्रुटिपूर्ण हो सकता है; तथापि महापुरुषों की आज्ञा अविचारणीय होती है अर्थात् उसमें गुण-दोष का विवेचन नहीं होता। इसी भावना से गुरुओं के स्तुति रूप इस दुस्तर कार्य को कर रही हूँ।

(2)

जिसने शिक्षा, कल्प, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष, निरूक्त इन छः वेदांगों का तथा ऋग्वेद आदि चारों वेदों का अध्ययन नहीं किया है; जिसने साहित्य के रस का पान नहीं किया है तथा जिसने कामनाओं को

पूर्ण करने वाली किसी कला का ज्ञान प्राप्त नहीं किया है, ऐसे व्यक्ति को इस लोक में कल्याण की प्राप्ति कैसे हो सकती है? अर्थात् नहीं।

(3)

इस महिमाशाली पीठ (गद्दी) पर आसीन सभी प्राचीन और नवीन

श्री नारायण चरितामृत

पीठाधीश महात्मा-संत जन अपने प्रशस्त गुणों, विद्वत्ता और चरित्र के कारण, मंगल और कल्याण के आयतन (आश्रय) हैं। उन सभी रस सिद्ध, योगी, साध्य सिद्धिप्राप्त, समदर्शी ऋषि सदृश गुरुओं की जय जयकार हो।

(4)

कहाँ तो ऐसे विश्व विख्यात वेद-पुराण इतिहास ग्रन्थों के मर्मज्ञ ब्रह्मर्षि संत गुरुजन और कहाँ हम मन्दबुद्धि बालक-भक्तजन। ऐसे महान् गुरुओं की कुलपरम्परा का और उनके उत्तम चरित्र का गुणगान करते हुए मेरी जिह्वा लज्जाशील हो रही है।

(5)

इन महान् मेधावी संत-गुरुओं के प्रति, श्रीमती राशि सर्वप्रथम श्रद्धा के भावों से परिपूर्ण हो, अपने दोनों हाथ जोड़कर गुरु-चरणों में प्रणाम करती है।

(6)

यह गद्दी' श्री ओम दरबार नन्दा चौर' इस नाम से सर्वत्र जानी जाती है। इसे सौ वर्ष पूर्व हमारे पूर्वज-आचार्यों, संतों ने जन-कल्याण के लिए स्थापित किया था।

(7)

इस गद्दी के आदि नायक श्री पानप देव जी महाराज जी थे। सम्पूर्ण शास्त्रों, वेद-वेदांगों के वे परम ज्ञाता थे। उन्होंने सर्वप्रथम इस पीठ की स्थापना की थी। उन आदि-आचार्य देव-तुल्य श्री पानप देव जी को हम सबका प्रणाम ।

(8)

इस पीठ के द्वितीय गुरु श्री ठाकुर परमहंस जी थे। वे हंस के समान सात्विक गुणों के धनी थे। नीर क्षीर विवेकी होना उनका स्वभाव था। वे सम्यक दृष्टि सम्पन्न थे। अपने नाम-कीर्तन से ही वे भक्तों के दुःखों और पापों को हर लेते थे। जैसा उनका नाम था वैसे ही उनके कार्य थे। उन्हें हमारा नमन।

(9)

इसी परम्परा में परमादरणीय सन्त श्री ज्वाला सिंह जी का नाम आता है। वे अत्यन्त मनस्वी, कर्त्तव्य परायण थे। वे ज्ञान की ज्वाला और संकल्प की अग्नि से प्रकाशित थे। परमार्थ के साधक वे गुरु हम सबके अत्यन्त वन्दनीय हैं। उन्हें हमारा नमस्कार।

(10)

इस पीठ को गति और प्रगति देने वाले प्रातः स्मरणीय गुरु श्री ओम

नारायण दत्त जी को हम हृदय से स्मरण करते हैं। वे इस भूमि पर साक्षात् नारायण का अवतार थे। परमात्मा के निज नाम ओउम् को वे अपने कर्तव्य कर्मों, सदाचरणों एवं आध्यात्मिक जीवन से सार्थक कर रहे थे। प्रवण स्वरूप उस गुरु को बारम्बार प्रणाम ।

(11)

इसी कुल-परम्परा में परम विचारक सेवाव्रती श्री हरनाम जी आते हैं। उनका नाम भक्तों के कष्टों को हर लेता था। अपने नाम के अनुरूप वे वास्तव में सबका कल्याण करते थे। अपने शास्त्र ज्ञान और सत् वृत्ति के कारण वे सर्वप्रिय थे। स्वनाम धन्य उन्हें हमारा अभिवादन ।

(12)

पूजनीय गुरु-जनों में श्री श्रद्धाराम जी विशिष्ट सन्त थे। श्रद्धा के अवतारों के वह तीर्थ थे।' श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्', वे श्रद्धा वाले भक्तों पर ज्ञान की गंगा बहा देते थे। करुणा के आधार स्तम्भ थे; सत्य और धर्म के सेतु थे। वे अपनी सर्वोत्कृष्टता के कारण सर्वोपरि हैं।

(13)

परम अभिनन्दनीय सन्त श्री गुरुदास राम जी हमारे सर्वप्रिय कर्मयोगी, ज्ञानसम्पन्न आचार्य हैं। वे इस संसार की निःसारता एवं रहस्य के तत्त्वज्ञ मनीषी हैं।' बापू' इस नाम से प्रख्यात उनका विमल चरित्र किसे

आकर्षित नहीं करता। प्रसन्नवदन, मधुर वचन उनके व्यक्तित्व के आभूषण हैं।

(14)

यद्यपि इस संसार में अनेक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ और शास्त्र उपलब्ध हैं, तथापि श्री गुरुदास राम जी का ' श्रीरामचरितमानस' के प्रति अनन्य प्रेम है। उनका मन (मानस) 'मानस' के बिना नहीं लगता।

(15)

जिन गुरुदास राम जी की ईश्वर-भक्ति चैतन्य महाप्रभु की तरह, गीतों व कीर्तनमय दिव्य भावों के द्वारा होती है। जो प्रभु में लीन होकर आनन्द की अश्रुधाराओं को बहाते हुए समाधिस्थ हो जाते हैं। ऐसे अन्तर्मुखी साधक के प्रति हम नतमस्तक हैं।

(16)

सूर्य के परलोक गमन अस्तगत होने पर, जैसे कमलिनी की शोभा कमल में बन्द हो जाती है। वैसे ही जिनके सम्पर्क में आने पर प्रसन्न वदना वाग्देवी सरस्वती की शोभा उनके कण्ठ में बन्द हो जाती है और वह सरस्वती अखण्डित रूप से हमेशा जिनके मुखकमल में निवास करने लगती है। ऐसे ब्रह्मवेत्ता एवं ब्रह्मनिष्ठ श्री भानुदेव शर्मा जी के चरणकमलों में मेरा प्रणाम।

श्री नारायण चरितामृत

(17)

आजकल इस पीठ पर श्री हरभगवान् जी विराजमान हैं। उनके नेतृत्व में यह पीठ प्रगति पथ पर अग्रसर है। सेवा और परोपकार उनके जीवन के महान् लक्ष्य हैं। अन्त में मैं गुरु-मन्त्र प्रदान कर ज्ञानान्धकार को दूर करने वाले श्री चरणों में नमस्कार करती हूँ।

(18)

सभी भक्त जन इस शताब्दी वर्ष का प्रसन्न होकर गीत गा रहे हैं। इन सिद्ध योगी महात्मा संतों की संगति पाकर हम धन्य हुए हैं। ऐसे महान् महिमाशाली सभी संतों का प्रणामपूर्वक कोटि कोटि अभिनन्दन ।

(19)

समर्पण फलश्रुति

सत् चित् आनन्द स्वरूप उस परमात्मा को पाने के लिए इन सभी गुरुजनों की स्तुति, गुणानुवाद एवं व्याख्यान किया गया है। बापू जी की भक्त श्रीमती राशि का देवभाषा संस्कृत में यह अपने गुरुओं के प्रति श्रद्धामय प्रसाद है।

इति शम्

13
पुरोवाक

ॐ

श्री नारायण चरितामृत

15

श्री नारायण चरितामृत

पुरोवाक

अनन्त ज्योति, अनन्त शक्ति, अनन्त सत्ता, अनन्त आनन्द, अनन्त तेज एवं अनन्त ब्रह्माण्ड - ये सब परिचायक हैं उस अखण्ड ज्योतिर्मय सृष्टिकर्ता के जिसे हम ब्रह्म, परम तत्त्व या ईश्वर कहते हैं। यह नक्षत्र-खचित आकाश, यह तारा-मण्डल, असीम विस्तार प्राप्त आकाश-गंगाएं और यह अखिल ब्रह्माण्ड- यह सब उस परमब्रह्म-प्रसूत सृष्टि का भौतिक प्रकटीकरण है। उसी ईश्वरीय सत्ता का साक्षात्कार ही मानव-जीवन का परम ध्येय है।

कुछ क्षण ऐसे होते हैं जब यह सांसारिक दृश्यभूमि विस्मृत हो जाती है। कुछ पल होते हैं जब व्यक्ति ब्रह्मानन्द के उस अति दुर्लभसमुद्र में पहुँच जाता है जहाँ आत्मा स्वयं तृप्त एवं सर्वशक्तिमान के

सान्निध्य में होती है। तब माया के समस्त प्रपञ्च नष्ट हो जाते हैं, इन्द्रियों का कोलाहल शान्त हो जाता है। तब केवल ईश्वर ही विद्यमान होता है।

ऐसी विशुद्ध अवस्था में पहुंचने के लिए हमें उस विराट शक्ति की16

श्री नारायण चरितामृत

पूर्ण कृपा की अति आवश्यकता होती है क्योंकि पंच-इन्द्रियों में बद्ध मानव-बुद्धि इस माया प्रधान त्रिगुणात्मक सृष्टि से पार नहीं पा सकती। ईश्वर की भुवन मोहिनी माया से मोहित जीव स्वयं को दीन-हीन समझ कर दुःख प्राप्त करता है। अपनी चेतना को उस परम चैतन्य के साथ समग्रता से एक करने की बजाय वह उसे केवल अपने शारीरिक पिंड के साथ जोड़ देता है। वह भूल जाता है कि उसके भीतर अक्षय आनन्द की वह निधि है, वह स्रोत है जिसके सम्मुख इस भौतिक संसार की प्रत्येक वस्तु निस्तेज है। सृष्टि के प्रारम्भ से ही सच्चिदानन्द ईश्वर ने मानव को सम्यक ज्ञान प्रदान करने हेतु ईश्वरकोटि जीवन्मुक्त महान् आत्माओं को समय-समय पर पृथ्वी पर भेजा है।

सर्वप्रथम महान् वैदिक वाणी के माध्यम से जन-साधारण में यह भाव संचारित किया गया कि जीव और ब्रह्म मूलतः एक हैं। प्राणी अपने गुरु निर्दिष्ट मार्ग का अनुसरण कर उस परम आत्मा के साथ एकत्व का अनुभव कर सकता है। महान् मन्त्र द्रष्टा ऋषियों नें सृष्टि के रहस्यों को अनावृत्त करने वाले मन्त्रों को ग्रहण कर उन्हें जन-कल्याण हेतु प्रकट किया। उस समय सतियुग में सात्विक गुणों के आधिक्य से व्यक्ति उन सूक्ष्म से सूक्ष्म रहस्यों को भी सरलतापूर्वक समझ कर अपने जीवन में कार्यान्वित कर लेता था। धीरे-धीरे बदलते युग के साथ-साथ काल-क्रम से मानव की सात्विक वृत्तियां विलुप्त होने लगी और उसका मन, चित्त एवं हृदय तामसिक भावों को प्रश्रय देने लगा।

श्री नारायण चरितामृत

कलियुग में मानव-बुद्धि समस्त विकारों से घिरी रहने के कारण तमसाच्छादित है। ऐसे में वह गूढ़ आध्यात्मिक रहस्यों को समझने में असमर्थ है। परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि कलियुग में जीव के कल्याण का कोई उपाय नहीं है। काल-चक्र की गति को देखें तो पता चलता है कि ऐसा कोई युग नहीं, कोई समय नहीं जब अवतारी महापुरुषों ने मानव जाति के कल्याणार्थ अमूल्य आध्यात्मिक पूंजी

की कुंजी सुपात्रों को न दी हो। वैसे तो ईश्वरकोटि महापुरुष प्रत्येक काल-खण्ड में उस समय की परिस्थितियों और आवश्यकतानुरूप प्रकट होते हैं और जीवों का उद्धार करतें हैं। परन्तु फिर भी विश्व में अन्य स्थानों की अपेक्षा भारतवर्ष की पवित्र भूमि पर ईश्वर की विशेष कृपा है कि सृष्टि के प्रारम्भ से ही पुण्य आत्माओं ने आर्यावर्त को अपनी तपोस्थली, कर्मस्थली और लीलास्थली चुना है।

अनन्त काल से ही यह पावन धरा ईश-प्रेमी मुमुक्षजनों की तपोस्थली रही है। महान् ऋषियों, मुनियों एवं योगियों द्वारा पवित्र किए गए साधना-स्थलों से निकले आध्यात्मिक स्पन्दन आज भी समूचे ब्रह्माण्ड को आप्लावित कर रहे हैं। ये साधना-स्थल उन प्रखर दीप-स्तम्भों के समान हैं जो अज्ञान तिमिर में भटकते लोगों को सही राह दिखाते हैं। आत्मज्ञान युक्त संत साक्षात् ईश्वर ही होते हैं जो अपनी अनन्त करुणा, शाश्वत प्रेम, असीम कृपा और अनिर्वचनीय दया-भावना से सम्पूर्ण सृष्टि के कल्याण हेतु प्रयासरत रहते हैं। दुःख व

पीड़ा से आतुर मनुष्य का मर्मस्पर्शी आर्तनाद जब कोमल हृदयी संतों तक पहुँचता है तब वे लोक-कल्याण के लिए अवश्य प्रकट होते हैं।

ऐसी दिव्य आत्माएं माया के समस्त बन्धनों से पूर्णतया मुक्त होती हैं।

उनका भौतिक शरीर धारण करना होता है तो केवल जन-कल्याण के लिए। कभी वह ब्रह्म-रश्मि त्रेता युग में राम रूप में अवतरित होती है और मानव को मर्यादा का पाठ पढ़ाती है तो कभी द्वापर में कृष्ण बन 'गीता' का दिव्य ज्ञान प्रदान कर उसे स्वयं से परिचित करवाती है। कभी कलियुग में बुद्ध बन अपने करुण हृदय से समूची मानव जाति को भिगो डालती है, तो कभी महावीर बन अहिंसा के महाव्रत का उपदेश देती है। कभी शंकराचार्य बन अपने अद्भुत ज्ञान से तीनों लोकों को चमत्कृत करती है तो कभी चैतन्य महाप्रभु के रूप में भक्ति-रस की सुधा का पान करा देती है।

कभी वह रश्मि हिमालय के उत्तंग शिखरों पर हिम-धवल पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य बसे सिद्ध-आश्रमों में रहने वाले महान् योगियों के रूप भावी पीढ़ियों के कल्याणार्थ ज्ञान-विज्ञान को संचित रखती है तो कभी वह ब्रह्म-तेज संत कबीर, गुरु नानक देव, गुरु रविदास, समर्थ गुरु रामदास, संत तुलसीदास, संत ज्ञानेश्वर, संत सूरदास, मीरा, बाबा फरीद, बुल्लेशाह, संत दादू, संत नामदेव, सांई बाबा, रामकृष्ण-परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, त्रैलंग स्वामी, बाबा जी, लाहिड़ी महाशय और स्वामी योगानन्द के रूप में ज्ञान और भक्ति की संजीवनी का पान

करवा जीव को बन्धन मुक्त कर देता है।

इन महागुरुओं की श्रेणी में ही कुछ ऐसे अलौकिक योगी, तपस्वी और महाज्ञानी महात्मन् हुए हैं जो चुप-चाप निर्विकार भाव से निष्काम कर्मयोगी बन मानव-कल्याण हेतु निरन्तर कार्यशील रहे हैं। उनके अंतरंग भक्त-समुदाय के अतिरिक्त अन्य जन-साधारण उनके विषय में अधिक नहीं जानता परन्तु इससे उनकी निःस्वार्थ साधना का महत्व कुछ भी कम नहीं होता। ये वो महान्-आत्माएं हैं जो सतियुग से लेकर कलियुग तक प्रत्येक युग में क्रियाशील रहती हैं और ईश्वरीय सत्ता के ऐश्वर्य को समय-समय पर प्रकट करती रहती हैं। उनका देह-धारण करना होता है तो केवल जन-कल्याण के लिए।

स्वयं माया जनित बन्धनों से मुक्त होने के बावजूद उनका करुणा भाव उन्हें अज्ञान-निद्रा में सुषुप्त मानवों का उद्धार करने हेतु प्रकट होने पर विवश कर देता है। ऐसी ही एक ब्रह्म-ज्योति पंजाब के जिला होशियारपुर के नन्दाचौर ग्राम में श्री प्रभु दयाल और श्रीमती गुलाब देवी के घर श्री ओम नारायण दत्त के रूप में प्रकट हुई। उस अत्यन्त दयावान, करुणावान दिव्य सत्ता ने उस प्रखर ब्रह्म-ज्योति का दर्शन अपने शिष्य श्री हरनाम दास जी को कराया और वहाँ से यह ब्रह्म-दीप्ति बापू श्रद्धाराम, बापू गुरदास और बापू भानुदत्त जी में हस्तांतरित हुई।

प्रस्तुत ग्रन्थ नन्दाचौर धाम के इन महागुरुओं की गाथा को शब्द-चित्रों के माध्यम से जनता के कल्याण एवं मार्गदर्शन हेतु रखने का प्रयास है। विशेष तौर पर आज की युवा पीढ़ी जो पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त कर संशय, अविश्वास, और झूठे तर्क के भंवर में फंस कर श्रद्धाहीन हो दिग्भ्रमित हो रही है, उनके लिए ऐसे

महान् गुरुओं की जीवन-गाथा और चमत्कार उनके जीवन को सही दिशा प्रदान कर सकते हैं। आज का मनुष्य उर्ध्व चेतना प्राप्त संयमित प्राणी नहीं है। वह शास्त्र-लिखित तथ्यों को समझने लायक आवश्यक जीवन प्रणाली का अवलम्बन नहीं करता। ऐसी दशा में उस की समझ एवं चेतना का स्तर सिर्फ दैहिक ही रह जाता है। इसका कारण उसकी पाश्चात्य चिंतन पद्धति भी है जो उसे दृश्य जगत की सीमा से बाहर जाने नहीं देती।

पाश्चात्य विज्ञान जो सृष्टि के रहस्यों को भेदने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रयोग करता है, सृष्टि के मूल कारण का निराकरण करने में अब तक असफल रहा है। इसका कारण यह है कि जड़-विज्ञान की सीमा केवल जड़ पदार्थों के विश्लेषण से शुरू हो उससे प्राप्त निष्कर्षों पर समाप्त हो जाती है। विज्ञान के निष्कर्ष किसी चैतन्यमय शक्ति के होने का संकेत तो देते हैं परन्तु उसकी ठीक-ठीक अभिव्यक्ति नहीं कर पाते। पूर्व का विज्ञान केवल जड़ पदार्थों का ही नहीं अपितु मानव मन का भी विश्लेषण करता है। मन, बुद्धि, चित्त, वृत्ति, अहंकार आदि का अध्ययन कर वह यह दर्शाने का प्रयास करता है कि मनुष्य न तो

पंच-इन्द्रियों से आबद्ध देह है, और न ही मन के संकल्पों-विकल्पों का दास है। वह जो है उसे समझने और समझाने के लिए आत्मज्ञानी गुरुओं की विशेष आवश्यकता है। ऐसे महान् पुरुषों के सान्निध्य से हृदय के विकार एक-एक कर नष्ट होने लगते हैं। माया का सम्मोहन टूटने लगता है और मानवीय दुर्बलताएं चारित्रिक दृढ़ता और सबलताओं में परिवर्तित हो जाती हैं।

उक्त महापुरुषों के जीवन-चरित्र की चर्चा मात्र से ही किसी के भी जीवन में आमूलचूल परिवर्तन आ सकता है। उनकी मधुर गाथाओं का श्रवण, पठन, मनन तथा अनुकरण प्रत्येक दशा में हितकारी ही होता है। मानव सदैव के लिए इन सन्तों का ऋणी ही रहता है क्योंकि वह मनुष्य का यह भ्रम कि वह धूलिकण के समान है, अबोध है, दीन है, असहाय है, असमर्थ या अशक्त है- सदैव के लिए धूलधूसरित कर देते हैं। वह मनुष्य को केवल मौखिक या लिखित रूप में नहीं वरन् प्रत्यक्ष रूप में इस सत्य का ज्ञान कराते हैं कि उसमें और ईश्वर में कोई भेद नहीं और यह भी कि अनुभूति ही अन्तिम सत्य है। आदि शंकराचार्य ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'विवेकचूड़ामणि' में तीन प्रकार के अनुग्रहों की बात कही है। वह कहते हैं-

दुर्लभं त्रयमेवैतद्देवानुग्रहहेतुकम् । मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुषसंश्रयः ।।

अर्थात् केवल ईश्वर की कृपा से ही हमें तीन दुर्लभ लाभ प्राप्त हो सकते हैं- मानव जन्म, मुक्ति की इच्छा और महापुरुषों का शिष्यत्व। इसमें कोई संशय नहीं कि मानव जन्म मिलना अति दुर्लभ है। उस पर पवित्र एवम् आध्यात्मिक जीवन और मुक्ति की इच्छा होना और भी कठिन है और सबसे अधिक कठिन है- एक ऐसे पूर्ण ब्रह्मज्ञानी तत्त्वदर्शी गुरु का मिलना जो मनुष्य को सभी मायाजनित स्वप्नों से परे अनन्तता के साम्राज्य में ले जा सके, अज्ञान और अन्धकार के महासागर से पार ज्ञान के प्रकाश और शाश्वत जीवन में ले जा सके। गुरु की महिमा के विषय में कहा गया है-

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानांजन श्लाकयाः चक्षुरून्मीलितम् येन तस्मै श्रीगुरवे नमः

अर्थात् जो ज्ञान रूपी अंजन से अज्ञान रूपी अंधकार को दूर कर चक्षुओं को खोलता है ऐसे गुरु को हम नमस्कार करते हैं।

गु का अर्थ है- अंधकार और रु का अर्थ है- फाड़ना। जो शिष्य के अज्ञान रूपी अंधकार को फाड़ कर नष्ट कर देता है वह गुरु है। गुरु की महिमा अनन्त है। गुरु शिष्य को गर्भ में रख कर निष्काम भाव से उसकी रक्षा करता है, माता के समान उसका पोषण करता है, सृजन करता है। शिष्य भी मानो उसी गुरु का अभिन्न अंग बन जाता है। उसी

में रच-बस जाता है। समय आने पर जिस प्रकार माता एक नए जीव को जन्म देती है उसी प्रकार गुरु भी लोक-कल्याण की भावना से शिष्य को तैयार कर उसे विश्व को अर्पित कर देता है। इसलिए गुरु का स्थान ब्रह्मा, विष्णु और महेश सदृश ही नहीं वरन् इनसे भी उपर बताया गया है।

गुरु की कृपा, उनकी करुणा, उनका प्रेम अथाह, अनन्त और अनवरत उनके शिष्यों पर मूसलाधार वर्षा के समान गिरता है। जो गुरु अपने शिष्य का भार ग्रहण करते हैं वे प्रत्येक घड़ी में, प्रतिपल भले या बुरे, पुण्य या पाप, जीवन या मृत्यु, सुख या दुःख में उनके साथ रह उनकी रक्षा करते हैं। अध्यात्म का पथ अति दुर्गम और लगभग अनन्त लम्बा है। प्राचीन ऋषियों की वाणी इस पथ पर चलने का आदर्श सामने रखने के साथ-साथ एक चेतावनी भी देती है। कठोपनिषद में ऋषि की वाणी कहती है-

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्त वरान्निबोधत ।

क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया, दुर्ग पथस्तत्करयो वदन्ति ।।

अर्थात् उठो, जागो और जाग्रत महात्माओं से आत्मज्ञान प्राप्त करो। यह मार्ग एक तलवार की धार पर चलने के समान है। भले ही यह पथ

कितनी भी कठिनाईयों से क्यों न भरा हो, गुरु का प्रेम और मार्गदर्शन भक्त की समस्त बाधाओं को नष्ट कर देता है। एक साधारण मानव जीवन को भगवद्चैतन्य में परिवर्तित करने में गुरु प्राणपण से चेष्टा करते हैं। गुरु का प्रेम फूल की कोमलता से भी अधिक कोमल होता है। गुरु की दया शिष्य के प्रत्येक कष्ट का निवारण कर देती है। गुरु की दृष्टि शिष्य के प्रत्येक विचार, प्रत्येक संकल्प और प्रत्येक कार्य पर होती है।

आत्म-साक्षात्कार का पथ कांटों से भरा है। पग-पग पर अत्यन्त विचलित कर देने वाले अनुभव और परीक्षाएँ कभी-कभी शिष्य को कमज़ोर बना देती हैं। आत्मज्ञान के उच्चतम शिखर को स्पर्श करने से पूर्व शिष्य को बहुत बार अपने शरीर का त्याग भी करना पड़ता है। कई जन्म भी लेने पड़ते हैं परन्तु इन

सबके बीच गुरु सदैव अपने शिष्य के अंग संग रह कर उसे उस सर्वोच्च उपलब्धि हेतु तैयार करते हैं। कई बार अपने अकाट्य प्रतीत होने वाले कर्म-बन्धनों में बंधा शिष्य अवसाद और घोर निराशा के कुहरे में फंस जाता है। ऐसे अवसर पर गुरु जो अपने शिष्य के पूर्व-जन्मों और भविष्य में होने वाले जन्मों का पूर्ण ज्ञान रखते हैं, उसे जीवन-समर में विजयी होने का मार्ग दिखा ही देते हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ 'श्री नारायण चरितामृत' में ऐसे महान् गुरुओं का वर्णन है जिन्होंने अपने शिष्यों और भक्तों के उद्धार के लिए

श्री नारायण चरितामृत

अकल्पनीय सुन्दर लीलाएं की और उनके संकटों और कष्टों का निवारण कर न केवल उन्हें उनसे उबारा अपितु उनकी आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग भी प्रशस्त किया। इस ग्रन्थ को दो चरणों में विभाजित किया गया है। प्रथम चरण के नौ अध्यायों में श्री पानप देव जी महाराज, परमहंस ठाकुर जी महाराज, बापू ज्वाला सिंह जी महाराज,बापू ॐ नारायण दत्त जी महाराज,बापू हरनाम जी महाराज,बापू श्रद्धाराम जी महाराज,बापू गुरदास राम जी महाराज और बापू भानुदत्त जी महाराज जी की उज्ज्वल गौरव-गाथा का वर्णन किया गया है। इसके बाद ग्रन्थ के द्वितीय चरण 'ओम वाटिका के महकते कुमुद' में बापू ओम जी, बापू हरनाम जी और बापू श्रद्धाराम जी की उस महान् शिष्यावली का वर्णन है जिन्होंने अपने नारायण स्वरूप गुरुओं से ज्ञान प्राप्त कर उस ज्ञान से जन-कल्याण किया। युग-युगांतर से चली आ रही गुरु-शिष्य परम्परा से किस प्रकार इन ओम रूपी मणि-माला की सिद्ध मणियों ने अपने ज्ञानाप्रकाश से समूचे ब्रह्माण्ड का कल्याण किया है, इसका सम्पूर्ण विवरण इस ग्रन्थ में किया गया है।

इस ग्रन्थ के पाठन से यदि भक्तों को अपने आध्यात्मिक विकास में कुछ भी सहायता मिले तो वे इसे श्री नारायण जी का आशीर्वाद ही समझें। ईश्वर स्वरूप महागुरुओं की अति पवित्र लीलाओं का वर्णन करना तो साक्षात् ब्रह्मा जी के लिए भी सम्भव नहीं है तो फिर एक अति साधारण बुद्धि वाले मनुष्य की तो बात ही क्या। यदि लेखन-कार्य में

कुछ त्रुटियां रह गई हों तो उनके लिए मैं करबद्ध हो कर क्षमाप्रार्थी हूँ।

इसके साथ ही समस्त विश्व के महाकल्याण की भावना रखते हुए मैं ईश्वर से यही प्रार्थना करती हूँ-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः । सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुखभाग्भवेत् ।।

बापूपदाश्रित राशि अमित शर्मा

।। हरि ॐ ।।

ॐ

अथ श्री पानप देव -श्री परमहंस ठाकुर कथामृत

28

श्री नारायण चरितामृत

ॐ

अथ श्री पानप देव-परमहंस श्री ठाकुर जी महाराज

कथामृत

भगवान कृष्ण का यह दिव्य उद्घोष कि-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।

अर्थात् जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब मैं ही अपने रूप को रचता हूँ अर्थात् साकाररूप से लोगों के सम्मुख प्रकट होता हूँ।

सृष्टि के आरम्भ से ही ईश्वर धर्म के उत्थान और अधर्म की समाप्ति के लिए समय-समय पर अवतार लेते आए हैं। उनके कुछ अवतार आवेशावतार होते हैं जिनका उद्देश्य किसी विशेष कार्य की सिद्धि करना होता है। उदाहरण के लिए नृसिंह अवतार, कच्छप अवतार, वराह अवतार आदि। नृसिंह अवतार का उद्देश्य प्रह्लाद के जीवन की रक्षा के साथ-साथ हिरण्यकश्यपु जैसे अत्याचारी दानव का

अन्त करना भी था। उसी प्रकार कच्छप अवतार समुद्र मन्थन के समय हुआ था जिसमें भगवान विष्णु ने कच्छप रूप में मन्दराचल पर्वत का भार वहन कर समुद्र मन्थन के कार्य में सहयोग दिया था। वराह अवतार समुद्र में डूबी पृथ्वी को बाहर निकाल कर उसका उद्धार करने के लिए हुआ था। भगवान् के कुछ अवतार क्षत्रिय कुल में हुए हैं जिनसे सारा जगत भली-भांति परिचित है। भगवान् राम और भगवान् कृष्ण ने सूर्यवंश और चन्द्रवंश में जन्म ले कर मानव को मर्यादा पालन के साथ-साथ आततायियों का सामना करना भी सिखाया।

भगवान् ने प्रत्येक युग की आवश्यकता अनुसार संतो के रूप में जन्म लेकर मानव जाति का अतिशय उपकार किया है। ऋषि दत्तात्रेय, नर-नारायण और कपिल मुनि के रूप में जन्म ले कर ईश्वर ने मानव को ज्ञान का अनुपम उपहार दिया है। इसके अतिरिक्त और भी असंख्य महान् आत्माओं के रूप में भगवान ने समय-समय पर स्वयं को अभिव्यक्त किया है। इन्हीं में से एक नाम है श्री श्री 108 ठाकुर जी महाराज जी का जो सतियुग से कलियुग तक विभिन्न स्थानों पर प्रकट हो कर अखण्ड, उग्र और अजस्र तपस्या में लीन रहे हैं। समय-समय पर अपने भक्तों के हितार्थ प्रकट होकर उनका कल्याण करने वाले श्री ठाकुर जी महाराज संवत् 1830 वि॰ में ग्राम नरवड़ जिला लाहौर

नोट- पाठकगण श्री पानप देव जी महाराज और परमहंस श्री ठाकुर जी महाराज जी की सम्पूर्ण लीलाओं के लिए 'पानप बोध', रैन कवि श्री आत्मा सिंह कृत 'हंस चमत्कार' और संत पं॰ दया किशन जी विरचित 'संत महिमा ज्वाला ज्योति' का अध्ययन कर सकते हैं।

(पाकिस्तान) में 12 वर्ष की बाल्यावस्था में अवतरित हुए। कोई भी लेखनी या वाणी उनकी महिमा का गुणगान करने में समर्थ नहीं है। ज्ञानियों में अग्रगण्य भगवान शेषनाग भी अपने सहस्रों मुखों से उनका गौरव-गान करने लायक शब्द नहीं ढूँढ सकते। ऐसे परम कृपालु श्री ठाकुर जी महाराज जी ने कितनी बार स्वेच्छा से देह धारण कर मानव का उपकार किया है इसकी गणना करना भी असम्भव है।

परमहंस बापू ठाकुर जी के अवतरण के विषय में प्रामाणिक पत्र धामपुर नगर (बिजनौर) में स्थित गुरुद्वारा पानपदासी में उपलब्ध है। बापू ठाकुर जी संत पानप देव जी का ही अवतार रूप थे जो सं० 1776 वि० में अवतरित हुए। उत्तर-प्रदेश के जिला बिजनौर के धामपुर नगर में संत पानप देव जी ने अनेक लीलाएं रची। वे तेजस्वी और निर्भीक संत थे। उन्होंने एक कबीर-पंथी संत मग्नीराम जी को गुरु रूप में धारण किया और आत्मज्ञान प्राप्त किया। उस समय समाज में प्रचलित रूढ़ियों का विरोध कर उन्होंने हिन्दू, मुसलमान, सिख एवं जैन सभी को एक होने का उपदेश दिया। उनकी वाणी ब्रह्मवाणी थी। उनके भक्तों ने उनके प्रवचनों का संकलन लिखित रूप में किया। बाद में उस वाणी को नाम स्तोत्र, ज्ञान सुखमति, नाम लीला, गगन डोरी, प्रेम-रत्नी, सोहला आदि अंगो (खण्डों) में विभाजित किया गया।

सं० 1830 विश् फाल्गुन कृष्णा सप्तमी को श्री पानप देव जी ने

श्री नारायण चरितामृत

महासमाधि ली। अन्तिम समय में उनके कुछ श्रद्धालु शिष्यों ने प्रार्थना की, "महाराज साहिब, आप परलोक सिधार रहे हैं, हमें भी अपने साथ ले चलिए। हम आपके बिना नहीं रह सकते।" इस पर महाराज जी बोल, "हम कहीं नहीं जा रहे हैं। हम तो चोला मात्र बदल रहे हैं। हम पंजाब के माझा क्षेत्र में 12 वर्ष की अवस्था में प्रकट होंगे और परमहंस ठाकुर जी के नाम से जाने जायेंगे। आप जब चाहें हमसे मिल सकते हैं। हमारा ग्रन्थ भी अपने साथ लेते आना। आपका हमसे अवश्य मिलन होगा।"

अपनी भविष्यवाणी के अनुसार ही सन्त पानप देव जी सं० 1830 वि॰ में ग्राम नरवड़ जिला लाहौर में 12 वर्ष की बाल अवस्था में परमहंस ठाकुर जी के रूप में प्रकट हुए। उनका मुखमण्डल दिव्य आभा से युक्त था जो किसी के भी मन को अपनी ओर आकर्षित करने की क्षमता रखता था। ठाकुर जी चरण पादुका पहनते थे और हाथों में चिमटा धारण करते थे। विभिन्न धर्मों के लोगों ने अपनी-अपनी भावना के अनुरूप ही अपने-अपने इष्ट देवों के ठाकुर जी के स्वरूप में दर्शन किए थे। कभी आप में दशम पातशाह गुरु गोबिन्द सिंह जी के स्वरूप के दर्शन हुए तो कभी भगवान् शिव के। किसी ने आपको गोरखनाथ और श्रीचन्द का अवतार माना तो किसी ने आपमें भगवान् कृष्ण और सनत कुमार के दर्शन किए। ठाकुर जी सर्वशक्तिमान् थे, सर्वव्यापी थे। कभी भक्तों को उनके दर्शन जटा जूटधारी संत के रूप में होते तो कभी

वह हिमालय की बर्फानी चोटियों की कन्दराओं में देखे गए तो कभी नर्मदा नदी के किनारे और कभी तुर्की देश की राजधानी अस्तम्बोल नगर में। एक ही समय में विभिन्न स्थानों पर भक्तों ने आपके दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त किया था।

संत ठाकुर जी के श्रद्धालु शिष्यों मे सरदार श्याम सिंह अटारी वालों का नाम सर्वोपरी है। ये महाराजा रणजीत सिंह जी के खास मुशीर थे। ठाकुर जी ने महाराजा रणजीत सिंह को दशम पातशाह श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी के स्वरूप में दर्शन दिए थे। इसका उल्लेख महाराजा रणजीत सिंह जी ने अपने 'रोजनामचे' में किया है। संत ठाकुर जी ने कितने ही चमत्कारों से अपने भक्तों को निहाल किया। कवि रैन कृत 'हंस चमत्कार' और संत हरभजन सिंह कृत 'हंस सरोवर' में इन चमत्कारों और घटनाओं का विस्तार से उल्लेख मिलता है।

एक बार जब उनके भक्त साधांवाली डेरे का निर्माण-कार्य करवा रहे थे तब मंदिर की नींव की खुदाई करते समय वहाँ से एक पक्का आसन, चरण-पादुकायें, तूंबी, वरागन, चिमटा, विभूति आदि अनेक

वस्तुएं भक्तों को मिली। ठाकुर जी ने बताया कि इस पवित्र * स्थली पर उन्होंने जनक रूप में सतियुग में साधना की थी। बाद में उस पक्के आसन वाले पवित्र स्थान पर ही मन्दिर का निर्माण किया गया। कहा जाता है कि स्वर्ग से देवताओं ने भी आविर्भूत हो कर मन्दिर की

दीवार के तीन रद्दों की चिनाई की और कार सेवा के रूप में सक्रिय योगदान दिया। साधांवाली मन्दिर के निर्माण के बाद ठाकुर जी उसमें निवास करने लगे। वे रात भर गुफा में साधना-उपासना में लीन रहते और प्रातः काल संगत को दर्शन देते थे। एक प्रातः भक्त-जन उनके दर्शनार्थ एकत्र हुए परन्तु ठाकुर जी गुफा से बाहर नहीं निकले। सत्संगी किसी भावी आशंका से चिन्तित हो उठे। उन्होंने गुफा के भीतर से आती हुई विचित्र ध्वनि सुनी। गुफा के अन्दर से त्राहिमाम्-त्राहिमाम्, रक्षमाम्-रक्षमाम् की ध्वनि आ रही थी। यह ध्वनि सुन कर भक्तजन घबरा उठे। थोड़ी देर में जब उन्होंने कुर्बान-कुर्बान की ध्वनि सुनी तो उनकी जान में जान आई।

ठाकुर जी के आने में बहुत देर होती देख कर संगत ने बाबा मानसिंह से प्रार्थना की कि वे कृपया वास्तविकता का पता लगायें। बाबा मानसिंह ने एक झरोखे से गुफा में देखा कि ठाकुर जी वीर आसन में अपने स्थान पर विराजमान हैं। उनके सामने ब्रह्मा, विष्णु और महेश ने अपने आसन ग्रहण किए हैं। त्रिदेवों और ठाकुर जी के तेज से वह गुफा प्रकाशित हो रही है। बाबा मानसिंह यह अद्भुत एवं दिव्य दृश्य देख कर अति आनन्दित हुए, तभी ठाकुर जी ने गुफा से बाहर आकर उपस्थित संगत को दर्शन प्रदान किये। बाबा मानसिंह के यह पूछने पर कि आपको गुफा में किस कारण विलम्ब हो गया, ठाकुर जी ने मधुर वाणी में कहा, "आज गुफा में ब्रह्मा, विष्णु और महेश त्रिदेव पधारे थे।

उनकी सत्संगति में बैठे रहे। आनन्द रहा।" भक्तों ने पूछा कि ठाकुर जी ने गुफा मे जिन शब्दों का उच्चारण किया था उसका अभिप्राय क्या था? ठाकुर जी ने फरमाया कि जब त्रिदेवों ने पूछा कि अब कैसा समय आने वाला है तो हमने कहा, "अन्धेर-अन्धेर" दुनिया घोर पापों से भर जायेगी। तब त्रिदेवों ने प्रार्थना की, "त्राहिमाम्-त्राहिमाम्, रक्षमाम्-रक्षमाम्।" इस पर ठाकुर जी ने उन्हें बताया कि इसके

बाद सतियुग आयेगा। सभी ओर सुख-शान्ति और आनन्द छा जायेगा। इस पर देवों ने कहा, कुर्बान-कुर्बान। इस घटना से संगत को ठाकुर जी की दिव्य शक्ति का ज्ञान हुआ और उनकी दिव्य वाणी सुन कर सभी निहाल हो गए।

महान् ऋषि अष्टावक्र के सदृश क्षण भर में ब्रह्म-ज्ञान करा देने में समर्थ श्री ठाकुर जी 61 वर्ष की अवस्था तक भी 12 वर्षीय बालक के रूप में ही रहे और अपने भक्तों को अलौकिक लीलाएं दिखा कर आनन्दित करते रहे। सरदार मानसिंह को राजा जनक की तरह घोड़े की रकाब पर पाँव रखते ही ब्रह्म-ज्ञान करवा ईश्वरीय ज्योति की ऐसी झलक दिखाई कि मानसिंह धड़ाम से भूमि पर गिर पड़े और उनकी समाधि लग गई। लगातार आठ दिन समाधि की स्थिति में रहने के बाद नवें दिन ठाकुर जी ने उनका स्पर्श किया तो उनकी समाधि टूटी। ठाकुर जी ने पूछा कि मय-ए-हक पीने की और इच्छा हो तो कहो। इस पर मानसिंह बोले बस जी बस, इससे अधिक सहन होना कठिन है। आपने

तो मुझे धका दिया है। वे जीवन भर इसी मस्ती में जिये और ठाकुर जी की अनन्य भक्ति की।

ठाकुर जी ने कई ऐसे अहंकारी व्यक्तियों का अहंकार भंग किया जिन्होंने साधारण बालक समझ कर उनका अनादर किया। एक बार महाराजा रणजीत सिंह ठाकुर जी की सेवा में आए। उनके साथ कुछ अहलकार और एक वयोवृद्ध संन्यासी भी थे। उस संन्यासी को जब यह पता चला कि ठाकुर जी मात्र 12 वर्ष की आयु के बालक हैं तब उसका अहंकार जाग्रत हो उठा और उसने महाराजा से कहा कि आप चलिए, मैं शौचादि से निवृत्त हो कर आ जाऊँगा। उसने सोचा कि वह जब अकेला साधांवाली डेरे पर जाएगा तब महाराजा रणजीत सिंह उठकर उसका स्वागत करेंगे। तब ठाकुर जी को भी विवश हो कर उनका अभिवादन-सत्कार करना पड़ेगा और वह एक बाल-संन्यासी के समक्ष नतमस्तक होने से बच जाएंगे।

अपनी योजनानुरूप वह संन्यासी ठाकुर जी के डेरे पर चले तो गए परन्तु जैसा उन्होंने सोचा था वैसा कुछ नही हुआ। महाराजा रणजीत सिंह जब उसके स्वागत के लिए उठने लगे तो ठाकुर जी ने उनका हाथ पकड़ कर कहा, "रणजीत सिंह बैठो, उठते क्यों हो? यह संन्यासी अहंकारी है। हम अभी सबके सामने इसका अहंकार चूर-चूर किये देते हैं।" संन्यासी ने इन वचनों को सुन लिया और क्रोधित हो

कर बोला, "स्वामी जी, आप की उम्र कितनी है?" ठाकुर जी ने कहा, "हमसे हमारी आयु क्यों पूछ रहे हो? लो हम बताते हैं, हमारी आयु कितनी है।" उन्होंने कहा -

हम से पूछे बावरे क्या उम्र तुम्हारी। अरे हम बालक मासूम हैं, खेले युग चारी ।। कोटन बिशन भये, दस कोट कन्हैया। सप्त कोट शम्भू गये, हमारी एक पल्लिया ।। अवरुद्ध घोर ब्रह्मा भये, मुहम्मद चार यारी। देवता गिनती नही, सृष्टि क्या बिचारी ।। हम सदा सदा मौजूद हैं निराहार निराकारी ।।

ठाकुर जी का उत्तर सुन कर संन्यासी ने लज्जा अनुभव की परन्तु अपना पक्ष ऊँचा रखने के प्रयास में उन्होंने दूसरा प्रश्न कर दिया। संन्यासी ने पूछा, "स्वामी जी, आप कहाँ रहते हैं?" ठाकुर जी ने कहा, "अभी बताते हैं।" उनके हाथ में एक छड़ी थी। उन्होंने उस छड़ी को अपने सिर के ऊपर वाले सिरे पर किया तो उसमें से जल की एक बूँद झलकने लगी जिसको महाराजा व अन्य भक्तों ने तो सामान्य रूप में देखा परन्तु जब संन्यासी जी की दृष्टि जल की उस बूँद पर पड़ी तो वह मूर्छित हो गए। लगभग दो घंटे तक वह मूर्छित पड़े रहे। तब महाराजा ने ठाकुर जी से विनती की कि आप दयालु हैं, कृपा सिन्धु हैं, आप

संन्यासी जी पर दया कर इन्हें क्षमा करें। ठाकुर जी ने उत्तर दिया, "देखो रणजीत सिंह, हम जिन सागरों मे रहते हैं, उनका जल हमने इस एक बूँद में समा दिया है। यह संन्यासी इसकी एक झलक

देखते ही बेहोश हो गए और यह हमसे हमारे रहने का स्थान और उम्र पूछते हैं। यह अहंकारी संन्यासी दया के योग्य नहीं। हमें इनका अहं चूर-चूर करना है।" महाराजा ने पुनः ठाकुर जी के चरणो में प्रार्थना की कि महाराजा साहिब हमसे भूलें होती हैं, गलतियां होती हैं, आप हमारे अपराध को क्षमा करने वाले हैं। आप इन्हें क्षमा करें।

ठाकुर जी ने महाराजा की विनती स्वीकार कर अपनी अंजलि में जल लेकर संन्यासी के शरीर पर उसका छींटा दिया। जल का स्पर्श करते ही संन्यासी जी में चेतना लौट आई और उसने हृदय से ठाकुर जी से क्षमा-याचना करते हुए कहा, “ठाकुर जी आप धन्य हैं, आप मेरे अपराधों को क्षमा करने की कृपा करें, मुझसे बड़ी भूल हुई, मुझे अहंकार हो गया था। मैं आपकी महिमा को नहीं जान सका था।" ठाकुर जी ने न केवल उसे क्षमा किया अपितु नाम दीक्षा भी दी।

ठाकुर जी की कृपा-दृष्टि केवल हिन्दू संन्यासियों पर ही नहीं वरन् सभी धर्मों और सम्प्रदायों के भक्तों पर रही है। एक दिन नरवड़ ग्राम वासी नाथूशाह नामक मुसलमान भक्त ठाकुर जी की सेवा में बैठा हुआ था। महाराज जी ने उससे पूछा, "अरे नाथूशाह कभी नमाज़ भी

पढ़ता है या नहीं ?" नाथूशाह ने उत्तर दिया कि शरीअत के अनुसार वह पाँच वक्त की नमाज़ पढ़ता है। ठाकुर जी ने फिर पूछा, "नाथूशाह क्या सच्ची नमाज़ भी पढ़ता है?" उसने कहा, "हुजूर, सच्ची नमाज़ किसे कहते हैं? मैं समझा नहीं।" ठाकुर जी ने कहा कि जिस नमाज़ को पढ़ने से मन और बुद्धि एकाग्र हो जाए उसे सच्ची नमाज़ कहते हैं। मन और बुद्धि की एकाग्रता के अभाव में वाणी से पढ़ी जा रही नमाज़ झूठी नमाज़ होती है। बाह्य प्रदर्शन के अतिरिक्त उसमें किसी भी प्रकार के सार तत्त्व की उपलब्धि नहीं की जा सकती। ठाकुर जी ने फिर कहा कि कल तुम अपने साथ अपने दोस्त मामूशाह और अन्य लोगों को भी लाना, हम तुम सभी को सच्ची नमाज़ की झलक दिखाएंगे।

सच्ची नमाज़ की झलक दिखाने की बात सारे नरवड़ ग्राम में फैल गई। ठाकुर जी के चमत्कार को देखने के लिए मौलवी, पण्डित एवं अन्य श्रद्धालु भक्त साधांवाली डेरे पर एकत्रित हो गए। नाथूशाह

और मामूशाह आपस में बातें करने लगे कि हिन्दू तो मानते है कि ब्रह्माण्ड में लाखों आकाश और लाखों ही पाताल हैं लेकिन हमारे पैगम्बर कहते हैं कि सिर्फ चौदह तबक ही होते है। यह तो अपने-अपने विश्वास की बात है। यह सुन कर ठाकुर जी ने कहा कि हम तुम्हें अभी सारे ब्रह्माण्ड की सैर करवाते हैं। तुम सभी अपनी आँखे बन्द कर लो। आँखे बन्द करते ही संगत ने देखा कि ब्रह्माण्ड में अनन्त आकाश और अनन्त पाताल नज़र आ रहे हैं। सभी भक्तों को विश्वास हो गया

कि आकाश और पाताल अनन्त हैं। इसके साथ ही ठाकुर जी ने उनको मक्का शरीफ की जियारत कराई। उनका हज भी हो गया। संगत को यह करिश्मा देख कर घोर आश्चर्य हुआ। वे ठाकुर जी की रुहानी शक्ति को पहचान गए। वहाँ उपस्थित जन समुदाय समझ गया कि आंतरिक शांति की उपलब्धि केवल सच्ची नमाज़ में ही हो सकती है। सभी ने श्रद्धापूर्वक ठाकुर जी के श्री चरणों मे नत-मस्तक हो कर प्रणाम किया और अपने-अपने घर लौट गए।

एक बार ठाकुर जी अपने भक्तों के साथ बैठे थे और देखते ही देखते उनकी एक चरण पादुका आकाश मार्ग से उड़ते-उड़ते अलोप हो गई। भक्तों के आश्चर्यचकित हो पूछने पर उन्होंने बताया कि वह एक चरण-पादुका रोम (इटली) में छाया बन कर गर्मी में तड़प रहे उनके भक्तों को आराम देगी। ठाकुर जी के वचनानुसार उस चरण पादुका ने वहाँ जाकर आकाश में छप्पर बना दिया जिससे उनके भक्तों को गर्मी से राहत मिल गई।

ठाकुर जी ने नरवड़ में निवास करते हुए वहाँ के ग्वाल-बालों के साथ असंख्य लीलाएं की। उनके साथ भांति-भांति के खेल खेलते हुए उन्हें रोमांचित कर देने वाले चमत्कार दिखाए। एक बार नरवड़ ग्राम की बालिकाएं आपस में बात करते हुए ठाकुर जी के चमत्कारों के बारे में चर्चा करने लगीं कि नरवड़ ग्राम में साधांवाली डेरे पर एक संत

परमहंस ठाकुर जी पधारे हैं। वे चमत्कारी सिद्ध पुरुष हैं और हर समय बारह वर्षीय बालक के रूप में ही रहते हैं। वे कभी किसी भक्त को गुरु गोबिन्द सिंह जी के रूप में दर्शन देते हैं तो किसी को भगवान शंकर के रूप में। उनमें से एक लड़की ने कहा कि हमने तो आज तक उनके दर्शन कभी नहीं किए यदि उनके दर्शन हो जाएं तो हमारा परम सौभाग्य होगा। एक दूसरी लड़की ने कहा कि सुना है कि वे तो अन्तर्यामी हैं। अपने श्रद्धालु भक्तों के हृदय की पुकार सुनकर दर्शन देने स्वयं उनके पास पहुँच जाते हैं।

यह बात करते-करते उन्होंने मन में संकल्प लिया कि यदि ठाकुर जी अन्तर्यामी और भक्त-वत्सल हैं तो हमें दर्शन देने की कृपा करें। उन्होंने ऐसा सोचा ही था कि ठाकुर जी चरण पादुकाएं धारण किए उनके सामने प्रकट हो गये। वे महाराज जी के दिव्य स्वरूप के दर्शन करते ही सकते में आ गई और मूर्तिवत उनके दर्शन करती रही। उनके हाथ जिस स्थिति में थे वहीं ठहर गए। उन्होंने केवल सिर झुका कर ही परमहंस जी के चरणों में वन्दना की। उन्होंने विनती की कि हे पतितपावन ! हमसे क्या अवज्ञा हो गई। हमें इस योग्य बनाएं कि हम हाथ जोड़ कर श्रीचरणों में नतमस्तक हो सकें और आपका स्वागत कर सकें। ठाकुर जी ने उन सभी को आशीर्वाद दिया। वे अपनी पूर्व स्थिति में आ गई और ठाकुर जी को हाथ जोड़ प्रणाम कर उनके श्री चरणों में बार-बार वन्दना करने लगीं। इस घटना से उन्हें विश्वास हो

गया कि ठाकुर जी भक्त-वत्सल हैं।

बापू जी ने नरवड़, अटारी एवं रोसा की संगत को अपने प्रेम से नवाज़ा और कृतार्थ किया। एक दिन ठाकुर जी ने साधांवाली डेरे पर हो रहे निर्माण कार्य के विषय में पूछा। बाबा धर्मदास ने बताया कि महाराज जी मन्दिर के पास एक बहुत बड़ा सरोवर बनाया है जिसमें चारों तरफ सीढ़िया बनाई गई हैं, पुरुषों तथा महिलाओं के लिए अलग-अलग सुन्दर स्नानागार बनाए गये हैं। पशुओं के लिए गऊ-घाट बनाया है। यह सुन कर ठाकुर जी ने फरमाया, "यह आपने क्या किया। पहले तो मन्दिर की चारदीवारी बनानी थी और सरोवर का निर्माण बाद में होना था। आपने पहले वाला कार्य बाद में और बादवाला काम पहले कर दिया। उस सरोवर में जल नही ठहरेगा।"

यह सुन कर बाबा धर्मदास ने विनम्रतापूर्वक कहा, "हे कृपा निधान। यह अपराध तो सेवक से हुआ है। संगत की राय तो पहले चार दीवारी बनाने की थी। अब तो सरोवर का निर्माण पूरा हो चुका है और पर उस पार सारा रुपया खर्च हो गया है। मुझे इसका अत्यन्त खेद है। मैं क्षमा प्रार्थी हूँ। अगर सरोवर में

जल नहीं ठहरेगा तो संगत का सारा लगा हुआ धन और परिश्रम सब व्यर्थ हो जायेगा।" ठाकुर जी ने थोड़ी देर शान्त रह कर कहा, "अच्छा भाई, सरोवर के निर्माण में लगा धन व्यर्थ नहीं जायेगा। हमारा एक अनन्य प्रेमी सिख (शिष्य) पश्चिम दिशा से

आएगा। वह जन्म से ब्राह्मण होगा। परन्तु केशधारी होगा। वह मन्दिर की चार दीवारी को बनाएगा, तब सरोवर में गंगा जी की धारा प्रकट होगी। सरोवर जल से परिपूर्ण हो जाएगा। कालान्तर मे यह सरोवर तीर्थ का रूप लेगा जो इसमें स्नान करेगा वह पाप मुक्त हो जाएगा। बाबा धर्मदास को ठाकुर जी की आध्यात्मिक शक्ति पर पूर्ण विश्वास था। वह जानते थे कि संत वचन कभी व्यर्थ नहीं होते। अतः वह आश्वस्त हो कर साधांवाली मन्दिर लौट गये।/

एक दिन ठाकुर जी रोसा नगर के निकट रावी दरिया के किनारे भ्रमण कर रहे थे तभी सामने से आते हुए दो साधुओं ने उन्हे साष्टांग प्रणाम किया। उनके मुखमण्डल पर प्रसन्नता की बजाय उदासी छलक रही थी। ठाकुर जी ने कहा, "अरे आओ भाई विधि राम, चूड़ा राम, आप सकुशल एवं आनन्द से तो हैं?" एक अपरिचित संत द्वारा अपना नाम लेकर पुकारे जाने पर दोनों साधु चकित हुए। वे बोले, "महाराज साहिब, आपसे हमारा मिलन कभी नहीं हुआ। आप हमारे नामों को कैसे जानते हैं?" ठाकुर जी ने कहा, "भाई वाह, यह भी कोई बात हुई। जब एक व्यक्ति अपने परिचितों से वायदा करता है कि अमुक स्थान पर हमसे अवश्य मिलना, तो फिर वह उनके नामों को कैसे भूल सकता है।" दोनों साधुओं ने कहा, "महाराज जी, आपने तो हमें और भी आश्चर्य में डाल दिया। वह मिलन, वह वायदा कब और कहाँ हुआ था?" ठाकुर जी ने उत्तर दिया, "याद करें, पूर्व जन्म में हम पानप देव

के नाम से जाने जाते थे। संसार से विदा होते समय हमने आपसे बारह वर्षीय बाल रूप में माझा प्रदेश में मिलने का वायदा किया था। आप हमारा ग्रन्थ (वाणी) लाए हो या नहीं?" उन साधुओं को वे सभी बातें याद आ गई। वे बहुत प्रसन्न हुए और श्री चरणों मे नतमस्तक हो कर बोले, "हम आपको ही तलाश कर रहे थे। हमारी चिर आकांक्षित अभिलाषा पूर्ण हो गई। अब आप हमें श्री चरणों में आजीवन

सेवा करने का अवसर प्रदान करने की कृपा करें।" ठाकुर जी ने प्रसन्नतापूर्वक उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली।

इस प्रकार ठाकुर जी ने 61 वर्ष की अवस्था तक स्थान-स्थान पर भ्रमण कर भक्तों को कृतार्थ किया और उन पर अनवरत अपनी स्नेहिल सुधा की वर्षा की। एक बार रावी दरिया में भयंकर बाढ़ आ गई। रोसा नगर और आस-पास की भूमि बाढ़ की चपेट में आ गई। ठाकुर जी की कुटिया भी पानी के कुप्रभाव से न बच सकी। कुटिआ के बह जाने का समाचार मिलते ही पंडाले ग्राम वासी सरदार त्रिलोक सिंह अपने तीन भाईयों सरदार दल सिंह, सरदार चरण सिंह और सरदार बूड़ा सिंह को साथ लेकर ठाकुर जी की सेवा में हाजिर हुए और अपने गाँव चलने की प्रार्थना की। ठाकुर जी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार की और उनके ग्राम पहुँच गए। सरदार त्रिलोक सिंह ने निवेदन किया कि वह कुटिया के लिए स्थान पसन्द कर लें। ठाकुर जी ने वहाँ की भूमि को देखा और कहा, "भाई, यह भूमि तो आप अपने परिवार के पालन-पोषण के

44 लिए रख लें इतनी अच्छी उपजाऊ भूमि हमें नहीं चाहिए, हमें तो यह बंजर भूमि दे दें।" सरदार बन्धुओं ने कहा, "महाराज जी, यह भूमि तो बंजर है। इसमें कुछ भी पैदा नहीं हो सकता, दूसरे यहाँ भूमि के अन्दर से जहरीले साँप बहुत निकलते हैं।" ठाकुर जी ने कहा, "इसकी चिन्ता आप न करें, हम यहाँ सभी कुछ पैदा कर लेंगे। फलदार वृक्ष लगाएंगे। इस क्षेत्र में ही नहीं बल्कि ग्राम की पूरी सीमा में साँप किसी को काटेंगे नहीं और यदि किसी परिस्थिति में साँप काट भी लेता है तो उसका विष नहीं चढ़ेगा।"

फिर ठाकुर जी ने फरमाया कि यह तो हमारा पुराना स्थान है। यहाँ हमने त्रेतायुग में तप किया था। जब उस स्थान पर भूमि को काफी गहराई तक खोदा गया तो अन्दर एक पक्का आसन, धूनी, चरण-पादुकाएं, चिमटा और कुछ बर्तन मिले। सभी लोग यह देख आश्चर्यचकित हो गए और श्रद्धापूर्वक ठाकुर जी के चरणों में प्रणाम करने लगे। भूमि का वह भाग जो लगभग 27 एकड़ था उन्हें भेंट कर दिया और ठाकुर जी ने रहने के लिए उस स्थान पर कुटिया बनाई, बाग लगवाया जिसमें थोड़े ही समय में सुन्दर वनस्पति लहलहाने लगी। लोगों ने देखा कि उस क्षेत्र में साँप तो निकलते रहे परन्तु वे किसी को काटते नहीं थे और यदि किसी को काट भी लिया तो उसका विष नहीं चढ़ता था। आज भी वहाँ की यही

स्थिति है। भूगर्भ से प्राप्त ठाकुर जी के तप की निशानियां, उनके प्रयोग में आने वाली एक गड़वी और एक

प्याला आज भी उस डेरे में स्थापित है।

संवत् 1891 वि॰ में ठाकुर जी की अवस्था 61 वर्ष की हो गई थी। किन्तु वे बारह वर्षीय बाल-रूप में ही रहे। अब ठाकुर जी ने अपनी देह त्यागने का संकल्प किया। उन्होंने अपने कुछ श्रद्धालु भक्तों को बुलाकर कहा कि अब हम भौतिक शरीर का त्याग करेंगे। आप हमारे मृत देह को अग्नि में न जलाना और न ही भूमि में गाड़ना। इसको रावी दरिया में जल प्रवाह कर देना और कहीं हमारी समाधि भी न बनवाना। भक्त जन यह सुन कर बहुत व्यथित हुए और ठाकुर जी से विछोह की कल्पना करके हार्दिक पीड़ा अनुभव करने लगे। ठाकुर जी ने यौगिक क्रिया द्वारा बह्म-रंध्र से स्वेच्छा से देह त्याग कर दिया। संगत ने उनका अन्तिम संस्कार उनके आदेशानुसार ही किया। उनकी देह को चन्दन के एक बक्स में सम्मान पूर्वक स्थापित करके उसका रावी दरिया में जल प्रवाह कर दिया ।

ठाकुर जी जिस भी स्थान पर पधारे वह स्थान उनके भक्तों क लिए एक तीर्थ बन गया। ठाकुर जी के मतानुसार उनकी तपोभूमि के - 360 स्थान हैं जिनमें से कुछ प्रकट हैं और कुछ गुप्त हैं। समय-समय पर ठाकुर जी की इच्छा अनुसार वे पवित्र स्थान प्रकट होते रहेंगे। ठाकुर जी के पवित्र स्थानों में नरवड़ (पाकिस्तान), साधांवाली (पाकिस्तान), अटारी, चब्बा, रोसा, राम बाग, दौराँगला, लालूचक,

आनंदपुर, बटाला, अमृतसर, रियासत अलवर की गुफा और लौके साहब आते हैं।

परमहंस श्री ठाकुर जी महाराज जी के बहुत शिष्य थे जिन्होंने ठाकुर जी से ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त कर अपना जीवन सफल किया। उनके शिष्यों में सबसे प्रमुख शिष्य बापू ज्वाला सिंह जी थे जिन्होंने परमहंस श्री ठाकुर जी महाराज जी से प्राप्त ब्रह्म-ज्ञान से ऐसे शिष्य तैयार किए जिनकी तपस्या और साधना से

आज तक पूरा विश्व लाभान्वित हो रहा है। श्री ठाकुर जी के प्रिय शिष्य बापू श्री ज्वाला जी महाराज जी के पावन चरित्र का वर्णन हम अगले अध्याय में करेंगे।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

अथ श्री ज्वाला सिंह - कथामृतम्

अथ बापू श्री ज्वाला सिंह-कथामृतम्

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः । कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ।।

भगवान् कृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए कहते हैं कि योगी तपस्वियों से श्रेष्ठ है, शास्त्रज्ञानियों से भी श्रेष्ठ माना गया है और सकाम कर्म करने वालों से भी योगी श्रेष्ठ है, इसलिए हे अर्जुन ! तू योगी हो।

ऐसे ही ब्रह्मनिष्ठ योगी, अखण्ड तपस्वी, ब्रह्मवेत्ता और तत्त्वदर्शी महापुरुष हुए- विप्रकुलभूषण युगसंत बापू ज्वाला सिंह जी महाराज। परमहंस श्री ठाकुर जी महाराज जी के प्रिय शिष्य श्री ज्वाला सिंह जी का जन्म मोहियाल ब्राह्मण कुल में ग्राम लतीफाल सहारन झेलम (पाकिस्तान) में हुआ था। उनके पिता का नाम पं० आत्मा सिंह और माता का नाम किशन देवी था। बचपन में ही उनकी माता का

देहान्त हो गया था। उनका पालन पोषण नानके में हुआ था। इसी कुल मैं भाई मतिदास और भाई परमानंद का जन्म हुआ था। मतिदास धर्मपरायण और सच्चे देश भक्त थे। ये गुरु तेग बहादुर के साथ

शीश कटा कर देश और धर्म के लिए शहीद हुए थे। परमानंद भी ईश्वर-प्रेमी और देश-भक्त थे और सदैव साधना में लीन रहते थे। महान् ईश्वर भक्त ध्रुव और प्रहलाद की भांति बापू ज्वाला सिंह जी बचपन से ही ईश्वरानुरागी थे।

दस वर्ष की बाल अवस्था में आपने प्रभु-प्राप्ति के लिए गृह-त्याग दिया। बापू ज्वाला सिंह जी भ्रमण करते-करते रावी दरिया के किनारे स्थित ग्राम पिंड़ी शेखमूसा लायलपुर (पाकिस्तान) पहुँचे। कई वर्षों तक आपने वहाँ रह कर साधना उपासना की। धीरे-धीरे उनके तपोबल की सुरभि चारों ओर फैलने लगी। बहुत से श्रद्धालु भक्त उनके सदोपदेश सुनने और ज्ञान प्राप्त करने आते। बापू जी बाहरी दिखावों और प्रदर्शनों से बहुत दूर थे। वह एकान्त में साधना उपासना के इच्छुक थे। इसी बीच वह नूरशाह आ कर श्री सलामत मल जग्गा के चौबारे पर रहने लगे। अपनी तपस्या और योग-साधना के लिए वह जंगल में जाया करते थे।

एक दिन उन्होंने यौगिक क्रिया करते समय अपने शरीर के सभी अंगों- हाथ, पैर, सिर, धड़ को अलग-अलग कर दिया। संयोगवश

कुछ चरवाहे उधर से गुजरे। वे महाराज जी के शरीर के अंगों को इधर-उधर बिखरा देख कर घबरा गये और तुरन्त नूरशाह में उनके भक्तों को इस घटना का समाचार देने पहुँचे। जैसे ही भक्त नगर के निकट पहुँचे उन्होंने देखा कि बापू जी पूर्ण रूपेण स्वस्थ प्रसन्न चित्त सामने से आ रहे हैं। यह देख कर चरवाहे आश्चर्यचकित रह गए और उन्हे दण्डवत प्रणाम किया।

बापू ज्वाला सिंह जी के परम भक्तों में पं० ओम नारायण दत्त, बाबा भाग सिंह, पं० कल्याण दास और भक्त सालग राम आदि का प्रमुख स्थान था। एक दिन समाधि से उठने के बाद बापू जी ने पं० कल्याण दास और बाबा भाग सिंह को बुला कर कहा कि हमें परमहंस ठाकुर जी का आदेश प्राप्त हुआ है। हमें माझा क्षेत्र में जा कर कार-सेवा करनी है। आप दोनों उस प्रदेश में जा कर उस स्थान की तलाश करें। ऐसी आज्ञा प्राप्त कर बाबा भाग सिंह और पं० कल्याण दास कार्यस्थल का पता लगाने के लिए चल

दिए। इधर-उधर खोज करते हुए वे साधावाली (नरवड़) डेरे पर जा पहुँचे। वहाँ पहुँच कर उन्हें ठाकुर जी की भविष्यवाणी के सम्बन्ध में ज्ञात हुआ।

साधांवाली की संगत भी बापू ज्वाला सिंह जी के विषय में जान कर बहुत प्रसन्न हुई। उन्होंने कहा कि हमें बापू ज्वाला सिंह जी की प्रतीक्षा है। हम उन्हें कार सेवा के लिये हर प्रकार का सहयोग देने को

तैयार हैं। इसके बाद बापू ज्वाला सिंह जी ने पूरी तैयारी के साथ संगत के साथ मिल कर चारदीवारी का कार्य शुरु करवाया। मन्दिर का क्षेत्रफल लगभग सात हजार वर्ग गज था और आठ फुट ऊँची चारदीवारी बनानी थी। उस क्षेत्र के जागीरदारों और सरदारों से बैलगाड़ियां, कस्सी, फावड़े, टोकरे, कुदाल आदि इकट्ठे किए गये। सारी संगत कार-सेवा में जुट गई। निर्माण कार्य अधिक था। उसको पूरा करने में लगभग तीन वर्ष लगे। निर्माण कार्य के लिए ईंटें पकाने में लकड़ी की व्यवस्था की जाती थी।

एक बार जब किसी अन्य स्थान से लकड़ी की व्यवस्था करनी थी तब कार-सेवकों की कमी महसूस की गई। बापू ज्वाला सिंह जी आँखे बन्द कर ध्यानमग्न हो गये। कुछ क्षणों के पश्चात् आँखें खोली तो देखा कि एक नौजवान सामने खड़ा है और उसके साथ कुछ सहयोगी लाल रंग के कच्छे पहने सेवा के लिए तैयार हैं। उन सभी ने कुल्हाड़े संभाले और वृक्षों से लकड़ियां काटनी शुरु कर दी। लगभग आधे पहर में ही उन्होंने सारी लकड़ियां काट कर ढेर लगा दिया और फिर लोप हो गए। संगत ने पूछा, "महाराज जी, ये कौन थे? कहाँ से आये थे?" बापू जी ने बताया, "ये पवन पुत्र हनुमान थे।"

जब चारदीवारी का कार्य पूर्ण हो गया तब बापू ज्वाला सिंह जी ने मन्दिर में जाकर ठाकुर जी की पवित्र गद्दी को नत-मस्तक होकर

वन्दना की। साधांवाली मन्दिर में न तो कोई मूर्ति थी और न कोई ग्रन्थ, वहाँ ठाकुर जी का केवल आसन था। उस आसन से कान लगाने पर उसमें से 'राम' नाम की ध्वनि सुनाई देती थी। ठाकुर जी की भाषा पूर्वी थी और वे हर समय राम-राम का ही उच्चारण किया करते थे। मन्दिर के सेवादार झण्डा सिंह थे। सन् 1947 ई० तक झण्डा सिंह के परिवार द्वारा मन्दिर की व्यवस्था का कार्य चलता रहा।

साधांवाली मन्दिर के सरोवर का कार्य तो पहले ही पूर्ण हो चुका था। उस सरोवर को अनेक बार वर्षा के जल से भरा गया परन्तु आश्चर्य कि हर बार इसका जल लगभग दो घंटों में ही सूख जाता था। हालांकि सरोवर पक्का बना हुआ था। उसका फर्श भी पक्का था। पूरी संगत इस घटना से निराश हो गई थी फिर भी आशा बंधी थी कि ठाकुर जी के आशीर्वाद से सरोवर में जल अवश्य आएगा। संत वचन सदैव सत्य होते हैं। साधांवाली मन्दिर के निकट झण्डेरा नामक गाँव था। उसमे बूड़ा सिंह जाट रहता था। उन्ही दिनों बूड़ा सिंह को लगातार तीन रात सपना आया कि सरोवर में गंगा का जल भर गया है। उसने सपने की बात संगत को सुनाई तो सभी बापू ज्वाला सिंह की सेवा में उपस्थित हो गए।

बापू जी ने कहा अगर भूमि खोदने से गंगा जी प्रकट होती हैं तो हम सभी का परम सौभाग्य होगा। बापू ज्वाला सिंह जी ने ठाकुर जी का स्मरण करके कस्सी से पृथ्वी पर टक लगाई तो वहाँ गंगा की धारा फूट

श्री नारायण चरितामृत

पड़ी। इस सुन्दर चमत्कार को देखते ही संगत खुशी से नाच पड़ी और सद्गुरुओं की महिमा का गान करते हुए बापू जी के चरणों में नत-मस्तक हो गई। देखते ही देखते सरोवर गंगा जल से परिपूर्ण हो गया संगत ने देखा कि सरोवर का जल ब्रह्म कुंड हरिद्वार के गंगा जल की तरह ही स्वच्छ और पवित्र है। श्रद्धालु भक्तजन उसमें स्नान कर प्रफुल्लित हो गए। इसके उपरान्त बापू जी ठाकुर जी की चरण पादुकाओं की वन्दना करके अपने स्थान नूरशाह ग्राम लौट आए।

एक बार बापू ज्वाला सिंह लाहौर में बाबा नानक सिंह के घर गए। बापू जी ने बाबा नानक सिंह को कहा कि आपके पास परमहंस ठाकुर जी सन्त पानप देव जी का मूल ग्रन्थ रख गए थे और कह गए थे कि हमारा शिष्य ज्वाला सिंह आयेगा, यह अमानत उसको लौटा देना। मैं ज्वाला सिंह उपस्थित हूँ। आप हमारी अमानत हमें लौटा दें। बाबा नानक सिंह ने टालने की नीयत से कह दिया कि हमें तो कुछ याद नहीं और न ही कुछ ध्यान है कि ग्रन्थ कहाँ रखा है। बापू जी तो अन्तर्यामी थे। उन्होंने कहा कि

भाई आपके मकान में फलाँ कमरे में लकड़ी का एक सन्दूक रखा है। उसी में हमारी अमानत बन्द है। आप जा कर उसे ले आयें। बाबा नानक सिंह को बहुत आश्चर्य हुआ कि इन सन्त को सन्दूक और ग्रन्थ का कैसे पता चला। वे चुप-चाप अन्दर गये और ग्रन्थ लाकर उनको अर्पण कर दिया। साथ ही आभार भी प्रकट किया कि उन्होने स्वयं आ कर अपनी अमानत ले ली। बापू जी ने उन्हें साधुवाद

कहा और ग्रन्थ को अपने डेरे पर नूरशाह ले आये।

एक बार एक संन्यासी बापू ज्वाला सिंह की महिमा सुन कर उनके पास आया। उन दिनों महाराज जी कच्चे चौबारे पर रहते थे और दो मुठ्ठी चने खाकर गुज़र करते थे। उस संन्यासी को भी उन्होंने चने और जल छका दिया। वह संन्यासी कुछ दिन वहाँ ठहरा। उसे रसायन विद्या का ज्ञान था। वह रसायन से सोना बनाना जानता था। विदा होते समय उसने बापू जी से कहा कि आपका बड़ा नाम है किन्तु आपने कोई बड़ा डेरा नहीं बनवाया। यह पुड़िया ले लें। इसमें सोना बनाने की रसायन है। आप इससे बत्तीस मन सोना बनवा कर विशाल भवनों का निर्माण करा सकते हैं और लंगर चला सकते हैं।

बापू जी इन आडम्बरों से दूर थे। भौतिक वैभव एवं ऐश्वर्य उनके लिए धूलि के समान थे। वे संन्यासी की बात सुन कर शान्त बने रहे। संन्यासी कुछ समय पश्चात् वहाँ से चले गये । कुछ दिवस उपरान्त वह संन्यासी फिर महाराज जी के पास पुनः आया। उसने सोचा था कि उस रसायन की सहायता से अब तक डेरे पर गगन-चुम्बी भवनों का निर्माण हो चुका होगा और लंगर भी चल रहा होगा। उसे यह देख कर घोर आश्चर्य हुआ कि महाराज जी अब भी उसी कच्चे चौबारे में रहते हैं और चने खा कर गुज़ारा करते हैं। उसके मन में कई शंकाएं पैदा हो गई। बापू जी तो अन्तर्यामी थे। उसके मनोभावों को जानते ही उससे बोले,

"आओ बाहर सैर करने चलें" थोड़ी दूरी तय करके वे हल से जुते खेत के किनारे खड़े हो गए। उन्होंने मिट्टी का एक ढेला उठा कर कमण्डल से उस पर जल का छींटा दिया। वह सोना बन गया। बापू जी ने उस सन्यासी से कहा," इस खेत की तरफ देखो, यह सारा खेत सोने का है, जितना चाहो ले जाओ, तुम्हारी रसायन से तो केवल बत्तीस मन सोना बन सकता था।" यह अदभुत दृश्य देख कर सन्यासी बापू जी के चरणों मे गिर कर नतमस्तक हो क्षमा याचना करने लगा। उसने महाराज जी का आशीर्वाद प्राप्त कर शेष जीवन उनकी सेवा में बिताया।

बापू ज्वाला सिंह जी असाधारण यौगिक शक्ति सम्पन्न संत थे जो आवश्यकता पड़ने पर अपने भक्तों के हितार्थ असम्भव प्रतीत होने वाले चमत्कार भी कर देते थे। बापू जी का एक भक्त कन्हैया सिंह पुलिस विभाग में सिपाही था। उनकी नियुक्ति कमालिया कस्बे थाने में थी। वह कभी कभी सरकारी कागजात लेकर मिन्टगुमरी जाया करता था, मार्ग में वह नूरशाह होते हुए बापू जी के दर्शन करते हुए जाता था। उन दिनों सफर पैदल ही किया जाता था। एक बार कन्हैया सिंह पैदल चला आ रहा था रास्ते में उसके विभाग के अधिकारी उसे मार्ग में मिल ए। अधिकारी ने उसको पहचान लिया। उससे पूछा कहाँ जा रहे हो ? गए। शाम होने वाली थी और नूरशाह अभी 5-6 कि॰मी॰ दूर था। कन्हैया सिंह खामोश रहे। पहले भी उनकी शिकायत विभागीय अधिकारिओं से हो चुकी थी परन्तु उनके विरुद्ध कभी कोई कार्यवाही नहीं हुई थी

अधिकारी के यह पूछने पर कि वापिस कब पहुँचोगे ? तुम्हारी हाज़िरी सुबह है। कन्हैया सिंह ने कहा कि वह कल प्रातः ठीक समय पर ड्यूटी पर पहुँच जायेगा। कन्हैया सिंह तेजी से चलता हुआ नूरशाह डेरे पर श्री बापू जी के चरणों मे पहुँचा। बापू जी की चरण वन्दना कर वह थोड़ी देर बाद कहने लगा, "महाराज जी, मुझे आज्ञा दीजिए। मैं चलूँ कभी अधिकारी मेरी अनुपस्थिति लगा दें और मेरी नौकरी चली जाए। मुझे कल प्रातः ड्यूटी पर पहुँचना है और वह स्थान बहुत दूर है। मुझे यहाँ आते हुए मेरे अधिकारी ने मार्ग में देख लिया था।"

उधर अधिकारी के मन में आया कि यह सिपाही ठीक समय पर ड्यूटी पर नहीं पहुँच पाएगा। इसकी अनुपस्थिति की पहले भी शिकायत है। अतः उसने एक सिपाही को थाने भेजा कि उसके आने का सही समय लिखे। यदि वह विलम्ब से आता है तो उसे दण्डित किया जाए। बापू जी ने कहा, "क्यों घबराते हो। आज की रात हमारे पास रहो।" वह महाराज जी की आज्ञा का उल्लंघन न कर सका। वह डेरे पर ही ठहर गया। दूसरे दिन प्रातः उठकर कन्हैया सिंह ने चरण वन्दना की और जलपान किया। थोड़ी देर बाद महाराज जी ने कहा, "कन्हैया सिंह चलो। मैं भी तुम्हारे साथ बाहर चलता हूँ, तुम्हे छोटा मार्ग बता दूगाँ।"

वे बाहर चले और एक कि॰मी॰ दूर आकर रुक गए। महाराज जी

ने कहा कि हम शौचादि से निवृत्त होकर आते हैं। तुम इस पेड़ के नीचे बैठकर ध्यान लगाओ। भक्त का ध्यान में मन नहीं लगा। उसे तो ड्यूटी पर ठीक समय पहुँचने की चिन्ता सता रही थी। उसने जल्दी ही आँखे खोल दी। सामने का दृश्य देखकर वह हैरान हो गया। उसने स्वयं को कमालिया गाँव में खड़ा पाया। वह बापू जी की करामात को समझ गया और अपने परम कृपालु सद्गुरु को हृदय से प्रणाम करके थाने जाकर ठीक समय पर अपनी उपस्थिति लगा दी।

बापू ज्वाला सिंह जी अपने भक्तों की इच्छाएं पूरी करने के साथ-साथ उनकी आध्यात्मिक एवं नैतिक प्रगति पर भी विशेष ध्यान देते थे। सच्चे जिज्ञासु को, जो ईश्वर प्राप्ति के मार्ग पर दृढ़ संकल्प से आगे बढ़ रहा होता था, स्वप्न में ही साधना की विधि बता देते थे। कस्बा गुगेरा निवासी भक्त कालू राम चावला के मन में सद्गुरु को पाने की तीव्र इच्छा जागृत हुई। उनके किसी मित्र ने उन्हे सुझाव दिया कि अपने ही क्षेत्र में बापू ज्वाला सिंह नूरशाह में विराजमान हैं। वे परम सन्त और सिद्ध महापुरुष हैं। दयालु भी हैं और परोपकारी भी। तुम उनकी शरण में जाओ। मित्र के कथन पर विश्वास कर वह नूरशाह पहुँच गया। उस दिन वह अपने एक मित्र के घर ठहरा और अपने आने का उद्देश्य उसको बताया। मित्र ने भी उसे बापू जी के दर्शनों के लिए प्रोत्साहित किया। कालू राम तो सद्गुरु के चिन्तन में लीन थे। उन्होंने स्वप्न में देखा कि एक संत ने उन्हें नाम की दीक्षा दी, मुक्ति का मार्ग

बताया और साधना, उपासना एवम् योग की युक्तियां विस्तार से समझाई। इस स्वप्न के दूसरे दिन प्रातः काल वह अति श्रद्धा एवं प्रेम से प्रसाद लिए बापू जी की सेवा में उपस्थित हुआ। उनके दर्शन कर वह आश्चर्यचकित रह गया कि ये तो वे ही सन्त हैं जिन्होंने बीती रात स्वप्न में नाम दीक्षा दी थी। उसने महाराज जी की चरण वन्दना कर प्रसाद भेंट किया और अपना परिचय देकर हाथ जोड़ कर बैठ गया।

महाराज जी मुस्कुरा कर बोले, "अभी तेरी तसल्ली नहीं हुई ? रात की बात भूल गया ?" यह सुन कर भक्त हृदय गद-गद हो गया। बापू जी ने पुनः कहा कि तुम्हें नाम जाप की युक्ति बता दी है। अब घर जा कर साधना करो। चरण-वन्दना करके कालू राम चावला घर लौट आया और दिन-रात साधना-उपासना में लीन रहने लगा। अन्त में उसने समाधि लगा कर यौगिक क्रिया द्वारा ब्रह्मरंध्र से अपने प्राणों का विसर्जन किया। इस प्रकार भक्तों का उपकार करते-करते बापू ज्वाला सिंह जी को कईं वर्ष बीत गए। बापू ज्वाला सिंह जी ने अपने अंतरंग भक्तों को बताया कि वह अपने पार्थिव शरीर का त्याग करेंगे। बापू जी ने नूरशाह से एक पत्र पं० कल्याण दास के पास भेजा।

उस पत्र पर कुशल मंगल लिखने के बाद लाल स्याही में लिखा था "हमारी तबीयत कुछ अलील है। इसलिए आप पत्र मिलते ही नूरशाह आ जाएं"। सूचना मिलते ही पं० कल्याण दास बापू जी के श्री

श्री नारायण चरितामृत

चरणों मे उपस्थित हो गए। उस समय अनेक श्रद्धालु भक्त एवं संगत बैठी हुई थी। महाराज जी ने पूछा, "इस समय कौन सी तिथि चल रही है?" भक्तों ने बताया, "बापू जी, आज अमावस्या है।" फिर बापू जी ने पूछा, "रावी दरिया में पानी का प्रवाह कैसा है?" संगत ने बताया, "रावी में पानी बहुत कम है।" यह सब सुन कर सभी गम्भीर हो गए। उन्होंने समझ लिया कि बापू जी अब महासमाधि लेना चाहते हैं। कई श्रद्धालु भक्त तो रोने भी लगे।

महाराज जी ने कहा कि जन्म के बाद मृत्यु अवश्यम्भावी है। फिर हम तो अपनी इच्छा से ही शुभ मुहूर्त में जा रहे हैं। अन्ततः कार्तिक 23 प्रविष्ठा संवत् 1945 वि० का दिन आ गया। महाराज जी समाधि की स्थिति में पलंग पर बैठ गए। उन्होंने पं० कल्याण दास को बुलाया और फ़रमाया कि तुम मेरे पार्थिव

शरीर को रावी क्रिया में जल प्रवाह कर देना। हमारी कोई समाधि न बनवाना। संगत ने कहा, "बापू जी रावी में जल कम है", तो उन्होंने कहा, "तुम चिन्ता न करो। जल प्रवाह के समय वहाँ जल स्वयँ आ जाएगा।" फिर बापू जी ने पंडित कल्याण दास जी से पूछा, "तुम सेवा करोगे?" पं० जी ने कहा, "जैसी आपकी आज्ञा। सेवक क्या कर सकता है। आप जो कराएंगे हम करेंगे।"

महाराज जी ने यह स्पष्ट किया, "देखो कल्याण दास, किसी मन्दिर, मठ या गुरुद्वारे की सेवा तुम्हें नहीं करनी है। सत्संग, धार्मिक

ग्रन्थों का अध्ययन या पाठ और मूर्तिपूजा भी तुम्हें नहीं करनी। हमारी जेब और उसमें तुम्हारा हाथ सदैव भरपूर रहेगा।" पंडित कल्याण दास ने कहा, "जैसी आपकी आज्ञा।" उसके बाद बापू जी समाधि में चले गए। सैंकड़ों भक्तों ने हरि नाम का कीर्तन प्रारम्भ कर दिया। कुछ ही क्षणों बाद यौगिक क्रिया द्वारा ब्रह्मरंध्र से प्राणों का विसर्जन कर वे परमात्मा में लीन हो गए।

उसी समय ब्राह्मण वेशधारी अनेक व्यक्तियों ने प्रकट हो कर महाराज जी की देह पर पुष्प वर्षा की और लोप हो गये। कोई नहीं समझ पाया कि ये लोग कौन थे और कहाँ से आये थे। संगत ने अनुमान लगाया कि ये देवता थे जो देव लोक से आकर ब्राह्मण रूप में बापू जी के प्रति अपने श्रद्धा सुमन अर्पित कर चले गए। इसके बाद संगत ने बापू जी के पार्थिव शरीर को एक सुन्दर विमान में स्थापित किया और रावी दरिया में जल-प्रवाह करने के लिए चल पड़े। रावी दरिया के किनारे पहुँच कर बापू जी के देह-मन्दिर का जल-प्रवाह बड़े सम्मान के साथ विधिवत् कर दिया गया।

| बापू ज्वाला सिंह जी के एक अनन्य भक्त हुकुम चन्द दिसम्बर 1946 ई० में नूरशाह आये और ऐलान किया कि महाराज जी ने यज्ञ पर भण्डारा करने का आदेश दिया है। कभी-कभी मस्ती के आलम में वह कहते कि यहाँ पाकिस्तान बन जायेगा। जन-धन की बहुत हानि होगी।

यहाँ का कानून और सिक्का भी बदल जायेगा। उस समय लोगों को उनकी बातें अटपटी लगती थी। उनकी बातों पर विश्वास करना उन्हें अटपटा लगता था। भक्त हुकुम चन्द ने अपनी बात की पुष्टि करने और लोगों को चमत्कार दिखाने के लिए 14 जनवरी माघी के दिन अखण्ड पाठ रखवाया। इसके लिए फल-फूल, बैंड-बाजे की व्यवस्था भी की गई। अमृतसर, लाहौर और मिन्टगुमरी के रागियों को बुलाया गया।

भक्त जी ने लोगों को विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि बापू जी दर्शन देंगे। कुछ लोगों को सन्देह था कि यह कैसे सम्भव हो सकता है, क्योंकि महाराज साहिब को देह-त्याग किए काफी समय बीत गया है। दोपहर के लगभग दो बजे पं० कल्याण दास के पुत्र पं० हेमराज बिल्कुल नग्न अवस्था में महाराज ज्वाला सिंह जी के सिंहासन के कमरे में पहुँचे और चरण पादुकाओं के सामने आसन लगा कर बैठ गए। अब तक कुछ जिज्ञासु भक्त भी कमरे में आ गए थे। नगर के असंख्य लोग इस चमत्कार को देखने के लिए उतावले हो रहे थे। मन्दिर का प्रांगण, सड़क और गली दर्शकों से भरी हुई थी। अचानक लोगों ने देखा कि सिंहासन के साथ जो मख़मल की चादर लगी हुई थी उसमें से रुहानी "ऊँ" शब्द प्रकट हुआ।

सभी दर्शकों के मुख से अनायास ही "ऊँ' शब्द का उच्चारण होने लगा। सभी ने देखा कि वहाँ पं० हेम राज नहीं हैं अपितु उनके स्थान

पर शुकदेव विराजमान हैं। फिर उन्होंने ध्यान से देखा तो पं० ओम नारायण दत्त जी के स्वरूप के दर्शन होने लगे। वे दंग रह गए। थोड़ी देर बाद पं० हेमराज को पुनः वहाँ विराजमान पाया। मंदिर के सम्पूर्ण भवन में कम्पन हो रहा था। भक्त हुकुम चन्द ने उन लोगों पर जो विश्वास नहीं करते थे, उनमें से कुछ लोगों के नाम लेकर कहा कि अमुक व्यक्तियों को अन्दर भेजो। वे स्वयं प्रत्यक्ष देख लें। वे लोग भीड़ में दीवार का सहारा लेते हुए अन्दर आये और पलंग पर बापू ज्वाला सिंह जी को विराजमान पाया। सभी आश्चर्यचकित रह गए।

भक्त जी ने कहा कि यदि अब भी आपका मन नहीं मानता तो बापू जी सिंहासन से उतर कर पंडाल में जायेंगे। वे जुलूस में सबके आगे-आगे चलेंगे। वे सबको खुले दर्शन देंगे। इतना कहना था कि सब लोगों ने एक आवाज़ में कहा कि बस महाराज जी बस । भावातिरेक के कारण सारी संगत की आँखों में खुशी के आँसू छलक आए। इसके बाद पं० हेमराज ने अपने सारे वस्त्र मंगाकर पहन लिए और लंगर का प्रसाद वितरित हुआ। जितना भी लंगर तैयार था, सारा उपयोग में आ गया।

कुछ भक्तों ने कहा कि हमें उस अद्भुत नज़ारे के दर्शन नहीं हुए। भक्त जी ने कहा कि यह मेरे वश की बात नही है। मुझे जो गैबी हुक्म मिलता है, वही मैं करता हूँ। आप प्रतीक्षा करें। भक्त जी ने थोड़ी देर बाद ऐलान कर दिया कि माघ की 5, तदानुसार 18 जनवरी सन्

1947 ई० को फिर ऐसा ही कार्यक्रम होगा। इस बार पं० हेमराज वस्त्र पहने हुए पहले की तरह सिंहासन के सामने आसीन हो गए। उन्होंने तीन बार उच्चारण किया, "अब क्या होगा?" अचानक सिंहासन के पीछे से जल का स्रोत फूट पड़ा। कमरे की छत और दीवारों से भी पानी की बूंदे टपकने लगी। जल बहता हुआ सिंहासन से आगे बढ़ने लगा। श्रद्धालु भक्तों ने जल का यह रूप देखा तो हिन्दुओं ने उसे गंगा का नाम दिया, सिखों ने उसे अमृत कहा और मुसलमानों ने आब-ए-हयात कह कर पुकारा। लगभग तीन घंटे तक चारों ओर से जल टपकता रहा। पंडितो, मौलवियों और भक्तों ने उस जल को चखा। उसका स्वाद अलग ही था।

भक्त जी ने इस घटना के बाद फिर ऐलान कर दिया कि 20 माघ तदानुसार 3 फरवरी को वहाँ फिर चमत्कार होगा। इस बार भी मन्दिर में पहले की तरह दीवारों और छतों से तीन घंटे तक पानी टपकता रहा। उसके बाद भक्त ने कहा कि अब समय आ गया है। सभी लोग सावधान हो जाएं और समयानुसार अपने-अपने हितो की रक्षा करें क्योंकि झेलम, लाहौर, रावलपिंडी और नोआखाली (बंगाल) में हिन्दू-मुस्लिम दंगे शुरु हो गये हैं। भक्त जी के घरवालों ने उनको भी वहाँ से चलने के लिए कहा परन्तु उन्होंने कह दिया कि यहाँ मेरी सेवा पक्की लगी हुई है। मैं यहीं रहूँगा। पाकिस्तान बनने के बाद भी जीवन पर्यन्त वह वहीं रहे। बापू जी का सिंहासन अभी भी उसी कमरे में

मौजूद है। मुसलमान लोग उस स्थान पर दीए जलाते हैं और अपनी कुशलता एवं समृद्धि के लिए दुआयें मांगते हैं। बापू जी की कृपा से उनकी मुरादें पूरी होती हैं।

बापू ज्वाला सिंह जी के प्रमुख शिष्यों में संत पंडित कल्याण दास जी, बापू ओम नारायण दत्त जी, बाबा भाग सिंह जी और भक्त सालग राम जी हुए, जिनमें से पंडित कल्याण दास जी के साथ बाबा भाग सिंह जी और उनके प्रमुख शिष्यों का संक्षिप्त जीवन-परिचय यहाँ दिया जा रहा है।

संत पंडित कल्याण दास जी

पंडित कल्याण दास का जन्म-नाम पं. कपूर चन्द था। उनका जन्म कस्बा पायल (रियासत पटियाला) में एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम पंडित चिरंजी लाल था। उनके दादा पंडित गणेश दत्त, बाबा आला सिंह के साथ आये थे। उनका परिवार धन-धान्य से परिपूर्ण थे। उनके पास पर्याप्त भूमि भी थी। कल्याण दास जी को रियासत की ओर से अत्याधिक अधिकार एवं सुविधाए प्राप्त थी। वह उर्दू, फारसी और संस्कृत के अच्छे विद्वान थे।

पं. कल्याण दास बचपन से ही विरक्त स्वभाव के थे। घर-

श्री नारायण चरितामृत

परिवार को वह बन्धन समझते थे। उनकी यह वैराग्य वृत्ति देख कर इनके पिता ने इनका विवाह छोटी अवस्था में ही कस्बा बनूड़ (पटियाला) में प्रेम देवी के साथ कर दिया था। प्रेम देवी सुशील, बुद्धिमान, धर्म परायण और सुन्दर स्वरूप वाली महिला थी। परन्तु पं. कल्याण दास (जन्म नाम कपूर चन्द) रूप और धन के दुर्बल बन्धनों में बंधे न रह सके। कुछ समय बाद वह (कपूर चन्द) एक रात घर त्याग कर किसी अज्ञात स्थान को चले गये। पिता और परिवार को विशेष कर उनकी पत्नी को असीम दुःख हुआ और घर में मातम छा गया।

गृह-त्याग के पश्चात् पं. कपूर चन्द ने साधु वेश धारण किया और सद्गुरु की तलाश में काशी, हरिद्वार आदि कई तीर्थ स्थानों पर सन्तों के अनेक आश्रमों में गए पर कुछ हाथ न आया। अंत में वह कस्बा

तलुम्बा (मुलतान) में आ गये। यह हिन्दू रईस परिवारों का मशहूर कस्बा था। यहाँ के निवासी उनको बाबा जी के नाम से पुकारते थे। कपूर चन्द उदासीन सम्प्रदाय के साधु थे। अपनी योग्यता एवं क्षमता के अधार पर वहाँ की उदासीन गद्दी के महन्त बन गये। वहाँ के समाज में उनका बहुत मान सम्मान था। वहाँ रहते हुए एक दिन सौभाग्यवश उनकी भेंट पं. ओम नारायण दत्त से हो गई। ओम जी की कृपा से इनको संत पद प्राप्त हुआ था। बापू ज्वाला सिंह ने इन्हें नाम-दान दिया और उन्होंने शरीर त्यागने से पहले मन्दिर की समस्त सेवा का कार्य भार कल्याण दास जी को सौंप दिया। इसके बाद वह नूरशाह डेरे

पर रहने लगे। बापू जी ने इनको दीक्षा देने के बाद इनका नाम 'कल्याण दास' रख दिया था।

गृहस्थ आश्रम में रहते हुए पं. कल्याण दास के यहाँ एक पुत्री ने जन्म लिया था जिसका नाम ठाकुर देवी था। बाद में संत ओम नारायण दत्त जी के आशीर्वाद से उन्हें एक पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई। उस पुत्र का नाम 'हेमराज' रखा गया। पं. कल्याण दास जी ने सम्पूर्ण जीवन संगत की सेवा में लगा दिया और बापू ज्वाला सिंह जी प्रदत्त उत्तरदायित्व का अच्छी तरह निर्वाह किया। सं. 1993 वि. की मघर प्रविष्टा 25 को पं. कल्याण दास ब्रह्मलीन हो गए।

उनकी स्मृति में जिला नैनीताल के गदरपुर नामक स्थान पर संगत ने "कल्याण नगर" बसा कर वहाँ मंदिर बापू कल्याण दास का निर्माण कराया है। मन्दिर तथा सभा-भवन आदि बहुत सुन्दर और भव्य बने हुए हैं। यह निर्माण-कार्य महाराज पं. दद्या किशन-सहारनपुर की अध्यक्षता में किया गया। गदरपुर में वार्षिक स्मृति यज्ञ का आयोजन प्रति वर्ष चैत्र मास प्रविष्टा 21, 22, 23 को होता है। इस में दूर-दराज के क्षेत्रों से भी संगतें आती हैं और अपनी मुरादें पाती हैं।

संत बाबा भाग सिंह

बाबा भाग सिंह का जन्म ग्राम फतेहपुर उकाड़ा जिला मिन्टगुमरी में सं. 1892 वि. में हुआ था। उनके पिता का नाम खेमा राम और माता का नाम चोघा देवी था। बाल्यावस्था में भाग सिंह जी को चेचक निकली थी जिसके कारण उनकी आँखों की रोशनी जाती रही थी। भाग सिंह जी बचपन से ही अपनी ननिहाल अमृतसर में रहे। पूर्वजन्म के शुभ कार्यों के परिणामस्वरूप उनका चिन्तन भगवद्मय हो गया। उन्होंने विचार किया कि-

मानुष जन्म दुर्लभ है होत न बारम्बार ।

जों फल पाकै भुई गिरे बहुर न लागे डार ।।

भाग सिंह जी को मानव जन्म की महत्ता समझ में आ गई थी। इसलिये उनके हृदय में भगवद् प्राप्ति के लिए भक्ति की उमंग पैदा हो गई। ईश्वर प्राप्ति हेतु उन्होंने सद्गुरु की तलाश शुरु कर दी। किसी व्यक्ति ने उन्हें बताया कि नूर का भंडार तो नूरशाह में खुला हुआ है, वहाँ संत बापू ज्वाला सिंह विराजमान है और श्रद्धालु भक्तों को 'नाम' देकर मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। भाग सिंह तुरन्त नूरशाह गये और बापू ज्वाला सिंह के चरणों में नत-मस्तक होकर सादर वन्दना की। बापू जी ने उन्हें देखते ही फरमाया, "भाग सिंह, आ गये? काफी समय से तुम्हारी

प्रतीक्षा थी। अच्छा हुआ तुम आ गये। अब आपस में लेन-देन, लेखा-जोखा समझ लेंगे।" बापू जी ने भाग सिंह को 'नाम' की दीक्षा दी और साधना तथा योग की विधि समझाई। मुक्ति की युक्ति और सुमिरन आदि का विस्तृत ज्ञान प्रदान किया। बाबा भाग सिंह की इच्छा पूरी हो गई वे दिन-रात भक्ति में लीन रहने लगे। वे बापू जी के प्रमुख शिष्य बने। महाराज जी में उनकी गहरी आस्था एवं श्रद्धा-भक्ति थी। बापू जी भी उनको बहुत स्नेह करते थे।

साधना-उपासना में बाबा भाग सिंह को पूर्ण सफलता मिली। ईश्वर ने उनके बाह्य नेत्र बन्द किए तो दूसरी ओर उनके ज्ञान चक्षु खोल दिए।

सत्गुरु की महिमा अनन्त, अनन्त किया उपकार। लोचन अनन्त उघाडिया, अनन्त दिखावण डार ॥

बाबा भाग सिंह की त्रिकुटी छूटने लगी थी। उन्हें अनहद् नाद सुनाई पड़ने लगा। उन्हें सुन्न अवस्था भी प्राप्त हो गई। भाग सिंह जी ने अपना सारा जीवन सेवा और गुरु भक्ति में समर्पित कर दिया था। यह एक शाश्वत सत्य है कि जिसने जन्म लिया है, उसकी मृत्यु भी अवश्य होगी। शीघ्र ही वह घड़ी भी आ गई और भाग सिंह सं. 1949 वि. ज्येष्ठ मास में ज्योति-जोत समा गए। संगत ने विमान बनाकर उनके पार्थिव

शरीर को रावी दरिया में जल प्रवाह कर दिया। बाद में फतेहपुर में बाबा अरूढ़ सिंह ने उनका स्थान बनवाया। वहाँ उनकी स्मृति में 16 असोज को वार्षिक यज्ञ होता है। अब यह यज्ञ जालन्धर दरबार, बस्ती नौ में मनाया जाता है। इसकी व्यवस्था महाराज श्याम दास जी करते हैं।

संत बाबा कन्हैया सिंह

बाबा कन्हैया सिंह का जन्म ग्राम सतगरा तहसील उकाड़ा जिला मिन्टगुमरी में हुआ था। इनके पिता का नाम गणेश दास था। कन्हैया सिंह पुलिस विभाग में नौकरी करते थे। संत बापू ज्वाला सिंह के प्रति इनके मन में विशेष श्रद्धा-भक्ति थी। बापू जी इनसे प्रसन्न रहते थे। पुलिस विभाग की सेवा में रहते हुए जब भी इनको अवसर मिलता या सरकारी काम से नूरशाह की ओर आना होता तो कन्हैया सिंह जी नूरशाह में महाराज जी के दर्शन अवश्य करते थे।

बापू ज्वाला सिंह की आज्ञा पाकर कन्हैया सिंह ने नौकरी से त्याग पत्र दे दिया था और शेष जीवन सेवा और साधना में लगा दिया था। इनके सेवा-कार्यों और भक्ति भावना से सन्तुष्ट होकर बापू जी ने इन्हें

साधांवाली मन्दिर की व्यवस्था का भार सौंप दिया, जिसको इन्होंने बहुत सुन्दर ढंग से निभाया। इन्होंने सं. 1960 वि. में अपने पार्थिव शरीर को यौगिक क्रिया द्वारा त्याग दिया। इनके शव का रावी दरिया में

विधिवत् प्रवाह किया गया।

संत बाबा अरूढ़ सिंह

बाबा अरूढ़ सिंह का जन्म ग्राम फतेहपुर तहसील उकाड़ा जिला मिन्टगुमरी में सं. 1952 वि. में हुआ था। इनके पिता का नाम शहजादा सिंह और माता का नाम राम कौर था। जीवन-यापन के लिए ये 25 वर्ष की अवस्था में सेना में भर्ती हो गये थे। उन दिनों ब्रह्मादेश (जो अब स्वतंत्र देश के रूप में 'बर्मा' कहलाता है) की जंग छिड़ी हुई थी। यह युद्ध लगभग तीन वर्ष तक चला। इसके बाद वे अपने गाँव लौट आये। घर इनके लिए कुछ काम नहीं था। सौभाग्यवश इनके मन में यह संकल्प पैदा हुआ कि मनुष्य जीवन अमूल्य है। कोई सिद्ध संत मिल जाये तो 'नाम' की दीक्षा ली जाये। अतः वे सद्गुरु की तलाश में रहने लगे।

एक दिन उनके मित्र फतेहपुर निवासी हीरा सिंह ने इनसे कहा, "तुम व्यर्थ परेशान हो। हमारे ग्राम फतेहपुर में बाबा भाग सिंह ने 'नाम' का भण्डारा खोला हुआ है, उनकी सेवा में जाओ और अपनी मुराद पाओ।" अरूढ़ सिंह अविलम्ब बाबा भाग सिंह की सेवा में उपस्थित हो गये। चरण वन्दना के बाद 'नाम' प्रदान करने के लिए सविनय विनती की। बाबा भाग सिंह उनके सरल स्वभाव और पवित्र विचारों

तथा भावनाओं से प्रभावित हुए। उन्होंने प्रसन्नता पूर्वक इनको 'नाम' की दीक्षा दी। साधना योग और मुक्ति का ज्ञान दिया। साथ ही बाबा कन्हैया सिंह के डेरे की व्यवस्था का कार्य भी इनको सौंप दिया। इन्होंने डेरे की सेवा, संगत की आव-भगत, खेती संबंधी कार्य सभी कुछ बड़ी समझदारी से किया। सेवा और सुमिरन इनके जीवन का एक मात्र उद्देश्य था। अब संगतें इनको बाबा अरूढ़ सिंह के नाम से जानने लगी थी। इन्होंने फतेहपुर में सं. 1978 वि. में बाबा भाग सिंह का पवित्र स्थान बनवाया था। वहाँ वह उनकी स्मृति में वार्षिक यज्ञ 16 असोज को किया करते थे।

बाबा अरूढ़ सिंह का जीवन शान्तिमय तथा आनंदमय था। वे सतो-गुण प्रवृत्ति के संत थे। नाम-जाप के फलस्वरूप उनमें वाक् सिद्धि आ गई थी। वे जिस किसी को, जो कुछ भी कहते, वह उसी तरह पूरा हो जाता था। फतेहपुर, उकाड़ा, नरवड़ आदि क्षेत्र की संगतें उनके आशीर्वादों से लाभान्वित हुई थी।

एक दिन सरदार बख्तावर सिंह पसरीचा बाबा अरूढ़ सिंह को अपने गाँव ले आए। वहाँ आते ही अचानक उनकी तबीयत खराब हो गई। वे बैसाख की 22 प्रविष्टा को वापिस उकाड़ा चले गये। उनकी बीमारी दिन-ब-दिन बढ़ती गयी। सरदार करतार सिंह और संगत के अनेक भक्तों ने उनकी बहुत सेवा की। विवश होकर उन्हें अपने डेरे पर

नरवड़ लौटना पड़ा।

बख्तावर सिंह को उनकी बीमारी का तार दिया गया तो वे तीन डाक्टरों के साथ नरवड़ आये। डाक्टरों की सलाह पर उन्हें म्यू अस्पताल, लाहौर में भर्ती किया गया। कुछ समय पश्चात उन्होंने कहा, "दवाई करना व्यर्थ है। अब हमें इस संसार से विदा होना है।" उन्हें वापिस नरवड़ लाया गया। उन्होंने उपस्थित भक्तों से कहा कि उनकी कोई समाधि या मठ न बनवाया जाये। उन्होंने बिशन सिंह जी को अपने डेरे का गद्दी नशीन व्यवस्थापक बना दिया।

बाबा अरूढ़ सिंह ने आसाढ़ प्रविष्टा 25 को नश्वर शरीर त्याग दिया। उनकी याद में डेरे बस्ती नौ, जालन्धर में और अबोहर (पंजाब) में 25 आषाढ़ को वार्षिक यज्ञ किया जाता है। लाल सिंह के पुत्र खुशहाल सिंह चिलाना इस आयोजन की व्यवस्था करते हैं। उस क्षेत्र के अधिकांश लोग उनके प्रति अथाह प्रेम तथा श्रद्धा-भक्ति की भावना रखते हैं।

संत बाबा बिशन सिंह

बाबा बिशन सिंह का जन्म सं. 1940 वि. में रावी दरिया के किनारे स्थित शिराजा ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम जित्तू राम

और माता का नाम जेवा बाई था। ये बचपन से ही वैराग्य वृति के थे, अत: अपना अधिकांश समय साधु-संतों की सेवा और सत्यंग में व्यतीत किया करते थे। ईश्वर भक्ति में वे इतने लीन हो चुके थे कि मात्र 21 वर्ष की अल्पावस्था में ही घर का त्याग करके बाबा अरुद सिंह की सेवा में उनके नरवड़ डेरे पर चले गये थे। इन्होंने बाबा साहब और डेरे की तन, मन, धन से बहुत सेवा की। वे त्याग मूर्ति थे, गुरु सेवक थे और इनका अधिकांश समय डेरे पर सेवा और हरि भजन में ही व्यतीत होता था।

सन् 1947 ई में पाकिस्तान बनने के बाद भारत आकर वे लुधियाना के नया मौहल्ला में भाई बहादुर सिंह के पास ठहरे थे। बीमारी की हालत में सन् 1947 ई. की असोज प्रविष्टा को इन्होंने पार्थिव शरीर को त्याग दिया था। ये अच्छे हकीम भी थे। इनके ज्योति-जोत समाने के पश्चात् संगत ने डेरे की व्यवस्था का भार भाई हीरा सिंह को सौंप दिया था।

संत बाबा हीरा सिंह

बाबा हीरा सिंह का जन्म फ्रन्टीयर इलाके में हुआ था। पाँच वर्ष की छोटी अवस्था में ही वह लाहौर आ गये थे। उन्होंने कुछ समय तक अमृतसर में भी नौकरी की थी। 15 वर्ष की अवस्था में वह नौकरी के

सिलसिले में बाबा अरूढ़ सिंह की सेवा में नरवड़ आये। वे पहले वेतन-भोगी के रूप में और फिर कुछ समय बाद बिना वेतन के डेरे पर सेवा-कार्य करने लगे। वे स्वभाव से ही परिश्रमी थे। डेरे के सभी कार्य, खेती के काम, लंगर तैयार करना, संतों की सेवा करना, संगत का स्वागत सत्कार करना आदि सेवा रूप में ही करते थे। इन्होंने अपना सारा जीवन सेवा के लिए समर्पित कर दिया था। सेवा ही इनकी तपस्या थी। वे शान्त स्वभाव के थे। उनकी सहनशक्ति भी सराहनीय थी। पाकिस्तान बनने तक (सन् 1947 ई. तक) इनकी अवस्था काफी अधिक हो गई थी, इसलिए इन्होंने डेरे का 'गद्दीनशीन बनना' स्वीकार नहीं किया था, परन्तु संगत इनको अत्याधिक सम्मान देती थी।

संत बाबा खान चंद जी

संत बाबा खान चन्द जी एक उच्च कोटि के संत थे। बाबा हीरा सिंह जी ने उनकी योग्यता को देखते हुए बाबा खान चंद जी को गद्दी पर विराजमान करने की सलाह दी। बाबा हीरा सिंह की सहमति प्राप्त करके संत बापू श्रद्धा राम जी तथा पं. दया किशन जी की प्रेरणा से संत बाबा खान चन्द जी को जालन्धर की गद्दी का व्यवस्थापक नियुक्त किया गया। इनके पिता और पितामह श्री चमन लाल संत बापू ज्वाला सिंह के अनन्य सेवक-भक्त थे। वे ग्राम गुगेरा तहसील उकाड़ा के निवासी थे। उस समय वे सहारनपुर में रहते थे और नेहरू मार्केट में

कपड़े सीकर अपना जीवन- यापन करते थे।

बाबा खान चन्द जी को एक पुत्री बीबी राज था। उसका विवाह श्री श्याम दास के साथ हुआ था। वे दिल्ली में नौकरी करते थे। बाबा खान चन्द ने अपने परिश्रम से जालन्धर हेरे का बहुत विकास किया और उसको अत्यधिक सुन्दर रूप दिया। वे एक सच्चे सेवक, संतोषी और ईमानदार व्यक्ति थे। जालन्धर दरबार में कुछ समय तक बीमार रहने के पश्चात इन्होंने अपने पार्थिव शरीर का त्याग किया था।

संत बाबा श्याम दास जी महाराज

बाबा खान चन्द जी के ज्योति जोत समाने के पश्चात् उनकी रस्म पगड़ी के अवसर पर सभी संत जालन्धर डेरे पर इकट्ठे हुए थे। सभी ने एक मत होकर पंडित श्याम दास को जालन्धर दरबार की व्यवस्था सौंपने का सुझाव दिया और बापू गुरदास राम जी ने स्वयं इन्हें जालन्धर स्थित परमहंस ठाकुर जी महाराज के दरबार का गद्दीनशीन घोषित किया। श्याम दास जी ने 'नाम' की दीक्षा पं. दया किशन जी महाराज से ली थी। श्याम दास जी बड़े जुझारू और अनथक सेवक है। उन्होंने अपने परिश्रम से दरबार को बहुमुखी विकास एवं विस्तार दिया है। जालन्धर दरबार में बच्चों का एक सुन्दर विद्यालय खोला जो अच्छे ढंग

से चल रहा है। मन्दिर में लंगर की सुन्दर व्यवस्था भी है। इस पावन दरबार में वार्षिक उत्सव बडे हर्षोल्लास से मनाया जाता है। श्याम दास जी ने एक स्थान किले खेड़ा में और एक अन्य स्थान कनखल (हरिद्वार) बाईपास रोड़ पर निर्मल बाग के निकट परमहंस ठाकुर जी महाराज की स्मृति में स्थापित किया है, जिसका नाम 'जालन्धर आश्रम' है। यह एक विशाल आश्रम है और इस आश्रम में रहने की अति सुन्दर व्यवस्था है। इस आश्रम में लंगर आदि का भी पूरा प्रबन्ध है। हरिद्वार जाने वाली संगत तथा अन्य श्रद्धालुगण वहीं जाकर रुकते हैं तथा महाराज श्याम दास जी का हृदय से कोटि-कोटि धन्यवाद करते हुए इनका गुणगान करते हैं।

बापू ज्वाला सिंह जी के समस्त शिष्य मण्डल ने उनके बताए मार्ग पर चल कर जन-कल्याण किया है। बापू ज्वाला सिंह जी ने बापू ओम नारायण दत्त महाराज जी में उस ब्रह्म-ज्योति का पूर्ण प्रकाश किया जिसकी सहायता से असाधारण रूप से मानव का आध्यात्मिक विकास किया जा सकता था। अगले अध्याय में हम विस्तारपूर्वक बापू ओम नारायण दत्त जी महाराज जी का जीवन-चरित्र और उनसे जुड़े भक्तजनों के अनुभवों एवं चमत्कारों की चर्चा करेंगें।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

अथ बापू श्री ओम नारायण दत्त

- चरितम्

ॐ

अथ श्री ओम नारायण दत्त चरितम

ओम् अर्थात् अनादि, अक्षर, अनन्त, अच्युत, अनश्वर परम ब्रह्म । ओम् जिसमें समाहित है सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड, कालबाधातीत दिव्य लोक, चर-अचर, दृश्य एवम् अदृश्य भौतिक सत्ताएं। ओम् उत्पत्ति है, स्थिति है और अवसान भी है। अखिल सृष्टि का मूल स्रोत ओम् ही है। ओम् सृष्टि की मूल ध्वनि भी है और ईश्वर का सर्वश्रेष्ठ नाम भी है। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो ओम् ही ईश्वर है। उपनिषदों में उसी सच्चिदानंद ईश्वर के लिए कहा गया है

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

इसका अर्थ है कि हे ईश्वर ! आप पूर्ण हैं ऐसे पूर्ण जिसमें से यदि पूर्ण निकल भी जाए तो भी शेष पूर्ण ही रहता है।

एक ऐसे ही पूर्ण संत भारत के पंजाब राज्य के होशियारपुर जिले के नन्दाचौर ग्राम में अवतरित हुए जिन्होंने अपने ही समान पूर्ण,

श्री नारायण चरितामृत

महातेजस्वी और महायोगी संत पुरुषों को उत्पन्न किया और भक्तों का सर्वविध कल्याण किया। संत-पुरुषों की महिमा अनिर्वचनीय होती है। यम-पाश से सदैव के लिए मुक्त करवा कर ब्रह्मानन्द के अमृत-समुद्र में ले जाने वाले महापुरुषों में उपस्थित दया का भाव उन्हें त्रिताप-ग्रस्त मानव का उद्धार करने हेतु प्रेरित करता है। ऐसी दिव्य आत्माओं की करुणा पाप-पंक में मज्जित धरती को पूर्णतया परिवर्तित कर वैकुण्ठ धाम में बदल देती है। इसका जीवन्त उदाहरण है- पंजाब प्रदेश के जिला होशियारपुर शहर में स्थित नन्दाचौर ग्राम।

लगभग दो सौ वर्ष पूर्व लोग नन्दाचौर गाँव का नाम लेना भी पसन्द नहीं करते थे। उस क्षेत्र में व्याप्त चोर, डाकुओं के कारण लोगों का इस गाँव को पार करना भी कठिन था। आम जनता का जीवन भी अभाव-ग्रस्त था। ऐसे वातावरण और ऐसे समय में ईश्वर का नूर नन्दाचौर गाँव के एक कुलीन ब्राह्मण दम्पत्ति पर बरसा। श्री प्रभु दयाल और श्रीमती गुलाब देवी के घर ज्येष्ठ मास की 13 तारीख संवत् 1902 वि॰ को श्री ओम नारायण दत्त महाराज जी का जन्म हुआ। उनके परिवार पर ईश्वर की विशेष कृपा थी। इसीलिए उस देवतुल्य दम्पत्ति को ईश्वर ने श्री ओम नारायण दत्त के रूप में विशेष प्रेम से

नवाजा। ओम जी जन्म से ही ध्यान सिद्ध एवं तीव्र मेधा के स्वामी थे। पाँच वर्ष की आयु में उनकी शिक्षा प्रारम्भ हुई।

79

80

श्री नारायण चरितामृत

अति अल्प समय में ही उन्होंने संस्कृत, उर्दू, गुरुमुखी, अरबी और फारसी भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। ओम जी ने चारों वेद, छः शास्त्र, अठारह पुराण और कुरान आदि धार्मिक ग्रन्थों का सम्पूर्ण अध्ययन किया। विद्याध्ययन के पश्चात् उनका विवाह बटाला शहर की लड़की से हुआ जिसका कुछ समय पश्चात् ही स्वर्गवास हो गया। इसके बाद उनकी दूसरी सगाई घोड़ेबाह गाँव में हुई परन्तु विवाह से पहले ही ओम जी ने गृह त्याग दिया। ओम जी का उद्देश्य भगवद् प्राप्ति था। वह अपना अधिकाँश समय हरि-स्मरण, साधना और उपासना में व्यतीत करते थे। उन्हें सदैव ऐसे पूर्ण गुरु की तलाश रहती थी जो उन्हें आत्म-साक्षात्कार करवा सके।

ओम जी जीवन-यापन के लिए एक विद्यालय में छात्रों को पढ़ाने लगे। उनका तेज किसी से छिपा न रह सका। अपने साथी अध्यापकों और छात्रों मे वह बहुत लोकप्रिय थे। एक बार किसी कारणवश वे विद्यालय के रजिस्टर में कई दिनों तक अपनी उपस्थिति दर्ज नहीं कर सके। संयोग की बात थी कि उसी दिन विद्यालय निरीक्षक वहाँ आ गए और ओम जी से उपस्थिति रजिस्टर मांगने लगे। ओम जी ने रजिस्टर नहीं दिया और मौन खड़े रहे। निरीक्षक महोदय ने दो-तीन बार रजिस्टर मांगा परन्तु ओम जी सकुचाते हुए खड़े रहे और मन ही मन भगवान से प्रार्थना करने लगे कि हे प्रभु ! जिस प्रकार आपने द्रौपदी की लाज रखी थी, प्रह्लाद और ध्रुव का उद्धार किया था, नाई का रूप

श्री नारायण चरितामृत

धारण कर सैन भक्त की रक्षा की थी, उसी प्रकार आप मेरी भी रक्षा करें। सच्चे हृदय से निकली यह करुण पुकार ईश्वर ने सुन ली और रजिस्टर में उपस्थिति भर दी। रजिस्टर पूरा हो गया। उधर वह निरीक्षक महोदय बड़े क्रोध में ओम जी को कटु वचन सुनाने लगे। वे कहने लगे, "लगता है तुमने कोई

पाप किया है जिसे छिपाने का तुम प्रयत्न कर रहे हो। ऐसी स्थिति में मैं तुम्हें नहीं छोड़ूंगा, चाहे तुम कितने ही उपाय कर लो। मैं तुम्हारे साथ-साथ तुम्हारे पिता को भी कैद करवा दूँगा।"

इतना कह कर उसने रजिस्टर उठाया और देखने लगा। उसे यह देख कर हैरानी हुई कि रजिस्टर तो पूरा है फिर यह दिखाने में निरिक्षक आनाकानी क्यों कर रहे थे। फिर वह निरिक्षक अपनी रिपोर्ट में 'गुड' लिख कर गया। ओम जी रजिस्टर में पूरी उपस्थिति भरी देख कर आश्चर्यचकित रह गए। उन्हें प्रभु की अबाध और असीम दया का सुन्दर नज़ारा मिला। अपने प्रभु की लीला को समझने में उन्हें देर नहीं लगी। उन्हें पूर्ण विश्वास हो गया कि यदि ईश्वर स्वयं आ कर उनकी लाज बचा सकते हैं तो किसी दिन उन्हें दर्शन भी अवश्य देंगे।

इस घटना से उनमें वैराग्य जागृत हो गया और यह बात उनके अन्तर्मन में भली-भांति बैठ गई कि उस प्रभु का ही क्यों न हुआ जाए जो हर काल, हर परिस्थिति में सदा सहायता करते हैं। ओम जी ने समझ लिया कि इस संसार के बन्धनों से छूट कर प्रभु की शरण लेना ही

श्रेयस्कर है। उन्होंने उसी समय नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। उसके बाद वे भगवान् की प्राप्ति के लिए सद्गुरु की खोज में निकल पड़े। संत पानप देव ने सद्गुरु की महिमा के विषय में कहा है-

*विश्व रूप परमात्मा, रहा सकल जग माहि, बिन सतगुरु पानप कहै, पावे कोई नाहि। पूर्ण भेद जगत में, पर है सतगुरु के हाथ, कहै पानप सतगुरु बिना, सब जग अहला जात ।।

ओम जी की सच्चे गुरु की खोज की यात्रा प्रारम्भ हो गई। गुरु की तलाश में उन्होंने एक लंबा समय कई जंगलों, नगरों, पर्वतों एवं निर्जन स्थानों की यात्रा कर बिताया। एक बार ओम जी सैर करते-करते घने वन में जा पहुँचे। वहाँ उन्हें एक लकड़ियों का ढेर नजर आया। उस ढेर पर मृगशाला बिछा कर वह ध्यानमग्न हो गए। अचानक उन्हें बड़े जोर से एक फुंकार सुनाई दी। ओम जी ने आँखें खोल कर चारों

ओर देखा परन्तु कुछ नजर नहीं आया। इसके बाद वह फिर ध्यानमग्न हो गए। थोड़ी देर बाद फिर फुंकार की आवाज़ आई। ओम जी ने तुरन्त आँखें खोल ली। तीसरी बार आवाज़ आने पर ओम जी समझ गए कि जिन लकड़ियों के ऊपर वह आसन लगा कर बैठे हैं उनके नीचे एक भयानक अजगर विद्यमान है जो लगातार फुंकार मार रहा है। ओम जी एक दम छलाँग लगा कर वहाँ से नीचे उतरे और वहाँ से चले गए।

अभी ओम जी की मुसीबतों का अंत नहीं हुआ था। जैसे ही उस स्थान को छोड़ कर वह आगे बढ़े उन्हें मार्ग में एक शेर मिला जिसकी लाल आँखे और तीखे दाँत थे। ओम जी ने तुरन्त उस शेर के नेत्रों से नेत्र मिला लिए और चार घंटे तक दोनों आमने सामने खड़े रहे। अन्त में वह सिंह ओम जी रूपी नरसिंह से परास्त हो गया और नतमस्तक हो कर जंगल में भाग गया। ओम जी समझ गए कि इस प्रकार की घटनाएं साधक के मार्ग में आने वाली बाधाएं होती हैं जो कई बार साधक को साधना के मार्ग से हटा कर उसे हतोत्साहित कर देती हैं। परन्तु ईश्वर में दृढ़ विश्वास रखने वाले साधक ऐसी बाधाओं का सफलतापूर्वक सामना कर पाते हैं जैसा कि बापू ओम जी ने किया।

ओम जी को सच्चे गुरु की तलाश में वन में भटकते हुए आठ दिन हो गये। वह नगर से बहुत दूर निकल आये थे। आठ दिनों तक वे भूखे - विराजे प्यासे वन में विचरण करते रहे। अंततः वह निढाल हो गए। तभी सौभाग्यवश उन्हें एक ग्वाला दिखाई पड़ा। उसके पास कई गायें-भैंसें थी। उसे देख कर ओम जी प्रसन्न हो गये। उनके मन में आशा की किरण जाग उठी।

ग्वाले ने उन्हें देख कर, संत जान कर, सिर झुका कर नमस्कार किया और यथाशक्ति आदरपूर्वक बिठाया। उसने ओम जी से कुशल क्षेम पूछी जिस पर ओम जी ने कहा कि हमें बहुत भूख लगी है। इसके

अतिरिक्त हमें कोई समस्या नही है। यह सुन कर ग्वाले ने तुरन्त एक चाटी ले कर दूध दुहा और वह दूध से भरी चाटी ओम जी को प्रस्तुत की। ओम जी ने कहा कि हमें कच्चा दूध पसन्द नहीं है। इसे गरम करके हमें पिलाओ। यह सुन कर ग्वाले ने लकड़ियां चुन कर उनमें आग लगाई और चाटी को उस पर टिका कर दूध गरम कर ओम जी को फिर आदरपूर्वक प्रस्तुत किया। ओम जी ने कहा कि हमें मीठा दूध पसन्द है। हम फीका दूध नहीं पीएंगे। यह सुन कर ग्वाला नाराज़ हो कर कहने लगा,

"आपको मेरी हालत की कोई परवाह नहीं है। आप को पता है मैं किस विपत्ति से घिरा हुआ हूँ। आप ही बताइए इस घने जंगल में मैं नगर किसे भेजूं। आपको मीठा दूध माँगते शर्म नहीं आई। नगरं, ग्राम यहाँ से बहुत ही दूर हैं नहीं तो मैं मीठे का प्रबन्ध कर देता। यह फीका दूध तो मैं मजबूरी में दे रहा हूँ।"

फिर वह ग्वाला ओम जी को और फटकार लगाते हुए कहने लगा कि यदि उन्हें फीका दूध पीना स्वीकार है तो ठीक है नहीं तो वह सारा दूध गिरा देगा। ग्वाले की फटकार सुन के ओम जी कहने लगे, "तुम मुझे अपना दुःख बताओ। हमारी बाद में देखी जाएगी। हम किसी का भी दुःख बर्दाशत नहीं कर सकते।" ओम जी का कथन सुन कर वह ग्वाला फुर्ती से खड़ा हो कर वन में चला गया और पर्वत पर चढ़ के दो लाल रंग के फल ले आया। उसने एक फल चाटी में मिलाया

और दूध मीठा करके ओम जी को दे दिया। ओम जी मीठा दूध देख कर प्रसन्न हो गए और उसे पीने लगे। जैसे-जैसे ओम जी दूध पीते जा रहे थे वैसे-वैसे उन्हें देख कर ग्वाला बहुत प्रसन्न हो रहा था। दूध पीकर ओम जी ने कहा कि अभी हमारी भूख नहीं मिटी है। यह सुन कर ग्वाले ने पहले की तरह एक चाटी में दूध दुह कर उसे गरम कर एक मीठा फल मिलाया और ओम जी को दे दिया। तत्पश्चात् ओम जी सन्तुष्ट हो कर ग्वाले से बोले, "आप अति दयालु और धन्य हो। आपने मुझे तृप्त किया है। कहिए, आपको क्या समस्या है? हम उसे दूर कर देते हैं।"

यह सुन कर वह ग्वाला क्रोधित हो कर लाल नेत्र कर कहने लगा, "तुम यहाँ से चले जाओ। तुम मुझसे क्यों बातें कर रहे हो? तुम्हें जहाँ जाना है वहाँ चले जाओ।" यह सुन कर ओम जी कुछ भी उत्तर न देते हुए अमरनाथ जाने की बात सोचते हुए वहाँ से चल पड़े। अभी वह केवल बीस कदम ही चले थे, पीछे

मुड़ के देखने पर उन्हें न ग्वाला और न ही उसकी गायें-भैंसें नज़र आई। यह कौतुक देख कर वह समझ गए कि साक्षात् ईश्वर ही उनकी रक्षा हेतु ग्वाले का रूप बना कर आये थे।

अपने भक्त की रक्षा हेतु भगवान सदैव ही किसी न किसी रूप मे प्रकट होते हैं। अपने दासों के भी दास बन कर ईश्वर अपने भक्तों के सभी कार्य संवारते हैं। धन्य हैं वह महान् आत्मायें जिनके लिए साक्षात् प्रभु अवतरित हो कर अपनी चरण-रज से इस धरा को पवित्र करते हैं।

ग्वाले के रूप में ईश्वर-दर्शन का लाभ प्राप्त कर ओम जी अमरनाथ गए और भगवान शिव के दर्शन कर उन पर्वतों को लांघ कर आगे जाने की बात सोची। लोगों ने समझाया कि इससे आगे बर्फीले पहाड़ हैं, खतरनाक जंगली जानवर शेर, चीता, रीछ आदि यहाँ-वहाँ भटकते रहते हैं। इतना सुनने के बाद भी ओम जी अपने निश्चय से नहीं डिगे और अगम्य एवं अलंघ्य पर्वतों को पार करने का निश्चय किया।

सच्चे साधक के यही लक्षण हैं। जब ईश्वर प्राप्ति के दृढ़ विचार का अंकुर मन, प्राण, चित्त एवम् बुद्धि को आवेष्टित कर उसमें भली-भांति जम जाता है तब ईश्वर प्राप्ति की अनुभूति के सुन्दर पुष्प मानव को अन्तर् तक सुवासित कर देते हैं। आत्मानुसंधान की सच्ची लगन, दृढ़ निश्चय और असीम उत्साह के साथ ओम जी अमरनाथ के पर्वतों को पार कर एक घने वन में पहुँच गए। वहाँ उन्होंने समाधि-अवस्था में ध्यान-मग्न चार साधुओं को देखा। उन साधुओं का दर्शन किसी अलौकिक अनुभव से कम नहीं था।

प्राण-वायु को पूर्णतया नियन्त्रण में कर ब्रह्मानन्द में निमग्न उक्त साधु साधनारत थे। सर्दी से बचने के लिए उन्होंने अग्नि प्रज्ज्वलित की हुई थी। ओम जी उन साधुओं के पास जा कर बैठ गए। उनमें से एक साधु उन्हें वरिष्ठ जान पड़ता था। उन साधुओं की देह आजकल के साधारण मनुष्य की देह से कहीं अधिक विशाल थी। उनकी आँखों के

ऊपर की भवें इतनी लंबी थी कि वे उनकी नाभि तक पहुँच रहीं थी। उनकी देह का मांस जिस प्रकार नीचे को लटका हुआ था उससे उनका रूप बड़ा भयानक प्रतीत हो रहा था।

दिन का तीसरा पहर बीत गया परन्तु अपने आत्मानन्द में लीन उन साधुओं ने नेत्र नहीं खोले। उस समय एक सन्त ने समाधि के बीच उठ के थोड़ी दूर जा कर कंद मूल खोजने आरम्भ किए। उस संत के पास एक बहुत पुराना चिमटा था जिस पर जंग लगा हुआ था। एक स्थान पर उस साधु ने उस चिमटे से खोद कर कंद निकाल कर धूने में रख कर भून लिये। तत्पश्चात् उसने बाकी तीन साधुओं की टाँगें दबा कर उन्हें समाधि से जगाया। उन तीनों साधुओं ने बड़े प्रेम से आँखे खोल कर उस साधु और ओम जी को देखा। ओम जी ने सभी साधुओं को प्रणाम किया। बड़े साधु ने हैरान हो कर उन्हें देखा और पूछा,

"आप कौन हैं और इतने भयानक रास्तों को पार कर यहाँ कैसे पहुँचे हैं? यह स्थान तो अति दुर्गम है। साधारण मनुष्य का तो यहाँ आना सम्भव ही नहीं है। शेर, बाघ आदि हिंसक प्राणियों का ग्रास तो मानव सहज ही बन जाता है। फिर आप यहाँ तक कैसे पहुँच गए? कौन यहाँ आपकी रक्षा कर रहा है?"

ओम जी ने प्रसन्नतापूर्वक बताया, "मैं तो परमात्मा का बन्दा हूँ।

स्वयं प्रभु ने ही मुझे रास्ता दिखाया है और आप जैसे संतों द्वारा ही मेरी रक्षा हुई है। मैं आप ही के दर्शनों के लिये आया हूँ। अब यहाँ से लौट कर नहीं जाऊँगा।"

यह सुन कर बड़े महात्मा ने एक साधु को ओम जी के लिए कन्द लाने का आदेश दिया। उसी वक्त वह साधु अपने हाथ में चिमटा ले कर गया और एक कन्द ला कर धुएं के बीच दबा कर उसे छील कर तैयार करके ओम जी को दिया। सभी ने साथ-साथ भोजन किया। तत्पश्चात् बड़े साधु ओम जी से पूछने लगे कि आज कल भारतवर्ष का राजा कौन है? उसकी आयु, उसका व्यवहार और नाम क्या है?

ओम जी ने प्रेमपूर्वक बताया कि आज कल भारत में अंग्रेज़ों का राज है। रानी विक्टोरिया का पूरी दुनिया में शासन है। अंग्रेज़ों के धर्म, कर्म का कुछ पता नहीं है। यह सुन कर संत जी बहुत हैरान हुए। तब उन्होंने पूछा कि युधिष्ठिर के राज्य का क्या हुआ? नकुल, सहदेव, भीम व अर्जुन कहाँ हैं? तब ओम जी ने बताया कि उन सभी का स्वर्गवास हो गया है। सन्त जी ने पूछा, "उनके वंश के लोग कहाँ हैं? भारत के और दूसरे वीर योद्धाओं का क्या हुआ?"

तब ओम जी ने बताया कि पाण्डवों के वंश में परीक्षित आदि राजा हुए जो समय के प्रभाव से स्वर्ग सिधार गए। तत्पश्चात् तुर्कों का

राज हुआ जिनके बाद अंग्रेजों का राज्य शुरू हुआ जो अब तक चल रहा है। यह सब सुन कर संत जी विस्मित हो उठे। उन्होंने कहा कि युधिष्ठिर मेरा गुरु भाई था। उसने और मैने इकट्ठे शिक्षा ग्रहण की थी। वह मुझसे दो वर्ष छोटा था। इतना कह कर द्रवित हो कर वह साधु शोक मग्न हो आँसू बहाने लगे और कहने लगे कि हमारे मन में उनको मिलने की बहुत इच्छा थी परन्तु अब तो उनके वंश में कोई भी नहीं बचा।

इतना कहने के बाद उस साधु ने ओम जी को कहा कि भाई, हमारी बात सुनो। तुम यहाँ से चले जाओ, इसी में तुम्हारी भलाई है। यह सुन कर ओम जी कहने लगे, "आप ही मेरे स्वामी हो। आप अन्तर्यामी हो। आप कृपा करके मुझे अपनी शरण में ले लीजिए। मुझे आत्म-साक्षात्कार करवा दीजिए।"

ओम जी के वचन सुन कर सन्त जी बोले, "तुम्हारा हिस्सा यहाँ नहीं है। तुम्हारा उद्धार करने के लिए किसी ने अवतार लिया है। तुम लंहदे पश्चिम दिशा में जाओ। वहीं पश्चिम दिशा में ही आपका प्रकाश है।" इतना कह कर उस साधु ने ओम जी से आँखे बंद करने को कहा और आँखें बन्द करने के पश्चात् जब ओम जी ने आँखें खोली तो स्वयं को पवित्र नगरी हरिद्वार में पाया। उस स्थान को अति पवित्र जान कर ओम जी ने वहाँ कुछ समय निवास किया। चिर काल से हरिद्वार की

पावन धरती असंख्य सिद्ध महात्माओं एवं संन्यासियों की चरण रज से और भी पवित्र होती रही है। युगों-युगों से गंगा के तट पर बसी यह पावन नगरी आत्मसाक्षात्कार के इच्छुक साधकों को किसी न किसी प्रकार मार्गदर्शन प्रदान करती रही है।

हरिद्वार में ओम जी कुछ संन्यासियों के सम्पर्क में आये और यह सोच कर संन्यास धारण कर लिया कि इससे उन्हें भगवद् प्राप्ति होने में सहायता मिलेगी। परन्तु संन्यास धारण करने पर भी उन्हें उस चरम सत्य की उपलब्धि नही हुई जो उन्हें आकांक्षित थी।

आध्यात्मिक व्यक्तियों के जीवन में इस प्रकार के निर्णय-अनिर्णय के क्षण अकसर आते ही हैं। इस प्रकार के कष्ट एवं विपदाएं साधक को भीतर तक हिला कर रख देती हैं। भगवद् प्राप्ति के मार्ग में आने वाली बाधाओं से कई बार साधक यह सोचने पर विवश हो जाता है कि क्या उसने सर्वस्व त्याग कर उचित निर्णय लिया है? क्या सांसारिक सुख-भोगों को न भोग कर इस प्रत्यक्ष अनुभव किए जा सकने वाले संसार को छोड़ कर एक अदृश्य एवं अप्रत्यक्ष सत्य के पीछे भागना तर्कसंगत है?

बापू ओम जी भी इसी ऊहापोह के शिकार थे। इसीलिए संन्यास धारण करने के बाद एक विद्वान् पण्डित की विचार धारा से प्रभावित हो

श्री नारायण चरितामृत

कर उन्होंने संन्यास छोड़ दिया। पण्डित जी ने उन्हें अपने वर्ण में ले कर यज्ञोपवीत और शिखा धारण करवा दी। यह सब करने के उपरान्त भी उन्हें लक्ष्य सिद्धि नहीं हुई।

एक बार ओम जी बैठ कर अपनी बीती हुई ज़िन्दगी पर विचार करने लगे कि पहले उन्होंने विद्या प्राप्त की, जीवन यापन के लिए अध्यापक बने, ईश्वर की प्राप्ति के लिए नौकरी छोड़ी फिर पहली पत्नी का स्वर्गवास हो गया, दूसरी जगह सगाई हुई परन्तु उन्होंने घर त्याग कर भगवद्-प्राप्ति के लिए जगह-जगह की खाक छानी, कई प्रकार के भेष धारण किए फिर भी सारा परिश्रम व्यर्थ गया, सद्गुरु की प्राप्ति नहीं हुई। यह सोचते-सोचते ओम जी को अचानक हिमालय पर मिले उस वरिष्ठ साधु का कथन याद आया जिसमें उन्होंने ओम जी को लहंदे तरफ पश्चिम दिशा में जाने का आदेश दिया था।

ओम जी विचार करने लगे कि उस महापुरुष ने उस शहर या गाँव का नाम तो बताया ही नहीं जहाँ उनके गुरु के मिलने की सम्भावना थी। वह सोचने लगे कि उस दिशा में जाने पर भी वह कहाँ जा कर उन्हें खोजेगें? किस रूप में वह अपने श्याम को ढूँढेंगे? उस साधु ने कोई पक्की निशानी भी तो नहीं बताई है। उनके घर का क्या पता होगा कुछ भी तो ज्ञात नहीं है। वह विचार रहे थे कि उनके गुरु हिन्दू होंगे या फिर सिख अथवा मुसलमान । संत का कहा व्यर्थ तो हो नहीं सकता।

ओम जी फिर से सोचने लगे कि हाँ, उनसे यह भूल अवश्य हो गई है कि उन्होंने अपने गुरु का नाम नहीं पूछा। बहुत विचारने पर भी उनकी समझ में यह बात नहीं आई कि वह अपने प्रिय गुरु को किस उपाय से और कहाँ ढूँढेंगे। उस समय ओम जी के अन्तर्मन में गुरु मिलन की जो तड़प थी उसका अनुमान तो केवल एक सच्चा भक्त ही लगा सकता है।

बहुत देर तक सोचने के बाद आखिर में उन्हें समझ में आ ही गया कि लहंदी दिशा तो शहर मुलतान है। उन दिनों मुलतान शहर में बड़े बड़े अवधूत संतों का वास था। ओम जी ने सोचा शायद यहाँ उन्हें कोई पूर्ण गुरु मिल जाए जो उन्हें नाम दीक्षा दे कर उनके लक्ष्य तक पहुँचा दे।

यह विचार मन में आते ही वह तुरन्त मुलतान शहर के लिए रवाना हो गये। मुलतान आ कर ओम जी ने पूर्ण गुरु की तलाश शुरु कर दी। ओम जी सच्ची लगन से दिन-रात एक कर के योग्य गुरु खोजने में जुट गए। कई साधु-संतों से मिलने के बाद भी ओम जी के मन में शांति नहीं आई। उन्हें ऐसा एक भी पूर्ण ब्रह्मज्ञानी संत नहीं मिला जो उन्हें स्वयं से परिचित करवा सके। महामाया ने जो भ्रम का पर्दा प्राणियों के चित्त पर डाल कर उन्हें उनके वास्तविक स्वरूप के ज्ञान से वंचित कर रखा है उस पर्दे का भेदन करने वाले, ज्ञान की उपलब्धि करवा सकने

वाले, गुरु का साक्षात्कार उन्हें मुलतान में नहीं हुआ।

कोई साधु उन्हें गंगा स्नान कर पापों से मुक्ति की बात करता तो कोई अन्य कुछ और कहता। उन्हें अब विश्वास हो चला था कि उन्हें गुरु की प्राप्ति मुलतान में नहीं हो सकती। निराश एवं उदास चित्त हो ओम जी मिंटगुमरी की ओर चले गए। उन्होंने सोचा शायद यहाँ उन्हें कोई पूर्ण ब्रह्मज्ञानी महात्मा मिल जाये। परन्तु वहाँ भी उन्हें निराशा ही हाथ लगी।

उन्होंने वहाँ घोषणा कर दी कि यदि किसी ने वहाँ विद्या पढ़नी हो तो वह पढ़ा देंगे और बदले में केवल दो वक्त रूखी मिस्सी रोटी खायेंगे। उन दिनों मिंटगुमरी एक छोटा सा स्थान था जहाँ अधिक जनसंख्या नहीं थी। वहाँ के लोगों ने कहा कि गरीब निवाज़, इस स्थान पर आपका गुज़ारा होना कठिन है। आप नूरशाह चले जाएं। वहाँ बड़े-बड़े सेठ साहूकार रहते हैं। उस स्थान पर आपका गुज़ारा भली-भांति हो जायेगा। यह सुन कर ओम जी नूरशाह पहुँच गए।

उस शहर में एक व्यक्ति अमीर चन्द रहता था। ओम जी ने उसकी दुकान में वास करना शुरू कर दिया और यहाँ भी घोषणा कर दी कि जो कोई भी विद्या पढ़ना चाहता है उनके पास आ जाये। वह बदले में कोई धनादि नहीं लेंगे, अपितु रूखी मिस्सी रोटी खा कर ही गुज़ारा

कर लेंगे। कई लोग उनके पास विद्या अध्ययन के लिए आने लगे। कोई उनसे फारसी पढ़ता तो कोई गुरुमुखी, कोई अरबी भाषा पढ़ता तो कोई देवनागरी सीखता।

वहाँ एक सात्विक प्रवृत्ति का व्यक्ति अमीर चन्द उनमें विशेष श्रद्धा रखने लगा। उसका कागज़ का काम था। वह दिन-रात मेहनत करके अपनी कमाई करता था। अपनी उस नेकी की कमाई में से वह ओम जी को भोजन पहुँचाता था। इस प्रकार दिन बीतते गए। समय अपनी गति से चलता रहा। परन्तु

ओम जी का उद्देश्य केवल उदर पूर्ति करना ही नहीं था। उन्हें तो उस क्षण की प्रतीक्षा थी जब कोई पूर्ण सिद्ध महापुरुष मिलें और उनका हाथ पकड़ कर उन्हें भवसागर पार करवा दे।

एक बार नूरशाह में निवास करते हुए ओम जी ने एक संत के विषय में सुना। वह सन्त ब्रह्मवेत्ता एवं महान ज्ञानी थे। आठों पहर उनकी वृत्ति ईश्वराभिमुख रहती थी। वह दिव्य संत सदैव ध्यान योग के अभ्यास में निरत रहते थे। उनकी अप्रतिम तपस्या का तेज कुछ ऐसा था कि देवता भी उनके सम्मुख नतमस्तक हो कर खड़े रहते थे। उनकी शक्ति अतुलनीय थी और उनकी दया का तो कोई अन्त ही नहीं था। जो भी याचक श्रद्धापूर्वक उनके पास जाता कभी खाली हाथ नहीं लौटता था। उन महान् तत्त्ववेत्ता का नाम था- बापू ज्वाला सिंह जी महाराज ।

श्री नारायण चरितामृत

ओम जी किसी के कहने पर बापू ज्वाला सिंह जी का प्रवचन सुनने गये। बापू जी उन दिनों उपनिषदों की व्याख्या कर उनका मर्म सारगर्भित शब्दों में समझाया करते थे। बापू जी का प्रवचन सुन कर ओम जी बहुत आनन्दित हुए। उनके मन में बापू ज्वाला सिंह जी से मिलने की तीव्र इच्छा पैदा हुई। उन दिनों बापू ज्वाला सिंह जी दिन में लोगों को उपदेश दे सारा समय हरि-स्मरण में व्यतीत करते और रात्रि को जंगल में जा कर रावी दरिया के किनारे भजन-साधना में समय बिताते थे। भगवान् श्रीकृष्ण ने ऐसे योगियों के विषय में कहा है-

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी। यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥

अर्थात् सम्पूर्ण प्राणियोंके लिये जो रात्रिके समान है, उस नित्य ज्ञानस्वरूप परमानन्दकी प्राप्तिमें स्थितप्रज्ञ योगी जागता है और जिस नाशवान् सांसारिक सुखकी प्राप्तिमें सब प्राणी जागते हैं, परमात्माके तत्त्वको जाननेवाले मुनिके लिये वह रात्रिके समान है।

भगवान् श्रीकृष्ण के इस वचन को बापू ज्वाला सिंह जी ने अपने जीवन में पूर्णतया चरितार्थ किया था। बापू ज्वाला सिंह जी अपना मन ईश्वर के चरणों में रख कर सदैव ब्रह्मानन्द का पान करते थे। जिस मार्ग से बापू जी जंगल की ओर जाते थे, उसी मार्ग में ओम जी निवास करते

थे। ओम जी की गुरु प्राप्ति की तड़प प्रतिक्षण बढ़ती ही जा रही थी। दैव योग से वह समय आ ही पहुँचा जब उनकी इच्छा फलीभूत होने वाली थी।

एक दिन ओम जी बापू ज्वाला सिंह जी के पीछे-पीछे रावी दरिया के किनारे पहुँच गए। ओम जी ने देखा कि बापू ज्वाला सिंह जी समाधि में निमग्न हो गए हैं। उस निः स्पन्द समाधि की अवस्था में बापू ज्वाला सिंह जी को देख कर एक दम ओम जी के मन में विचार कौंधा कि अरे ! यही तो लहंदी दिशा है और यही मेरे गुरु हैं। बापू ओम जी यह समझ चुके थे कि बापू ज्वाला सिंह जी ही वह महान् आत्मा हैं जो उन्हें भी ब्रह्मानन्द का पान करवा उनके चिर आकांक्षित स्वप्न की पूर्ति करवा सकते हैं। प्रातः काल जब बापू ज्वाला सिंह जी उठ कर नगर की ओर जाने लगे तब ओम जी ने शीघ्रता से आगे बढ़ कर उन्हें प्रणाम किया। बापू जी ने उन्हें देखते ही कहा, "आ गए देवता जी" इतना कह कर अपनी कृपा दृष्टि से ओम जी को निहाल कर दिया।

बापू ज्वाला सिंह जी ने शिष्य रूप में ओम जी को स्वीकार कर उन्हें ब्रह्म-ज्ञान करवाया। ओम जी की सारी दुविधा, समस्त भ्रम एवं संशय नष्ट हो गए। वह समझ गए कि समस्त शास्त्रों में पारंगत होना, तीर्थाटन करना, संन्यास लेना, उदासीन होना, धूनी रमा कर दिगंबर हो कर जटायें बढ़ा कर बैठना या फिर देश-विदेश भ्रमण करना, इन सब में

से ऐसा कोई भी कृत्य नहीं जो साधक को ब्रह्मज्ञान करवा सके।

गुरु की एक कृपा-दृष्टि साधक के पिछले करोड़ों जन्मों के कर्मों के पाप-फल को भस्म करने का सामर्थ्य रखती है। गुरु की असीम अनुकम्पा से जब भगवान् के प्रति आकर्षण की प्रबलता अपनी चरम सीमा पर पहुँचती है तब चित्त के सभी विकारों को नष्ट होने में एक क्षण भी नहीं लगता। तब जड़ चेतन सब कुछ ईश्वरमय हो जाता है। जीव की चेतना परिवर्तित हो कर ब्रह्म-चैतन्य में रुपांतरित हो जाती है।

ओम जी के साथ भी ऐसा ही हुआ। बापू ज्वाला सिंह जी ने ओम जी को उस महान् रुहानी विरासत से नवाज़ा जिससे वह केवल ओम जी का ही नहीं, अपितु उनके माध्यम से सम्पूर्ण सृष्टि का उद्धार करने वाले थे। ओम जी ने अपने गुरु के प्रति कृतज्ञता का वर्णन एक कवित्त में किया है जो उनका सफरनामा कहलाता है। कवित्त इस प्रकार है-

उस रब ते रूबाने वाली होनी तकदीर ने जो, दाना पानी वतनों फकीर दा उठा लिया।

दिल्ली ते लाहौर लुधियाना मुलतान और, सहारन वटाले पटियाले भी घुमा लिया।

जयपुर जालन्धर ज्वाला देवी जोधपुर,

काँगड़े सरहिन्द बसी सारे ही रुला लिया।

भटनेर अजमेर और शहर बीकानेर ते आनंदपुर सोडियां दे होल्डा उड़ा लिया।

बांगड़ ढंडार बृज मालवा, पहाड़, धनी, माझा पोठोहार ते पंजाब सारा गाह लिया।

कच्छी दक्षिण बंगाल सिंध मुल्क रूहेलियां दे, यारड़े फकीर इक बार फेरा लिया जमना ते रावी नाले झेलम चनाब बिच, नीली ते व्यास सब तीथों में नहा लिया।

गोमती द्वारका कावेरी कुरुक्षेत्र, गंगोतरी जमोतरी कैदार भी मना लिया।

काली कलकत्ते वाली नैना देवी हिंग लाज लाटाँ वाली वैष्णो की यात्रा को जा लिया।

मथरा दे पेड़े शीरनी गोंदवाल दी भी, पेशावर दा आड़ू मजेदार भी है खालिया।

अन्न जल फेर बीकानेर खादी मिशरी जा, दुपट्टा काशी शहर दा वी असां ने हंडा लिया।

देश ते विदेश सिरों रोडे कदे केस कदे, कदे गेरूआ दा भेस जा फकीरों से रंगा लिया।

धूनीयां जगाए कदे, सिर धूल पाए केस, कई मन्त्र कमाए तन अपना जला लिया।

श्री नारायण चरितामृत

गंगा दे किनारे वरे डेढ़ दो गुजारे, कई रंग रूप धारे रब आखिर बचा लिया।

धौलीयां जो धारां जाके बिखड़े पहाडा, होर मुलक हजारां देख दिले नूँ रिझा लिया।

भौंदियां भवांदिया रूलांदियां जहान विच, उनी सौ व्रीहे नूरशाह आ निका लिया।

लाखन करोडन जनमन के पुनन कर, गहर गम्भीर गुरु गोविन्द दिखा लिया।

सिंह सरदार सच्चे सूरमे ज्वाला सिंह, जानके निकारा दास अपना बना लिया।

कृपा की मूरत जनाब महाराज का मैं, हो गया गुलाम सुनी यार मतवालिया ।

चरण कमल गुरु सूरमे दे चित जोड़, राम ते रहीम तों मैं सभी कुछ पा लिया।

काम ते क्रोध लोभ मोह वाली फौज नू मैं, इसे गुरु सूरमे दी कृपा से हटा लिया।

मन्त्र ते मन नूं स्वासां नाल जोड़के, दीवड़ा अगम घट मांहि ही जगा लिया।

मरने से डरना भजन नित करना है, इसी तरह तरना इह गुरां ने सिखा लिया।

इक समें फेर हम तीर्थ परसने को,

99
100

बिना पूछे गुरुं चोरी कदम उठा लिया। थक गये पैर ते निकारी जही जिन्द साई, यार पसरीचे खत भेज के मंगा लिया।

दोहरे कवित्त छन्द सोरठे, सवैये कई, होर भी बनावां, पर गुरां ने हटा लिया।

भादों दी चौदहवीं उनी सौ पैंतीस विच, दास ने कवित्त झट-पट ही बना लिया।

(कलीद-उल-कलब)

इस कवित्त में ओम जी ने अपने गुरु बापू ज्वाला सिंह जी महाराज जी के प्रति श्रद्धा ज्ञापित करते हुए कहा है कि उन्होंने सारे भारतवर्ष की खाक छानी परन्तु कहीं कुछ प्राप्त नहीं हुआ, फिर बापू ज्वाला सिंह जी की कृपा से उनके चित्त के समस्त विकार शांत हो गए और उन्होंने अपने अन्दर ही उस ब्रह्म-ज्योति का दर्शन कर ईश्वर के साथ एकत्व की अनुभूति की।

बापू ओम जी अपने परम पूजनीय गुरुदेव बापू ज्वाला सिंह जी की महिमा के विषय में बहुत भावविभोर हो कर लिखा है। बापू ओम जी कहते थे कि मैंने सारा जगत भ्रमण कर के देख लिया परन्तु भगवान् को कहीं नहीं देख पाया। गंगा, गया, गोदावरी जैसे पवित्र तीर्थ स्थल भी देखे परन्तु मन का अहं भाव नहीं मिटा पाया। काशी, गोमती, और

द्वारिकापुरी जा कर भगवान् कृष्ण का ध्यान किया, हर प्रकार के भेष बदल-बदल कर देखे परन्तु भगवान् की प्राप्ति कहीं नहीं हुई।

सभी देवी देवताओं की पूजा कर उन्हें प्रसन्न करने की चेष्टा की और महान् जप-तप आदि भी किए, ग्रंथों का अध्ययन भी किया परन्तु इतना सब करने के बाद भी भगवद् प्राप्ति नहीं हुई। कई प्रकार के मंत्रों और यन्त्रों का पाठ कर के परमेश्वर को पाने की चेष्ठा की परन्तु कुछ प्राप्त नहीं हुआ।

गहन वनों में भगवान् को ढूँढते हुए कभी भूखे रह कर, कभी पत्ते खा कर गुजारा किया फिर भी भगवान् को न खोज पाया। कई साधु, संतों और महात्माओं के सम्पर्क में भी आया परन्तु इच्छित उद्देश्य की पूर्ति नहीं हुई। फिर दैवयोग से मैं नूरशाह आ पहुँचा जहाँ स्वयं भगवान् बापू ज्वाला सिंह जी के रूप में निवास करते थे। उन की परम कृपा से मैंने आत्म-तत्त्व को जान लिया और जीवन का चरम उद्देश्य सिद्ध हो गया।

ओम जी की गुरु-भक्ति अद्वितीय थी। वे अपने गुरु बापू ज्वाला सिंह जी को पूर्ण परमात्मा मान कर उनके प्रति अत्यधिक श्रद्धा रखते थे। जब वह नूरशाह में रहते थे तब गुरु चरणों में पुष्प अर्पण करना उनका नित्य नियम था। उन दिनों नूरशाह नगर में कोई बाग-बगीचा

नहीं था। अतः उन्हें पुष्प लाने के लिए प्रति दिन लगभग आठ कि०मी० फतेहपुर जाना और आठ कि०मी० वापिस आना पड़ता था। इस प्रकार वे सोलह कि०मी० की पद-यात्रा प्रतिदिन करते थे। इस कार्य में वह किंचित मात्र भी थकान अनुभव नहीं करते थे। गुरु-सेवा में उन्हें आत्मिक आनन्द की अनुभूति होती थी।

ओम जी ने गुरु-प्राप्ति के बाद अपने प्रिय गुरु की बहुत सेवा की। बापू ज्वाला सिंह जी के मार्गदर्शन में उनकी आध्यात्मिक उन्नति बहुत तेजी से होने लगी। धीरे-धीरे लोगों को उनके आत्मिक तेज का ज्ञान होने लगा।

ओम जी अपने गुरु बापू ज्वाला सिंह जी की सेवा में नूरशाह डेरे पर रहा करते थे। वे प्रतिदिन नगर के पश्चिम की ओर जाकर लगभग एक कि॰मी॰ की दूरी पर एकान्त में बैठते थे। उस स्थान पर भूमि में पाँच फुट की गहराई में एक भोरा था जहाँ बापू ओम जी समाधि लगाया करते थे। उस स्थल का नाम रामगढ़ था। कभी-कभी मौज में आ कर ओम जी कहा करते थे कि इस स्थान पर नहर निकलेगी और यह सारा बंजर क्षेत्र हरा भरा हो जाएगा। वहाँ की धरती खूब उपजाऊ हो जाएगी और पैदावार भी अच्छी होगी।

ओम जी कुछ समय वहाँ ठहरे और फिर उस स्थान को छोड़ कर

कहीं चले गए। कुछ समय पश्चात् सरकार के सिंचाई विभाग ने उस क्षेत्र में एक नहर निकाली। जब विभागीय अधिकारी नहर का रास्ता बनाने के लिए रामगढ़ की भूमि पर निशानदेही करने गए तो बापू जी की तपोस्थली से आगे उन्हें कुछ भी नज़र नहीं आया।

सीधी नहर निकालने में ओम जी की तपोस्थली बाधक बनती थी। जब इसकी सूचना उच्च अधिकारियों को दी गई तब एक अंग्रेज़ डिप्टी कमिश्नर ने आ कर निशानदेही करने का प्रयत्न किया। उस डिप्टी कमिश्नर के सामने भी वही समस्या आई। वह समझदार व्यक्ति था। उसने पंचायत बुलाई और गाँव वालों से इस घटना का कारण पूछा। तब गाँव वालों ने बताया कि यह एक सिद्ध महापुरुष की तपोस्थली है।

वह अंग्रेज़ अधिकारी बहुत समझदार था। उसने अनुभव किया कि वह पवित्र स्थान सुरक्षित रहना चाहिए। उसने अपने कर्मचारियों को निर्देश दिया कि तपोस्थली को बिना हानि पहुँचाए उसके किनारे-

किनारे मोड़ दे कर उपर की तरफ नहर निकाल दी जाए।

ऐसा आदेश देने के साथ ही उस अधिकारी ने आस-पास की छः एकड़ भूमि ओम जी के नाम कर दी और उसके कागजात पं० कल्याण दास जी को सौंप दिये। बाद में उस भूमि की व्यवस्था का भार बाबा

ब्रह्मदास ने संभाला। वहाँ उन्होंने एक बाग लगाया और पाकिस्तान बनने के बीस वर्ष बाद तक वह उसी स्थान पर रहे। उन्होंने अपना नाम मौला का मलंग रख लिया और अन्तिम श्वास गुरु चरणों में ली।

ग्रामवासियों ने परिश्रम करके तपोस्थल के पास की बेकार पड़ी ज़मीन को उपजाऊ बना लिया। वह क्षेत्र धन-धान्य से भरपूर हो गया। वहाँ अनारों का एक बाग था जहाँ बहुत खूबसूरत फल लगा करते थे और उन फलों को बेचने के लिऐ लाहौर ले जाया जाता था।

ओम जी जैसी महान् विभूति के उस स्थान पर बैठने से उस निर्जन और बंजर स्थान का आमूलचूल रुपांतरण हो गया। धीरे-धीरे रामगढ़ की प्रसिद्धि आस-पास के क्षेत्रों में फैल गई। वहाँ चैत्र की पांचवी तारीख को एक बड़ा मेला लगने लगा। भक्त जन वहाँ जा जाकर धर्म लाभ प्राप्त करने लगे। उनकी मनोकामनायें पूर्ण होने लगी।

ओम जी ने अपने गुरु बापू ज्वाला सिंह जी प्रदत्त ज्ञान से दो ग्रन्थों की रचना की। पहला ग्रन्थ था 'कलीद-उल-कल्ब' और दूसरा ग्रन्थ था 'ओम गुलज़ार'। ओम जी ने वह दोनों ग्रन्थ बापू ज्वाला सिंह जी को सप्रेम भेंट किए। बापू ज्वाला सिंह जी ओम जी को देवता कह कर पुकारते थे। ज्वाला सिंह जी ने ओम जी से कहा,

"देवता जी, आप मुझे यह बात समझायें कि महान् गुरुओं की

वाणी जिस महान् ग्रन्थ गुरु ग्रन्थ साहिब में संकलित है उस ग्रन्थ से अधिक विशिष्टता आपके ग्रन्थ में क्या है?" यह सुन कर ओम जी ने विचार कर उत्तर दिया कि ऐसी कोई विशिष्टता इसमें नहीं है।

यह सुन कर बापू ज्वाला सिंह जी ने कहा, "तो फिर उस ग्रन्थ को लिखने की क्या आवश्यकता थी? आपने इन ग्रन्थों को लिखने में अपना समय ही नष्ट किया है। यदि आप इस समय को भजन करने में लगाते तो आपके अन्तर्मन में आनन्द की और भी अधिक निर्मल धारा प्रवाहित होती। आप आध्यात्मिक उत्कर्ष की एक ओर सीढ़ी पार कर इस क्षेत्र में और अधिक प्रगति करते। आपने जिन दो ग्रन्थों की रचना की है वे तो छोटी मटकियों के समान हैं। इसके विपरीत जिन संतो की वाणी की मैं बात कर रहा हूँ उन संतो ने भगवद् नाम रूपी दूध को काड़ कर दही जमा कर मक्खन का ढेर लगा दिया है।"

इसका अर्थ है कि जो भी साधक उस वाणी में निहित अर्थ को समझ कर उस का अभ्यास करता है उसे अति शीघ्र दुर्लभ आध्यात्मिक अनुभूतियां होने लगती हैं। अतः ऐसे सच्चे गुरुओं का आभार मानते हुए हमें साधना में जुट जाना चाहिए।

ओम जी को अपने गुरु का इशारा ही काफी था। उसी क्षण से ओम जी योग, साधना आदि के अभ्यास में जुट गए। आसन में बैठ कर

दोनों मुट्ठियों को बन्द कर, श्वास को नियंत्रित कर उस सच्चिदानन्द ब्रह्म के ध्यान में डूब गए। थोड़े ही दिनों के अभ्यास से अपनी समस्त वृत्तियों को अन्तर्मुखी कर के ओम जी ने माया के सभी बन्धन खोल कर आत्मसाक्षात्कार कर उस अविनाशी प्रभु को प्राप्त कर लिया। बापू ज्वाला सिंह जी के मार्गदर्शन में ओम जी ने अखण्ड तपस्या की और प्रति पल भगवद् नाम की मस्ती में लीन रहने लगे।

सच्चे शिष्य इस बात को भली-भांति समझते हैं कि इस संसार में बिना किसी व्यक्तिगत स्वार्थ के यदि कोई सच्चा प्रेम कर सकता है तो वह केवल गुरु है। गुरु की अन्तर्दृष्टि सदैव शिष्य पर टिकी रहती है। स्वयं को जानने की प्रक्रिया किसी सरल रेखा की तरह सीधी नही है। स्वयं को जानने का मार्ग टेढ़ा-मेढ़ा, विभिन्न प्रकार के उतार चढ़ावों से भरा हुआ और पग-पग पर अकल्पनीय परीक्षायें लेने वाला है।

कब कौन से विकार रूपी वन्य पशु अचानक आक्रमण कर दें, कब कौन सी दुर्बलता बलवती हो कर हम पर हावी हो हमें मार्ग से भ्रष्ट कर दे, कुछ कहा नहीं जा सकता परन्तु यह अवश्य कहा जा सकता है कि 'हस्तामलकवत्' अर्थात् हथेली पर रखे आंवले के समान यह प्रत्यक्ष है कि गुरु का फूल से भी अधिक कोमल हृदय सदैव अपने हृदय के धन अर्थात् शिष्य पर अविस्मरणीय रूप से अहैतुकी कृपा एवं प्रेम की निरन्तर अमृत वर्षा करता है। ओम जी ने भी उस दिव्य प्रेम की

वर्षा में एक लंबे समय तक स्नान किया था।

ओम जी बहुत ही दयालु और कृपालु थे। ईश्वर प्रेमी साधकों को उचित मार्ग दिखाने हेतु वह सदैव तत्पर रहते थे। एक बार ओम जी रेलगाड़ी द्वारा नूरशाह जा रहे थे। कई सेवक उनके साथ थे। ओम जी ईश्वर चिन्तन में निमग्न थे। उनका मन एक विशिष्ट भाव भूमि में भ्रमण कर रहा था। ईश्वर चिन्तन करते-करते उनकी समाधि लग गई।

गाड़ी अपने नियत समयानुसार गैम्बर स्टेशन पर रुकी परन्तु ओम जी के साथ उपस्थित भक्तों में किसी का भी साहस नहीं हुआ कि वह ओम जी की समाधि को भंग करने की धृष्टता करे। फलस्वरूप रेलगाड़ी थोड़ी देर रुकने के बाद आगे बढ़ गई और कई स्टेशनों से होती हुई मुलतान के मियां चन्नू स्टेशन पर रुकी। यह एक नया स्टेशन था जो एक झोंपड़ी में बना था। यहाँ आ कर ओम जी की समाधि टूटी।

भक्तों ने कहा कि महाराज साहिब हम तो गैम्बर से 50-60 कि॰मी॰ दूर आ गए हैं। यहाँ कहाँ ठहरेंगे? ओम जी ने कहा कि चिन्ता न करें, यहीं उतर जाते हैं। स्टेशन पर उतर कर पूछताछ की तो किसी ने

बताया कि पास ही एक सराय है, वहाँ ठहरने की व्यवस्था हो सकती है। ओम जी उस समय सराय में पहुँचे तो देखा कि सराय बहुत गन्दी है। चारों ओर दुर्गन्ध है। वह स्थान ठहरने के उद्देश्य से ठीक नही था।

उस सराय के प्रबन्धक ने बताया कि थोड़ी दूरी पर कस्बा 'तलुम्बा' में उदासीन साधुओं का एक डेरा है। वहाँ के संत बहुत ही भले हैं। आप वहाँ चले जाएं। ओम जी उस डेरे पर पहुँचे। यद्यपि वह साधारण वस्त्र ही पहना करते थे फिर भी वहाँ के भेषधारी संतों ने उनकी आध्यात्मिक शक्ति को पहचाना। यथोचित आदर सत्कार कर के उनके ठहरने की सुन्दर व्यवस्था कर दी।

उन दिनों पं० कल्याण दास (जिनका नाम उस समय कपूर चन्द था) सद्गुरु की खोज में उसी डेरे पर थे। जब उन्हें ओम जी के आगमन की जानकारी मिली तो वह उनकी सेवा में उपस्थित हो गए। पं० कल्याण दास भी उच्च अवस्था प्राप्त महान् संत थे। जब दो विराट विभूतियों का मिलन हुआ तब उन दोनों महापुरुषों ने एक दूसरे की प्रतिभा को पहचान लिया। पं० कल्याण दास को उनमें सद्गुरु के दर्शन हुए। सारी दूरियाँ मिट गई।

जब ओम जी ने उनसे उनका परिचय पूछा तो उन्होंने बताया कि उनका नाम कपूर चन्द है और वह आत्म-कल्याण के लिए सद्गुरु की तलाश में हैं। उन्होंने ओम जी से निवेदन किया कि वह उन्हें 'नाम' की दीक्षा देकर मुक्ति का मार्ग दिखाने की कृपा करें। ओम जी भगवान के लिए उनकी उत्कण्ठा एवं सच्ची लगन देख कर बहुत प्रसन्न हुए और कहा, “ठीक है, हम तुम्हें एक पूर्ण-गुरु की सेवा में ले चलते हैं जो

आपकी मनोकामना पूर्ण कर सकते हैं।" ओम जी उन्हें साथ ले कर अपने डेरे पर लौट आए।

एक दिन ओम जी ने बापू ज्वाला सिंह जी से विनती की और निवेदन किया, "महाराज जी, आपके श्री चरणों में मैं बहुत ही पवित्र वस्तु प्रस्तुत करना चाहता हूँ।" बापू ज्वाला सिंह जी के स्वीकृति न देने पर ओम जी ने पुनः निवेदन किया, "आपने जो फुलवारी लगाई है उसमें वह एक सुन्दर तथा महकदार फूल सिद्ध होगा। वह आपकी सेवा के योग्य है। बापू जी की स्वीकृति पा कर ओम जी ने अपने ज्ञानोपदेश से पं० कल्याण दास का ध्यान बापू जी की ओर आकर्षित कर उन्हें बापू ज्वाला सिंह जी की सेवा में प्रस्तुत किया।

बापू ज्वाला सिंह जी ने उदासीन वेशधारी पं० कल्याण दास से पूछा, "तेरी शादी हो गई?" उन्होंने उत्तर दिया, "नहीं, मेरी शादी नहीं हुई।" महाराज जी ने कहा, "सच-सच बताओ, तुम्हारी शादी हो गई?" उन्होंने फिर 'नहीं' में उत्तर दिया। बापू जी ने तीसरी बार कहा, "हमें तुम्हारे कथन पर विश्वास नहीं होता। तुम छुपा रहे हो। सच बताओ, क्या तुम्हारी शादी हो गई?" कल्याण दास जी ने तीसरी बार भी झूठ बोल दिया कि मेरी शादी नहीं हुई।

यह सुन कर बापू जी ने थोड़ी देर मौन रह कर पूछा, "क्या

तुम्हारी पत्नी का नाम प्रेम देवी नहीं है?" यह सुन कर पं० कल्याण दास बहुत लज्जित हुए। वे चुप बैठे रहे। बापू जी ने कहा, "जाओ, और अपने गृहस्थ का उत्तरदायित्व सम्भालो या फिर अपनी पत्नी को भी साथ लाओ, तभी तुम्हें नाम की दीक्षा दी जा सकती है।" यह सुन कर पं कल्याण दास बापू जी के चरणस्पर्श करके वहाँ से लौट आए।

कुछ दिनों बाद पं० कल्याण दास साधुवेश में कुछ अन्य संतों के साथ कुम्भ के अवसर पर प्रयाग राज जाने के लिए लुधियाना रेलवे स्टेशन पर आये। वे बैठे हुए आपस में बातें कर रहे थे। उनके बहनोई हाकिम राय, जो वहाँ स्टेशन मास्टर थे, उधर से गुज्जरे और उन्होंने आवाज़ सुन कर साधुवेशधारी अपने जीजा साहिब कपूर चन्द को पहचान लिया। वे धीरे से एक पुलिस अधिकारी को बुला कर लाये और कहा कि यह व्यक्ति अपने घर से भागा हुआ है। घर वाले इसकी तलाश में हैं। आप इसको बन्दी

बना लें। फिर उन्होंने कपूर चन्द के घर पायल नगर सूचना भेजी कि कपूर चन्द यहाँ बन्दी है। आप आ जाएं।

कुछ समय पश्चात् उनके पिता, पत्नी और परिवार के अन्य लोग लुधियाना आ गए। सभी की भेंट पुलिस स्टेशन पर हो गई। उनके पिता ने कहा, "तुम्हारी पत्नी तुम्हारे वियोग में बहुत दुःखी है। यह दिन रात रोती रहती है। हम इससे बहुत परेशान हैं। तुम घर में नहीं रहना चाहते तो ठीक है। इसे अपने साथ रख लो।"

यह सुन कर पं० कल्याण दास को पत्नी स्वीकार कर उन्हें अपने साथ रखना पड़ा। उन्होंने निश्चय किया कि यदि पत्नी को साथ में रखना ही है तो क्यों न इसे भी बापू ज्वाला सिंह जी की सेवा में ले जाकर 'नाम' की दीक्षा ली जाये। इसी में हम दोनों का कल्याण निहित है। अन्ततः पं० कल्याण दास अपनी पत्नी प्रेम देवी को साथ लेकर बापू जी की सेवा में उपस्थित हुए और अपने अपराधों के लिए बार-बार क्षमा याचना की। बापू जी भक्त-वत्सल संत थे।

बापू ज्वाला सिंह जी ने उन्हें नाम दीक्षा दे कर साधना की विधि बताई। बापू जी ने उनका नाम कपूर चन्द से बदल कर कल्याण दास रखा और पति-पत्नी दोनों को उपदेश दे कर निहाल कर दिया।

एक दिन ओम जी समाधि में बैठे थे और उधर बापू ज्वाला सिंह जी के पास पं० कल्याण दास जी बैठे थे। बापू ज्वाला सिंह जी जो सर्वज्ञ थे और जो अपने प्रिय शिष्य श्री ओम जी की पल-पल की अवस्था का ज्ञान रखते थे, पं० कल्याण दास जी से बोले, "चलो तुम्हें दिखायें; आज देवता नारायण दत्त जी को शुकदेव जैसी अवस्था प्राप्त हुई है।"

यह सुन कर पं० कल्याण दास तैयार हो गए। बापू ज्वाला सिंह जी बादाम रोगन और केवड़े की दो शीशियाँ ले कर पं० जी के साथ ओम जी के चौबारे पर पहुँचे। वहाँ पहुँच कर देखा कि चौबारे की

कुण्डी अन्दर से बन्द है। पं० कल्याण दास जी ने दरवाजे की चूल को उखड़वाया और कमरे में प्रवेश कर के देखा कि ओम जी पद्मासन लगाए ध्यान मग्न हैं। उनका सिर भूमि पर टिका है और नाक से रक्त बह रहा है। उनके चारों ओर रक्त ही रक्त था।

बापू ज्वाला सिंह जी ने अपने पवित्र हाथों से उनके सिर को ऊपर उठा कर सीधा किया किन्तु सिर झुक कर पुनः भूमि पर टिक गया। फिर बापू ज्वाला सिंह जी ने जोर लगा कर ओम जी की देह को सीधा किया और उनकी नासिका और कानों में कुछ बून्दै बादाम रोगन की डाली। तत्पश्चात् शरीर पर बादाम रोगन की मालिश भी की। सारी रात मालिश चलती रही।

दूसरे दिन प्रातः ओम जी को होश आ गया। होश में आते ही वे मस्ताने हो गए और चरण पादुकायें पहन कर सड़कों और घरों की छतों और मुण्डेरों पर भगवान् के नाम की मस्ती में नृत्य करने लगे। उनका मन और चित्त ब्रह्मानन्द की उस उर्ध्वभूमि पर अवस्थित था जिसे पाने के लिए बड़े-बड़े महात्मा, मुनि और देवता भी तरसते हैं। उस अखण्ड, चिरन्तन एवं सनातन ईश्वर के साथ एकाकार होते ही ब्रह्म लोक आदि समस्त लोक उनके दास हो गए। उन्हें गुरु कृपा से उस परम पद की प्राप्ति हो गई जिसे पा लेने के बाद कुछ भी पाना शेष नहीं रहता। इसके पश्चात् ओम जी पाँच वर्षों तक नूरशाह रह कर पूर्ण श्रद्धा एवं

श्री नारायण चरितामृत

भक्ति से गुरु-सेवा में रत रहे। इसी बीच लोगों को अपने धर्मोपदेशों से निहाल करते करते उन्होंने कई लीलाएं भी दिखाई।

जब लोगों को धीरे-धीरे ओम जी की उच्च आध्यात्मिक अवस्था के बारे में प्रकाश होना आरम्भ हुआ तब लोगों ने मक्खियों के समान उनके इर्द-गिर्द मंडराना शुरू कर दिया। लोग अपनी भौतिक इच्छाओं की तृप्ति के लिए ओम जी के पास आने लगे। कोई उनसे पुत्र माँगता तो कोई धन की कामना करता। यह सब देख कर ओम जी ने लोगों को भरमाने के लिए अपनी वृत्ति और स्वभाव बदलने का फैसला किया।

ओम जी मस्ताने हो कर स्थान-स्थान घूमने लगे और किसी के पास आने पर उसे हड्डियाँ आदि दिखा कर दूर कर देते थे। कभी लोगों को डाँटते-फटकारते और कभी शायरी करते हुए लोगों को चरित्रवान बनने का उपदेश देते थे। इधर-उधर भ्रमण करते हुए लोगों को ऊँची आवाज में कहते, "नेक नीयत बनो, बदचलनी और बेईमानी छोड़ो, शुभ कर्म करो।"

कभी-कभी ओम जी अपने चारों ओर हड्डियां रख कर उनके मध्य बैठ कर समाधि लगाते थे। नगर वासी परिचित और अपरिचित उनकी डाँट-फटकार सुन कर तंग आ गए। तब कुछ अज्ञानी व्यक्ति जो

एक सच्चे संत को पहचानने में असमर्थ थे, उन्होंने मिल कर सरकार से ओम जी के व्यवहार की शिकायत की और उन्हें हवालात भेज दिया। ओम जी को जेल की कोठरी में बापू ज्वाला सिंह जी के दर्शन हुए। रात भर आपस में बातें होती रही। प्रातः होते ही वे जेल की कोठरी से लोप हो गए। जब थानेदार ने देखा कि ओम जी अपनी कोठरी में नहीं हैं तो वह परेशान हो उठा। उसने सिपाहियों से पूछा,

"रात वाला कैदी कहाँ है? वह अपनी कोठरी से कैसे और कहाँ चला गया?"

तभी किसी ने आकर बताया कि वह तो नगर के चौक में घूम रहे हैं। यह सुन कर सिपाही वहाँ गए और उन्हें थाने चलने को कहा। ओम जी बोले कि हम इस तरह नहीं जायेंगे। हथकड़ी लगाओ तो हम जायेंगे। सिपाही हथकड़ी लगा कर उनको थानेदार के सामने ले आये। थानेदार ने ओम जी का दीदार किया और समझ गया कि वे एक महान् आत्मद्रष्टा महापुरुष हैं। पिछली रात के करिश्मे से भी वह समझ गया था कि ओम जी एक दिव्य विभूति हैं।

वह भाव विभोर हो कर उनके चरणों में नत मस्तक हो गया और विनती की, "महाराज जी, मुझे आपकी महिमा का ज्ञान नहीं था। मुझसे अपराध हो गया है। कृपा कर के मुझे क्षमा करें।" ओम जी परम् दयालु थे। उन्होंने उस थानेदार को क्षमा कर वहाँ से प्रस्थान किया।

बापू ओम जी महाराज जी अति कोमल एवं संवेदनशील थे।

कभी-कभी उनका कवि हृदय प्रकृति की मनोरम छटा देख भावविभोर हो कर सुन्दर कविता और शायरी के रूप में स्वयं को अभिव्यक्त करता था। एक दिन बापू ओम नारायण दत्त जी फतहपुर बगीचे में बैठे हुए थे। सामने अति सुन्दर फूलों की मन मोहने वाली कतारें थी। उन कतारों के साथ ही हल्ट की मंद-मंद आवाज़ आ रही थी। बापू जी ने बहुत खूबसूरत शेयर अर्ज किया-

शेयर - **फूल का खिलना सब्जे का आना निगाह में। सब बात है खुशी की खराबी है चाह में ।। जब मौत ने आकर धोनी की जान ली। फिर फरक क्या बताओ गदा और शाह में ।।**

कभी-कभी बापू जी परमेश्वर के चिन्तन में निमग्न हो आनन्दमय हो कर शेयर बोला करते थे-

था जिनकी खातिर नाच करा, जब मूरत उनकी आऐ गई। कहीं आप गया कहीं नाच गया, और लहर की तन लहराऐ गई। उस रसीऐ छैल छबीले की, छब नैनों अन्दर छाऐ गई। इक मूर्छा गत सी आई गई, और ज्योती में जोत समाऐ गई। है रंग उन्हीं के रंग भरे, और भाव उन्हीं के सांचे हैं। जो बेगत बेसुर ताल हुए, बिन ताल पखावज नाचे हैं।

आम जन-साधारण की प्रायः यह मनोवृत्ति होती है कि उन का मन, चित्त एवं बुद्धि भौतिक विश्व और उसके नाम-रूपात्मक विभिन्न पदार्थों की प्राप्ति की इच्छा में ही लगी रहती है। सिद्ध-पुरुषों के पास आने वाले साधारण जन आमतौर पर किसी न किसी सांसारिक इच्छा की पूर्ति की तृप्ति हेतु उनके दर पर सिर झुकाते हैं। कोई संतों, महापुरुषों से पुत्र की याचना करता है तो कोई स्त्री सुख, परिवार सुख या धन, वैभव और सामाजिक प्रतिष्ठा की अपेक्षा रखता है ऐसे लोगों की बुद्धि उस भाव-भूमि में अवस्थित नहीं होती कि वह किसी संत-महापुरुष की महनीयता का पार पा सके। सांसारिक आधि-

व्याधियों और सन्तापों से ग्रस्त मानव जीवन की परीक्षाओं से क्लान्त हो कर जब किसी महान् आत्मा के पास जाता है तब उसका उद्देश्य उस महापुरुष से आध्यात्मिक लाभ लेना नहीं अपितु अपनी उस इच्छा की तत्कालिक पूर्ति करवाना होता है जिसकी अतृप्ति उसे विषादग्रस्त बना रही होती है।

संतों के आशीर्वाद से जब उसकी असम्भव प्रतीत होने वाली इच्छाओं की पूर्ति होती है तब उसे प्रत्यक्ष चमत्कार जैसा अनुभव होता है। पूर्ण गुरु की कृपा से जब उसके अकाट्य प्रतीत होने वाले कर्मबन्धन कटने लगते हैं तब उसे आंतरिक अनुभूति होती है कि उसके साथ चमत्कार घटित हो रहा है।

श्री नारायण चरितामृत

भक्त वत्सल प्रभु अपने प्रिय भक्तों के लिए सुन्दर लीलायें करते हैं। इन लीलाओं से भक्तों के मन में गुरु के प्रति विश्वास और दृढ़ होता है और धीरे-धीरे उसके कर्म-चक्र का क्षय होने लगता है। सच्चे गुरु के सामीप्य से उसके विकार एक-एक कर नष्ट होने लगते हैं और उसका मन निर्मल हो उठता है और हृदय कमल खिल उठता है। सच्चे भक्तों को सदैव स्मरण रखना चाहिए कि ईश्वर की दया गगनचुम्बी अट्टालिकाओं से बहुत बड़ी है।

ईश्वर तुल्य गुरु जब अपनी दया से प्राणियों के हितार्थ चमत्कार करते हैं तब उनमें जीवन के वास्तविक उद्देश्य अर्थात् भगवद्-प्राप्ति के लिए तृष्णा भी जगाते हैं। जीवन में दुःख और परीक्षायें व्यक्ति को समय-समय पर यह एहसास करवाती हैं कि यह जीवन वस्तुतः सुख और दुःख, प्रकाश और छाया, जन्म एवं मृत्यु का ही खेल है। भले ही अपने आप को जानने की प्रक्रिया में असंख्य जन्म धारण करने पड़ें परन्तु गुरु की शाश्वत करुणा व्यक्ति को शनैः शनैः उस पथ पर आरुढ़ कर ही देती है जो सच्चे साधकों का चिर काल से अभीष्ट पथ है। इसीलिए गुरु अपने करिश्मों, चमत्कारों और असम्भव को सम्भव कर देने की शक्ति के चलते अपने भक्तों की जीवन उर्जा को उर्ध्वगामी बनाने में कोई कमी रहने नहीं देते।

बापू ओम जी एक महान् संत थे जो प्रति पल आत्मानन्द में

निमग्न रहने के साथ-साथ इस बात की चेष्टा भी करते थे कि उनके पास आने वाले भक्त जनों की सांसारिक मनोकामनाओं की पूर्ति होने के साथ-साथ आत्मिक उन्नति भी हो जिससे वे संसार के चक्र से बाहर निकल कर स्वयं में स्थित हो सकें। आदि शंकाराचार्य ने 'विवेकचूड़ामणि' में ऐसे महान् गुरुओं के लक्षण बताते हुए लिखा है-

शान्ता महान्तो निवसन्ति सन्तो वसन्तवल्लोकहितं चरन्तः । तीर्णाः स्वयं भीमभवार्णवं जना-नहेतुनान्यानपि तारयन्तः ।।

अर्थात् ऐसी महान् आत्माएं होती हैं जिन्होंने पवित्रता और महानता की प्राप्ति कर ली है, जो बसन्त ऋतु के आगमन की तरह मानवजाति का कल्याण करती हैं। उन्होंने इस विश्व रूपी भयानक सागर को पार कर लिया है और बिना किसी स्वार्थ के वे दूसरों को भी इसे पार करने में सहायता करते हैं।

बापू ओम जी का आविर्भाव भी शिशिर के बाद बसन्त के आगमन के समान ही था। अपने आशीर्वाद से उन्होंने अपने भक्तों के कार्य संवारे और उनका सर्वविध कल्याण किया। वैसे तो हरि अनन्त हैं और हरि कथा भी अनन्त है। परन्तु भक्तजनों के हितार्थ इस ग्रंथ में बापू

ओम जी के कुछ चमत्कार वर्णित किए जा रहे हैं। इन महान् लीलाओं और करिश्मों से उस महान् विभूति की महनीयता का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

वधावा राम वधवा कस्बा फतेहपुर के निवासी थे। उनके विवाह के कई वर्षों बाद भी उनके कोई सन्तान नहीं हुई। उनकी पत्नी सन्तान न होने से बहुत दुखी रहती थी और इसी कारणवश उनके घर में अशांति बनी रहती थी। वधवा दम्पत्ति की हार्दिक इच्छा थी कि उनके घर पुत्र उत्पन्न हो जाये। किसी सज्जन के सुझाव पर वे बहुत श्रद्धा और विश्वास के साथ नूरशाह ओम जी के डेरे पर पहुँचे। चौबारे का द्वार बन्द

था। उन्होंने धीरे से खोल कर झांका तो अन्दर का दृश्य देख कर बहुत भयभीत हो गए। उन्होंने जो देखा वह कल्पनातीत था। उन्होंने देखा कि महाराज जी के हाथ, पैर, सिर, धड़ सभी कटे हुए इधर-उधर पड़े हैं। उन्होंने समझा कि किसी दुष्ट ने उनकी हत्या कर दी है। वे घबरा कर उल्टे पैर लौटने लगे।

तभी उन्हें आवाज सुनाई दी " वधावा राम आओ।" वधावा राम ने मुड़ कर देखा कि वहाँ एक शिशु लेटा हुआ पैर का अंगूठा चूस रहा है। यह देख कर वह और भी आश्चर्यचकित हो गए। वह घबराहट में जीने की ओर मुड़े तो उन्हें फिर आवाज़ सुनाई दी 'वधावा राम कहाँ जा रहे हो?" उन्होंने फिर पीछे मुड़ कर देखा तो पलंग पर उस शिशु के

स्थान पर स्वयं ओम जी को विराजमान पाया।

वधावा राम बापू ओम जी की करामात समझ गया। वह गद्-गद् हो कर उनके श्री चरणों से लिपट गया और स्तुति करने लगा। कुछ समय पश्चात् वधावा राम वधवा ने ओम जी को विनती की कि महाराज जी, आपकी कृपा से मेरे यहाँ एक पुत्र उत्पन्न हो जाए तो मेरा वंश चल जाए। ओम जी प्रसन्न हो कर बोले कि वृधावा राम, तुम्हारे यहाँ एक नहीं पाँच पुत्र उत्पन्न होंगे। वे सभी दीर्घायु, सम्पन्न और ईश्वर भक्त होंगे। उनके नाम इस प्रकार रखना- किशन चन्द, बिशन चन्द, राम चन्द, नारायण दास और नन्द लाल। समय आने पर उनके यहाँ पाँच पुत्रों ने जन्म लिया। उनके नाम ओम जी ने उनके जन्म से पूर्व ही रख दिए थे। उनका एक परिवार केशव नगर, नुमाइश कैम्प, सहारनपुर में निवास करता है जो ओम जी और बापू ज्वाला सिंह जी के श्री चरणों में विशेष श्रद्धा भक्ति रखता है। उनके परिवार के कुछ सदस्य जालन्धर और दिल्ली में निवास करते हैं।

बापू ओम जी की कृपा अबाध रूप से सभी भक्तों पर समान रूप से रहती थी। हिन्दू, मुस्लिम, सिख आदि सभी सम्प्रदायों और वर्गों के लोग बापू जी में पूर्ण विश्वास रखते थे। भारतीय जन मानस की यह विशेषता है कि वह आत्मिक रूप से विकसित संत को पहचान कर उनके प्रति विशेष श्रद्धा भाव रखता है और ऐसी शक्तियों का आशीर्वाद

प्राप्त कर लाभान्वित भी होता है। सच्चे भक्त महान् आत्माओं को पहचान ही लेते हैं।

ऐसे ही एक मुस्लिम भक्त थे- मियां माछिया सूरी। वे बापू ओम जी के अनन्य सेवक थे। वह बड़े धार्मिक, ईमानदार, और खुदा के नेक बन्दे थे। एक दिन मियां माछिया सूरी जंगल से गुजर रहे थे। शाम का समय था। उसी जंगल में बापू ओम जी योग-साधना किया करते थे। अचानक मियां माछिया सूरी की नज़र एक स्थान पर पड़ी और उसने देखा कि बापू ओम जी के हाथ, पैर, सिर और धड़ कटे हुए इधर-उधर पड़े हैं। वे इस दृश्य को देख कर घबरा गए। उनके होश उड़ गए। उन्होंने सोचा कि किसी ज़ालिम ने बापू जी का कत्ल कर दिया है। वे सदमे की अवस्था में नगर की ओर दौड़ पड़े ताकि संगत को इस दुर्घटना की सूचना दे सकें। जैसे ही वह एक सरोवर के निकट से गुजरे तो उन्हें यह देख कर आश्चर्य मिश्रित हर्ष हुआ कि ओम जी महाराज जी पूर्णतया स्वस्थ हैं और सरोवर में मुँह-हाथ धो रहें हैं।

बापू जी की नज़र भी माछिया सूरी पर पड़ी तो उन्होंने ज़ोर से पुकार कर कहा, "मियां माछिया सूरी, कहाँ दौड़े जा रहे हो? हमारे पास आईए।" माछिया सूरी ओम जी के पास गए और अवाक् खड़े रहे। तब बापू जी ने उनका कुशल क्षेम पूछ कर कुरान शरीफ़ के अनुसार उन्हें कुछ उपदेश दिए। उन्होंने माछिया सूरी को जरूरत मन्दों

की सेवा करने और दूसरों के दु:ख दर्द को बाँटने का उपदेश दिया।

मियां माछिया सूरी ने जीवन भर महाराज जी के उपदेशों का पालन किया। आगे चल कर वे एक प्रसिद्ध सूफी सन्त हुए। उनकी मृत्यु के बाद उनके सेवकों ने उनका मज़ार बनवाया। वहाँ हर वर्ष मेला लगता है। जियारत के लिए आये हुए भक्त अपनी मुरादें पाते हैं। उनके परिवार के मियां गुलाम सूरी नामक सज्जन अब भी पकिस्तान में रहते हैं।

समाज के सभी वर्गों के लोग बापू जी से अतिशय प्रेम करते थे। विभिन्न सम्प्रदायों के साधु-संत भी उनसे भेंट करने आते रहते थे। महाराज जी उन सभी को यथोचित आदर देते थे। ओम जी के चौबारे पर आध्यात्मिक विषयों पर चर्चाएं होती और भक्तजनों को उनसे अध्यात्म के गूढ़ तत्वों की विवेचना करने का सुअवसर प्राप्त होता। आगन्तुक संत एवं भक्तजन अपनी शंकाओं का निवारण कर सन्तुष्ट हो कर लौटते। सभी उनके ज्ञान एवं शक्ति से प्रभावित होते और उनसे अभूतपूर्ण प्रेरणा प्राप्त करते। उनके चमत्कार भी भक्तों के मन में परम-तत्त्व को जानने की जिज्ञासा उत्पन्न करते।

एक बार निर्मल सम्प्रदाय के एक बड़े संत पालकी में बैठ कर उनसे मिलने आए। वे सिख संत थे। ओम जी उस समय गुगेरा ग्राम में

राय साहब नारायण सिंह के बाग में ठहरे हुए थे और बैठ कर हुक्का पी रहे थे। आगन्तुक संत को आदरपूर्वक बापू जी के निकट ही बैठाया गया। ओम जी हुक्के में कश लगाते और धुआँ छोड़ते रहे। हवा के रुख के साथ धुआँ बार-बार सिख संत की ओर जाता था।

उस संत को सिख होने के कारण तम्बाकू के धुएँ और हुक्के से नफरत थी। किन्तु वे अपने मेज़बान को इसकी शिकायत नहीं कर पा रहे थे। इससे उनकी वार्ता में बार-बार बाधा पड़ती थी। ओम जी तो त्रिकालदर्शी थे, अन्तर्यामी थे। वे उन संत जी की परेशानी को भी अच्छी प्रकार समझ रहे थे। आखिरकार जब वह संत परेशान हो गए तो महाराज जी ने मुस्कुराते हुए चिलम ही उठा कर उनके ऊपर उड़ेल दी।

संत जी एकदम हतप्रभ हो गये और जलने से बचने के लिए हड़बड़ा कर खड़ा होना ही चाहते थे कि उन्होंने देखा कि उनका दामन गुलाब के फूलों से भर गया है। सब जगह धुएँ की दुर्गन्ध के स्थान पर गुलाब की सुगन्धि व्याप्त हो गई है। चिलम की आग का कहीं कोई नामो-निशान नहीं है। फिर तो वह संत अपने मनोविचारों पर लज्जित होते हुए बोले, "महाराज साहिब, क्षमा करना। हमने आपके हुक्का पीने के राज़ को जाना और समझा नहीं था। हमसे भूल हो गई।" उसके बाद संत जी ओम जी से विदा ले कर अपने स्थान को लौट गये।

124 बापू ओम जी की लीलाएं अति मनमोहक होती थीं। उनकी लीलाओं के पीछे कोई न कोई नेक उद्देश्य छिपा होता था जिनके पीछे प्राय: जन-कल्याण की भावना होती थी। एक बार बापू जी बहादुर चन्द पसरीचा के बाग में ठहरे हुए थे। पसरीचा उनके अनन्य भक्त थे और छोटे से जमींदार थे। एक दिन ओम जी ने उनकी श्रद्धा भक्ति से प्रसन्न हो कर कहा कि बहादुर चन्द एक रजिस्टर लाओ। रजिस्टर मंगाया गया।

बापू जी ने स्वयं उस रजिस्टर में अपने आशीर्वाद लिखे - बहादुर चन्द पसरीचा, हम तुम्हें डिप्टी कमिश्वर मिन्टगुमरी द्वारा जैलदार बनवा देंगे। तुम्हें ऑनरेरी मजिस्ट्रेट बनाया जाता है। तुम्हें आला जमींदार, जागीरदार और राय साहब की पदवी दी जाती है। ऐसा लिखने के बाद बापू ओम जी ने अन्त में अपने हस्ताक्षर भी कर दिए। वे तो औघड़ दानी थे, परम कृपालु थे। उनकी करुणा असीम और उनका प्रेम शाश्वत था। अधिक से अधिक जो भी हो सकता था उन्होंने आशीर्वाद रूप में दे दिया।

वह रजिस्टर आज भी पसरीचा परिवार के पास सुरक्षित है। महाराज जी का आशीर्वाद फलीभूत भी हुआ। उनका घराना उस क्षेत्र का सम्मानित घराना बन गया। वे बड़े जमींदार बने। उन्हें राय साहब की पदवी भी मिली। भारत विभाजन के बाद इनका परिवार राय साहब

श्री नारायण चरितामृत

125

माला सिंह, सरदार बख्तावर सिंह आदि 'टोहाना' (हरियाणा-हिसार) में निवास करता है। उनका परिवार आज भी महाराज जी के प्रति विशेष श्रद्धा भक्ति रखता है।

बापू ओम जी का वरदान आज भी फलीभूत हो रहा है। उनके परिवार के हरपाल सिंह हरियाणा कांग्रेस के प्रधान रहे हैं और भारतीय संसद के सदस्य भी रहे हैं। उन्हीं के परिवार के हुकम सिंह भी हरियाणा सरकार में एम. एल. ए. रहे हैं। हरपाल सिंह जी के पुत्र परमवीर सिंह आज कल हरियाणा के कृषि मंत्री हैं। बापू ओम जी का आशीर्वाद न केवल इस परिवार के बुजुर्गों अपितु उनकी वर्तमान पीढ़ी के लिए भी वैसा ही फल रहा है।

बापू ओम जी जब किसी को आशीर्वाद देते थे तब उस व्यक्ति का कल्याण होना निश्चित ही होता था। जिन व्यक्तियों को संतों की इस कृपा-दृष्टि के बारे में पता होता था, वे तो उनसे आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए हर सम्भव कोशिश करते थे और जो अज्ञानी व्यक्ति इन रहस्यों से अपरिचित होते थे वे संतों को प्रसन्न करना तो दूर, उन्हें नाराज़ कर बड़ी मुसीबत मोल ले लेते थे। इस विषय में एक प्रसंग उल्लेखनीय है।

एक बार बापू ओम जी नूरशाह नगर आए हुए थे। वहाँ कपड़े का

एक बड़ा व्यापारी था जिसका नाम सय्याद मल जग्गा था। उसकी काफी बड़ी दुकान थी। उसकी दुकान में सभी प्रकार के वस्त्र हर समय उपलब्ध होते थे। एक बार ओम जी उसकी दुकान पर गए। ओम जी को एक दस्तार (पगड़ी) की आवश्यकता थी।

उन्होंने सय्याद मल जग्गा से एक दस्तार की फरमाइश की। उसकी दुकान में दस्तार के लिए मल-मल के कपड़े के तीन थान रखे थे। फिर भी उसने टालने के लिए झूठ बोल दिया कि उसे अमृतसर जा कर थान लाना पड़ेगा। जग्गा जानता था कि महाराज जी मल-मल का बीस गज़ का पूरा थान दस्तार के रूप में बाँधते हैं। एक पूरा थान देने का साहस वह नहीं जुटा सका। ओम जी तो सर्वज्ञ थे, अन्तर्यामी थे। उन्होंने उसके मनोभावों को जान लिया और कहा, "सय्याद मल, झूठ बोलना महापाप है। दुकान में जो तीन दस्तारें पड़ी हैं उनमें क्या आग लग गई।"

इतना कह कर बापू ओम जी वहाँ से चले गए। ओम जी के जाने के बाद उस दुकान में अपने आप ही आग लग गई और सारे कागजात, बही खाते और सारा माल जल कर राख हो गया। सय्याद मल यह सब देख कर बहुत हैरान हुआ कि बापू ओम जी तो वासिद्ध हैं। तब उसे अपनी गलती का एहसास हुआ और घोर पश्चाताप भी हुआ कि उसने एक संत से झूठ बोलकर अच्छा नहीं किया। उसी पाप की यह सजा

उसे मिली है। अब उनकी शरण में जाने से ही उद्धार सम्भव है।

इसके उपरान्त पश्चाताप में भर कर वह अपनी बिरादरी और संगत को साथ लेकर बापू जी से क्षमा याचना करने गया। उसने बार-बार बापू जी के श्री चरणों में क्षमा याचना की। ओम जी तो अति दयालु थे। उन्होंने जग्गा को क्षमा दान दिया और उसकी प्रार्थना पर उसकी दुकान और घर पर चले आये। जग्गा ने उनका अभूतपूर्व स्वागत किया। जग्गा ने बापू जी के मार्ग में नए मलमल के कपड़े के थान बिछवा दिये और पूरे रास्ते उन पर फूलों की वर्षा की। जग्गा ने सड़क से लेकर घर तक मलमल का कपड़ा बिछा रखा था। उसके मन का सारा मैल निकल गया। ओम जी ने प्रसन्न मुद्रा में फरमाया,

"सय्याद मल दुःखी न हो। तेरी यह राख भी सोना बन जाएगी। तेरे सब कष्ट दूर हो जायेंगे।"

बापू जी के आशीर्वाद से बही-खाते आदि जल जाने पर भी व्यापारियों ने जग्गा का सारा पैसा ईमानदारी से उसको वापिस कर दिया। जिन लोगों ने उससे पैसा लेना था वे पैसा लेने नहीं आए वरन् जिन व्यक्तियों ने उसका पैसा लौटाना था उन सभी ने स्वयं आ कर उसका सारा पैसा लौटा दिया। उसकी दुकान पूर्ववत् चलने लगी। वह फिर से सम्पन्न हो गया। उसने प्रण किया कि वह जीवन में कभी भी झूठ नहीं बोलेगा, व्यापार को ईमानदारी से चलायेगा और माल पर

मुनासिब लाभ लेगा।

कभी-कभी गुरु को शिष्य का अहंकार और विकार दूर करने हेतु कुछ लीलाएं भी करनी पड़ती हैं। भक्त का अहंकार भगवान का प्रिय आहार है और भगवान का क्रोध भी छदम् में वरदान ही होता है। ईश्वर अपने भक्तों का सर्वविध कल्याण करने के लिए जो भी कहते हैं या करते हैं उसके मूल में मूल चेष्टा तो उस के विकार दूर कर उसका हित करने की ही होती है। ओम जी ने भी सय्याद मल जग्गा को यही शिक्षा दी कि व्यक्ति को असत्य भाषण नहीं करना चाहिए।

बापू ओम जी एक पूर्ण संत थे। उनके भक्तों को उनमें अटल विश्वास था। वहीं कुछ ऐसे लोग भी थे जिन्हें ओम जी की शक्तियों और पूर्णता के विषय में संशय था। साधारणतया लोग किसी भी संत की महानता का निर्धारण उनका भगवद् प्रेम देख कर नहीं करते। ऐसे लोगों के लिये किसी भी संत को महान् घोषित करने के लिए चमत्कारों का घटित होना अनिवार्य सा हो जाता है। कलियुग में लोगों की मानसिकता ही कुछ ऐसी है कि वे चमत्कार को ही नमस्कार करते हैं। इस प्रसंग में एक दृष्टान्त द्रष्टव्य है।

एक बार सैयद वंश के एक तहसीलदार नूरशाह में सरकारी दौरे पर आये। उन दिनों सरकारी अधिकारी का दौरे पर आना एक विशेष

अवसर का रूप ले लेता था। वह तहसीलदार थाने के पास निरीक्षण भवन में ठहरे थे। उस क्षेत्र के दूसरे गणमान्य व्यक्ति भी शिष्टाचार के नाते अधिकारी से मिलने आते थे। ऐसे ही एक शाम वह तहसीलदार कुछ आगन्तुकों के साथ खुले मैदान में बैठे थे। उसी समय ओम जी संन्ध्या भ्रमण के लिए उधर से गुज़रे। उन्होंने सफेद सादे वस्त्र धारण किए हुए थे। उनके साथ कुछ भक्त भी थे।

तहसीलदार ने समझा कि वे लोग उनसे मिलने आ रहे हैं किन्तु महाराज जी वहाँ न रुकते हुए अपने मार्ग पर चलते हुए आगे निकल गए। तब तहसीलदार ने पूछा, "ये कौन सज्जन हैं?" वहाँ बैठे हुए कुछ व्यक्तियों जिनमें विलायत शाह, जैलदार और जगन्नाथ गुम्बर थे, में से नायब जैलदार ने बताया कि ये एक सिद्ध महापुरुष ओम जी हैं। आध्यात्मिक शक्ति में इन जैसा दूसरा संत कोई नहीं है। उसने ओम जी की प्रशंसा करते हुए कहा कि ये बहुत ही दयालु हैं और सब के प्रति प्रेम भाव रखते हैं। ये किसी भी प्रकार के भेद-भाव से परे हैं।

इस क्षेत्र के हिन्दू, मुसलमान, सिख और ईसाई इनका समान रूप से आदर करते हैं और इन पर पूर्ण विश्वास भी करते हैं। इतना सब सुन कर भी तहसीलदार ओम जी से प्रभावित नहीं हुआ। उसे अपनी तहसीलदारी और सैयद पन का थोथा अहंकार था। उसने कहा कि हिन्दू संत मुसलमान पीर-पैगम्बरों की तरह सिद्ध नहीं होते। इस पर

ऐतराज करते हुए उपस्थित व्यक्तियों ने एक स्वर में कहा, "ये तो परमहंस हैं, सिद्ध-महापुरुष हैं, चमत्कारी हैं। आज इन जैसा कोई दूसरा संत नहीं है।"

तहसीलदार ने कहा, “चलो, हम भी आजमाते हैं, इनमें कितनी रुहानी ताक़त है।" तहसीलदार और अन्य व्यक्ति ओम जी से मिलने उनके पीछे-पीछे चल दिए। उस समय जंगल में ओम जी के सामने पास ही से होकर हिरणों का एक झुण्ड जा रहा था। हिरण लोगों को आते देख डर कर भागने लगे। ओम जी ने हिरणों को आदेश दिया, "ओम ठहरो", हिरण वहीं रुक गए। फिर ओम जी ने कहा, "ओम जाओ।" इतना कहते ही हिरणों का झुण्ड कुलाँचें भरता हुआ वहाँ से चला गया। ओम जी ने एक हिरणी को जो सबसे पीछे दौड़ रही थी कहा, "ओम ठहरो"। यह सुनते ही वह वहीं रुक गई। फिर उन्होंने लक्ष्मण सिंह मेंहदीरत्ता से कहा कि इसको पकड़ लाओ। वह गया और हिरणी को पकड़ लाया। हिरणी चुपचाप उसके साथ चली आई।

तहसीलदार और अन्य लोगों ने यह चमत्कार देखा तो चकित रह गये। उन सभी ने आगे बढ़ कर महाराज जी के चरण-स्पर्श किए। तहसीलदार ने भी क्षमा-याचना की। ओम जी ने सभी को अपने आशीर्वाद से नवाज़ा और अपने चौबारे पर लौट गए। इस घटना से उस तहसीलदार ने यह समझ लिया था कि ओम जी असाधारण शक्ति

सम्पन्न योगी हैं।

• वह योगी जो ब्रह्म में स्थित है वह सम्पूर्ण जगत को ब्रह्ममय देखता है। सृष्टि के कण-कण में वह परमात्मा का दर्शन करता है। उसे चारों ओर ईश्वरीय सत्ता के अतिरिक्त और कुछ भी अनुभूत नहीं होता। केवल ऐसी अवस्था प्राप्त योगी ही सही अर्थों में सभी से प्रेम कर सकता है, अन्य कोई नहीं।

ऐसे योगी की चेतना केवल उसके अपने शरीर से बंधी न रह कर समस्त ब्रह्माण्ड की समष्टि चेतना के साथ एकरूप हो जाती है। तब जड़ चेतन सभी कुछ उस का कहा मानने लगते हैं। बापू ओम जी की भी यही अवस्था थी। सभी प्राणियों के लिए उनके मन में अनन्त प्रेम था। मानवीय बुद्धि के लिए उनकी महिमा का पार पाना असम्भव था। मानवीय बुद्धि जो आमतौर पर विकार-ग्रस्त होती है संत की कृपा के बिना उनके क्रिया-कलापों का भेद नहीं पा सकती और जब संत-कृपा से भेद पा लेती है तब उनके आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रहती। कुछ ऐसा ही अनुभव सरदार नारायण सिंह, इंसपेक्टर पुलिस को हुआ जब बापू ओम जी गुगेरा स्थित उनके बाग में ठहरे थे।

नारायण सिंह जी के बाग में रहते हुए ओम जी की इच्छा हुक्का पीने की हुई तो उन्होंने दो-तीन बार कहा, "ओम जी वंशी बजानी है।" ओम जी हुक्का पीने को वंशी बजाना कहते थे। संयोग की बात

थी कि उस समय वहाँ कोई नौकर-चाकर नहीं था। न चाहते हुए भी श्रद्धावश सरदार नारायण सिंह को ही महाराज जी की चिलम भरनी पड़ी। उन्होंने चिलम भर कर हुक्का उनको दे तो दिया परन्तु मन में अपने प्रति ग्लानि का भाव पैदा हो गया कि सरदार होने के नाते उन्हें हुक्का छूना भी नहीं चाहिए था। यह तो पाप हो गया। ओम जी उनके मनोभावों को जान गये। सरदार नारायण सिंह उनके पास ही बैठे थे। थोड़े समय बाद महाराज जी ने चिलम उठा कर अचानक ही राय साहब के ऊपर उलट दी। वे घबरा कर उठ खड़े हुए। उनके आश्चर्य की सीमा न रही जब उन्होंने देखा कि चिलम की आग लौंग और इलायची में बदल गई। वे गद्-गद् हृदय से ओम जी के चरणों में नतमस्तक हो कर बार-बार क्षमा याचना करने लगे। उन्होंने इलायचियाँ और लौंग इकट्ठी करके बड़े आदर से अपने पास रख लीं। वे लौंग और इलायचियाँ उनके परिवार सरदार शोभा सिंह चावला, करतार सिंह चावला और आज उनके पुत्र ओंकार चावला के पास टोहाना, हिसार (हरियाणा) में अभी तक सुरक्षित हैं।

टोहाना निवासी ओंकार चावला बापू ओम जी प्रदत्त इलायचियों के दर्शन करवाते हुए।

आज भी इस परिवार पर बापू ओम जी की विशेष कृपा है। बापू ओम जी ने अपनी दया और कृपा से बहुत लोगों का कल्याण किया जिसमें नूरशाह में रहने वाली शबराई नामक एक मुसलमान जट्टी भी थी। यह सर्वज्ञात है कि बापू ओम जी भगवान शिव के समान भोले और परम दयालु थे। जिन दिनों बापू जी नूरशाह में निवास करते थे उन दिनों वहाँ के निवासी उनमें अति श्रद्धा-भाव रखते हुए उनकी सेवा में संलग्न रहते थे।

एक दिन बापू जी अपनी मस्ती में नूरशाह की गलियों में से गुजर रहे थे तभी अचानक शबराई ने उन्हें पीछे से आवाज़ लगाई, "वे पंडिता, दुनियां नू पुत्तर दिनां ऐं, मैनू वी पुत्तर दी दात बख्श के जा।" उस स्त्री के ऐसे प्रेम और सरलता से भरे उद्गार सुन कर बापू ओम जी द्रवीभूत हो उठे और उसकी झोंपड़ी की ओर चल पड़े। वहाँ पहुँच कर बापू जी ने उस स्त्री से कहा, "जिन्ने छिन्ने पाणी पिलाएंगी उन्नें पुत्तर जम पैणगें।" यह सुन कर उस स्त्री ने घर में उपलब्ध लस्सी में कुछ पानी डाल कर उसके पाँच गिलास तैयार कर दिए और बापू जी को पिला दिए। समय आने पर उसे पाँच पुत्र-रत्नों की प्राप्ति हुई। ऐसे औघड़दानी थे बापू ओम जी महाराज जी।

बापू ज्वाला सिंह जी की असीम कृपा से ओम जी की आध्यात्मिक शक्ति बढ़ती ही गई। ओम जी किसी का भी दुख-दर्द

नहीं देख सकते थे। यही कारण था कि जब भी वह किसी को कष्ट में देखते थे तो उसके कष्ट को दूर करने का प्रयत्न करते थे। नूरशाह में रहते हुए कभी-कभी वह एक मुसलमान के बेटे के साथ शतरंज खेला करते थे। एक बार खेल खेलते हुए किसी कारणवश खेल अधूरा रह गया और वह लड़का ओम जी की बारी दिए बिना चला गया। अगले दिन वह मृत्यु को प्राप्त हो गया। उसके परिवार वाले शोक से व्याकुल थे। उसका जनाज़ा जा रहा था।

ओम जी ने अपनी छड़ी उस मृतक लड़के की गर्दन पर रख कर कहा, "तुम ऐसे कैसे जा सकते हो। तुमने तो हमारी बारी देनी है।" ओम जी के ऐसा कहते ही वह मृतक जीवित हो गया। उपस्थित जन-समूह यह दृश्य देख अचम्भित हो उठा। जब बापू ज्वाला सिंह जी को इस घटना के विषय में पता लगा तो उन्होंने ओम जी को बुलाया और कहा, "यह ठीक है कि आपके ज्ञान-चक्षु खुल गए हैं और आप की आध्यात्मिक शक्ति दिन-प्रति दिन बढ़ती जा रही है परन्तु संतों को अनावश्यक चमत्कार-प्रदर्शन से दूर रहना चाहिए। परमात्मा के नियमों में हस्तक्षेप करना उचित नहीं है। आप को साधना द्वारा अपनी योग-शक्ति को और बढ़ाना चाहिए। एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकती। आप अब नन्दाचौर चले जाएं। आप पर हमारी कृपा सदैव बनी रहेगी। पूरे विश्व में आपका नाम प्रसिद्ध हो जाएगा। लोग आपके दर से कभी खाली नहीं जाएंगे।"

श्री नारायण चरितामृत

135

बापू ज्वाला सिंह जी की आज्ञानुसार ओम जी अपने जन्मस्थान नन्दाचौर आ गए। नन्दाचौर में उनके तप और ज्ञान का नूर चारों ओर फैलने लगा। उनका आभा मंडल इतना सशक्त था कि लोग उनके पास आने से घबराते थे। भक्त जन उनके सामने आँख तक नहीं उठा पाते थे। उनका तेज उनके रोम-रोम से फूटता प्रतीत होता था। ओम जी की कीर्ति-सुरभि चहुँ ओर फैलने लगी।

नन्दाचौर डेरे पर भक्तों की भीड़ होने लगी। अनावश्यक भीड़ होने से ओम जी की साधना में बाधा पड़ने लगी। भीड़ कम करने हेतु ओम जी ने मस्तानी हालत में रहना आरम्भ कर दिया। वे इधर-उधर से पशुओं की हड्डियां उठा कर लाते और उनका गोलाकार ढेर लगा कर उसके मध्य बैठ कर साधना करते। उन हड्डियों की दुर्गन्ध चारों ओर फैलने लगी। भक्तों का वहाँ बैठना कठिन हो गया। लोगों का वहाँ आना कम होने लगा। फिर भी साहस करके यदि कोई भक्त वहाँ जाता तो उसे ओम जी की डाँट सुननी पड़ती और वह डर कर भाग जाता। जो भक्त उनकी फटकार सहन कर चरण स्पर्श कर लेता वह निहाल हो जाता। उसे आनन्द, सुख एवम् दिव्य शान्ति की प्राप्ति होती। उसकी सभी मनोकामनाएं पूरी हो जाती।

ओम जी ने नंदाचौर में रहते हुए कई चमत्कार किए। ओम जी जैसे सिद्ध पुरुष की चमत्कारी शक्तियां उनके विराट चैतन्य के

आंतरिक जगत में क्रियाशील सूक्ष्म नियमों के पूर्ण ज्ञान का स्वाभाविक परिणाम थी। साधारण जन-मानस इन सूक्ष्म नियमों से परिचित नहीं होता। भुवन मोहिनी माया के समस्त परदों को नष्ट करने हेतु कैवाल बौद्धिक विश्लेषण ही पर्याप्त नहीं है। महान् गुरु की कृपा से निर्विकल्प समाधि अवस्था लाभ कर ही कोई साधक जगतस्रष्टा के रचाए विश्व का भेद समझ सकता है। सृष्टि के समस्त रहस्यों का अनावरण कर चुके ओम जी के लिए कोई भी चमत्कार करना कठिन नहीं था।

एक दिन ओम जी ने नन्दाचौर वासियों को एक अनोखा खेल दिखाया। सभी ग्रामवासी जब प्रातः काल उठे तब सभी ने अपने-अपने पलंग पर फूल पड़े देखे। सभी एक दूसरे से पूछने लगे कि क्या मेरे पलंग पर आपने फूल बरसाये हैं। जब लोग इस प्रकार आपस में बातें कर रहे थे तब नन्दाचौर में विद्यमान बापू ओम जी ने कहा कि आज तो बापू जी अर्थात् बापू ज्वाला सिंह जी की कृपा से यह पुष्प-वृष्टि हुई है। वह गाँव जिसका नाम लेने में भी लोग हिचकिचाया करते थे, लोग सोचते थे कि नन्दाचौर का नाम लेने पर तो भोजन भी नसीब नहीं होगा, ऐसे गाँव में बापू ओम जी की कृपा से प्रत्येक व्यक्ति के घर में पुष्प-वृष्टि होना उनकी असीम कृपा और प्रेम का ही परिचायक है।

जब ओम जी ने नन्दाचौर में निवास करना आरम्भ किया तब

उनके तेज के आगे भक्त जन ठहर नहीं पाते थे। लोग ओम जी की साधना और भारी तपस्या से अवगत तो थे परन्तु उनके पास आने का साहस नहीं कर पाते थे। धीरे-धीरे ओम जी ने अपनी वृत्ति बदली। दया के सागर तो वह थे ही। उन्होंने लोगों के कष्ट दूर करने के साथ-साथ उन्हें सन्मार्ग पर चलने एवं साधना उपासना कर ईश्वर प्राप्ति के मार्ग पर चलने का उपदेश देना प्रारम्भ किया। बापू ओम जी पुरुषों को ओम और महिलाओं को ओमी कह कर पुकारते थे। उनका कोमल हृदय किसी का भी दुःख, कष्ट सहन नहीं कर सकता था।

,

बापू ओम जी ने अपनी कृपा से अनेक भक्तों का उद्धार कर उनकी सभी इच्छाएं पूर्ण की। पूरन सिंह नामक भक्त बापू ओम जी का भोजन लेकर प्रतिदिन दिन में दो बार जाता था। श्री महाराज जी ने उसे कहा, "ओम मैं केवल एक बार ही भोजन करता हूँ, इसलिए तुम केवल एक बार भोजन लाया करो।" उसके बाद पूरन सिंह दिन में एक बार ही भोजन लेकर जाने लगा। एक दिन पूरन सिंह सुबह श्री महाराज जी के पास उपस्थित हुआ तो उसे देख कर ओम जी बोले, "ओम, तुम फिर दो बार भोजन लाना चाहते हो?" पूरन सिंह बोला कि श्री महाराज जी, मैं भोजन लेकर नहीं आया, मैं तो आपको यह बताने आया हूँ कि आपकी ओमी मरणासन्न है। यह सुन कर श्री महाराज जी एक दम उठे और थड़े पर तपस्वी की मुद्रा में बैठ गए।

श्री महाराज जी बोले, "हमें ओमी से दरबार का सेवक लेना है, वह ऐसे कैसे जा सकती है?" वास्तव में महाराज जी हर स्त्री को ओमी और हर पुरुष को ओम कह कर पुकारा करते थे। इस प्रकार महाराज जी कुछ देर ध्यानमग्न रहे और पूरन सिंह उनके समक्ष हाथ जोड़ कर उनकी आज्ञा पाने के लिए खड़ा रहा। कुछ देर बाद महाराज जी ने आँखें खोली और पूरन सिंह को एक इलायची देते हुए कहा, "यह इलायची ओमी को खिला दो।" पूरन सिंह ने श्रद्धापूर्वक एक हाथ में इलायची का प्रसाद लिया और दूसरे हाथ से उसे ढक कर महाराज जी को प्रणाम कर के चल दिए। अभी वह थोड़ी दूर ही चला था कि रास्ते में दूसरी ओर से उसका भाई भागता हुआ आ रहा था। आते ही उसने कहा, "पा, भाभी हिलने लग गई है।"

यह सुन कर पूरन सिंह घर की ओर भागने लगा और जाते ही उस इलायची का चूरा करके अपनी पत्नी के मुँह में डाल दिया। बापू ओम जी की कृपा से पूरन सिंह की पत्नी पूरी तरह ठीक हो गई और बाद में बापू जी के आशीर्वाद से उसने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम मुकन्द लाल रखा गया। उसी मुकन्द लाल ने दरबार के गद्दीनशीन संतों की अतिशय सेवा की और ओम दरबार के ट्रस्ट के प्रधान भी रहे। सेवकों में वह सरदार मुकन्द लाल जज के नाम से जाने जाते थे। उनके परिवार के सदस्य भी बापू जी के दरबार की सेवा में सदैव तत्पर रहते हैं।

बापू ओम जी एक महान् योगी थे जो योग की साधना पद्धतियों में निष्णात थे। समय-समय पर अनेक भक्तों ने उनकी यौगिक शक्तियों का परिचय प्राप्त किया है। एक बार बापू ओम जी अपने बचपन के मित्र रामरखा मल के निवास स्थान (पिंडौरी बाबादास) पर चले गए। बापू जी का अपने बचपन के इस मित्र से बहुत स्नेह था और अपनी मस्तानी वृत्ति में वह अकसर राम रखामल के घर जाया करते थे। ओम जी कई-कई दिन अपने मित्र के पास रुका करते थे।

एक बार जब बापू ओम जी रामरखा जी के यहाँ निवास कर रहे थे, रामरखा जी का सपरिवार गंगा जाने का कार्यक्रम बन गया। उन्होंने ओम जी से घर पर रुकने की प्रार्थना की जिसे ओम जी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। जब सारा परिवार जाने के लिए तैयार हो गया तब ओम जी समाधि लगा कर बैठ गए। यह देख कर रामरखा मल जी ने बाहर से ताला लगा कर चाबी पड़ोसियों को दे दी और समझा दिया कि दो चार घंटे पश्चात् आप ने दरवाज़ा खोल कर ओम जी को चाबी दे देनी है। रामरखा जी तो सपरिवार गंगा स्नानार्थ चले गए परन्तु पीछे से चाबी कहीं खो गई।

जब रामरखा जी गंगा पहुँचे तो देखा कि बापू ओम जी तो पहले ही हरिद्वार पहुँच चुके हैं। ओम जी ने उनके घर की चाबी उन्हें लौटा दी और उनके साथ ही गंगा स्नान किया। गंगा मैया भी परम पवित्र चरण

कमलों का स्पर्श पा कर स्वयं को धन्य समझने लगीं। जब वहाँ से चलने का समय आया तब ओम जी लोप हो गए और रामरखा जी अपने घर वापिस आ गये। जब वापिस आ कर पड़ोसियों से कुशलक्षेम पूछी तब पड़ोसियों ने बताया, "जब आप चाबी दे कर चले गये तब कुछ समय पश्चात् ही चाबी तो गुम हो गई थी और आश्चर्य की बात तो यह थी कि ओम जी भी घर के अन्दर न हो कर बाहर नज़र आ रहे थे।"

रामरखा यह सुन कर हैरान हुए और कहने लगे, "यह कैसे हो सकता है? आप उन्हें यहाँ अपने पास कैसे देख सकते हैं? वे तो हमारे पास हरिद्वार में थे। गंगा तट पर हमने इकट्ठे समय व्यतीत किया है। आप झूठ बोल रहे हैं।" यह सुन कर पड़ोसी कहने लगे, “आप की बात कैसे सत्य हो सकती है? ओम जी तो हमारे पास गाँव में थे और हमें हर रोज़ उन्हें दो बार भोजन करवाने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ

है। रात्रि के समय में भी ओम जी आप वाले घर में ही विराजमान थे। यदि हमारी बात पर आपको विश्वास नहीं आता तो आप दूसरे पड़ोसियों से भी पूछ सकते हैं।"

यह वृत्तान्त सुन कर राम रखा जी समझ गए कि ओम जी वास्तव में ही एक महान् योगी हैं और हमारा कल्याण करने ही आयें हैं। एक ही समय में एक से अधिक शरीर धारण कर अलग-अलग स्थलों पर नज़र आना योगियों के लिए कतई कठिन नहीं है। पातंजलि के योग-

सूत्र में योगियों की इस महान् अवस्था का वर्णन मिलता है। ओम जी दृश्य जगत की सूक्ष्म एकता के सूक्ष्म नियमों से भली भांति परिचित थे।

कभी-कभी ओम जी कुछ ऐसे कौतुक दिखाया करते थे जिनसे प्रत्यक्षदर्शियों को उनकी महनीयता और ईश्वर तत्त्व में स्थिति का स्पष्ट • आभास मिलता था। एक बार नूरशाह निवासी ब्रजलाल गैन्धर ओम जी की सेवा दर्शनार्थ नन्दाचौर गये। वह महाराज जी की सेवा में वहाँ रूके हुए थे। ओम जी प्रतिदिन सैर के लिए वन की ओर जाते थे। एक दिन प्रातः काल ओम जी और ब्रजलाल सैर के लिए चौबारे से उतर कर बाजार से गुजरते हुए वन में पहुँच गए। ब्रजलाल गैन्धर को यह देख कर दुःखद आश्चर्य हुआ कि चौबारे से लेकर वन तक सारे रास्ते एक भी व्यक्ति ने महाराज साहिब को अभिवादन नहीं किया और न ही किसी ने माथा टेका। उसके मन में विचार आया कि सभी स्थानों पर ओम जी का कितना अधिक मान-सम्मान है। लोग उनकी कितनी सादर-अभ्यर्थना करते हैं और यहाँ नन्दाचौर वासी तो उन्हें पहचानते तक नहीं हैं। कहते भी हैं, "घर का जोगी जोगना आन गाँव का सिद्ध।"

ओम जी ने ब्रजलाल के मन की बात जान ली और उसकी परेशानी का कारण समझ गए परन्तु कुछ नहीं कहा। दूसरे दिन प्रातः प्रतिदिन की तरह ओम जी ब्रजलाल को साथ लेकर सैर को निकले तो

चौबारे से उतरते ही महाराज जी का स्वागत सत्कार होना प्रारम्भ हो पाया। बाजार का एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जिसने आगे बढ़ कर ओम जी के चरण-स्पर्श न कियें हों। कुछ भक्तों ने तो बैंड बाजों से उनका स्वागत किया। वन में पहुँचे तो किसानों और चरवाहों ने श्रद्धा-भक्ति से श्री चरणों में माथा टेका। कुछ लोगों ने ओम जी के श्रीकण्ठ में नोटों के हार डाले। रास्ते में जो स्त्री-पुरुष सिर पर गठरियां ले कर जा रहे थे, उन्होंने अपनी-अपनी गठरियां फैंक कर बापू जी को दण्डवत प्रणाम किया।

ब्रजलाल समझ ही नहीं पाया कि यह सब क्या हो रहा है। कल क्या था और आज क्या है? ओम जी ने उसकी शंका का निवारण करते हुए कहा कि ब्रजलाल यह सब माया का खेल है। कल हमने तुम सभी की बुद्धि पर माया का पर्दा डाल दिया था। इसी कारण तुम संशय में पड़ गए थे। आज हमने माया के उस पर्दे को उठा लिया है। ब्रज लाल ने अपनी भूल स्वीकार की, चरण स्पर्श किए और कहा कि महाराज जी मेरे जैसा नादान माया के गूढ़ भेद को कैसे समझ सकता है। पानव देव जी ने ठीक ही कहा है-

कहै पानप माया मोहनी, जिन मोहा सब संसार, बड़े बड़े सुर नर मुनि जन मोहे, रही नाम लीन सूं हार ।।

श्री नारायण चरितामृत

सम्पूर्ण विश्व माया से मोहित है। केवल ईश्वर में अवस्थित चित्त वाला मनुष्य ही माया से बचा रह सकता है। गुरु कृपा से जब माया के समस्त बन्धन टूट जाते हैं तब वांछित उद्देश्य की सिद्धि हो जाती है। जो मनुष्य माया में लिप्त रहते हैं उन्हें माया प्रसूत विभीषिकाओं जैसे जन्म-मृत्यु, लाभ-हानि, जय-पराजय, यश-अपयश आदि अवस्थाओं में घिरना ही पड़ता है। फिर किसी शुष्क बौद्धिक, मनोवैज्ञानिक और तात्त्विक विवेचन से माया के पर्दे को नष्ट नहीं किया जा सकता। तब केवल गुरु प्रदत्त ज्ञान ही अनुभूत हो कर माया जनित अज्ञान को नष्ट कर सकता है। बापू ओम जी ने बहुत बार अपनी लीलाओं से ऐसा प्रत्यक्ष कर दिखाया है।

बापू ओम जी सभी के भूत, वर्तमान और भविष्य के द्रष्टा थे। बापू जी जब नन्दाचौर में निवास कर रहे थे तब वहाँ आत्मा देवी नाम की एक भक्त महिला रहती थी जिसका पति पटवारी था और उसका

पढ़ने-लिखने का काम था। उस समय बापू ओम जी ईश नाम की मस्ती में रहते थे और जंगलों में तपस्या हेतु जाया करते थे। जब तपस्या के बाद गाँव वापिस आते तो भिक्षा में प्राप्त रोटियां ग्रहण करते।

आत्मा देवी बापू जी में श्रद्धा भक्ति रखती थी और उनकी सेवा भी किया करती थी। उसकी कोई सन्तान नहीं थी। कुछ समय पश्चात् उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्र उत्पन्न होने पर वह महिला बहुत

प्रसन्न हुई। वह ओम जी के आने की प्रतीक्षा करने लगी। एक दिन बापू जी उधर से गुजरे तो वह महिला बहुत प्रसन्न मन से यथा शक्ति एक थाल में कुछ भेंट, मेवा और धनादि ले कर उनके पीछे दौड़ पड़ी। उसने बापू जी को प्रणाम कर कहा कि आपके आशीर्वाद से मुझे पुत्र हुआ है। यह सुन कर बापू जी ने कहा कि बर्तन तो कई तैयार हो जाते हैं और कई टूट भी जाते हैं।

आत्मा देवी को महाराज जी के इन शब्दों का अर्थ समझ में नहीं आया। उसने फिर प्रार्थना की और कहा, "महाराज जी, आप यह भेंट स्वीकार कीजिए।" बापू जी वहाँ से आगे बढ़े और एक तालाब के किनारे आसन लगा कर बैठ गए। आत्मा देवी भी धीरे-धीरे वहाँ पहुँच गई और फिर से भेंट आदि स्वीकारने की प्रार्थना करने लगी। उसने कहा कि मैं आपकी सेवा में थोड़ा बहुत भेंट अर्पण करना चाहती हूँ। मैं जानती हूँ कि आप माया से बहुत दूर हैं परन्तु फिर भी कृपा करके यह तुच्छ भेंट स्वीकार कीजिए। यह सुन कर बापू जी ने फिर से कहा कि बर्तन तो कई बन जाते हैं परन्तु कुछ टूट भी जाते हैं। यह कह कर बापू जी ने उडारी मारी और आकाश में ऊँचा और ऊँचा जाते रहे।

आत्मा देवी उन्हें कुछ देर तो देखती रही परन्तु थोड़ी देर बाद जब बापू जी बहुत ऊपर उठ गये तब उसे दृष्टिगोचर होना बन्द हो गए। यह सब देख कर आत्मा देवी घबरा कर घर आ गई और इस घटना के

पाँच-सात दिन में ही उसके पुत्र की मृत्यु हो गई। ओम जी को इस बात का पूर्व ज्ञान था कि उसका पुत्र नहीं बचेगा। इसलिए उन्होंने उससे कोई भेंट आदि लेना स्वीकार नहीं किया था।

बापू जी अकसर समाधि अवस्था में रहते थे। भक्तजन उनके पास आ कर बैठ कर उनके सामीप्य का लाभ उठाते। एक दिन रात को महाराज जी समाधि अवस्था में ध्यानमग्न थे। कई शिष्य भक्त प्रेमी महाराज जी की सेवा में बैठे थे। एक पहर बीतने के बाद बापू जी बहुत जोश में आ गए और अपने मुख कमल से यह वचन किये, "हमें जूठा खिलाता है।" यह कहने के पांच मिनट बाद फिर इसी प्रकार जोश में आ कर कहा, "क्या यह तेरी माता समान नहीं है?" तीसरी बार फिर जोश में आ कर गड़वी उठा कर मारी। वह गड़वी दो भक्तों के सिरों के मध्य से होती हुई एक ब्राह्मण के पैर पर जा लगी। तदुपरान्त बापू जी फिर समाधि में स्थित हो गये। बापू जी का एक भक्त बहुत बुद्धिमान था। उसने उस ब्राह्मण से पूछा कि महाराज जी ने गड़वी मारी और वह आप के ही लगी और किसी के नहीं लगी। आप सच बतायें कि आखिर बात क्या है?

तब ब्राह्मण ने सच-सच बताया कि महाराज जी ने यह सारे वचन मेरे प्रति ही कहे हैं। कल मैने बापू जी के लिए एक पेय पदार्थ ला कर अलमारी में रखा था। मेरे पुत्र ने उसमें से कुछ पी लिया। मैंने सोचा

कि महाराज जी कहेंगे कि हमारे लिए झूठा कर के लाया है इसलिए उस बोतल के बीच में जल मिला दिया और महाराज जी को दे दी।

दूसरी बात जो बापू जी ने कही कि क्या यह तुम्हारी माता के समान नहीं है? यह बात बापू जी ने इसलिए कही कि मेरी खोटी निगाह इस स्त्री की ओर चली गई थी जो आपके पास बैठी है। जब महाराज जी के टोकने पर भी मेरे मन का भटकना बन्द नहीं हुआ तब उन्होंने गड़वी मारी। मैं अपराधी हूँ इसीलिए गड़वी मुझे ही लगी और किसी को नहीं लगी। उस ब्राह्मण की स्वीकारोक्ति सुन कर सारे महाराज जी के चरणों पर गिर पड़े और मुख से बापू जी का स्तुति गान किया।

विश्व के प्रत्येक धर्म में आत्मसंयम और नैतिक मूल्यों की महत्ता को स्वीकार किया गया है। भगवान श्रीकृष्ण ने स्थितप्रज्ञ व्यक्ति के लक्षण बताने के साथ-साथ इन्द्रियनिग्रह को परमावश्यक बताया है। महान् प्रभु श्रीकृष्ण अर्जुन को कहते हैं-

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनु विधीयते । तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ।।

अर्थात् जैसे जल में चलने वाली नाव को वायु हर लेती है, वैसे ही विषयों में विचरती हुई इन्द्रियों में से मन जिस इन्द्रिय के साथ रहता

है वह एक ही इन्द्रिय उस अयुक्त पुरुष की बुद्धि को हर लेती है।

जो व्यक्ति अपनी इन्द्रियों को वश में नहीं कर सकता वह साधारण जीवन में भी कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं कर सकता, फिर आध्यात्मिक जीवन के विकास का तो सवाल ही नहीं उठता। बापू जी भी लोगों को यही उपदेश देते थे कि सदाचारी बनो, विवेकशील बनो और अपने अभीष्ट लक्ष्य की ओर बढ़ चलो। अपने मन से विकारों का मैल हटाने का कार्य अति दुष्कर है। जो साधक अपने चित्त की वृत्तियों का निरोध करना चाहता है उसे स्वयं पर मिथ्यानुकम्पा करने की गलती से बचना ही चाहिए।

यदि गुरु की कृपा हो जाये तो वह शिष्य के विकारों को जड़ से समाप्त करने के साथ-साथ उसकी उर्जा जो विषय-विकारों के चिन्तन के कारण निम्नगामी होती है उसे उर्ध्वगामी बना देते हैं। ऐसा होने पर सृष्टि के समस्त रहस्यों का शीघ्र ही अनावरण हो जाता है। इस सम्बन्ध में एक और प्रसंग वर्णनीय है।

एक दिन बापू ओम जी के प्रिय शिष्य ठाकुर दास जी ने लाम्बड़ा निवासी शिव राम नामक व्यक्ति को कुछ खाद्य सामग्री, घी, मिठाईयां आदि दे कर बापू ओम जी की सेवार्थ नन्दाचौर भेजा। ओम जी अपनी रसोई बनाते समय पवित्रता का बहुत ध्यान रखते थे। उस दिन जब

शिवराम आया तब बापू जी ने बहुत स्नेह से उसे बिठाया। उसी समय उनसे मिलने के लिए दो साधु आए। बापू जी ने आदरपूर्वक उन्हें बिठाया और कहा कि मेरे धन्य भाग्य, जो आप हमारे पास पधारे।

बापू जी ने दो थालियों में पूरियां और हलवा डाल कर चूरी सहित उसे अतिथियों के आगे अति प्रेमपूर्वक परोसा। उन दोनों साधुओं ने यह कह कर खाने से मना कर दिया कि वे खा कर आये हैं।

बापू जी ने बहुत ज़ोर लगाया परन्तु उन साधुओं ने तिल मात्र भोजन भी ग्रहण नहीं किया। तत्पश्चात् बापू जी ने रसोई के सामने चारपाई खड़ी कर दी और स्वयं भोजन करने हेतु तैयार हो गए। उधर उन साधुओं के मन में स्वाद की वासना का बीज अंकुरित हो उठा। उनके चित्त की यह अवस्था देख कर ओम जी क्रोधित हो उठे और घोटना ले कर उनके पीछे भाग पड़े। बापू जी ने कहा, “ठहरो, आज मैं तुम्हारी खबर लेता हूँ। पहले तो भोजन से इन्कार करते हो और फिर अपने चित्त में विकार ला कर अपने साधु वेश का निरादर भी करते हो।" ओम जी जो कहना चाहते थे वह भगवान श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता में बहुत सुन्दर शब्दों में कहा है। वे कहते हैं-

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः । रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्टवा निवर्तते ।।

श्री नारायण चरितामृत

अर्थात् इन्द्रियों के द्वारा विषयों को ग्रहण न करने वाले पुरुष के भी केवल विषय तो निवृत्त हो जाते हैं, परन्तु उनमें रहने वाली आसक्ति निवृत्त नहीं होती।

चित्त की ऐसी अवस्था तो और भी खतरनाक है। ऐसे व्यक्ति जो साधु वेश धारण करने के बावजूद एक उच्च कोटि का जीवन, जो उनसे अपेक्षित है, नहीं निभा पाते, वे साधु जीवन पर कलंक के समान हो जाते हैं। ऐसा होने पर आध्यात्मिक जीवन में प्रगति के स्थान पर अवनति की सम्भावना ही ज्यादा होती है।

बापू ओम जी एक सत्यनिष्ठ योगी थे। गहरी एकाग्रता के साथ वे जो भी कह देते थे वह पूर्ण हो जाता था। एक दिन बापू जी ने आम की दो पिउंदी गुठलियां एक गमले में रोपित कर दी। यह बात सर्वविदित है कि पिउंदी आम की गुठली कभी फल नहीं सकती। बापू ओम जी ने न केवल वह गुठलियां रोपित की अपितु यह वचन भी किए कि इन्हें जल से सींचो, ये अच्छी प्रकार फलेंगी। ओम जी के कथनानुसार

वह गिटकें कुछ समय पश्चात् फूट कर वृक्ष रूप में बढ़ने लगीं। वे दोनों वृक्ष आज भी लाम्बड़ा गाँव के बगीचे में देखे जा सकते हैं।

बापू जी ने अपने जीवन काल में अनेक लीलाएं की, असंख्य लोगों का उद्धार किया और लोगों को सच्चिदानन्द पूर्ण परमात्मा की

प्राप्ति के लिए प्रेरित किया। जिस समय में बापू ओम जी रह रहे थे उस कालखण्ड में कभी-कभी प्लेग जैसी भयंकर महामारियां फैला करती थी और गाँव के गाँव, शहर के शहर मरघट बन जाया करते थे। बापू ओम जी के शिष्य ठाकुर दास जी का सगा भतीजा शिवराम दुर्भाग्यवश प्लेग का शिकार हो मरणासन्न हो गया।

शिवराम की दादी माँ और ठाकुर जी की माता सुलखनी से अपने पोते का दुःख देखा नहीं गया। अपने पुत्र ठाकुर दास जी के कहने पर वह नन्दाचौर आई और बापू ओम जी से रो-रो कर प्रार्थना करने लगीं कि महाराज जी, मुझसे अपने पोते का दुःख नहीं देखा जाता। आप ऐसी कृपा कीजिए कि मेरा पोता बिलकुल ठीक हो जाए और उसके स्थान पर मेरी मृत्यु हो जाए। यह सुन कर बापू ओम जी ने माता सुलखनी से तीन बार पूछा कि क्या आप खुशी-खुशी देह त्याग के लिए तैयार हैं? तीनों बार माता सुलखनी ने यही कहा कि मैं यही चाहती हूँ कि मेरा पोता स्वस्थ हो जाए और मैं उसके स्थान पर मृत्यु को प्राप्त हो जाऊं। यह सुन कर ओम जी ने उन्हें पाँच-सात इलायचियां दी और कहा कि आप घर जाइए और हरि हर को याद कीजिए। माता सुलखनी ने घर आकर वह इलायचियां शिवराम को खिला दी।

अगले दिन शिवराम का स्वास्थ्य सुधरने लगा और माता जी को कान में प्लेग निकल आई। आठ दिन माता जी बीमार रहीं और इन आठ

दिनों में शिवराम शनैः शनैः ठीक होते-होते बिलकुल ठीक हो गया। नवें दिन माता सुलखनी हरि हर का नाम लेते हुए स्वर्ग सिधार गई। शिवराम का जीवन बच गया और बड़े हो कर उसने संतो की सेवा करके अपना जीवन सफल किया।

बापू ओम जी की एक और बहुत सुन्दर लीला विशेष रूप से वर्णनीय है। नन्दाचौर में रहते हुए कभी-कभी बापू जी नूरशाह में रहने वाले अपने एक भक्त भाई अतर सिंह को आवाज लगाया करते थे, "भाई अतर सिंह, आ जाओ।" नूरशाह में रहने वाले उस भक्त के कानों में जब बापू जी का सुमधुर स्वर सुनाई पड़ता था तो उसका हृदय एक अपूर्व आनन्द से भर जाता था और वह तुरन्त तैयार हो कर बड़ी प्रसन्नता से नन्दाचौर की ओर प्रस्थान कर देता था। उसका चित्त शांत और मन निर्मल था, इसीलिए वह बापू ओम जी द्वारा प्रेषित सन्देश को ग्रहण कर लेता था। भाई अतर सिंह का यह उदाहरण यह दर्शाता है कि ईश्वर सदृश संतों का दिव्य सन्देश केवल वही ग्रहण कर सकता है जिसका मन विषय-विकारों की धूलि से अलिप्त हो।

बापू ओम जी की शक्ति ऐसी थी कि वह जिस पर कृपा कर देते थे वह तत्क्षण उस कृपा के प्रभाव से असम्भव से असम्भव कार्य भी सम्पादित कर देता था। एक बार भक्त फकीरचंद के दादा पूरण सिंह जी ओम दरबार आए और बापू जी को प्रणाम करके बैठ गये। उनके पास

गुरु नानक देव जी की साखियों की पुस्तक पडी थी। उन्होंने वह पुस्तक उठाई और उसके पृष्ठ पलटने लगे।

अनपढ़ इतनी देर में बापू जी ने उन्हें कहा, "ओम, पढ़ कर सुनाओ।" बापू जी का आदेश सुनकर पूरण सिंह ने कहा,' ," बापू जी, मैं तो हूँ।" बापू जी ने फिर कहा, "पढ़ कर सुनाओ।" पूरण सिंह ने फिर वही उत्तर दिया, "बापू जी, मैं नहीं पढ़ सकता। मैं तो अनपढ़ हूँ।" यह सुनकर बापू ओम जी ने खूँटा उठा लिया और बोले, "पढ़ता है कि नहीं?" पूरण सिंह ने कहा, "भले ही आप मुझे मार दें, मैं पढ़ नहीं सकता।" तब बापू जी मुस्कुरा कर बोले, "मैं पढ़ता हूँ। तुम उँगली ऊपर रखो और मेरे पीछे-पीछे पढ़ो।"

इसके बाद जो हुआ वह एक चमत्कार ही था। ऐसा व्यक्ति जो पढ़-लिख ही नहीं सकता था, बापू जी की कृपा से वह ग्रन्थ पढ़ने लगा।

यह देख कर बापू ओम जी बोले, "बस अब पढ़ते ही जाओ।" बापू ओम जी ने अपने भक्तों को केवल अक्षर ज्ञान ही नहीं अपितु ब्रह्म-ज्ञान भी दिया। अपने गुरु से प्राप्त ज्ञान को उन्होंने विश्व के कल्याणार्थ योग्य शिष्यों को भी प्रदान किया। ऐसे शिष्यों में सर्वोपरि हैं- संत ठाकुर दास जी, संत हरनाम जी और गोस्वामी रामलाल जी। इन तीनों महान् शिष्यों का वर्णन अगले अध्यायों में किया जाएगा।

बापू जी के शिष्य उनसे बहुत स्नेह करते थे। इस सम्बन्ध में एक दृष्टान्त वर्णनीय है। एक बार श्री ठाकुर दास जी नन्दाचौर जा रहे थे और रास्ते में एक नहर के पास जा कर गड़वी माँजने लगे। तभी नामराम दित्ता नामक एक व्यक्ति उनके पास आ कर अनर्गल प्रलाप कर कहने लगा, "क्या तुम्हारा ही नाम ठाकुर दास है?" ठाकुर दास जी के हाँ करने पर उसने कहा कि आगे जाना है तो मेरी टाँग के नीचे से जाना पड़ेगा। ठाकुर दास जी ने कहा कि तुम भी हमारे गुरु के पास चलो और जहाँ तक हमारा प्रश्न हैं तो तुम एक बार कहो तो सही हम तो सात बार तुम्हारी टाँग के नीचे से हो कर जाने को तैयार हैं। अपने गुरु के पास जाने के लिए ही हम इतनी दूर से आये हैं।

इसके बाद जब ठाकुर दास जी गड़वी माँज कर वहाँ से चले तो वह व्यक्ति भी उनके साथ-साथ चलता हुआ नन्दा चौर आ पहुँचा। ठाकुर दास जी ने बापू ओम जी को प्रणाम किया और हाथों में पंखा ले कर उन्हें हवा करने लगे। उक्त व्यक्ति भी बेखौफ हो कर वहाँ रखे एक आसन पर बैठ गया। बापू ओम जी ने उसे देखते ही सारी बात समझ ली। उन्होंने मन ही मन उस धृष्ट व्यक्ति को सबक सिखाने का निर्णय लिया। बापू जी ने सोचा कि ठाकुर दास जी तो हमारे पुत्र हैं।

उनसे ऐसी धृष्टता करने की सजा तो इस ब्राह्मण को मिलनी ही चाहिए। देखते ही देखते उस ब्राह्मण को उसकी करनी का दण्ड मिल

गया। उस का सिर नीचे की ओर और दोनो टाँगे ऊपर की ओर हो गई। वह अपने मुख से कोई शब्द नहीं बोल पा रहा था। उसके मुख से रक्त बह रहा था। उसका सिर मानो कोई ज़ोर ज़ोर से पटक रहा था। उसकी नासिका से भी रक्त-प्रवाह हो रहा था। आस पास के लोग भी उसकी कोई सहायता नहीं कर पा रहे थे।

उसकी यह अति भयंकर दुर्दशा देख कर ठाकुर दास जी ने हाथ जोड़ कर बापू जी से प्रार्थना की, "हे दयानिधान, इस नादान ब्राह्मण पर दया कीजिए।" यह सुन कर बापू ओम जी ने कहा कि इस ने आपको बहुत कड़वे वचन कहे हैं। एक घड़ी और प्रतीक्षा करो। अभी इसका प्राणान्त होता ही है। ठाकुर जी ने फिर विनम्रतापूर्वक प्रार्थना करते हुए कहा कि हे गुरुदेव ! आप दया के सागर है। इस पर दया कीजिए। इस मूर्ख ब्राह्मण ने बिना सोचे विचारे बहुत बड़ी अवज्ञा की है। अपनी नासमझी में इसने ऐसा कार्य कर दिया है। आप इसकी अज्ञानता पर ध्यान न देते हुए इस पर दया करें। ठाकुर जी की विनयपूर्ण प्रार्थना सुन कर बापू जी ने उस ब्राह्मण को क्षमा कर दिया। तत्पश्चात् उस ब्राह्मण ने उठ कर बापू जी के चरणों में अपना शीश निवाया और क्षमा-प्रार्थना की।

बापू ओम जी अपने सभी शिष्यों से बहुत प्रेम रखते थे और प्रायः उनके पास जाया करते थे। एक बार वह गो० रामलाल जी के पास

अमृतसर गए। गो० रामलाल जी ने बापू ओम जी का भव्य स्वागत किया। उस समय वहाँ कई भक्त जन भी विद्यमान थे। उनमें से एक भक्त ने संत रामलाल जी के कण्ठ में फूलों की माला पहना दी। यह देख कर रामलाल जी ने कहा कि यहाँ मेरे गुरु स्वयं विराजमान हैं। तुम इनके श्रीकण्ठ को इन फूल-मालाओं से सज्जित करो। यह सुन कर वह भक्त बोला कि मेरे गुरु तो आप ही हैं। अतः मैने आपके श्रीकण्ठ में यह फूलों की माला पहना कर अपनी श्रद्धा ज्ञापित की है। यह देख कर बापू ओम जी हँसते हुए बोले, "कल दा मुंडा गुरु बन के बै गया ए।" इसके कुछ समय पश्चात् उस भक्त ने दोनों महापुरुषों के फोटो खींचें और घोर आश्चर्य ! जब फोटो तैयार हो कर सामने आई तब संत रामलाल जी की

अवस्था उसमें एक किशोरावस्था के लड़के के समान दिखाई देने लगी। बापू ओम जी के हास-परिहास में कहे गए कथन में भी असाधारण फल उत्पन्न करने की शक्ति थी।

पाठकवृन्द इस घटना से यह समझ सकता है कि बापू ओम जी सदृश पवित्रतम और उच्चतम अवस्था प्राप्त महान् आत्माओं के लिए इस सृष्टि में कोई भी कार्य दुष्कर या असम्भव नहीं है। जिन महापुरुषों के समूचे मानसिक, वाचिक और शारीरिक कर्मों में एकसारता, एकनिष्ठता और सत्य के संकल्प का बल रहता है उनके मुखारविन्द से उच्चारित कोई भी कथन अपना अमिट प्रभाव छोड़े बिना नहीं रह सकता।

बापू जी के शिष्यों एवं भक्तों ने अपने प्रभु की गौरव-गाथा को अक्षुण्ण रखने हेतु नन्दाचौर में एक भव्य मन्दिर बनाने का संकल्प लिया। शीघ्र ही वहाँ विविध श्रद्धालुओं के सहयोग से एक सुन्दर और नयनाभिराम मन्दिर का निर्माण कार्य आरम्भ हो गया। मल्लू, चानन और नारंगी आदि कारीगर लाम्बड़ा गाँव से नन्दाचौर सेवा करने हेतु आ पहुँचे। सांई मोतीराम प्यारे भी सेवा कार्य में योगदान देने आ पहुँचे।

चैत्र माह में यह शुभ कार्य प्रारम्भ हो गया। बापू ओम जी की अपूर्व कृपा से कार्य द्रुत गति से संपादित होने लगा। पाली राम नामक मिस्त्री जो श्रद्धालु और धनवान थे, ने मन्दिर निर्माण के स्थल से कुछ दूरी पर एक स्थान बनवाया जहाँ बापू ओम जी ने आ कर निवास करना आरम्भ कर दिया। जिस स्थान पर अन्य मिस्त्री-मज़दूर निवास कर रहे थे, बापू ओम जी भी प्रायः उनके पास जा कर उनके साथ रहा करते थे। इस प्रकार के ईश्वर रूप महात्मा जिन्हें अपने घरों में बुलाने का सौभाग्य सहज ही प्राप्त नहीं होता, ऐसे महापुरुष स्वयं उन मज़दूरों के मध्य रह कर उनका उद्धार करने लगे। ठाकुर दास जी भी निर्माण-स्थली पर आ कर सभी को यह बात समझाने लगे कि खूब परिश्रम करो, प्रेम से लकड़ी, पत्थर तराशने का कार्य करो। प्रेम और श्रद्धापूर्वक गुरु-सेवा करने का फल भी मीठा ही मिलेगा। इसमें कोई संशय नहीं है।

मन्दिर का सेवा-कार्य अबाध चल रहा था और यथाशक्ति

सेवादार उसमें तन-मन-धन से सहयोग दे अपना जीवन सफल बना रहे थे। बापू जी के एक भक्त धनी राम ने अपनी माता जी के सारे गहने मन्दिर-निर्माणार्थ समर्पित कर दिये। उसकी माता जिनका नाम हीरा देवी था, ने भी अपने पुत्र को सुशिक्षा देते हुए यही कहा कि तुम बापू जी को ही सच्चे पिता समझते हुए उनके चरणों में सब कुछ समर्पित कर दो। धनी राम ने अपनी माता की इच्छा का पालन किया और गहनों के साथ-साथ स्वयं भी हाथों से मन्दिर के निर्माण में सहयोग दिया।

* कुछ समय पश्चात् इन्द्र देवता अति प्रसन्न हो अपनी मेघ-सेना ले कर आए और जम के वर्षा की। शीघ्र ही मन्दिर की दूसरी मंजिल भी बन गई थी। पीछे कोठरी और दलान का निर्माण भी हो गया था। खूबसूरत दरवाज़ा भी लगाया गया। उस समय ईश्वर सिंह नामक मिस्त्री वहाँ सेवा कार्य कर रहा था। वह पजोदेवता ग्राम का रहने वाला था और ईंटो का काम करता था। निर्माण कार्य में एक छोटी सी समस्या तब आई जब सीढ़ी बनाने के लिए बहुत ही छोटा स्थान उपलब्ध हो रहा था। ईश्वर सिंह को और कोई हल नहीं सूझा तो उसने छोटे से स्थान पर ही छोटी सी तंग सीढ़ी बना दी।

जब ठाकुर दास जी ने यह देखा तो कहा यह सीढ़ी तो अत्यन्त छोटी है और हमारे सद्गुरु तो बड़े महान् हैं। इस सीढ़ी से काम नहीं चलेगा। यह सुन कर ईश्वर सिंह बोला कि मैने बहुत सोच विचार किया

है। यह स्थान बहुत ही तंग है। इसी कारणवश सीढ़ी भी तंग करनी पड़ी। यह समस्या जान कर ठाकुर दास जी बोले कि घबराने की कोई बात नहीं है। तुम इस प्रकार ईंट पर ईंट लगाओ। तत्पश्चात् ईश्वर सिंह को पास बिठा कर उसे सीढ़ी बनाने की ऐसी युक्ति बताई कि सारी समस्या ही हल हो गई।

ठाकुर जी ने कहा कि तुम दूसरी ओर अक्ल दौड़ाना बन्द करो और बिना किसी भय के बापू जी का नाम लेते हुए कार्य सम्पन्न करो। ईश्वर सिंह ने बापू जी का स्मरण करते हुए सारा कार्य भली प्रकार पूर्ण कर लिया। आस-पास खड़े लोगों ने भी यह चमत्कार देखा। जब वह सीढ़ी बन कर तैयार हुई तब ऐसा प्रतीत हुआ मानो वह सीढ़ी साक्षात् वैकुण्ठ में ही पहुँच गई है।

फिर तो भक्त जनों ने और भी प्रसन्नतापूर्वक पूर्ण श्रद्धा के साथ कार्य को आगे बढ़ाते हुए मन्दिर के मध्य एक चौबारा और उसके साथ एक बरामदा बनाया। निपुण कारीगरों ने खूबसूरत लकड़ी की नक्काशी कर किवाड़ बनाये। खिड़कियां आदि बना कर उसके बीच में रंगीन शीशे जड़वाये गये। चारों तरफ रंग करवाया गया। जब सारा मन्दिर बन कर तैयार हो गया तब उसकी शोभा वर्णनातीत हो उठी। देवता भी मनुष्य शरीर धारण कर उसकी शोभा देखने आये।

बापू ओम जी ने मन्दिर-प्रांगण में यज्ञ किया। यज्ञ के पश्चात् एक पालकी तैयार की गई जिसमें स्वयं बापू ओम जी विराजमान हुए। चारों ओर संगीत की मधुर धुनों के बीच में ओम् नाम का जयगान होने लगा। बापू जी चारों ओर फूल, धन और मिठाई भक्तों को वितरित करने लगे। भक्तजन उस महाप्रसाद को प्राप्त कर स्वयं को धन्य अनुभव करने लगे। साधारण मनुष्य की तो बात ही क्या थी स्वयं देवराज इन्द्र भी प्रसन्न हो कर आये और वर्षा कर अपनी खुशी प्रकट करने लगे। संवत् 1961 में मन्दिर का निर्माण-कार्य पूर्ण हुआ।

तत्पश्चात् बापू ओम जी आसन लगा कर मन्दिर में विराजमान हुए। उस समय बापू जी का शिष्य-मण्डल भी उनके दर्शनार्थ आरती के समय उपस्थित होता। इस प्रकार आनन्द से दिन बीतते रहे। कुछ समय पश्चात् नूरशाह से संगत पधारी और बापू जी से निवेदन किया कि वह नूरशाह आ कर अपने भक्तों को दर्शन दे कर कृतार्थ करें।

यह निवेदन सुन कर बापू जी अपनी संगत को साथ ले कर नूरशाह की ओर रवाना हो गये। नूरशाह की संगत ने बापू जी के सान्निध्य का पूरा-पूरा लाभ उठाया। बापू जी के पवित्र चरण कमल पड़ते ही वहाँ खूब घनघोर वर्षा हुई। इससे पूर्व कई वर्षों तक वहाँ इन्द्र देवता की कृपा नहीं हुई थी। बापू जी की करुणा से यह चमत्कार लोगों के कल्याण हेतु घटित हुआ।

इस प्रकार बापू ओम जी ने अनेक लीलाएं रचते हुए अजस्र तपस्या करते हुए कई वर्ष बिताये। नन्दाचौर में जिस स्थान पर बापू जी तपस्यारत रहते थे वह आज 'थड़ा साहिब' के नाम से प्रसिद्ध है। उस स्थान का प्रत्येक रजो कण बापू जी की आध्यात्मिक उर्जा से परिपूरित है। आज भी 'थड़ा साहिब' में आवेष्टित उर्जा वहाँ बैठ कर ध्यान करने वाले साधकों की द्रुत गति से आध्यात्मिक विकास में सहायता करती है।

बापू ओम जी ने अपने भक्तों के आत्मिक विकास हेतु जिन ग्रंथों की रचना की, वह ग्रंथ अपने अन्दर एक बहुमूल्य खजाना समेटे हुए हैं। बापू जी ने अपने ग्रंथों में भक्तों के आध्यात्मिक ज्ञान के सम्बन्ध में उनकी शंकाओं के निवारण हेतु बहुत कुछ लिखा है। पाठकों के हितार्थ बापू जी और उनके भक्तों के बीच हुए प्रश्नोत्तर को आगे दिया जा रहा है।

भक्तों के प्रश्न और ओम जी के उत्तर

प्रश्न- ओम जी महाराज, आप किस भेष के साधु हैं?

उत्तर- हम सभी भेषों से पृथक हैं। हमने केवल राम 'नाम' का ही भेष धारण किया है, हमारे सद्गुरु ठाकुर जी और बापू ज्वाला सिंह जी ने हमें इसी 'नाम' मार्ग की दीक्षा दी है।

प्रश्न- महाराज साहिब, क्या आप संन्यासी हैं?

उत्तर- अपने ग्रन्थ "कलीद-उल-कल्ब" में ओम जी ने इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार उत्तर दिया है-

हमें तुम क्यों कहा यारा' संन्यासी, संन्यासी बन के जमपुर कौन जासी। कलु में नाम मुख, न भेख मुख है, गुरु नानक की राय भेख दुख है।

न बनता हूँ बैरागी खाक मल कर, मरे दुश्मन कोई धूनी में जल कर।

न बन ब्राह्मन बताऊँ पीर' मंगल, न तीरथ तीर की न चाह जंगल।

ये भारी भेष का है भूत भाई, फंसे उसमें वह निरा ही ऊत भाई।

न बेशक वर्ण में कुछ गरज है जी, वले रखना निहायत फ़र्ज़ है जी, बरन बाहर बनूँ जाहिर करे जो, न मारे मौत मुँह काली मरे वो।

छत्र धारी ब्राह्मण वैश्य शुद्र, बरन जा पूछ किसी पंडित के तू दर। अगर साकन कहीं मफतूह पढ़ेगा,

खता तेरी करम तेरा लड़ेगा ।

खुदी को दूर कर न कर बरन दूर, कहा हम वेद के बमूजिब' बदस्तूर ।

(कलीद-उल-कल्ब से)

1. मित्र 2. सोमवार 3. अनुसार

प्रश्न- आप सभी सम्प्रदायों के साधुओं की निन्दा करते हैं। आप स्वयं किस प्रकार के साधु हैं?

उत्तर- हम किसी भी सम्प्रदाय के साधुओं की निन्दा नहीं करते। अपितु छली, कपटी और आडम्बरी असाधुओं के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हैं।

प्रश्न- "कहो दास कैसे वो मन्तर मिले, किलेमार मन का न मुतलक हिले।"

उत्तर- ओम जी ने वर्तमान युग के भेषधारी साधुओं के विषय में अपने विचार व्यक्त किये और साधना की युक्ति बताई-

बदिल मिल ज दिलबर यही चाहिए, न बन सन्त बन को भटक जाई ए। जो अब के जमाने के हैंगे फकीर, वो मांगे हैं घर-घर कहावें हैं पीर। कहै और को दास खुद गुरु बने,

रुपया लंगोटी में खावें चने।

ली धार को पीन सिर पर जटा, झुके आन सावन की जैसे घटा।

जो करना था संकल्प से प्यार ना, ये क्या थी ज़रूरत जटा धारणा।

बैरागन पकड़ हाथ, मल खाक सिर, मुंडा कर हुए या पुरी और गिर।

कहाने लगे आपको परमहंस, मड़ी मठ किये याद कर तर्क वंस।

पढ़ी संस्कृत नीज़ भाष पढ़ी, वले गगन त्रिकुटी न दृष्टि चढ़ी।

कमाई करी न किया तप कभी, न बर्मी के कूटे मरे सर्प कभी।

न तन को फकत मन को था मारना, न पानी का गलना अगन साड़ना।

उन्हाले को आतिश सियाले को आब, कर्म कष्ट देही न आतम मिलाप ।

मुंडाने भभूती लगाने से भी, गरज भेख तन से ना हो शुद्ध जी।

फकीरी में इननी कोई लोड़ ना, फकीरी फक्त मन से मन जोड़ ना।

श्री नारायण चरितामृत

सो मन जोड़ने की विधि और है, न वह तौर है न यह तौर है।

तू मन मोड़, देह जोड़ दम से दिला, युगम जोड़ नेत्र न मुतलक हिला।

सितारे लगे टूटने ज़ आस माँ, पड़ी नज़र न दीदनी ना गहाँ।

अगर रास्त हृदय कमल हो पड़े, मुक्त गढ़ में बेशक जभी जा चड़े।

ज़ किस्मत किसी का हो सुध कल्ब, वह पुरफैज भाँडा हुआ लब-ब-लब ।

न दिन देख मुतलिक कभी रात देख, भजन बंदगी को, उमर सिर्फ सेख ।

अगर मारना मन का मन्जूर है, तो मिल सिंह ज्वाला से क्या दूर है।

गुरु सिंह ज्वाला का दर्शन करो, अमर हो जीयो और जीते मरो।

जन्म जून फिर छूट जाये तभी, अगर न हो निश्चा मिलो फिर कभी।

कहा दास ने यह बखुद आज़मा, मैं खुद आजमाया तू खुद आज़मा ।

अगर वर्ष दो चार उनकी रकाब,

गुजारें जगें ज्ञान गुरु का शताब।

(कलीद-उल-कल्ब से)

प्रश्न- सद्गुरु के लक्षण क्या हैं?

उत्तर- हम आपको सद्गुरु के लक्षण बताते हैं-

सुनियो लुकाई संसार दे लोको, तुम्हें साधु अवदूतां वाले लक्खन सुनाविए ।

चैतन कर मन को, ले मारग गगन को, अटल जोत जगन को, जतन कर पाविए।

होवना फकीर शुद्ध रखना शरीर, कर योग माही भोग देह रोग न लगाविए।

रात को, सवेरे को, दोपहर नाले शाम, दिलों होऐ कै मलंग, नाम रब दा ध्याविए।

त्रिकुटी में जग मग जोत का जगाट, ओ थे बन्ध के कमर हो निशिंग पहुँच जाविए।

जोग वाले ढंग, एह शरीर कच्ची बंग', ऐ थे धीरज को धार सहजे कदम टिकाविए।

आवे नहीं रीत यह प्रीत नाहीं उदय होवे, नूरशाह में पीर दस्तगीर पास जाविए।

पढ़ना पढ़ावना नाही कार ऐह फकीरां वाली, लड़ना मैदान मन वीर से लड़ाविए।

होके निरछल' कल मांही निर्बल,

सुन गल गुफ्तार मन गुरां दे बसाविए। जड़ बाज बेलड़ी' आकाश विचलाऐ फल, सोसनी कपूरी लाल गैब दे लगाविए।

हर्ष सोग त्याग, करो सैर इस बाग दी, दिखाय के अचम्भा मन बावरा बनाविए।

खुदी के ना खैश' के न रूप के न वेष के, हमेशा सहज सुन्न में मकान कर जाविए।

जे होवे लोड़े असनान, नहीं छड़ना मकान, त्रिकुटी तीर्थ के नीर निरमल में नहाविए।

दास तोड़ फांस, हो जगत से निराश,

बन ऐसे अवधूत निर्वाण पद पाविए। मन वाली मार कर, गुरु पहले धार कर, सेवा बारम्बार कर चरण सीस नवाईए।

मन के मकर छड, फकीरों से चित गढ़, जावने से पहले हर काज को संवारिये।

1. चूड़ी 2. उपलब्ध 3. छल रहित-सरल 4. कथन, बात 5. बैल 6. दुःख, शोक
7. परिवार

प्रश्न- आपके गुरु कौन हैं? कैसे हैं?

उत्तर- ज्वाला सिंह जी मेरे गुरु हैं। तभी तो दास जी की अति

सुर्ख़रु हैं। दास के सद्गुरु पूर्ण परमात्मा हैं। जगे किस्मत कभी ताआला' मदद दे, करो कृपा खुशी बस बे अदद दे।

कराऊँ मैं तुझे दर्शन गुरु का, दहन' महाराज का डब्बा दुरों का।

करें खन्दा गिरें गैंदे गुलों के, इमाम ज़ाहिदों शाहे आकिलों के ।

जमीन मोलूद' पोठवार है जी, ज मुद्दत' अब सकूनत बार है जी।

निवारण भय भी तारण हार गुरु हैं, मुसफ़्फ़ा पाक गोहर साफ दूर हैं।

है सूरत सिंह की मूरत मुरारि, करें तालिब की बस मतलब बरारी"।

बहर घट में व्यापक नूर करके, दर उनका जानता हूँ तूर करके ।

उन्हीं की मेहरबानी से हुआ है, यह दिल मेरा जै मन्त्र जो मुआ है।

परिपूर्ण बड़े परमात्मा हैं, गुजर गाहिश" चौबारा सातवाँ है। वही बेत खुद माही महल है,

खिर्द को न जगह बुध बातिल को महल है। हर इक आरिफ का वो गढ़ कोट है जी, उसी की दास को बस ओट है जी।

है पुरियाँ सात जेरोबर कलासन", जहाँ परमात्मा पूरन का आसन । बृज नायक वहीं यारां बिराजे, बखुद करते इशारा आप लाजै। यकीन तुझ को अगर आवे नहीं है, धर्मशाला में क्यों जावे नहीं है। अगर जायें, सुनें बानी गुरु की, वले पहचान हो खालिस दुराँ की। गुरु मेरा चुनां खत्म-उल-यकीं" है, कि चूँ तरकाँ निरा खत्म-उल-मरसलीं है।

यकीन पुख्ता है सद्दे सिकन्दर, बिला शक बे शक आवे न शक अन्दर ।

मैं उनको क्यों कहा खत्मूल यकीन है, कि हासिल उनको अब हक-उल यकीन है।

1. ईश्वर 2. मुख 3. मोती 4. हंसना 5. सन्तों 6. जन्म स्थान 7. काफी समय से 8. साफ-स्वच्छ 9. श्रीकृष्ण 10. इच्छा पूर्ति 11. निवास स्थान 12. स्थान, आसमान ।

प्रश्न- गुरु सिंह ज्वाला के हैं कौन गुर, पवित्र बनूं सुन सुना दास

दुर?

उत्तर- ओम जी ने बापू ज्वाला सिंह के सद्गुरु ठाकुर जी के विषय में फरमाया-

अमल' दारिये सिंह रणजीत में, जो ब्रह्म पूज सन्तों की था प्रीत में।

विष्ण मूर्ति सन्त प्रकट भये किया दर्स जिसने मुत्क्त्पुर गए।

ज़ लाहौर मशिरक कीं जानिब बदाँ, चके कस्बा नरवड़ यक आसन जहाँ।

बारुए अटारी दिगर जा हजार, हैं आसन जगत गुरु के बस बेशुमार।

नरक नार नर वो पड़े जाशिताब, करे रफ्तगां में जो उनका हिसाब ।

वो हैं आद अवतार ब्रह्म ज्ञान के, सदा अमर वेदों से जा पूछ ले।

वले ज्ञान के यार होना कठिन, न सकता है हर एक सुखदेव बन ।

यकीं सब को ज़ेरे जर्मी आब है, वले जहत मुतलक को चाह बाब है।

मिले पानी यानी ज़ चाह यार मन, अर्ज़ का है परदा दिगर जा कठिन।

इसी तौर पूरन निरंकार जान, वले सूफियों से मिले यह ज्ञान।

जहालत का बोझ उसके दिल से घटा, नजर महर आया मिटी जब घटा।

गुर्ज जात मौला हर दिल पुर अस्त, न दानद ख़जफ हा के दानद दुरस्त ।

न यह ताकत दास दां यारे मन, गुरु की है कृपा, गुरु का है धन।

जगत गुरु जगत गुरु, जगत गरु बदां, तू गर यार हिन्दू बगर मुसलमां ।

(कलीद-उल-कल्ब से)

1. अन्त-हजरत मौहम्मद के बाद कोई पैगम्बर नहीं हुआ 2. पैग़ाम पहुँचाने वाला-पैगम्बर 3. राज्य 4. पूर्व दिशा

बापू ओम जी की अमृत वाणी "कलीद-उल-कल्ब" में भगवद्-प्राप्ति, साधना, उपासना तथा मुक्ति के अभिलाषी भक्तों के लिए अमूल्य निधि हैं। इन में से किसी एक तथ्य को भी श्रद्धा एवं विश्वास के साथ व्यावहारिक जीवन में सही रूप में अपना लिया जाये तो जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है।

सद्गुरु द्वारा बताई गई युक्ति के अनुरूप चलने की प्रेरणा देते हुए "कलीद-उल-कल्ब" में "गुरु का फरमाना और दास का बाजा

लाना" शीर्षक के अन्तर्गत ओम जी फरमाते है-

ईश्वर की प्राप्ति की युक्ति-

गुरु जुगती' बताई हम कमाई, न दिन को दम न निस को नींद आई।

कला दाबी अजब एक रेल की जी, बयक इन्जन दो गाड़ी मेल की जी। लगन की लकड़ी सुरती पिला जल, शताबी कर शताबी दें चला चल।

उड़ी जैसे गिरे तारा जमीं पर, गयी उड़ती हुई कहीं की कहीं पर।

गई उस देस जो बे आब है जी, निराला मुल्क फिर सैराब' है जी।

कठिन वह देस, सुन्दर सर ज़मीं पर, फरिश्ते पर ना मारे हैं वहीं पर। सरर इक ओर कर जब गोर देखा, नयी धरती फलक फिर और देखा।

1. युक्ति 2. पानी 3. सिंचित 4. बदनामी

प्रश्न- बता दे कौन इन्जन कौन गाड़ी, यह मुश्किल पेच ओखी बात डाढ़ी।

उत्तर-सूरत इन्जन माह-ओ-महर अस्त गाड़ी, दबा कल आ ख़बर ले यार साढी।

प्रश्न- इन्हें जोड़ा था तुम किस तौर करके, बता दो जो और देखा गोर करके।

उत्तर- बदिल रखनी न कह करनी ख़्वारी हटा वे दास निकले आमोहारी।

ईश्वर का स्वरूप-

ईश्वर के अद्भुत स्वरूप, प्रकृति के रूप और ईश्वरीय ज्ञान के विषय में ओंम जी ने सांकेतिक रूप में "कनायतन अर्ज किया जाता है" शीर्षक के अन्तर्गत फरमाया है-

मिलोनी की जो मन मन्तर चश्म की, झटापट पड़ गयी सुध बुध खसम की।

झलक झिल मिल छमाछम मेघ बर से, कड़क बिजली चमक जावे नज़र से।

अजब वरदी चतुरंगी बना के,

लगे शोले-चमकने दम दमा के। गगन स्थान क्या तारा चढ़ा है, गोया एक नूर का पुतला खड़ा है।

श्री नारायण चरितामृत

173

चमकता क्या दमकता दम-ब-दम है, न बादल का है बुध बातिल का गम है।

छुपे बादल से न वह नूर, यानी, छुपाये बुध बातिल साफ मानी। जहाँ में जो कोई है बुध बातिल, हैं खुद मक्तूल अपने आप कातिल । फिक्र गर ज्ञान का घोड़ा दौड़ा वे,

नफा नुकसान की न उनको खबर है, अज़ाआं दास मुस्तसना मगर है।

है दम किस में कदम का दम उठावे। अगर जाहिल उम्र भर खाक छाने, नहीं मुमकिन के रम्ज़े पाक जाने।"

(कलीद-उल-कल्ब से)

ओम जी का निवास स्थान-

ओम पंडित नारायण दत्त से पूछा कि आप कौन सी हवेली में रहते हैं तो आपने अपने निवास स्थान की विचित्रता के विषय में

बताया-

मेरा रहना है जिस मन्दिर में याराँ, करें गर यक दफा उसका नज़ारा।

नज़र आवे न आवे था नज़र जो,

हमीं किबला हमीं चाहिए था दर जो। सरर मन्दिर के अन्दर ग्यब के है, महल बेशक ये उस लारेब के हैं।

1. झूठ 2. कत्ल किया हुआ

3. रदद् छुटकारा

4. ईश्वर का मर्म

5. ईश्वर

न उसमें रात-दिन की कुछ ख़बर है, न उसमें रंज न खोफे कबर है।

हज़ारों मेहर' सदहा माह' चमक्कन, ठमा ठम नूर के तारे दमक्कन ।

कभी ग्रहन से सूरज मात हो जाये, अजायब रात में इक रात हो जाये। फटे पौ फिर कभी हो जा उजाला,

वो काला नूर वाला क्या प्याला, यह क्या चाला कि काला दे उजाला।

उजाला हो झटा-पट फिर काला। लगा जगने अजब दीपक निराला, बिना तेल और बाती दे उजाला। इधर धुन बाँसुरी की बज रही है,

उधर बिजली चमक कर गज रही है। अजब मोती अजब हीरे अजब लाल, कोई महरम बढ़ूँ जाने नहीं हाल।

नज़र बालिग अगर सर्राफ होवे, परख इन होरों की साफ होवे। अगर जाहिल उम्र भर खाक छाने, नहीं मुमकिन कि रम्ते पाक जाने।

(कलीद-उल-कल्ब से)

राज-ए-खुफ़िया-हृदय कमल का रास्त होना-

ओम जी ने हृदय कमल को यानी कुण्डलनी शक्ति को रास्त करने के लिए अपने कलाम 'कलीद-उल-कल्ब' में "राज-ए-खुफिया" का बयान इस प्रकार किया है-

अजब एक बात सुन दीगर निराली, कलीद-ए-कुफ्ल' सरर यार वाली। नली एक सिर तले केला कली है, शमा रोशन बनूँ उसके जली है। जग मग जगत बिन रोगन जगे है, सिखर में सुन्न के शोला दगे है। नली को देह तली हिम्मत खुली कर, हवा उल्टी फिरा सुल्टी चली कर।

1. सूर्य 2. चाँद 3. ताले की चाबी

यह बाहर बादे जा अंगुश्त बाराँ,

श्री नारायण चरितामृत

हटे फिर सर्द हो चूँ शर्म साराँ। बना सुरती सबुचा बाँध डोरी, ज़ चश्मा मेहर भर कर मन कटोरी।

पीओ सैराब हो जुगति लगाओ, बली बयन कर नली बाला उठाओ।

नली कादिर खुली गर कर दिखावै, सरर गैबी सब उसमें नज़र आवै।

लगे अम्बर सितारे रंग न्यारे, सियाह सब्ज़ ओ कपूदी लाल प्यारे ।

न सुध-बुध को अकल को होश है यहाँ, सरर गैबी का बिल्कुल जोश है वहाँ।

गगन में हो मगन वाँ जा चढ़े हैं, सरर सब गैब के जिस जा पड़े हैं।

अगर जाहिल उम्र भर खाक छाने, नहीं मुमकिन के रम्ज़-ए-पाक जाने।

दास की तवाजो-

"दास की तवाजो" शीर्षक के अन्तर्गत बापू ओम जी ने साधना युक्ति बताते हुए फरमाया है-

निरा बे नीर' हम तुझको दिया शीर',
श्री नारायण चरितामृत

बिलोने की किसी से सीख तद्बीर ।

अक़्ल आरास्ता कुन बुध व्यारा, बिलोकर दूध कर मक्खन न्यारा।

कोई गर खावे, न खुशकी पास आवे, शमा आई अन्धेरा भाग जावे।

यकीन आवे नहीं तो आज़माना, किसी से ला ज़रा जमन जमाना।

हिफाजत बस वले बिल्ली से रखना, न पी पागल करे कहीं ज़र्फ सखना।

जमे गर फिर जमा सरसों हथेली, न कूढ़ा दास तेरा यार बेली।

(कलीद-उल-कल्ब से)

1. उंगली 2. बिना पानी का शुद्ध 3. दूध

4. सजाना, पवित्र

सद्गुरु की अपार लीला-अगाध माया है-

"सद्गुरु की अपार लीला-अगाध माया" के विषय में ओम जी ने अपने ग्रंथ 'कलीद-उल-कल्ब' मे बयान किया है-

यह कल की बात मुझको याद सब है,

गुरु इक न दीगर पास जब है।

गुरां एक जाम जादू का दिया है,

दिया दाते लिया, लेकर पिया है, इधर पीना उधर सीना गुराँ का, दहन मेरा दफीना' है दुरों का।

कहीं होकर वे सुर वे बाअस' व ऊर, न खोये दुर सिया इस वास्ते कुर। नहीं मैदान तुम घोड़ा दौड़ाओ,

ब अन्दर बून कदम सहजे उठाओ।

कठिन डाढी रची है दास बानी, कि यानी कर निहायत सोच मानी।

योग-साधना-

योग-साधना की विधि समझाते हुए ओम पंडित नारायण दत्त ने फरमाया है-

सही साफ़ मधानी नाफ करो, दम कल्ब कलाम का नेता है।

गुण ज्ञान का माखन निकल पड़े, ला ज़ोर जिगर में जेता है।

मिट की तन कर सुरत से बन कर, जो हो जुगत जतन कर लेत्ता है। मन मस्त न दास हो क्यों कजी,

गुरु ज्वाला सिंह तत्त्व' वेत्ता है।

(कलीद-उल-कल्ब से)

1. खजाना 2. अकारण 3. ईश्वरीय तत्वों को जानने वाला।

परलोक में शुभ कर्म साथ जाते हैं-

ओम जी ने "कलीद-उल-कल्ब" मे फरमाया है कि परलोक में मनुष्य के शुभ-कर्म ही उसके साथ जाते हैं। भौतिक वैभव उसके काम नहीं आता। सगे सम्बन्धी यहीं छूट जाते हैं। यथा -

सवा नेज़े पै जब सूरज झुकेगा, जिस्म चूँ चोबतर सबका घुकेगा।

छतर बन कर अमल' उस वक्त साया, करें नेकों के सर पर मिसल दाया।

बजेंगे जब दमामे मौत वाले, लगेगी तब ख़बर पड़ेंगे पाले।

कोई उस वक़्त फिर न काम आवे, जगत में तू जिन्हों से नेह लगावे।

फना संसार आख़िरकार जब है, जगत में फिर तेरा ग़म खार कब है।

भजन बिन भागने देती नहीं है, यह रिश्वत भी कभू लेती नहीं है।

वह सच्चे साफ़ सांई की कचहरी, न उसका है कोई मित्र ना बैरी।

खुदी को छोड़कर तज दे गुमाना, गरीबी बन्दगी बिन किन छुड़ाना।

पकड़ कर गर्द कर दे मार मन को, चलो सीधे खुदी वाले वतन को ।

खुदी' से पाखबर खुद हो खुदा तूं, ना इकदम इक पलक सायत जुदा तँ।

जिन्हों का काम लेना नाम का है, यही बेहतर कि यह तन चाम का है।

यकीं जानी न रहना जान जानी, नमाणों का नमाणी अन्त पानी।

तू कर ले बन्दगी और मान कहना, भजन में हर घड़ी हर पलक रहना।

1. कर्म 2. अहंभाव

अध्यात्म तथा जीवन सम्बन्धी अनुभव-

ओम जी ने अपनी कारगुजारी का वर्णन 'कलीद-उल-कल्ब' में किया है। यह उनके व्यक्तिगत अनुभवों पर आधारित है उनके अनुभव ही जीवन का सच्चा ज्ञान है-

निकल घर से किया जो कुछ बतावां, सही और साफ जानी को सुनावां ।

गगन गुरु देव कामिल की गवाही, पवन के बैल की जा सुन्न बाही।

ज़राअत ताब में बे आब है जी, कि यानी वह सदा सैराब है जी।

जमीं बिन जल बिना हम आप देखी, खुदा जाने है कितनी माप देखी।

यकीं की जा नहीं तालिब को तब तक, न दिखलावें बिन आँखों यार जब तक ।

उठाये हासिलों के गंज भारी, बड़े मन मस्त बेसुध बस खुमारी।

फतह का काफिया कब पा रफा हो, शिकस्ते काफ़िया की चल दफा हो।

ख़बर नहीं ज़ेर है या पेश है जी, जो अपना है तेरे सब पेश है जी।

भला बाकी बयां कर यार किस्सा, है कुछ नकदी पे या इकरार हिस्सा ।

मेरे हम राज़ कुछ देते नहीं बाज', बड़ा दाता वहां का साहिबे ताज' ।

खुशी से खुश गुजारी दम बरारी,

करें दीगर भजन माधो मुरारी।

ज़ मन्तर मार सागर मन किलेगा, मेरी पैदा से तो फिर हिस्सा मिलेगा।

तू बो दिल की जमीं में नाम खेत्ती, करें हासिल नफा इस नाम सेत्ती।

हरि के नाम से होवे हरी है, न ख़्वाहिश आब की रत्ती ज़री है।

जपेगा नाम गर सिमरेगा सांई, तो हासिल गंज गंदम ज्ञान पाईं।

जगे किस्मत मिले गर ज्ञान का गंज, तो जल जायें गमो रंज ओ सखुन संज।

1. कर, टैक्स 2. राजा 3. इच्छा।

बीन के तीन तारां-

संसार के समस्त प्राणी माया के बन्धन में हैं। सद्गुरु की कृपा से मनुष्य उस बन्धन से मुक्ति पा सकता है। माया के तीन गुण हैं- सतो गुण, रजो गुण और तमो गुण। ओम जी माया के विषय में फरमाते हैं-

अजब इक बीन की तीन तारां, बन्धे जी जून उन तारां हज़ारां।

नहीं टूटें वह सदमे से तबर से,

अगर टूटें तो कुछ तेरे सबर से। सबर निष्काम होने को कहे हैं, दरां जायें की तत्व वेत्ता कहे हैं।

यकीं कर देख नकदी दे सुला के, कि यानी पूछ ले पंडित बुला के।

खबर इस्लाम सूफी नाम रक्खा, मिले मुद्दत हुई मिल राम रक्खा।

सबर जिसको अवामुल नास जाने, निशाने पस्त हिम्मत जान जाने ।

न इससे कार मतलब और से है, न पानी से है मतलब दौर से है।

पियो पी मस्त होवे दास दस तूं, कमाया माल क्या सच बोल बस तूं।

(कलीद-उल-कल्ब से)

जीवनोपयोगी शिक्षा-

ओम नारायण दत्त जन-सामान्य के उद्धार के लिए जीवनोपयोगी धर्मोपदेश देते हुए कहते हैं-

खुदा को याद करना बंदगी है, यह तन तेरा निरा ही गंदगी है।

कि एक दिन खाक हो जायेगा यह तन, तेरे डेरे लगेंगे जंगल व वन।

पड़ा घबरायेगा फिर हाथ मल-मल, पुकारेगा नरक की आग जल-जल ।

गुज़र जब बलेड़ा जावे प्यारे,

पड़ेंगे खौफ तब सिर पर तुम्हारे, तँ दिल दुनिया से क्यों ऐसा लगाया। न एक सायत कभी रब नूं ध्याया, ख़र्च लाखों न एक दमड़ी कमाया, जन्म पा आदमी दा बिरथा गंवाया।

कजी को काफिया को और कमी को, न देखो देख फुरसत दो दमी को। धर्म राय जिस घड़ी लेखा लयेगा, ज़रा कर सोच फिर तू क्या कहेगा। वह सच्चे साफ़ साईं की कचहरी, न उसका है कोई मित्तर न बैरी। बड़ी मुश्किल बनेगी फिर तुझे वां,

खता तेरी करें जमदूत औसां । कोई न काम फिर बिन राम आवे, न तू उस राम को फिर क्यों ध्यावें। यह ताने तीन फिकरों के सहे जो,

वह चौकी कदर पर फिर वो बहेजो। तू कर ले बन्दगी और मान कहना, भजन में हर घड़ी हर पलक है रहना।

(कलीद-उल-कल्ब से)

1. टेढ़ापन, दुष्टता 2. वाक्य

अन्तर्मुखी होने की प्रेरणा-

ओम जी भक्त को ईश्वर पर विश्वास रखने और अन्तर्मुखी होने की प्रेरणा देते हुए फरमाते हैं-

तन अंदर देख कलंदर तू, मन मन्दिर जगत ज्वाला है।गर खसम की बरकत चशम को हो, फिर पशम बराबर माला है। सब बानी विद्या वेद कहें, उस जा का सरर निराला है।

ऐ दास कपास का फूल खिला, जिसे देख शरमगीं लाला है।"

(कलीद-उल-कल्ब से)

ईश्वर भक्ति का मार्ग-

ओम जी ईश्वर प्रेम और भक्ति के विषय में अपने ग्रंथ

"कलीद-उल-कल्ब" में फरमाते हैं-

आप को खलक' में खलक को बखुद जाने, त्रिगुण अतीत है वेदांती असल में।

उपासना के बिना ज्ञान नेष्टा नहीं पावत है, लज़्ज़ते' इश्क नहीं आवत अकल में।

गूंगे की मिठाई नहीं, और को सुनाई देत, सुन्न में रंग रूप गगन महल में।

मन मांहि मन्त्र ते सूरमा है चुन रख, छमा छम जोत है चमकती अटल में।

झूठे हैं वेदांती जबान के हैं लापरी, अन्दर से हैं खाली जिने शोर है तबल में।

दास की है आस एक नाम रहे पास, गले पल्ला देन्दी घास मूड़ साघड़ा जटल में।

1. जगत, संसार 2. स्वाद, आनंद

आत्मा का राज-

ओम जी ने आत्मा के गोपनीय भेद को बहुत ही सुन्दर सरल एवं स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया है-

अजब एक बार सुन सुन्न' के सरोवर

दरां बिरवा बरां शाखें बरोबर। रहें दो हंस थे उस पर हमेशा, गोहर चुगने भजन करना था पेशा।

कहीं किस्मत किनारी आन हारी, बला चारी कड़ीं मारी उडारी।फंसे सैयाद के दाम-ए-बला में, बड़े बेढ़ब व पड़ी मुश्किल कला में।

खुदी से बेखबर हो रोड़ चुगने, समझ बैठे कि कर बैठे हैं दुगने।गये वो आशियाना' भूल भाई, किसी सुध बुध न अब तक भोल आई।

गुरु कृपा व क़िस्मत का उजाला, हुआ आजिज़ पता पिछला संभाला।अगर जाहिल उमर भर ख़ाक छाने, नहीं मुमकिन के रमज़े पाक जाने।

(कलीद-उल-कल्ब से)

आत्मा सो परमात्मा-

ओम जी आत्म रूप में ही परमात्मा के स्वरूप के दर्शन करने की प्रेरणा देते हैं। वे ईश्वर दर्शन को सरल युक्ति बताते हैं-

खुदी में खुदा देख गर चश्म' है,

यकीं राम रखा बकुन कसम है। बहु जरा जिगर जो जगे नूर-ए-जात, वही अमर प्रकाश दायम-उल-हयात' ।बसीना जिगर मुख्तसर वलेक, अज़ां जिस्म आँ गुफ्त अंगुश्त एक । तरक तीन त्रिकुटी है, तुरया की जा, इसे समझ लो सदर-उल-मिन्तहा। यह तिरया बियाहे तो तुरया मिले,रखे दृष्टि में फिर न मुतलक हिले।

1. शून्य 2. वहाँ, उसमें, 3. घोंसला 4. दृष्टि, ज्ञान, 5. अमर

बबालाए त्रिकुटी हों दो सुर एक, ज़ गुर जुगत लेकर जतन फिर देख।दो नैनों मुकाबिल दो अबरू तले, है शीरीं सी धुन, जोत जग मग जले।है मस्तक महल की तो नक सोद बाट, छुटेगी त्रिकुटी खुलेंगे कपाट।

महल तीन कर त्याग चौथे चढ़े, कवँल दल सहंसर से अमृत झड़े।खुले वाणी अनुभव का फिर यार मन, रहे शान्त मन चित्त सुरत बुध बदन ।

अजब घोर घनघोर है नाद की, यह जा जानने की न बकवाद का।पकड़ ओट ली नाद की जब फकीर, हुआ दर्स तब शाह का दस्तगीर।बिलौरी सी सूरत का नूरी सा रंग, चढ़े नयन ऊपर को चूँ पतंग ।जो नैंनो से बाहर सो नैनों के बीच, मिले जोत ज्योति भया अश्क कीच ।है अकबर अकाबर का दर्श जहाँ, हो दरस जब से बदिल कह कहा।सुनो खोलकर कान कल्याण दास, कहे बस मोहब्बत से नारायण दास ।कहा दास ने कर अमल गुरु वचन, बताया गुरु सिंह ज्वाला जतन । असल ज्ञान इन चन्द अश आर का, करें शुद्ध सीना नरोनार का।

योग साधना की विधि-

ओम जी ने योग साधना की विधि को बहुत ही सरल शब्दों में स्पष्ट किया है। यथा-

सहज सहज में याद रख लीजिए,

नाक की ताक बेबाक देखो।चक्ष को रख दम सद कर भख, फिर जोत अलख चालाक देखो।सुन्न की सार करतार जी तरस कर जी, करेगा दास का पाक लेखो।कड़क से धड़क मच जाये आकास में, दुनी में दास की हाक देखो।

(कलीद-उल-कल्ब से)

चंचल मन-

ओम जी चंचल मन की उपमा एक बन्दर से देते हैं। मन को वश में करने के लिए सद्गुरु द्वारा प्रदत्त ज्ञान (युक्ति) को वे सफल साधन मानते हैं। उन्होंने फ्रमाया है-

मन मन्दर में इक अन्दर है, तिस अन्दर बसत कलन्दर है।उस अन्दर देख यतन्दर तू, इक पास कलन्दर बन्दर है।अति चंचल चपल चालाक चतुर, झट बाहर झटा पट अन्दर है।लिया बन्दर घेर कलन्दर को, बस बंदर दास मछन्दर है।

दी ज्ञान गुलेल गुरां हम को, घर गोली सुरत निसान किया।धन धनुष पकड़ जब दास चढ़े, तब जुगत जतन का बान किया।गया भाग वह बंदर अंदर से, इक आन में बान हैरान किया।बलिहार मैं बार हज़ार तेरे, जिस ज्ञान कमान का दान किया।

(कलीद-उल-कल्ब से)

आत्म-ज्ञान द्वारा ईश्वर प्राप्ति-

ओम जी फरमाते हैं कि आत्म-ज्ञान द्वारा ही ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है। अतः व्यक्ति को पहले स्वयं को जानना चाहिए फिर गुरु द्वारा दिखाये गये मार्ग पर चलकर भगवद् प्राप्ति के लिए यत्न करना चाहिए। खुदी का देखना ही खुदा को देखना है-

खुदी ताकी नहीं, ताका खुदा को, न कांशी को वले इक पेशवा को। खुदी ताकी, खुदा ताका गया जी, गुरु ताका गया, खुदा ताका गया जी।

खुदी को ताकना मंजूर गर हो, तो पुतली पार हो, खूनी नज़र हो। नज़र बारीक बन बिजली चमके, ढला ढल नूर कुन्दन क्या दमके । अभी ऊँचा मकान करतार का है, जो मालिक जिस्म के घर बार का है अगर जाहिल उम्र भर खाक छाने, नहीं मुमकिन कि रम्जे पाक जाने।

(कलीद-उल-कल्ब से)

भक्तों का उद्धार करते हुए बापू ओम जी को एक लम्बा समय बीत गया। बापू ओम जी अपने जीवन के अन्तिम दिनों में ईश-प्रेम में इतने निमग्न रहने लगे कि उनकी देह बुद्धि का पूर्णतया लोप हो गया। नित्य ध्यानस्थ रहने के कारण उनका शरीर भूमि से ऊपर उठ कर हवा में तैरने लगता था। उनका रोम-रोम ईश्वरीय प्रेम से इतना प्रफुल्लित हो उठता था कि वह शारीरिक सुध-बुध खो कर अति उल्लसित हो नृत्य करने लगते थे। एक दिन इसी प्रकार जब बापू जी ने आत्मानन्द में लीन हो कर उडारी मारी तब नीचे भूमि पर आते समय उनके चरण में चोट लग गई परन्तु बापू ओम जी ने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया।

बापू जी के भक्तों ने छत की दीवार कमर तक ऊँची करवा दी

ताकि कोई अनहोनी न हो। समय व्यतीत होता गया और ज्येष्ठ का महीना आ पहुँचा। एक दिन बापू जी ने अपने दर्शनार्थ आई संगत को कहा कि अब हमारा समय निकट आ गया है। परसों 25 तारीख को पूर्णिमा के दिन हमारी सवारी निकलेगी। बहुत भारी मेला लगेगा। कीर्तन होंगे और बाजे बजेंगे। वहाँ उपस्थित लोगों में से किसी ने भी इस कथन का मर्म नहीं समझा।

बापू जी अकसर यह भी कहा करते थे कि एक कर्म हमारे जिम्मे है जो हम इसी जन्म में भोगना चाहते हैं वरना इसके लिए एक जन्म और लेना पड़ेगा। बापू ज्वाला सिंह जी ने भी उन्हें विषय में पहले ही संकेत दे दिये थे। शीघ्र ही 25 तारीख भी आ पहुँची। पूर्णिमा वाली रात रविवार को रात के दस बजे बापू ओम जी विश्राम करने हेतु पलंग पर लेटे। संत हरनाम दास जी उनके पास उनकी सेवा हेतु उपस्थित थे। वह भी कुछ समय पश्चात रात विश्राम करने लगे।

ग्यारह बजे जब हरनाम जी की आँखें खुली तब उन्होंने देखा कि बापू ओम जी पलंग पर नहीं हैं। इधर-उधर देखने पर उन्होंने बापू जी को एक दीवार पर समाधिस्थ बैठे पाया। उन्होंने तुरन्त उन्हें वापिस उनकी शैय्या पर ला कर लिटा दिया और निश्चिन्त हो कर आराम करने लगे। थोड़े समय पश्चात् रात के एक बजे जब हरनाम रात जी ने थोड़ा सिर उठा कर देखा कि बापू जी विश्राम कर रहे हैं या नहीं, तब वह यह देख कर

आश्चर्य में पड़ गए कि बापू जी फिर से हवा में तैरते हुए दीवार पर बैठ कर समाधिस्थ हो गये हैं।

पहली बार की तरह इस बार भी हरनाम जी ने उन्हें वापिस पलंग पर ला कर लिटा दिया और स्वयं भी विश्राम करने हेतु सो गए। ईश्वर ने ऐसा खेल रचाया कि लेटते ही हरनाम जी की आँख लगे गई। फिर रात के तीन बजे बापू ओम जी ने उडारी मारते हुए फिर से दीवार पर बैठ कर समाधि लगा ली। कुछ समय पश्चात् उन्होंने आनन्द में आ कर नृत्य प्रारम्भ कर दिया और नृत्य करते-करते ही नीचे गली में गिर पड़े। उनके अचानक गिरने से जोरों की आवाज हुई। आस-पास के लोग एकत्र हो गए और उन्होंने हरनाम दास जी को जगाया।

हरनाम दास जी ने जब जाग कर छत से नीचे झांका तब नीचे का दृश्य देख कर एकदम अवाक् रह गए। उन्हें ऐसा अनुभव हुआ मानो उनके शरीर से आत्मा ही उड़ चली हो। बापू ओम जी का सारा शरीर चोटिल हो गया था। हरनाम जी ने शीघ्रता से सीढ़ियों वाला दरवाजा खोला और नीचे चले गये। ओम जी ने उसी अवस्था में कहा, "ओम बाजे बज गये, गाजे गज गए, झण्डे झुल गये। अब हम अपने देश जा रहे हैं।" यह कह कर ओम जी ने हरनाम जी को कहा कि वह उन्हें सहारा दे कर बिठायें। हरनाम जी ने बापू ओम जी को सहारा दे कर बिठाया और उनके पीछे बैठ गये।

ओम जी ने बैठते ही दोनों मुठ्ठियों को बन्द कर श्वास खींच कर समाधि लगा ली और देह त्याग कर दिया। आत्मा के देह-मन्दिर से बाहर निकलते ही ओम जी की मुट्ठियाँ खुल गई और गर्दन नीचे की ओर झुक गई। तत्पश्चात् उनकी देह ठण्डी हो गई। ओम जी के देह-त्याग करते ही देवताओं ने आकाश में प्रकट हो कर जय-ध्वनि की और इसी जय-ध्वनि के मध्य ओम जी ने अपने धाम की और प्रस्थान किया।

तदुपरान्त हरनाम दास जी ने एक साधु और एक सेवक को ठाकुर जी के पास लाम्बड़ा भेजा। प्रातः काल जब ठाकुर जी स्नान करने हेतु जा रहे थे तब वह साधु और सेवक उनसे मिले और नमस्कार कर के बैठ गए। ठाकुर जी द्वारा कुशल-क्षेम पूछने पर उन्होंने यह दुःखद समाचार दिया कि आज महाराज अधिराज परम पिता ओम नारायण दत्त जी देह-त्याग कर स्वधामगमन कर चुके हैं।

इस हृदय विदारक समाचार को सुन कर ठाकुर जी स्तब्ध रह गये। उनके नेत्रों से आँसू बरसने लगे। उन्होंने पूछा कि अब उनके लिये क्या आदेश है? सेवकों ने उत्तर दिया कि श्री हरनाम जी ने आपको तुरन्त बुलाया है। यह सुन कर ठाकुर जी ने अपनी पत्नी और पुत्र संत राम जी को साथ में लिया और नन्दाचौर के लिए प्रस्थान किया। उनके दुःख का कोई अन्त ही नहीं था। जो मार्ग हंसी-खुशी पन्द्रह मिनट में

बीत जाया करता था, वह बिताना पहाड़ के समान कठिन हो गया। जब वह नन्दाचौर पहुँचे तब थोड़ी-थोड़ी वर्षा हो रही थी।

महाराज जी के स्वधामगमन का समाचार कुछ ही क्षणों में चारों ओर फैल गया। आस-पास के गाँवों और नगरों से सारी संगत उनके दर्शनार्थ पहुँचने लगी। दरबार के आगे बहुत भीड़ थी। किसी को कुछ भी नहीं सूझ रहा था। नूरशाह निवासी पं० कल्याण दास और गुगेरा निवासी राय साहब नारायण सिंह भी वहाँ पहुँच गये। सारे भक्त शोक-मग्न थे। शीघ्र ही बापू जी की अन्तिम यात्रा की तैयारी होने लगी।

कारीगर ने बहुत सुन्दर विमान बनाया जिसे बेहद खूबसूरत तरीके से सजाया गया। तत्पश्चात् बापू जी को पवित्र जल से स्नान करवा कर, सुन्दर वस्त्र ओड़ा कर उस विमान में बिठाया गया। उनके ऊपर सुन्दर दुशाला दिया गया।

तभी कुछ भक्तों के मन में यह बात आई कि बिना फूलों के बात नहीं बनेगी। वह समय और मौसम कुछ ऐसा था कि मोतिए के फूलों की कलियां मिलना सम्भव ही नहीं था। ठाकुर जी ने भक्तों के मन की बात समझ ली। उन्होंने अपने सेवक गणेश जी को लाम्बड़ा भेजा और अपने शिष्य श्री देव गिरधारी जी जो कि एक अति उच्च अवस्था प्राप्त महान् संत थी, से फूल लाने का आदेश दिया।

जिस रात बापू ओम जी ने देह त्याग किया था उस दिन 25 ज्येष्ठ पूर्णिमा सम्वत् 1971 को ठाकुर जी ने प्रातःकाल मन्दिर से उतर कर अपने सेवक गणेश जी को आवाज़ दे कर कहा कि आज हमने बहुत बड़ा आश्चर्य देखा है। आधी रात को हमने देखा कि एक बहुत ही खूबसूरत पलंग के ऊपर बापू ओम जी महाराज जी विराजमान हैं। चार पार्षदों ने उस पलंग को उठाया हुआ है। ओम जी कह रहे हैं कि ठाकुर जी, अब हम नन्दाचौर में सब कुछ छोड़ कर आप के पास आए हैं।

एक ओर जहाँ बापू ओम जी ने ठाकुर जी को दर्शन दिए वहीं दूसरी ओर श्री देव गिरधारी जी को भी समाधि अवस्था में बापू जी ने दर्शन दिए और कहा कि आज प्रातः बहुत ही बड़ा अचम्भा घटित होगा। हम देह त्याग कर चले जाएंगे। आपने मोतिये की कलियों के सेहरे पिरोने हैं। श्री देव गिरधारी जी ने विनती की कि महाराज जी इस महीने में तो मोतिये की कलियां भी नहीं उगी फिर फूल कहाँ से उगेंगे। यह सुन कर बापू जी ने कहा, "ब्रह्म-बाग में जा कर देखो।"

जब आधी रात को श्री देव गिरधारी जी ब्रह्म-बाग में पहुँची तो देखा कि जिन पौधों में कलियां भी नहीं आई थी वह पौधे फूलों से लदे हुए थे। जब श्री देव गिरधारी जी वापिस आई तब उन्हें फिर आदेश हुआ कि इन फूलों के दो सेहरे पिरो कर अलग रख दो। उन्होंने ठीक

वैसे ही दो सेहरे पिरोए और अलग रख दिए।

बापू जी की अन्तिम यात्रा के समय जब उनके देह-मन्दिर पर बरसाने के लिए फूलों की आवश्यकता पड़ी तब ठाकुर जी ने अपने सेवक को कहा कि रात को श्री देव गिरधारी जी ब्रह्म-बाग गई थी। जब वह वापिस आई थी तब उनकी झोली में कुछ कलियां मालूम होती थी। तुम जा कर वह कलियां ले आओ। तदुपरान्त वह सेवक लाम्बड़ा गया और प्रार्थना की कि ठाकुर जी ने कलियां मंगवाई हैं। श्री देव गिरधारी जी ने दोनों सेहरे और कलियां दे कर इशारे से बताया कि एक सेहरा बापू ओम जी के लिए है और दूसरा ठाकुर जी के लिए।

श्री देव गिरधारी जी से कलियां और सेहरे प्राप्त कर वह सेवक वापिस आ गया और फिर बापू ओम जी को सेहरा पहनाया गया। उनकी देह पर पुष्प-वृष्टि की गई। बाजे बजने लगे। रागी राग गाने लगे। भारी संख्या में नर, नारी, बालक, वृद्ध ओम जी की अन्तिम यात्रा में शामिल हुए। शोक ग्रस्त हो कर सभी रुदन करने लगे। बापू जी के प्रेम को याद कर सभी का बुरा हाल था। इस सब के मध्य हरनाम दास जी बापू जी की चरण पादुकाओं को अपने सीने से लगाए कहीं अज्ञात स्थान पर चले गए।

ओम जी के देहावसान के बाद मन्दिर के कई हकदार पैदा हो गए। ओम जी के जीवन-काल में उनके पास बड़े-बड़े अफसर और

अन्य भक्त जन आते थे और श्रद्धापूर्वक माथा टेकते थे। एक बार ठाकुर जी ने बापू ओम जी से पूछा था कि बापू जी, आप इस पैसे को किस लिए जोड़ते हो। हम फकीरों ने इसका क्या करना है?

बापू जी ने कहा कि इस पैसे के द्वारा हमने खोटे और खरे की परीक्षा करनी है। उस परीक्षा का समय अन्ततः आ ही पहुँचा। बापू जी की समाधि के उपरान्त किसी ने कहा कि मैं महाराज जी का सेवक हूँ तो किसी ने कहा कि मैं उनका शिष्य हूँ, अतैव महन्त मैं बनूंगा। हर कोई माया के लालच में महन्त की

पदवी प्राप्त करना चाहता था। संत हरनाम दास जी जो दस वर्षों से तन-मन से बापू जी की सेवा कर रहे थे पहले ही कहीं चले गए थे। तब लोगों ने ठाकुर जी से मन्दिर की व्यवस्था का कार्यभार सम्भालने का अनुरोध किया। ठाकुर जी ने स्पष्ट किया कि वह तो महाराज जी के सेवक हैं। वह इस दरबार के मालिक नहीं बन सकते।

इसी बीच कई लोगों ने मन्दिर के दरवाजे पर अपने-अपने ताले लगा दिए जिन्हें बाद में पं० कल्याण दास और राय साहब सरदार नारायण सिंह ने पुलिस सहयोग से तुड़वा लिया। थोड़े समय तक मन्दिर की देख-रेख का भार पं० कल्याण दास जी को सौंपा गया। कुछ समय तक वह सारी व्यवस्था देखते रहे। बाद में उन्होंने कहा कि हम नूरशाह के डेरे का प्रबन्ध ही देख सकते हैं जो बापू ज्वाला सिंह जी ने

हमारे जिम्मे लगाया है। यहाँ का प्रबन्ध हरनाम दास जी को सौंप दिया जाये तो अच्छा होगा। सभी ने प्रयास कर के हरनाम दास जी को ढूँढा और 10 आषाढ़ (हाढ़) को बहुत बड़े यज्ञ का आयोजन किया गया। उस यज्ञ में ठाकुर जी, पं० कल्याण दास जी और संत अरूढ़ सिंह जी भी सम्मिलित हुए। यज्ञ के सम्पन्न होने के कुछ दिनों बाद हरनाम दास जी को मन्दिर की व्यवस्था का कार्यभार सौंप दिया गया। हरनाम जी ने उस मन्दिर के ऊपर एक और मंजिल बनाई और उसके ऊपर सोने का कलश चढ़ाया। हरनाम जी बापू ओम जी निर्दिष्ट पथ पर चलते रहे और संगत की खूब सेवा की।

बापू ओम जी के देह-त्याग के उपरान्त भी कई भक्तों को उनके दर्शन हुऐ। महान् आत्माएं अपना पार्थिव शरीर त्याग करने के उपरान्त भी सक्रिय रहती हैं और उन साधकों का मार्गदशन करती रहती हैं। जो ईश-साम्राज्य में पदार्पण करने हेतु प्रयासरत रहते हैं। इसके साथ-साथ अति दयालु बापू ओम जी सदृश महागुरु उन भक्तों की करुण पुकार को कभी भी अनुत्तरित नहीं जाने देते जो भौतिक जगत में कभी तो अपने दुष्कर कर्म-चक्र के कारण कष्ट प्राप्त कर रहे होते हैं तो कभी किसी अन्य कारण से संकटग्रस्त होते हैं। बापू जी की करुणा समुद्र की तरह अथाह एवं अगाध और आकाश के समान अनन्त है। इस त्रिगुण प्रधान माया से सम्मोहित जगत में जब मानव भान्ति-भान्ति के दुःख प्राप्त कर दिग्भ्रमित हो जाता है तब बापू ओम जी सदृश

ईशतुल्य महान् आत्माएं न केवल उनकी पीड़ा को हर लेती हैं अपितु उन्हें जीवन के उच्चतम लक्ष्य की प्राप्ति के लिये प्रेरित भी करती हैं।

भले ही बापू ओम जी के देहावसान को सौ वर्ष बीत गये हों उनका वरद्-हस्त आज भी उनके भक्तों पर विद्यमान है। प्रति पल उनकी असीम दया श्रद्धालुओं पर अनवरत बरसती है। भक्त जन आज भी उनकी सशक्त उपस्थिति को अनुभव करते हैं। इस बात की सत्यता में तनिक भी संशय नहीं है। वर्तमान समय में कुछ भक्तों के साथ हुए चमत्कारों का विवरण यहाँ दिया जा रहा है। ये चमत्कार यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं कि सिद्ध महापुरुषों की कृपा किसी भी काल-खण्ड में अपने शिष्यों का महाकल्याण कर उन्हें हर प्रकार के संकटों से दूर रखती है।

प्रस्तुत प्रसंग एक ऐसे भक्त के विषय में है जिसने नन्दाचौर दरबार की अतिशय सेवा की और बापू जी का आशीर्वाद प्राप्त किया। नरेन्द्र नामक यह भक्त फिल्लौर (पंजाब) के छिछोवाल ग्राम का रहने वाला है। उसने वर्षों तक दरबार की अनथक सेवा की। बापू जी के आशीर्वाद से उसका विवाह नन्दाचौर गाँव की रहने वाली अमन से हुआ जो उसी के समान सङ्घरित्र और ईश्वर परायण थी। एक रात खेतों में कार्य करते समय नरेन्द्र अपनी फसल को पानी देने हेतु मोटर को चलाने गया। तब उसने देखा कि एक तार जो बिजली के प्रवाह के

लिए आवश्यक थी उसमें कोई समस्या आ गई थी। उस तार को ठीक करने के विचार से ज्यों ही उसने ऊपर उठ कर एक तार का स्पर्श किया त्यों ही उसे बिजली का जोरदार झटका लगा।

गलती से उसने उस तार का स्पर्श कर लिया था जो दूर से पूरे फिल्लौर शहर को बिजली प्रदान करती थी। नरेन्द्र एकदम अचेतन हो गया और उसके हाथ उस तार से चिपक गये। जब कुछ देर बीत जाने पर नरेन्द्र घर नहीं पहुँचा तब उसके पिता घटनास्थल पर पहुँचे और नरेन्द्र को हवा में लटके देखा। यह दृश्य देख कर वह हतप्रभ रह गये। वह तुरन्त नरेन्द्र के पास पहुँचे और जैसे ही उसे तार से अलग करने हेतु स्पर्श किया वैसे ही उन्हें भी बिजली का झटका लगा और वह छिटक कर दूर जा गिरे। फिर उन्होंने तुरन्त अपनी कमीज़ और साफा उतारा और कपड़ों का गोला बना कर ज़ोर से तार पर दे मारा।

नरेन्द्र के हाथों से तार छूट गई और वह नीचे गिर पड़ा। उसके हाथों की उंगलियाँ बुरी तरह जल गई थी। उसकी हड्डियाँ तक दृष्टिगोचर होने लगीं थी। उस समय अन्धेरा हो चुका था और नरेन्द्र को डाक्टर के पास ले जाने के लिए गाड़ी का प्रबन्ध नहीं हो रहा था। नरेन्द्र के परिवार वाले बापू जी को याद कर रहे थे और प्रार्थना कर रहे थे कि बापू जी, आप अपने बच्चे की रक्षा कीजिए। जिस समय यह घटना घटी उस समय दौरांगला गद्दी के महन्त श्री चमन लाल पुजारा जी फगवाड़ा

निवासी श्री अमित शर्मा के घर आए हुए थे। उन्होंने अमित से यह इच्छा प्रकट की कि वह अपने समधी से मिलने फिल्लौर जाना चाहते हैं। अमित उन्हें लेकर फिल्लौर चले गये और पुजारा जी अपने समधी से मिले।

वहीं पर अमित ने पुजारा जी से कहा, "बापू जी, मेरी बहिन रूपा दत्ता यह चाहती हैं कि आप उनके घर भी अपने चरण डालें।" पुजारा जी ने रूपा के घर जाने के लिए हामी भर दी और जैसे ही वे दोनों घर से बाहर निकले, वैसे ही नन्दाचौर से बापू हरभगवान जी का अमित को फोन आ गया कि आप इस समय फिल्लौर में है और छिछोवाल के बहुत निकट हैं। अभी आपने रूपा के घर नहीं जाना। छिछोवाल में नरेन्द्र को करंट लग गया है और उसे डाक्टर के पास ले जाने का कोई साधन नहीं मिल रहा है। तुम तुरन्त छिछोवाल के लिए निकलो और नरेन्द्र को लेकर अस्पताल पहुँचो ।

अमित तुरन्त पुजारा जी के साथ फिल्लौर पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर अमित को पता चला कि तीन-चार मिनट पहले ही नरेन्द्र के परिवार वाले उसे लेकर फिल्लौर के स्थानीय अस्पताल गए हैं। इतनी देर में नरेन्द्र की पत्नी अमन वहाँ आई और रोते हुए अमित से कहने लगी, "अमित भैया, मेरी बापू जी से बात करवा दो।" बापू जी से बात होने पर अमन ने बार-बार एक ही बात कही, "बापू जी मैने दरबार में जो

भी सेवा की है मुझे उसके बदले में और कुछ नहीं चाहिए। आप मुझे मेरा नरेन्द्र दे दीजिए।" बापू जी ने अमन को कहा, "बेटी, घबराओ मत और अमित को फोन दो। बापू जी ने अमित से कहा समय व्यर्थ

मत गंवाओ। तुम्हारे साथ गाड़ी में जो भी जाना चाहता है उसे बिठाओ और तुरन्त अस्पताल पहुँचो।" अमित नरेन्द्र के पिता जी और अमन को लेकर अस्पताल पहुँचे और देखा कि अस्पताल के बाहरी कक्ष में ही डॉक्टर नरेन्द्र को होश में लाने का प्रयत्न कर रहे थे।

डॉक्टर ने अमित को बताया कि नरेन्द्र के हृदय में से करंट गुजर जाने के कारण नरेन्द्र मर चुका है। डॉक्टर की बात सुन कर अमित की आँखों में आँसू भर आये और बड़े भारी मन से अमित ने बापू जी को फोन किया और यह दुःखद समाचार सुनाया। अमित की बात सुनते ही बापू जी ने ज़ोरदार आवाज़ में कहा, "हम ऐसा अनिष्ट नहीं होने देंगे। नरेन्द्र ने हमारे दरबार की सेवा की है। हम बापू ओम जी से विनती कर उसे वापिस लेंगे।" बापू जी ने अमित को कहा कि नरेन्द्र को तुरन्त डी॰एम॰सी॰ लुधियाना ले जाओ।

फिल्लौर के डॉक्टर ने इससे पहले ही एक ऐमबुलैंस बुलवा ली थी और नरेन्द्र को डी०एम०सी० लुधियाना के लिऐ रैफर कर दिया था। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो स्वयं बापू ओम जी ने ही उस डॉक्टर के मन में नरेन्द्र को डी०एम०सी० ले जाने के लिए प्रेरित किया था। डॉक्टर ने

अमित को कहा कि हम नरेन्द्र को मृतक घोषित नहीं करना चाहते। हम चाहते है कि एक बडा अस्पताल ही यह घोषणा करे तो बेहतर है। नरेन्द्र की देह को ऐमबुलैंस में डालकर डी०एम०सी० आपातकाल में ले जाया गया।

इसी बीच बापू जी ने पुजारा जी को एक पाठ बताया और निर्देश दिया कि वह लगातार यह पाठ करें और मौन रहें। पुजारा जी ने ऐसा ही किया। डॉक्टरों ने सिटी स्कैन आदि कर के अमित को उसी दुःखद समाचार की पुष्टि कर दी कि नरेन्द्र के हृदय के साथ-साथ उसके मस्तिष्क में से भी करंट प्रवाहित हो चुका है। उन्होंने यह भी कहा कि हम दोबारा से कुछ और परीक्षण कर के आप को यह बता सकते है कि मृत्यु का कारण पहले हृदय में से बिजली प्रवाहित होना था या मस्तिष्क में से। फिर से स्कैनिंग करने पर पता चला कि करंट उसके हृदय और मस्तिष्क को पार करता हुआ एक बाजू से दूसरी बाजू तक प्रवाहित हो चुका है। उसका शरीर मृत घोषित कर दिया गया।

अमित शर्मा जो कमरे में डॉक्टरों के साथ खड़े थे उन पर यह सुन कर यकायक वज्रपात हुआ। बाहर बरामदे में नरेन्द्र की पत्नी अमन बैठी थी जिसकी आँखों के आँसू थमने का नाम नहीं ले रहे थे। अमित ने कोशिश की कि वह थोड़ा पानी पी ले परन्तु अमन ने पानी तक पीने से मना कर दिया और कहा कि पहले मेरी नरेन्द्र से बात करवाओ।

नरेन्द्र के माता-पिता भी किसी चमत्कारिक उद्घोष की प्रतीक्षा में बैठे थे कि कब डॉक्टर बाहर आयें और यह कहें कि उनका पुत्र खतरे से बाहर है। कमरे के अन्दर खड़े अमित शर्मा की घबराहट बढ़ती ही जा रही थी। उन्होंने डॉक्टरों से दुबारा निवेदन किया कि वे एक बार फिर से नरेन्द्र का निरीक्षण करें परन्तु सभी डॉक्टर इस विषय पर एकमत थे कि नरेन्द्र अब मृत है इसलिये दुबारा स्कैनिंग करने की कतई आवश्यकता नहीं है।

यह सुन कर अमित शर्मा ने बापू जी को फोन किया और यह सोच कर बहुत ही परेशान होने लगे कि वह किन शब्दों में बापू जी को हृदय-विदारक समाचार देंगे। उधर जैसे ही बापू जी ने फोन उठाया उनका स्वर सुन कर अमित शर्मा आश्चर्यचकित रह गये। बापू जी अति प्रसन्न थे। उनकी प्रसन्नता का कोई पारावार ही नहीं जान पड़ता था। उन्होंने अमित शर्मा से कहा, "चिन्ता की कोई बात नहीं है। सब ठीक है। बापू ओम जी ने उसे वापिस दे दिया है। तुम निश्चिन्त हो जाओ।"

बापू जी के यह वचन सुन कर अमित बोले, “बापू जी, डॉक्टर तो कह रहे हैं कि नरेन्द्र के हृदय और मस्तिष्क से करंट पास हो गया है।"" 'अरे नही", बापू जी बोले, "बापू ओम जी ने अन्दर तक सब देख लिया है। नरेन्द्र एकदम ठीक है। उसकी देह में आत्मा प्रतिष्ठित हो गई है।" अमित को समझ ही नहीं आ रहा था कि वह बापू जी को यह

कैसे समझायें कि डाक्टरों के मतानुसार नरेन्द्र अब जीवित नहीं था।

बापू जी भी अमित की मानसिक उलझन समझ गये और बोले, "बापू ओम जी ने कहा है नरेन्द्र ने इस दरबार की सच्चे मन से सेवा की है। यमराज उसे यूँ ही नहीं ले कर जा सकते। तुम डॉक्टर से कहो कि नरेन्द्र को दोबारा देखे।"

बापू जी का आदेश सुन कर ज्यों ही अमित वापिस मुड़े उन्होंने देखा कि कम से कम 15-20 डॉक्टर और नर्से नरेन्द्र के चारों ओर खड़े हैं और अत्यन्त आश्चर्यचकित हो कुछ देख रहे हैं। अमित तेजी से उस तरफ गए और जो देखा वह अमिट रूप से उनके हृदय-पटल पर अंकित हो गया, नरेन्द्र का सिर और टाँगें बिस्तर पर टिके थे और छाती का हिस्सा हवा में करीब एक फुट ऊँचा उठ कर वापिस पलंग पर जा गिरता था। उसके मुख से निरन्तर ओम-ओम-ओम - ओम-ओम की ध्वनि आ रही थी। उसकी देह हवा में उछलती और एक ज़ोर के साथ वापिस पलंग पर आ गिरती। ऐसा कम से कम 20-25 बार हुआ। सारे डॉक्टर एकदम किंकर्तव्यविमूढ़ वहाँ खड़े यह सारा नजारा देख रहे थे। तभी एक वरिष्ठ डॉक्टर ने कहा कि जल्दी से नरेन्द्र को स्कैनिंग के लिए ले जाओ। तत्पश्चात् नरेन्द्र के प्रशिक्षित डॉक्टरों की देख-रेख में अनेक टेस्ट हुए और आश्चर्यचकित रूप से उसके एक-एक टेस्ट की रिपोर्ट सही आई। उसकी रूकी हुई साँसे फिर से चलने लगी। उसका दिल फिर से धड़कने लगा। उसकी उंगलियाँ जो जल चुकी थी उनका इलाज

भी बड़े अद्भुत तरीके से उसके पेट में उंगलियों को रख के किया गया। बापू ओम जी की अपार कृपा से नरेन्द्र को नवजीवन मिला। कुछ वर्षों बाद बापू जी की कृपा से उसे दो पुत्र-रत्नों की भी प्राप्ति हुई। नरेन्द्र का उदाहरण निस्सन्देह अविस्मरणीय हैं। उसकी एवं उसकी पत्नी अमन की श्रद्धा और विश्वास से उन पर आया महासंकट भी बापू जी की कृपा से टल गया।

बापू ओम जी की दया-दृष्टि का एक और उदाहरण वर्णनीय है। 19 सितम्बर, 2009 को खटीमा (उत्तराखण्ड) में बहुत ज़ोरों से वर्षा हो रही थी। खटीमा के पास बहने वाली नदी का पुल टूट गया। भूमि कटाव और भू-स्खलन के कारण पानी का प्रवाह अति तीव्र गति से खटीमा की ओर होने लगा। देखते

ही देखते शहर में जल का स्तर तेज़ी से बढ़ने लगा। वर्षा की गति में कोई कमी नही आई। खटीमा में ऊधमसिंह नगर में बापू जी की अनन्य सेविका श्रीमती चर्चा बतरा रहती थी। जल का स्तर ऊधमसिंह नगर में भी धीरे-धीरे बढ़ने लगा। देखते ही देर पानी छः फुट तक पहुँच गया। चर्चा जी अपने परिवार के सदस्यों के साथ घर की ऊपर वाली मंजिल पर चली गई। समय बीतने के साथ मौसम और भी खराब होता चला गया। वर्षा रुकने का नाम ही नहीं ले रही थी। यह देख कर चर्चा जी का मन घबराने लगा। सन्ध्या का समय हो गया था और रात भी गहराने लगी थी। चर्चा जी ने अपनी बहिन रेखा जी को फोन किया और बापू जी से प्रार्थना करने हेतु कहा।

रेखा जी ने बापू हरभगवान जी से प्रार्थना की और बापू जी ने कहा कि चर्चा से कहो कि वह ' ओम जी तुम्हीं दया करो' यह भजन ज़ोर-ज़ोर से गाएं। रेखा जी ने अपनी बहिन को बता दिया कि वह बापू ओम जी का भजन उच्च स्वर में गाना आरम्भ कर दे।

चर्चा जी को उस समय पूरा भजन याद नहीं था। उन्होंने वह कागज़ ढूंढा जिस पर वह भजन लिखा हुआ था। तत्पश्चात् उन्होंने वह भजन गाना आरम्भ कर दिया। चर्चा जी ने पाँच-छः बार ही उस भजन को गाया था कि अचानक बहुत गरज़ के साथ आकाश में एक ध्वनि हुई। वह ध्वनि सुन कर चर्चा जी के पति ने कहा कि यह तो बहुत अच्छा चिन्ह है। अभी थोड़ी देर में ही बादल छितरने शुरू हो जाएंगे। उनके यह कहने की देर ही थी कि बादलों ने तितर-बितर होना आरम्भकर दिया। थोड़ी ही देर में वर्षा लगभग बन्द हो गई। चर्चा जी यह सोच कर कि अब वर्षा बन्द हो गई है, ने भजन गाना बन्द कर दिया। उनके भजन बन्द करते ही वर्षा फिर से शुरू हो गई।

फिर उनके पति और बच्चे भी चर्चा जी के साथ उच्च स्वर में उस भजन का गान करने लगे। जब वे भजन गाते तब वर्षा का प्रवाह कम हो जाता और जब भजन को विराम देने तब वर्षा फिर से प्रारम्भ हो जाती। इस प्रकार प्रातः काल होते-होते वर्षा बिलकुल ही बन्द हो गई। उनके बच्चे रात भर बार-बार यह देखते रहे कि पानी और धीरे-धीरे उसका

स्तर कम से कमतर होता जा रहा है। अगले दिन सुबह के दस बजे तक जल बिल्कुल ही उतर गया और सब कुछ सामान्य हो गया।

बापू ओम जी की अनुकम्पा से केवल चर्चा जी की ही नहीं अपितु पूरे खटीमा की रक्षा हो गई। उनके पड़ोसी जो बापू ओम जी के विषय में इससे पूर्व कुछ नहीं जानते थे उनके मुरीद हो गए। पानी सीढ़ी दर सीढ़ी नीचे उतर रहा था। लोगों का कहना था कि पिछले 53 वर्षों से खटीमा में उस प्रकार का तूफान और वर्षा नहीं देखी गई थी। इस घटना के लगभग दो माह बाद खटीमा में पंजाब केसरी के पत्रकार राजेश जी ने नगर में श्री विनोद अग्रवाल की भजन सन्ध्या का कार्यक्रम आयोजित किया। आयोजन स्थल को बहुत ही प्रभावपूर्ण तरीके से सुसज्जित किया गया। सारी तैयारियां भली भान्ति सम्पन्न हो गई।

तभी अचानक काले-काले मेघ उमड़-घुमड़ कर आये और बहुत तेज़ तूफान के साथ वर्षा होनी प्रारम्भ हो गई। राजेश जी की सारी मेहनत पर पानी फिर गया। यह सोच कर उनकी आँखें भर आई कि अब रात्रि में भजन-सन्ध्या का कार्यक्रम होना असम्भव है। चर्चा जी भी उस कार्यक्रम में आमंत्रित थी। जब उन्होंने देखा कि वर्षा के कारण कार्यक्रम को स्थगित करना पड़ सकता है तब उन्होंने राजेश जी की पुत्री चक्षु को कहा कि वह 'ओम जी तुम्हीं दया करो' भजन पूर्ण श्रद्धा के साथ बोलना प्रारम्भ करें। चर्चा जी ने उन्हें बताया कि किस प्रकार दो

महीने पहले इस भजन के गाने से चमत्कारिक तरीके से वर्षा रुक गई थी। उन्होंने यह भी कहा कि वह स्वयं घर जा कर उनके लिए यह भजन गायेंगी।

तत्पश्चात् चर्चा जी, चक्षु और उनके परिवार के सदस्यों ने बापू ओम जी का भजन गाना आरम्भ कर दिया। भजन गाने के कुछ ही देर बाद वर्षा कम होते होते बन्द हो गई। फिर तो राजेश जी की प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा। उन्होंने फिर से आयोजन स्थल पर शीघ्रातिशीघ्र सारी तैयारियां पूर्ण की और उस सन्ध्या को ऐसा सुन्दर कृष्ण-भक्ति विषयक भजनमाला की लड़ी चली कि सुनने वाले अन्दर तक रोमांचित हो गए। बापू ओम जी की महिमा का प्रकाश ऐसा ही है। उनका सशक्त आभामण्डल जिसे भी स्पर्श कर लेता है उसका आमूलचूल कायाकल्प हो जाता है।

नन्दाचौर में माघ के पवित्र महीने में आ कर कथा सुनने और सेवा करने का विशेष महत्व है। माघ 2002 ई० में रुद्रपुर से बापू जी की एक भक्त रुचि तनेजा अपने पति श्री राकेश तनेजा के साथ नन्दाचौर आई। प्रातः काल हवन में जाना, फिर बापू जी के मुखारविन्द से कथा सुनना और तत्पश्चात् दूसरे सेवादि कार्य करने के बाद थड़ा साहिब जा कर वहाँ सेवा कार्य करना उस भक्त-दम्पत्ति का नित्य नियम था। रुच्चि तनेजा उन दिनों गुर्दे में पथरी होने की समस्या से काफी परेशान थी

उनके दोनों गुर्दों में आठ-आठ पथरियां थी।

एक दिन रुचि थड़ा साहिब में सेवा कार्य कर रही थी कि तभी बापू हरभगवान जी महाराज जी वहाँ आए और मन्दिर के अन्दर ध्यानस्थ हो कर बैठ गए। करीब दस मिनट पश्चात् उन्होंने रुचि को बुला कर पूछा कि कहो तुम्हें क्या समस्या ह? रुचि ने अपनी समस्या बापू जी को बता दी और कहा कि उसे अकसर पथरी की वजह से बहुत दर्द रहता है। परन्तु पिछले पाँच-छः दिनों से जब से वह नन्दाचौर में है उसे कोई दर्द नहीं है। बापू जी ने कहा, "अरे भाई, क्या तुमने पथरी बनाने की फैक्टरी लगा रखी है जो अचानक इतनी पथरियां हो गई। चलो कोई बात नहीं।"

फिर बापू जी ने उन्हें बाहर से मिट्टी लाने के लिए कहा। रुचि बाहर से कुछ मिट्टी उठा कर ले आई। बापू जी ने प्रसन्न होते हुए कहा कि बापू ओम नारायण जी के आशीर्वाद से इस मिट्टी को ग्रहण करते ही तुम्हारी सभी पथरियां मिट्टी हो जायेंगी। रुचि ने पूर्ण विश्वास और भक्ति से बापू जी के समक्ष कुछ मिट्टी को प्रसाद रूप से ग्रहण किया। बाद में रुद्रपुर वापिस आने के बाद भी वह उस मिट्टी को महाप्रसाद समझ कर ग्रहण करती रहीं। उसके बाद उसे कभी भी दर्द की शिकायत नहीं हुई। इस बात को एक वर्ष हो गया था। एक वर्ष बाद बापू जी ने पूछा कि तुम्हारी तबीयत कैसी है। रुचि ने बताया कि वह बिलकुल स्वस्थ अनुभव करती है और अल्ट्रासाउंड करवाने की बात सोच रही

है। बापू जी ने कहा कि उसकी कतई आवश्यकता नहीं है। कुछ दिनों बाद रुचि को यूरिन इन्फैक्शन हो गया और डॉक्टरों ने उसे अल्ट्रासाउंड करवाने के लिए कहा। रुचि ने सोचा कि बापू जी ने तो इसके लिए मना किया है। उसने पुनः बापू जी से पूछा और कहा कि महाराज जी, डॉक्टर बहुत जिद कर रहे हैं। वे यह सुनिश्चित करना चाहते हैं कहीं इस इन्फैक्शन का असर उसके गुर्दों पर तो नहीं पड़ रहा है।

यह सुनने के बाद बापू जी ने उस अल्ट्रासाउंड की इजाजत दे दी। जब अल्ट्रासाउंड करवाया तो रुचि को आश्चर्यमिश्रित प्रसन्नता हुई कि उसके गुर्दों में एक भी पथरी नहीं था। सारी सोलह की सोलह पथरियां वास्तव में ही मिट्टी हो चुकी थी। उनमें से एक पथरी आठ एम.एम. की थी जिसे डॉक्टर बिना आपरेशन के निकालना असम्भव बता रहे थे। उस पथरी का नामोनिशान भी नहीं बचा था। बापू ओम जी ने अति कृपा कर के अपनी अनन्य भक्त का संकट दूर कर दिया था।

बापू ओम जी सर्वदा अपने सेवकों के सर्व कार्य सिद्ध करने हेतु सदैव तत्पर रहते हैं। प्रस्तुत तीन वृत्तान्त तीन ऐसे भक्तों के विषय में हैं जिन्हें इस तथ्य का भान तक नहीं था कि उनके बिना जाने ही बापू ओम जी किस प्रकार उनका प्रत्येक कार्य बहुत सुन्दर तरीके से पूर्ण कर रहे हैं। इनमें से एक दृष्टान्त है लुधियाना निवासी श्री फकीर चन्द जी का वह लुधियाना में अपना मकान बनवा रहे थे। उनके मकान के अन्दर

रेत, सीमेन्ट आदि काफी सामान रखा हुआ था।

उस सामान की देखभाल के लिए उन्होंने एक बिहारी चौकीदार को रखा। कुछ दिन तो वह चौकीदार अपना कार्य करता रहा। फिर एक दिन आ कर बोला कि वह वहाँ कार्य नहीं कर सकता। कारण पूछने पर उसने बताया कि पिछली कुछ रातों से एक बाबा जी वहाँ आते हैं और कहते हैं, “तू यहाँ क्या कर रहा है? मैं यहाँ बैठा रखवाली कर रहा हूँ। तेरा यहाँ क्या काम है? तू यहाँ से चला जा।" फकीर चन्द को उस चौकीदार की बात सुन कर ऐसा लगा कि जिस बाबा के बारे में वह चौकीदार बात कर रहा है, वह स्वयं बापू ओम जी हैं। उन्होंने उस चौकीदार को कहा कि ठीक है, अगर तुम काम नहीं करना चाहते तो कुछ दिन बाद चले जाना परन्तु अभी तुम यहीं रुक कर कार्य करो।

फकीर चन्द जी ने उस मकान के अन्दर एक स्थान पर बापू ओम जी की तस्वीर रख दी और स्वयं अपने घर आ गये। जब वह चौकीदार रात के समय रखवाली करने उस घर में गया तब उसने बापू ओम जी की तस्वीर देखी। वह तुरन्त फकीर चन्द जी के पास गया और उन्हें पूछा कि जो तस्वीर आप ने अपने निर्माणाधीन घर में रखी है, वह किसकी है। फकीर चन्द जी ने उसे बताया कि वह तस्वीर तो हमारे पूजनीय गुरुदेव की है। वह मजदूर यह सुन कर बहुत हैरान हुआ और कहने लगा कि यह ही तो हैं वो बाबा जी जो हर रात मुझे मिला करते थे और वहाँ से चले जाने को कहा करते थे। यह सुनते ही फकीर चन्द जी

भाव-विभोर हो उठे और समझ गये कि परम श्रद्धेय श्री ओम नारायण दत्त जी महाराज अपने सेवकों का प्रत्येक भार स्वयं ही वहन करते हैं। इस नितान्त अकल्पनीय दया का उदाहरण मिलना अति दुर्लभ है।

ठीक ऐसी ही घटना गोराया पंजाब के पास अट्टी गाँव के रहने वाले कुलवीर के साथ घटी। बापू जी की कृपा से कुलवीर का चयन भारतीय नौसेना में हो गया था। वह मुम्बई में कार्यरत था। भारतीय नौसेना के विन्ध्यागिरि पोत पर उसकी ड्यूटी थी। काम करते हुए उसे थोड़ा ही समय बीता था कि उसके ताया जी की बेटी का विवाह तय हो गया। वह एक महीने की छुट्टी पर घर आ गया और विवाह कार्य में हाथ बटाने लगा। घर वालों के कहने पर उसने पाँच दिनों की अतिरिक्त छुट्टी के लिए अपने ब्रिगेडियर से निवेदन किया। थोड़ी आनाकानी के बाद उसके आफिसर ने उस अतिरिक्त छुट्टी के लिए अपनी सहमति दे दी।

कुलवीर ने अपनी बहिन की शादी में बढ़-चढ़ कर भाग लिया और छुट्टी पूरी होने पर मुम्बई वापिस चला गया। वापिस जा कर कुलवीर ने अपनी वर्दी पहनी और अपने साथियों और ऑफिसर को जय हिन्द-जय हिन्द करता हुआ अपनी ड्यूटी पर आ गया। चूँकि वह काफी दिनों बाद आया था इसलिए वह बहुत आत्मीयता और घनिष्ठता से सब से मिलने लगा। उसे यह देख कर बहुत आश्चर्य हुआ कि सभी लोग उससे बहुत ही स्वाभाविक तरीके से मिल रहे थे। लोगों के बर्ताव

से ऐसा लग ही नहीं रहा था कि उन्होंने उसे बहुत देर बाद देखा है।

थोड़ी देर बाद कुलवीर अपना जी० एक्स० लेने गया। सेना में सैनिकों के भोजन आदि की व्यवस्था का उत्तरदायित्व सेना का ही होता है। यदि कोई सैनिक छुट्टी पर होता है तो प्रतिदिन के भोजन के हिसाब से उसे धन मिलता है। इस व्यवस्था को जी० एक्स॰ कहते हैं। उसे यह देख कर बड़ा विचित्र लगा कि उसे जी० एक्स० पाँच दिन कम मिला है। कारण पूछने पर सम्बन्धित अधिकारी ने बताया कि वह पाँच दिन पहले ही ड्यूटी पर आ गया था इसलिए उसे उन पाँच दिनों तक जी एक्स नहीं दिया जा सकता। यह सुन कर कुलवीर को झटका लगा।

उसने कहा, "यह कैसे हो सकता है? मैं तो अट्टी में अपनी बहिन की शादी में था। नाचते-गाते मेरी वीडियो भी बनी है। अभी आने से पहले मैरिज पैलस वाले को किराया भी मैने ही दिया है। आप ही बताइए कि फिर मैं यहाँ किस प्रकार हो सकता हूँ?" यह स्पष्टीकरण सुन कर उस ऑफिसर ने कहा, "भाई, हम तो प्रमाण मानते हैं। तुम्हारी तबीयत तो ठीक है। रास्ते में कुछ खा कर तो नहीं आए। आओ, तुम्हें तुम्हारे हस्ताक्षर दिखा देता हूँ। तुम जब आये थे तब तुमने राईफल और मैगजीन इशू करवाई थी।"

जब कुलवीर ने अपने हस्ताक्षर देखे तो हैरत में पड़ गया। परन्तु फिर भी वह कैसे विश्वास करता कि वहाँ उपस्थित था। वह चुपचाप

अपना काम खत्म कर के रात को सो गया। रात को स्वप्न में उसे बापू हरभगवान जी के दर्शन हुए। वह बापू जी से कह रहा था कि बापू जी, मुझे यहाँ नौकरी नहीं करनी। मैं अपने भाई के पास यू॰के॰ जाना चाहता हूँ। सुबह उठ कर उसने बापू जी को फोन किया और सारी बात बताई। बापू जी ने उसकी बात सुन कर कहा, "घबराता क्यों है? तुम्हारे स्थान पर तो स्वयं बापू ओम जी महाराज ड्यूटी देने गए थे।" कुलवीर यह रहस्य जान कर और भी हैरान हो गया। उसे समझते देर नहीं लगी कि बापू जी तो भक्त-वत्सल हैं। भक्त तो उनके प्राणों के धन हैं। सच्चाई जानने के बाद कुलवीर ने उन पाँच दिनों की तनख्वाह अट्टी गाँव में स्थित बापू जी के मन्दिर में चढ़ा दी।

कुलवीर और फकीरचन्द की तरह ही बापू ओम जी ने दिल्ली निवासी चार वर्षीय अक्षित चावला की भी सहायता की और अपनी कृपा से उसे वापिस उसके परिवार से मिला दिया। 2 नवम्बर 2011 को अक्षित अपनी माँ पायल चावला के साथ मोती नगर घूमने गया। शाम के सात बजे थे। बाजार में बहुत भीड़ थी। उस भीड़ में अक्षित का हाथ अपनी माँ के हाथ से छूट गया और वह भीड़ में गुम हो गया। अगले एक घण्टे तक उसकी माँ को उसका कोई पता नहीं चला। उसकी घबराहट का कोई अन्त ही नहीं था। वह भगवान् से निरन्तर प्रार्थना कर रही थी कि उसका बच्चा सकुशल वापिस आ जाए। उसने पुलिस को भी सूचना दे दी। वह बदहवास सी एक गली से दूसरी गली में अक्षित

को ढूँढने के लिए भागती रही और बापू जी से निरन्तर प्रार्थना करती रही कि उसका बेटा उसे सही सलामत मिल जाए।

इतनी देर में उसे घर से फोन आ गया कि अक्षित घर पर आ गया है। घर पहुँच कर पायल को एक सुखद आश्चर्य हुआ जब उसने अक्षित को बिलकुल ठीक-ठाक देखा। उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि उसका पुत्र घर आ गया है। अगले दिन सुबह अक्षित ने घर पर रखी बापू ओम जी की तस्वीर की ओर इशारा करते हुए बताया कि जब मैं मम्मी से अलग होकर रो रहा था तब यह बापू जी आए और उन्होंने मेरी उंगली पकड़ कर मुझे घर के पास छोड़ दिया। उस छोटे बच्चे की बात सुन कर सभी को यह विश्वास हो गया कि बापू ओम जी ने वास्तव में ही अपने भक्तों का सारा भार स्वयं पर लिया हुआ है और बापू जी की छत्र-छाया में सभी भक्त सुरक्षित हैं।

भक्त और भगवान् का सम्बन्ध ही कुछ ऐसा है कि भगवान् अपने भक्तों के लिऐ कुछ भी करने को सदैव उद्यत रहते हैं। इस सम्बन्ध में भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है-

अनन्याश्चिन्तयन्तो माँ ये जनाः पर्युपासते। तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

अर्थात् जो अनन्य भक्त मेरा चिन्तन करते हुए मेरी भली भान्ति उपासना करते है, उन नित्य-निरन्तर मेरा चिन्तन करने भक्तों का योगक्षेम मैं स्वयं वहन करता हूँ।

अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति करा देना 'योग' है और प्राप्त सामग्री की रक्षा करना 'क्षेम' है। इस श्लोक में प्रयुक्त 'वहाम्यहम्' शब्द बहुत ही खूबसूरत परिप्रेक्ष्य में प्रयुक्त हुआ है। जिस प्रकार एक माता अपने छोटे बच्चे के लिए जिस किसी वस्तु की आवश्यकता समझती है वह बड़ी प्रसन्नता से उस वस्तु को उपलब्ध करवाती है। ठीक उसी प्रकार भगवान् कहते हैं कि मुझ में निरन्तर चित्त लगे हुए भक्तों के लिए मैं जिस किसी वस्तु की आवश्यकता समझता हूँ वह वस्तु मैं स्वयं ढोकर लाता हूँ अर्थात् उन भक्तों के सभी कार्य मैं स्वयं करता हूँ।

बापू ओम जी में अटूट निष्टा रखने वाले भक्तों की सारी मनोकामनाएं स्वयमेव पूर्ण होती चली जाती हैं। ऐसे भक्तों के बिना कहे भी बापू जी स्वयं उनके प्रत्येक कार्य को संवारने हेतु सदैव तत्पर रहते हैं। कुलवीर तो स्वप्न में भी नहीं सोच सकता था कि बापू ओम जी उसके स्थान पर ड्यूटी देने स्वयं ही चले जायेंगे। परन्तु बापू जी ने अपने प्रिय भक्त पर कोई आँच न आये इसलिए इतने दिन उसके स्थान पर कार्य करते रहे। यदि भक्त भगवान् के बिना व्याकुल हो जाते हैं तो भगवान् भी भक्तों के बिना नहीं रह सकते। बापू ओम जी कृपा और

प्रेम के यह दृष्टान्त यह बताने के लिए पर्याप्त हैं कि बापू जी का प्रेम अविस्मरणीय है, अतुलनीय है, अपरिमेय है और अनन्त है। भले ही कोई कितना भी हीन हो, विकार-ग्रस्त हो, दुर्बल हो, असहाय हो यदि वह सच्चे मन से उन्हें याद करे तो वह तत्काल, अविलम्ब उसके सर्वार्थ हित साधने प्रकट होते ही हैं।

बापू ओम जी ने अपने प्रकाश से अपने प्रिय शिष्य श्री हरनाम जी को प्रकाशित कर उन्हें अपने ही समान पूर्ण कर दिया और भक्तों के उद्धार हेतु प्रेरित किया। पाठकजन, इसका पूर्ण विवरण हम अगले अध्याय में करेंगे।

।। हरि ॐ ।।

बापू श्री ओम नारायण दत्त जी महाराज का पावन खूँटा

टोहागा निवासी श्री परमवीर सिंह, कृषिमंत्री हरियाणा राज्य बहादुर चंद पचरीसा के परिवार से हैं जिन्हें बापू जी ने लिखित में वरदान देकर जैलदारी बखशी थी।

ॐ

अथ बापू श्री हरनाम दास

- गुणानुवादः

ॐ

बापू श्री हरनाम जी महाराज

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्ति द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् । एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतम् भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तं नमामि ॥

भगवान् शिव माता पार्वती को गुरु की महिमा वर्णन करते हुए कहते हैं कि जो ब्रह्मानन्द स्वरूप हैं, परमसुख देने वाले हैं, जो केवल ज्ञानस्वरूप हैं, इन्द्रों से रहित हैं, आकाश के समान सूक्ष्म और सर्वव्यापक हैं, तत्त्वमसि आदि महावाक्यों के लक्ष्यार्थ हैं, एक हैं, नित्य हैं, मलरहित हैं, अचल हैं, सर्वबुद्धियों के साक्षी हैं, भावना से परे हैं, सत्त्व, रज, तम तीनों गुणों से रहित हैं, ऐसे श्री सद्गुरु को नमस्कार है।

सद्गुरु जो स्वयं ईश्वर रूप ही होते हैं, अपने शिष्यों की भी उसी ब्रहा-भाव में अवस्थिति करवाने हेतु निरन्तर प्रयासरत रहते हैं। बाहु हरनाम दास जी महाराज जो बापू ओम नारायण दत्त जी के प्रिय शिष्य हुए. एक ऐसे ही महान् संत थे जिन्होंने अपने गुरु की प्रदान की हुई

भगवन्नाम की विरासत को न केवल सम्भाला अपितु लोक कल्याण हेतु अपने भक्तों में संचारित भी किया। बापू हरनाम दास जी का जन्म पंजाब के जिला जालन्धर के हेड़िया ग्राम में हुआ। उनके पिता श्री पूरण दास ग्राम में चल रही एक गद्दी के महन्त थे और माता हरकौर एक सात्त्विक प्रवृत्ति की महिला थीं।

बाल्यावस्था से ही संत हरनाम दास जी की वृत्ति ईश्वराभिमुख थी। उनकी शिक्षा प्रारम्भ से ही अति उत्तम ढंग से हुई थी। अपनी सुमेधा के चलते उन्होंने चारों वेदों पर अधिकार प्राप्त कर लिया था। वेदान्त का भी उन्हें पूर्णरूपेण ज्ञान था। गहन अध्ययन के फलस्वरूप उनका हृदय और मस्तिष्क अंतर्मुखी हो स्वयं को जानने की प्रक्रिया में रत थे। जगत की असारता का बोध उन्हें हो ही गया था। शीघ्र ही उन्होंने उदासीन भाव से संसार का त्याग कर दिया और विदेह जनक की भांति हो गए। वेदाध्ययन ने उनके मन में जीवन के चरम सत्य को अनुभूत करने की तीव्र इच्छा जागृत कर दी थी। वे अत्यन्त उदासीन भाव से संसार में विचरण करते रहे।

अपने पिता की मृत्यु के बाद उनकी गद्दी पर बैठने का विचार तक उनके मन में नहीं आया। इसके विपरीत उनके पिता के एक शिष्य उस गद्दी के महन्त बनना चाहते थे। हरनाम जी ने उस व्यक्ति की इच्छा और इरादे को जान लिया था। ग्रामवासियों ने हरनाम जी से उनके पिता

के स्थान पर गद्दीनशीन होने की प्रार्थना की। परन्तु सर्वस्वत्यागी श्री हरनाम जी के मन में महन्त बनने की कोई लालसा नहीं थी। उन्होंने लोगों का आग्रह स्वीकार नहीं किया। दूसरी ओर उस शिष्य ने गद्दी का हकदार होने के लिए सम्बन्धित विभाग को प्रार्थना पत्र दे दिया और मुकदमा दायर कर दिया। ग्रामवासियों ने श्री हरनाम जी को प्रेरित किया कि वह कचहरी में स्वयं को गद्दी का हकदार होने का दावा प्रस्तुत करें।

उन्होंने हरनाम जी को यह विश्वास दिलाया कि वे सब उनके ही पक्ष में गवाही देंगे क्योंकि हर कोई उन्हें ही उस गद्दी पर बैठाना चाहता था। हरनाम जी ने संगत की बातें शान्तिपूर्वक सुन ली परन्तु कुछ स्पष्ट उत्तर नहीं दिया। जब मुकदमे की तारीख पड़ी तो कचहरी में हरनाम जी ने मजिस्ट्रेट के समक्ष स्पष्ट शब्दों में कह दिया, "मेरे पिता की गद्दी पर उनके शिष्य का ही अधिकार है, इसलिए यह गद्दी उन्हीं को दी जाये। मुझे कुछ नहीं चाहिए।" उनके इस बयान से समस्त ग्रामवासी और स्वयं मजिस्ट्रेट अवाक् रह गया। यह घटना अपने आप में अद्वितीय थी और श्री हरनाम जी के महान् त्याग का ज्वलन्त प्रमाण थी।

हरनाम दास जी ने पितृ-गद्दी का त्याग करने के साथ-साथ गृह का भी त्याग कर दिया। वे अवधूत के समान एक स्थान से दूसरे स्थान पर विचरने लगे। अनेक तीर्थ स्थानों और पर्वतों की कन्दराओं में रह कर घोर तप किया। उसके बाद वह हरिद्वार पहुँचे। कठोर तपस्या में

लीन रहने के कारण उन्हें अपने शरीर की कोई सुध नहीं थी। उनका शरीर अस्थियों का ढाँचा मात्र रह गया था। एक दिन जब हरनाम दास जी तपस्या में लीन थे तब उनके तेज से प्रभावित हो कर एक धनी व्यक्ति उनकी सेवा में आया। उसने निवेदन किया, "प्रभु, आप कृपा करके हरिद्वार में ही विराजें, मैं हर प्रकार से आपकी सुखद व्यवस्था करा दूँगा। मैं एक लाख रूपया दान स्वरूप देने को तैयार हूँ।"

त्यागी और सच्चे संत सांसारिक प्रलोभनों से सहज ही विचलित नहीं होते। हरनाम जी ने सहज भाव से उत्तर दिया, "संत और पानी अपने ही बहाव में बहते हैं। उनको कोई क्या रोक पाएगा।" यह सुन कर

उस सेठ के अहं को ठेस लगी। उसका विनम् भाव तत्क्षण ही विलुप्त हो गया और उसने कहा, "मेरे जैसा दानी आपको आज के युग में नहीं मिलेगा।" इस पर महाराज जी ने उस धन को लेने से इन्कार कर दिया और मुस्कुरा कर कहा कि हमें आपकी माया से कोई सरोकार नहीं है। यह कह कर हरनाम जी वहाँ से चल पड़े और फिर से कठोर तपस्या में लीन हो गए। त्याग की इसी भावना के विषय में भगवान शंकर ने कहा है-

नित्यं ब्रह्मरसं पीत्वा तृप्तो यः परमात्मनि । इन्द्रं च मन्यते रंकं नृपाणां तत्र का कथा ॥

अर्थात् ब्रह्मरस का पान करके जो परमात्मा में तृप्त हो गया है वह इन्द्र

को भी गरीब मानता है तो राजाओं की तो बात ही क्या?

किसी भी भगवप्रेमी भक्त के लिए किसी भी राजा अध्वा धनाढ्य सेठ का धन उस ईश्वरीय प्रेम की तुलना में अत्यन्त तुच्छ है जो उसे अपनी नाड़ियों, अपने स्नायु-जाल, अपने विचारों और हृदय के स्पन्दन में प्रति-पल अनुभव होता है। उसी ईश्वरीय प्रेम को हृदय में समेटे, हाथों में एक छड़ी ले कर कभी कौपीन तो कभी मृग छाला धारण कर के वह जंगलों, पर्वतों और विविध स्थानों पर भ्रमण करते। उन्हें भोजन किए हुए कई कई दिन बीत जाते। बहुत भारी जप तप करने के बाद वह सिद्ध हो गए, उनकी बुद्धि शुद्ध हो गई परन्तु माया का जाल तोड़ पाने में वह सफल नहीं हुए। उन्हें वह ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ जिसकी तलाश उन्हें सदा से ही थी। वह जानते थे कि उस ज्ञान की प्राप्ति सद्गुरु के बिना नहीं हो सकती और सद्गुरु की प्राप्ति का कोई भी मार्ग उनकी समझ में नहीं आ रहा था।

अन्तोतगत्वा उन्होंने वापिस पंजाब की ओर रुख किया और चलते-चलते नन्दाचौर आ पहुँचे। यहाँ आ कर उन्होंने बापू ओम जी के चरणों में नमन किया। जब उन्होंने देखा कि बापू ओम जी ने अपनी उंगलियों में सोने की कई अँगूठियां पहनी हुई हैं और चाँदी का हुक्का प्रयोग में ला रहे हैं तो उनके मन में विचार आया कि ये तो राजसी साधु हैं। ये मेरा क्या कल्याण करेंगे। ऐसा विचार मन में आते ही वह वहाँ से

लौट आये। वापसी में लौटते समय उनकी भेंट मंडाली निवासी एक सूफी सन्त शेख अब्दुल्ला से हुई। वह एक सिद्ध पुरुष थे। उन्होंने हरनाम जी की मानसिक स्थिति समझ कर कहा, "संत जी, आपका कल्याण तो नन्दाचौर में ओम् पंडित नारायण दत्त के द्वारा ही होना है। आप वहीं जायें, संशय न करें।"

उस संत के वचन सुन कर हरनाम जी सोचने लगे कि क्या करें और क्या न करें। इतनी देर में कोई व्यक्ति वहाँ आया और हरनाम जी से बापू ओम जी और उनके शिष्य ठाकुर जी की महिमा का गान करने लगा। उस व्यक्ति की बात सुन कर हरनाम जी ने लाम्बड़ा गाँव की ओर रुख किया। बापू जी के लाम्बड़ा पहुँचने पर ठाकुर जी ने बड़े प्रेम से उनका स्वागत किया। उन्हें हृदय से लगा कर ठाकुर जी कहने लगे कि "आपने आने में बड़ी देर लगाई। इतना समय आपने कहाँ व्यतीत किया?" इसके उपरान्त ठाकुर जी ने हरनाम जी को बापू ओम जी के प्रदत्त दिव्य ज्ञान से उत्पन्न अनुभूतियों के विषय में बताया और कहा कि आखिरकार बापू ओम जी ने अपनी आकर्षण शक्ति से आप को खींच ही लिया।

ठाकुर जी की इस बात में एक प्रबल रहस्य छिपा है। जिस आत्मा का जिसके द्वारा उद्धार होना लिखा है उसे उसके पास आना ही पड़ता है। भले ही कोई सारी दुनिया का भ्रमण कर ले, जगह-जगह की

खाक छान ले, तरह-तरह के तर्क कर ले, उसे महान् गुरु के चरणों की शरण लेनी ही पड़ती है जो उसके असंख्य जन्मों की यात्रा में सदैव उसके साथ रहते हैं। उनकी दृष्टि से वह शिष्य कभी भी ओझल नहीं होता। बापू ओम जी भी उसी व्याकुलता से अपने प्रिय शिष्य की प्रतीक्षा कर रहे थे जिस व्याकुलता से संत हरनाम जी को अपने जीवन की सर्वोच्च उपलब्धि की प्रतीक्षा थी। बापू ओम जी हरनाम जी को वह वाहक बनाना चाहते थे जो कोटि-कोटि आत्माओं को उस अखण्ड स्वर्गिक राज्य में ले जा सके जहाँ बिना गुरु की सहायता के पहुँचना साधारण जीवात्माओं के लिए सम्भव नहीं हो

सकता। इसीलिये आखिरकार बापू ओम जी ने हरनाम जी के मन में वह प्रबल आकर्षण शक्ति पैदा कर दी जो उन्हें नन्दाचौर खींच ले गई।

ठाकुर जी ने हरनाम जी का स्वागत-सत्कार किया और उन्हें ले कर बाहर सैर करने निकल पड़े। उनके साथ पाँच-सात व्यक्ति और भी थे। कुछ दूर जाने पर ठाकुर जी आसन लगा कर बैठ गए और समाधिस्थ हो गये। हरनाम जी भी उनके पास जा कर बैठ गये। उनकी दृष्टि ठाकुर जी की परछाई पर पड़ी। परछाई देख कर हरनाम जी के मन में यह विचार आ गया कि मैं तभी ठाकुर जी की कही बातों को सत्य मानूँगा यदि यह परछाई इसी जगह पर स्थिर हो जाये। यह बात सोच कर हरनाम जी भी ठाकुर जी के पास आ कर बैठ गये और ध्यान करने लगे। आठ घंटो तक दोनों ध्यानस्थ रहे। तत्पश्चात् जब ठाकुर जी ध्यान

से उठ कर वापिस मन्दिर जाने हेतु तैयार हुए तब हरनाम जी के मन में फिर से वही बात आ गई और ठाकुर जी की शक्ति की परीक्षा करने के लिए जब उन्होंने पीछे जा कर देखा तो यह देख कर वह विस्मित हो उठे कि वह परछाई तो अभी तक वहीं स्थिर है। बापू जी की कृपा से वह परछाई आठ घंटे तक नहीं हिली। यह नज़ारा देख कर हरनाम जी ठाकुर जी के चरणों में गिर गए और मुख से स्तुति-वाचन करने लगे। इसके बाद तो हरनाम जी ने बिल्कुल देर नहीं की और अगले ही दिन नन्दाचौर की ओर कूच किया।

यह सर्वमान्य सत्य है कि यदि शिष्य को पूर्ण गुरु की तलाश होती है तो गुरु को भी सुशिष्य की प्रतीक्षा रहती है। जब कोई महान् आत्मा नित्य निरंतर ब्रह्म के माधुर्य का रसास्वादन करती है तो उसका मन किंचित भी निम्न भावभूमि पर उतरने पर शुद्ध सात्विक आधार वाली पुण्य आत्माओं के साथ रहने को करता है। ऐसे साधक जो सांसारिक विषय-वासनाओं से उपरत हो चुके हों, जिनका मन स्थिर हो, यदि पूर्ण सद्गुरु की शरण में हों तो वे अपने सद्गुरु के मुख से उन परम रहस्यों को जान पाने का सौभाग्य प्राप्त करते हैं, जिन्हें केवल शास्त्रीय अथवा पुस्तकीय ज्ञान से समझा नहीं जा सकता।

एक सच्चा जिज्ञासु इस बात का महत्त्व भली प्रकार समझता है कि केवल और केवल पूर्ण गुरु ही उसे ईश-प्राप्ति का सही मार्ग दिखा

सकते हैं। इसीलिए किसी गुरु के समक्ष पूर्ण समर्पण करने से पूर्व वह इस बात को सुनिश्चित कर लेता है कि क्या वास्तव में ही वे उसे आत्मसाक्षात्कार करवाने में समर्थ हैं या नहीं। संत हरनाम दास जी भी ऐसे ही सच्चे साधक थे। इसीलिए बापू ओम जी को गुरु रूप में स्वीकार करने से पहले उन्होंने यह सुनिश्चित किया था कि वे पूर्ण गुरु हैं या नहीं।

हरनाम जी नन्दाचौर आ कर बापू ओम जी से मिले। उन्होंने जान लिया था कि यही वह पूर्ण सद्गुरु हैं जो उनकी चेतना को उस अनन्त राशि में लीन कर सकते हैं, जहाँ पहुँचने की इच्छा हर ईश्वर भक्त करता है। हरनाम जी ने बापू ओम जी के चरणों में पूर्ण समर्पण कर दिया। वह दिन-रात उनकी सेवा में निमग्न रहने लगे। उनकी ईश्वर-प्राप्ति की लग्न और सेवा से प्रसन्न हो कर बापू ओम जी ने उन्हें दीक्षित किया और 'नाम' जपने की विधि बताई। हरनाम जी ने 'नाम' प्राप्त करने के उपरान्त गुरु-सेवा और साधना क्रिया में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी। उन्होंने प्राणपण से अपने गुरु की इतनी सेवा की कि अपना 'हरनाम' नाम सार्थक कर दिया। पूरी-पूरी रात वह गुरु सेवा में लीन रहते और खड़े रह कर अत्यन्त सजगता से उनकी हर आज्ञा का पालन करते। उन दिनों वह नाम मात्र का भोजन ही ग्रहण करते थे।

एक दिन बापू ओम जी थड़ा साहिब में समाधि में लीन बैठे थे

और बापू हरनाम जी उनकी सेवा में उपस्थित थे। हरनाम जी बापू ओम जी की सेवा में लगातार उनके पास खड़े रहते थे। जब भी बापू ओम जी की आँखें खुलती हरनाम जी उनकी सेवा में सदैव उपस्थित

मिलते। उस दिन जब बापू ओम जी समाधिस्थ थे एक वृद्ध स्त्री वहाँ से गुजरी। उसके पास एक बड़ी भारी गठरी थी, जो उससे उठाई नहीं जा रही थी। जिस रास्ते से वह घर की ओर जा रही थी उस रास्ते में एक बरसाती पानी का गहरा नाला भी था।

हरनाम जी ने उस स्त्री को देखा और मन में विचार किया कि क्यों न उस स्त्री को वह गहरा नाला पार करवा दिया जाए। फिर उन्होंने सोचा कि यदि मैं इस वृद्ध स्त्री को नाला पार करवाने चला गया और पीछे से बापू ओम जी की समाधि खुल गई तो मेरी सेवा में विघ्न आ जायेगा। थोड़ी देर विचार करने के पश्चात् हरनाम जी ने सोचा कि मैं इस वृद्धा को थोड़ा रास्ता पार करवा देता हूँ। नाला पार करवाने के बाद यह स्वयमेव घर चली जायेंगी।

इस प्रकार निर्णय ले कर हरनाम जी ने उस वद्धा की गठरी को सिर पर उठाया और उसे नाला पार करवा कर वापिस बापू ओम जी की सेवा में लौट आये। जब बापू जी प्रकृतिस्थ हुए तो उन्होंने हरनाम जी से कहा कि " आपने उन वृद्ध स्त्री को घर तक छोड़ कर आना था, आप उन्हें बीच रास्ते में क्यों छोड़ आये। जीव की सेवा ही सही अर्थ में

ईश्वर की सेवा है। किसी भी प्राणी की सहायता करने से ईश्वर तत्काल प्रसन्न हो उठते हैं क्योंकि ईश्वर स्वयं उस प्राणी के अन्दर विराजमान होते हैं। इसलिए इस ब्रह्म-ज्ञान से जीव की सेवा करनी चाहिए।" भारतीय मनीषियों ने जड़-चेतन आदि सभी प्रकार की सृष्टियों के कण-कण में ईश्वर की उपस्थिति की बात कही है। जब कुछ भी उस ईश्वरीय प्रकाश से अछूता नहीं है, जब प्रभु का नूर समान रूप से सर्वत्र बरसा रहा है तब क्यों हम इस दिव्य भाव से अनुप्राणित हो जीव की सेवा न करें? उस दिन बापू ओम जी ने हरनाम जी को सेवा का यही रहस्य समझाया था।

बापू ओम जी ने उन्हें जो सदुपदेश दिए उनका सन्त हरनाम जी ने अक्षरशः पालन किया। संत राम जी महाराज जी ने अपने ग्रन्थ 'गुरु महिमा' में ओम जी द्वारा हरनाम जी को दिये गये उपदेशों का संकलन किया है जिनका वर्णन पाठकों के हितार्थ किया जा रहा है।

करना-

बैंत-चेत्र चेतन है शुद्ध सरूप तेरा, जेहड़ा जानदा सारे संसार नूं जी। सोई आत्मा जान यकीन करके, जेहड़ा देवे सफुर्ति बिहार नूँ जी।अन्तः करण ते इन्द्रीय प्राण है जो, दुःख रूप जड़ धरण विकार नूं जी। दास नित ही नवां इक आत्मा है, कोई पावे नां उसदे पार नूं जी।

वैसाख वसदा सारा जहान जिसमें, वासदेव सो अपना आप बीबा।जान ओम नू ब्रह्म सरूप करके, जिसदा भक्त जन जपन नित जाप बीबा। अधिष्ठाणा सो सारी प्रपंच दा है, नाम रूप है वाणी विलास बीबा।दास कहे है ब्रह्म में जगत ऐसे, जैसे भासदा दा रस्सी में सांप बीबा।जेठ जुदा ना जान परमात्मा नू, जुदा जाने ते दिंदा भय हर जी।जेहड़े इक सरूप कर देखदे हैं, उन्हां करे सरूप में लय हर जी।देव सुख जो करे अभेद पूजा, भेद वादियां नूं करे खें हर जी।दास जाने जो अपना आप करके, उसदा अपना आप ही है हर जी।हाड़ हरी हर रूप हो गया आपे, जैसे मृतका ही घटाकार होवे।होवे रजत में रूपये दा भान जैसे, तैसे ब्रह्म में भान संसार होवे।रजू सर्प जैसे जीव ब्रह्म तैसे, रजू ज्ञान ते सर्प आसार होवे।दास कहे तैसे ब्रह्म ज्ञान करके, दुख रूप संसार ते पार होवे।सावन सही करदे जेहड़े आप तांई, सोई सूरमे विच संसार दे जी।नाम रूप प्रपंच से युद्ध करदे, ओह ना जितदे आप नां हारदे जी।हर्ष शोक दा करन संयोग नाहीं, राग द्वेष नूं पकड़ के मारदे जी।दास कहे सब द्वन्द नूं दूर करदे, फट मार के ज्ञान तलवार दे जी। भाद्रों भर्म से भेद प्रतीत होवे, भर्म दूर कर जान अभेद प्यारे।नाम रूप प्रपंच है भेद सारा, आधिष्ठाणा इनका इक आच्छेद प्यारे।मन वाणी दी कल्पना रूप जानो, चराचर प्रपंच दा भेद प्यारे।दास कहै मन वाणी ते परे है तू, नेते नेत पुकारदे वेद प्यारे ।अस्सू आस करीए जिस ते आस जावे, सुझे इक अनास सरूप बीबा।चिदानन्द आनन्द बिन बन्द कर्त्ता, जावे नहीं अज्ञान तम कूप बीबा।माया ब्रह्म में छाया प्रतीत ऐसे, जैसे भान दे विच है धूप बीबा।दास कहे ना भिन्न सब रूप तेरा, सत चित आनन्द अनप बीबा।कत्तक कर्म निष्काम कर प्रभु अपणा, अन्तः करणा होवे तेरा शुद्ध बीबा।अन्तःकरणा दी शुद्धी तब जानीए जी, श्रवण करीऐ जां ब्रह्म नू बुद्ध बीबा।श्रवण कीतयां बाज ना ज्ञान होवे, मनन दर ना होवे विरूद्ध बीबा।

दास सत असत नू भिन्न करके, सत ग्रहण कर जीवें जल दुध बीबा। मन्धर मत उज्जवल होवे भजन करके, जन्म दूर होवे आत्म ज्ञान ते जी।राग द्वेष ना फेर प्रतीत होवे, चित चले ना मान अपमान ते जी। मैं मेरी चूं मार के चूर कीता, इक रस गुजरे लाभ हान ते जी। राम को हर वक्त आनन्द करा, रहित हो गया जेहड़ा अजान ते जी। पोह पार होए जान आत्या नूं, करके साधुआं या सतसंग भाई।

सत शास्त्र उत्ते यकीन करके, माहा वाक्य सुनने हो निसंग भाई। गुरु वचन विचारदे रहिन हर दम, नित नहान ज्ञान दी गंग भाई।

दास कहे सब कल्पना छोड़ दिंदे, चड़िया जिन्हां नूं आत्मा रंग भाई। माघ मौत ना उन्हां नू नजर आये, जेहड़े मग्न रहियें अपने आप अन्दर।इक रस बृती ब्रह्माकार गुजरे, मरत रहिन सोहंदे जाप अन्दर। इक बार प्रत्यक्ष कर आत्मा नू, फेर तपन ना जगत दे ताप अन्दर। दास कहे लख अपने आप तांई, मस्त होए सुते चुपचाप अन्दर।फागुन फतेह होई फाका फिकर चुका, काम्म काज ते रिहा शरीर बेली।मन कल्पना करे ना कहे वाणी, पान पाद हो रहे सब धीर बेली।वर्णा आश्रम दी शुद्ध ना रही कोई, गृहस्थ रिहा न बनया फकीर बेली। दास आप लख जानिया जगत झूठा, फेर कहो की करे तकदीर बेली।लौंद लहिर आकाश ते पावन होई, पवनो अग्नि ते पानी दा तत भाई। जलों पृथ्वी ते अन्न होए पैदा, वृक्ष औषधी ते फल पत्ते भाई। मत्त शुद्ध सरूप नूं पावंदी है, जिवें उत्पती तिवें लै बत भाई।

बैंत-जेहड़ा सुख है नित प्रकाश व्यापक, नाम रूप दा सोई आधार प्यारे। जिसनू मत्त ना जाने सो मत्त जाने, सोई जान मैं अपर अपार प्यारे। अवध अचल अपार सरूप मेरा, लहिरा विशणा महेश प्रवाह प्यारे। दास रवि, चन्द, जम, वर्णा, ईन्द्र, मेरे विच कल्पित बे शुमार प्यारे। तत्वमसी कर दया गुरु देवदे है, जिस शिष्य ते होन दयाल दासा। हे सो उचार निशंग मुखों, भ्रम दूर होवे जन्म जाल दासा।

राग द्वेष दो सन्ततो नाश होवे, दुष्ट शत्रू दा होवे काल दासा। जन्म जन्म दी दीनता दूर होवे, जदों नजर आवे आत्म लाल दासा।

जेहड़े रख दा मुनी ध्यान धरदे, सो आत्मा सत कर जान दास। तां को होत उपाद ते जगत मैं तू, अहं तवं आद मिथ्या भान दासा।

जाने बिना पंज प्रतीत होवन, रजू सर्प जैसे भ्रम ज्ञान दासा। जेहड़ा लखे भुजंग ऐह जगत जाने, सोई अपना आप पछान दासा। जिसदे बोध नू नित विवेक चाहे, करन भांवे कर्म निष्काम दासा ।

पढ़ी विधा वास्ते जिस दे तू, सोई अपना आत्म राम दासा। मरना जमना जिस दे विच नाहीं, निर्विकार पूर्णा सर्व धाम दासा। जदों ऐसे सरूप नूं जान लीता, फेर करां किस तांई प्रणाम दासा।

इन अमृतमयी उपदेशों का पालन कर के हरनाम दास जी ने उस परम पद को प्राप्त किया जिसकी आकांक्षा बड़े-बड़े योगी, मुनि और सिद्ध करते हैं। उनकी अखण्ड सेवा और साधना से प्रसन्न हो कर बापू ओम जी ने उन्हें अपना ही स्वरूप प्रदान किया। बापू ओम जी के स्वधामगमन के पश्चात् बापू हरनाम जी ने नन्दाचौर मन्दिर की व्यवस्था को बहुत ही सुन्दर ढंग से सम्भाला। जीवन पर्यन्त वह संगत की सेवा में लगे रहे।

सम्पूर्ण जगत को ब्रह्ममय देखने के कारण उन्हें प्रत्येक जीव में उसी ईश्वरीय सत्ता का प्रकाश दिखाई पड़ता था। वह ब्रह्मभाव से सम्पूर्ण प्राणियों की सेवा किया करते थे। वह भक्तों को समझाया करते थे कि संगत की सेवा ही सद्गुरु और प्रभु की सेवा है। उनका दिन सेवा

और रात्रि भक्ति में व्यतीत होती थी। बापू हरनाम जी सदृश महान् जीवन्मुक्त आत्मायें जब यह अनुभव कर लेती हैं कि यह दृश्य-अदृश्य, गोचर-अगोचर, चर-अचर सभी में केवल मात्र उसी सर्वोच्च सत्य की प्रतीति हो रही है, तब वह अपने उस अनुभव को जागतिक धरातल पर लाने के लिए अपने भक्तों के मन में उसी धारणा को बलवती बना देती हैं और उन्हें सेवा भाव से भर देती हैं। निःस्वार्थ सेवा से मन का कूड़ा निकल जाता है, अहंकार नष्ट हो जाता है और चित्त की शुद्धि हो जाती है। जब सेवा के साथ-साथ ईश्वर का नित्य स्मरण भी किया जाता है, तब इस संसार रूपी सागर को पार करना सरल हो जाता है। बापू हरनाम जी यही शिक्षा संगत को दिया करते थे।

कोमल हृदयी बापू हरनाम जी महाराज जी भक्तों के कष्ट-निवारण हेतु उन पर तत्काल कृपा किया करते थे। यद्यपि महापुरुष चमत्कार प्रदर्शन को अनुचित समझते हैं क्योंकि कभी-कभी अलौकिक घटनायें अहंकार की सर्जना भी कर दिया करती हैं, परन्तु बापू जी के चमत्कार की पूर्ण कृपा से सदैव ही उनके भक्तों का सर्वविध कल्याण होता रहा है। महातपस्वी बापू हरनाम जी सदृश सन्तों को समस्त ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ सहज प्राप्त होती हैं। सत्य और त्याग में अधिष्ठित ऐसे महापुरुष जब कुछ कह देते हैं, तब वह कथन मूर्त रूप ले कर ही रहता है। बापू हरनाम जी इतने भक्त वत्सल थे कि यदि कोई सेवक उनका स्मरण करके कुछ प्रार्थना करता था तो उसकी प्रार्थना

तुरन्त स्वीकृत हो जाती थी।

बापू हरनाम जी गुगेरा ग्राम (पाकिस्तान) में अकसर जाया करते थे। उनके आगमन का समाचार पाते ही ग्रामवासी उनके दर्शनों के लिए दौड़े चले आते थे। बापू जी में उनका अटूट विश्वास था। बापू जी का प्यार, दुलार और आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए संगत उत्सुक रहती थी। दिल्ली ढक्का निवासी रामचन्द/देवीदित्ता हुरिया के पिता श्री वज़ीर चन्द हुरिया गुगेरा ग्राम में रहते थे। कतिपय कारणों से गाँव

के कुछ लोगों ने उन पर झूठा आरोप लगा कर थाने में रिपोर्ट दर्ज करवा दी। थाने वालों ने उन्हें तंग करना शुरु कर दिया। उन्हें परेशान करने के लिए थाने में प्रातः से सन्ध्या तक बिठाया जाता।

ग्राम के कुछ बड़े लोग भी विरोधी पक्ष का साथ दे रहे थे। वज़ीर चन्द जी तो एक नेक दिल व्यक्ति थे। उन्होंने मन ही मन बापू हरनाम जी से थाने में प्रार्थना की कि हे करुणानिधान सद्गुरु ! मुझ दीन दुःखी की सहायता कीजिए। आप जानते हैं मैं निर्दोष हूँ। इधर वज़ीर चन्द जी ने मन में प्रार्थना की और उधर बापू हरनाम जी ने उनकी प्रार्थना सुन कर तुरन्त विरोधी पक्ष के सहायक लोगों को स्वयं पत्र लिख कर भेजा कि वज़ीर चन्द निर्दोष है। तुम उनकी सहायता करो और उन्हें मुक्त कराओ। पत्र प्राप्त करने के बाद भी विरोधी पक्ष के सहायकों ने बापू जी के पत्र को कोई महत्त्व नहीं दिया और पत्र छिपा कर रख लिया। कुछ

दिन पश्चात् जब बापू जी गुगेरा गाँव गए तो दूसरे पक्ष के लोगों ने प्रार्थना की कि महाराज जी, हमारे लोग जेल में हैं। आप हम पर कृपा कीजिए। बापू जी ने कहा, " कूड़ निखुटटे नानका ओड़क सच रही।" अर्थात् आपने वजीर चन्द जी को झूठे मुकदमे में फंसा दिया था। अब आपके लोग अपनी करनी की सत्ता भोग रहे हैं। कोई बात नहीं। हम उनके लिए भी बापू जी से प्रार्थना करेंगे। सद्गुरु तो सबके गुनाहों को माफ कर देते हैं, वह बहुत दयालु होते हैं। कर्म-फल तो भोगना ही पड़ता है, इसलिए सदैव शुभ कर्म करो। किसी को सताओ मत। भला करोगे तो भला ही होगा। यह कह कर बापू हरनाम जी ने उन्हें आशीर्वाद दिया जिससे दूसरे पक्ष वालों का भी उद्धार हो गया।

एक दिन बापू हरनाम जी उकाड़ा में खेतों में कुछ कार्य कर रहे थे। उनके पास गंगा देवी गाबा (एक श्रद्धालु सेविका जिनका परिवार आजकल बाराबंकी, उत्तर-प्रदेश में रह रहा है) नामक एक भक्त अपने दोहते श्री मनोहर लाल सेतिया सुपुत्र श्री धर्मचन्द सेतिया एवं लाजवन्ती सेतिया को ले कर आई। उनका दोहता छोटी अवस्था में ही गले की गंभीर बीमारी जिसे आजकल कैंसर कहते हैं, से पीड़ित था। उसकी दांई गाल के नीचे बहुत सारी गिलटियां हो गई थी। उन गिलटियों में पस और मवाद भर जाने से उनमें से बहुत दुर्गन्ध भी आती थी। उस समय कैंसर जैसी भयावह बीमारी का उपचार तो बिल्कुल असम्भव हो था। मनोहर लाल के परिवार वालों ने बहुत से वैद्य, हकीम और

डॉक्टरों को दिखाया परन्तु सभी ने यही कहा कि इस असाध्य बीमारी का कोई भी उपचार सम्भव नहीं है। उस बच्चे की मां दिन-रात रोती रहती थी। यह देख कर उस बच्चे की नानी श्रीमती गंगा देवी बापू हरनाम जी के पास गई। उसने अपने दोहते को बापू जी के आगे कर के कहा कि "यदि देना ही था तो लम्बी उमर का बच्चा देते। अब इस बच्चे का क्या उपचार किया जाए।" उस बच्चे की दयनीय हालत देख कर बापू हरनाम जी दया से भर उठे। उन्होंने गंगा देवी से कहा, "बीबी, झोली आगे कर।" गंगा देवी ने झोली आगे कर ली। तब बापू हरनाम जी ने अपनी दरांती को उस बच्चे की गिलटियों पर फेरा। उस दरांती के स्पर्श करते ही सारी की सारी गिलटियां गंगा देवी की झोली में गिर गई। बापू जी ने उन गिलटियों को जल प्रवाह करने का निर्देश देने के साथ ही कहा, "हो गया आपरेशन। अब चिन्ता की कोई बात नहीं।"

बाद में मनोहर लाल सेतिया को जीवन भर कैंसर से सम्बन्धित कोई समस्या नहीं हुई और उनका शेष जीवन सुन्दर ढंग से बापू जी की भक्ति करते हुए व्यतीत हुआ। बापू हरनाम जी भक्तों के कल्याण के लिए कुछ भी कर देते थे। उनके दर से कभी कोई खाली नहीं जाता था। जहाँ एक ओर बापू जी मृत्यु की विभीषिका को दूर करने की शक्ति रखते थे वहीं दूसरी ओर ऐसे संशयात्मा मनुष्यों के मन में तत्काल श्रद्धा उत्पन्न करने का सामर्थ्य भी रखते थे, जिनकी बुद्धि पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से अति तार्किक होती थी।

इस सन्दर्भ में एक प्रसंग विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उकाड़ा निवासी धर्मचन्द सेतिया एस डी कॉलेज लाहौर (पाकिस्तान) के स्नातक थे। उन दिनों युवाओं का विवाह कम आयु में ही हो जाया करता था। धर्मचन्द सेतिया का विवाह लाजवन्ती से हुआ और विवाह के उपरान्त वह होस्टल में चले गये और पढ़ाई करने लगे। उनकी पत्नी अति धार्मिक विचारों वाली महिला थी जो संतों में विशेष रूप से श्रद्धा रखती थी। वह अपने पति को भी कहा करती थी कि वह भी बापू जी से आशीर्वाद प्राप्त करें। लाजवन्ती का मन यह भी था कि वह पति सहित बापू हरनाम जी से नाम दीक्षा ले।

बहुत आग्रह करने पर भी धर्मचन्द सेतिया इस बात के लिये कदापि सहमत नहीं हुए कि उन्हें बापू जी से दीक्षा प्राप्त करनी चाहिए। वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ही प्रत्येक घटना का आकलन किया करते थे।

एक बार धर्मचन्द सेतिया अपने साले गुरबख्श लाल गाबा के विवाह में नूरशाह गये। गुरबख्श लाल का विवाह भक्त अविनाश चन्द्र की बहिन शकुंतला देवी के साथ हो रहा था। बारातियों को ले कर एक बस मंगूतारु से नूरशाह की ओर रवाना हुई। उस बस में आगे की सीट पर बापू हरनाम जी भी विराजमान थे। धर्मचन्द सेतिया भी सपत्नी उस विवाह में शामिल होने जा रहे थे। कन्या पक्ष वालों ने बारात के ठहरने की व्यवस्था एक धर्मशाला में की हुई थी और जो मार्ग धर्मशाला तक जाता था वहाँ तक बस का जाना सम्भव नहीं था। इसलिए जाहाँ बस

रुकनी थी वहाँ से बारात को आगे ले जाने के लिए घोड़े और बग्गियों की व्यवस्था थी। बस में बैठे हुए धर्मचन्द सेतिया के मन में आया कि मैं बापू हरनाम जी की शक्ति को तभी मानूंगा यदि यह बस रास्ते में न रुकते हुए सीधी धर्मशाला तक पहुँच जाये। इधर धर्मचन्द सेतिया के मन में यह विचार आया और उधर बापू हरनाम जी ने ड्राइवर को कहा कि, "जवानां, रुकदां क्यों ऐं? जित्थे तक हो सकदा है बस नूं लै जा।" यह बात सुन कर ड्राइवर ने बस को नहीं रोका और धीरे-धीरे उस बेहद खराब ऊबड़-खाबड़ रास्ते से निकलते हुए उस बस को धर्मशाला तक पहुँचा ही दिया। धर्मचन्द सेतिया हैरान हो गए। उन्होंने तत्काल लाजवन्ती को कहा कि मैं बापू जी की लीला देख कर अति प्रभावित हूँ। मैं इस महापुरुष की शक्तिमता समझ गया हूँ। हम आज ही बापू जी से नाम दीक्षा के लिये प्रार्थना करेंगे।

यह सुन कर लाजवन्ती बहुत प्रसन्न हुई। दोनों पति-पत्नी मिल कर बापू जी के पास गये और दीक्षा के लिए प्रार्थना की। बापू हरनाम जी ने भी कृपा-दृष्टि करते हुए दोनों को नाम दान दिया और खूब आशीर्वाद दिया। बापू हरनाम जी सर्वशक्तिमान थे। उनकी तपस्या का तेज़ कुछ ऐसा था कि प्रकृति भी उनकी आज्ञा का पालन करती थी। * एक बार अमृतसर में महाराज देसराज जी द्वारा महाराज गोसाई जी के यज्ञ का आयोजन किया जाना था। जिस दिन यज्ञ होना था उससे दो-तीन दिन पहले से वर्षा हो रही थी। महाराज हरनाम जी भी उस यज्ञ में

सम्मिलित होने हेतु वहाँ पहुँचे। संगत ने निवेदन किया कि बापू जी, लगातार वर्षा हो रही है। यज्ञ कैसे सम्पन्न होगा। बापू जी ने पूछा, "यज्ञ कितने समय चलना है।" संगत ने कहा, "बापू जी, यही कोई आठ-नौ घंटे यज्ञ चलेगा।" यह सुन कर बापू हरनाम जी ने कहा कि हम श्री ओम नारायण जी से प्रार्थना करेंगे कि यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हो। यह कह कर उन्होंने बापू ओम जी से प्रार्थना की और बापू ओम जी ने तुरन्त उनकी प्रार्थना स्वीकृत की और उसी क्षण वर्षा रुक गई और आठ-नौ घंटे तक जब तक यज्ञ कार्य सम्पन्न नहीं हो गया, वर्षा नहीं हुई। यज्ञ सम्पन्न होने के बाद वर्षा फिर प्रारम्भ हो गई।

बापू हरनाम जी एक सत्यनिष्ठ ब्रह्मयोगी थे। उन्हें वाक् सिद्धि प्राप्त थी। उनका वचन कभी खाली नहीं जाता था। ऐसे दिव्य संतों की कृपा से मनुष्य के आधिदैविक और आधिभौतिक ताप नष्ट हो जाते हैं और मनुष्य समस्त पापों से मुक्ति प्राप्त कर आनन्द लाभ प्राप्त करता है। दिल्ली निवासी चौधरी अविनाश चन्द्र को बाल्यावस्था में दौरे पड़ते थे। उनकी माता जी उन्हें बापू हरनाम जी की शरण में लाई। बापू जी ने अविनाश जी के गले में रक्षा कवच स्वरूप एक धागा डाल दिया। इसके पश्चात् उन्हें कभी भी दौरे नहीं पड़े। कुछ समय बाद एक दिन वह रक्षा कवच स्वयं ही उनके गले से लुप्त हो गया। उस कवच ने अपना कार्य कर अविनाश जी को पूर्ण रूपेण स्वस्थ कर दिया था। तत्पश्चात् उन्हें कभी भी जीवन में वैसी समस्या दुबारा नहीं आई। यह पूर्णरूपेण सत्य

है कि संतों की कृपा से मनुष्य के त्रिताप नष्ट हो जाते हैं। उसका जीवन एक ऐसे पथ पर चलायमान हो जाता है, जो उसे सीधे ईश्वर के सान्निध्य में ले जाता है। जिन मनुष्यों को इस बात का अहसास हो जाता है, वे ऐसे सद्गुरुओं की तलाश में रहते हैं और उन्हें पा लेने पर उनकी सेवा कर अपना जन्म सार्थक कर लेते हैं। नूरशाह में दो भाई रहते थे। उनमें से छोटे भाई बापू हरनाम जी की सेवा में रहता था और बड़ा भाई अपने छोटे भाई पोखर दास की इसी बात के लिए निन्दा करता था कि वह चौबीसों घंटे बापू जी के पास ही व्यतीत करता है। इस बात को ले कर वह सदैव गुस्से में रहता था। A

एक दिन पोखर दास बापू जी के चौबारे पर ऊपर की मंज़िल में बैठ कर बापू जी की सेवा कर रहा था। ठाकुर जी के पुत्र सन्त राम जी भी वहाँ थे। कुछ देर बाद बड़ा भाई उस चौबारे के नीचे आया और उच्च स्वर में गालियाँ देते हुए पोखर दास को कहने लगा, "ओये, पोखर थले आंवे ना।" फिर वह यह कह

कर और भी क्रोधित हो कर कहने लगा कि उसका छोटा भाई हमेशा संतों के पास ही घुसा रहता है। उसकी डाँट-फटकार सुन कर संतराम जी को बहुत बुरा लगा और पोखर दास ने तो आहत हो कर रोना ही शुरू कर दिया। बड़ा भाई पोखर दास को डाँट-फटकार लगा कर आगे बढ़ गया और एक भटियारन से किसी बात पर झगड़ बैठा।

बढ़ते-बढ़ते झगड़ा इतना बढ़ गया कि पुलिस आ कर उसे जेल में ले गई। जेल में कुछ दिन व्यतीत करने के बाद उसे अपनी गलती समझ में आ गई। जब वह जेल से बाहर आया तो बापू हरनाम जी के पास जा कर उनसे क्षमा प्रार्थना करने लगा। बापू जी ने उसे क्षमा कर दिया कहा कि आगे से संतों के लिए अपशब्द कभी नहीं कहना। तत्पश्चात् बापू जी ने उसे आशीर्वाद दिया। उसके पश्चात् उसने कभी भी अपने भाई पोखर दास को सेवा कार्य के लिये मना नहीं किया।

यह तो अकाट्य सत्य है कि इस कर्मप्रधान सृष्टि में कर्म की बहुत महत्ता है। कर्म अपना फल प्रदान किए बिना नष्ट नहीं होते। अच्छे कर्मों का फल अच्छा और बुरे कर्मों का फल बुरा ही तय होता है। परन्तु फिर भी यदि संत कृपा हो जाये तो मनुष्य का चित्त रूपांतरित हो जाता है और अशुभ कर्मों का प्रभाव क्षीण होता होता नष्ट हो जाता है। यदि अतीत के दुष्कर्मों के फलस्वरूप आगामी जीवन में कोई बड़ा संकट आ जाता है, तो संत कृपा से उसका निदान हो जाता है।

कुछ ऐसा ही हुआ सन्दरा ग्राम निवासी सरदार वतन सिंह और ठाकुर कौर के साथ। 1914 में जब प्रथम विश्व युद्ध छिड़ा तो कई भारतीय सैनिकों को अंग्रेजी हुकूमत के चलते उनकी ओर से लड़ने के लिए जाना पड़ा। सरदार बतन सिंह भी एक ऐसे ही भारतीय सैनिक थे जिन्होंने उस युद्ध में भाग लिया था। सन्दरा ग्राम के चार और जवान भी

सरदार बतन सिंह के साथ गये थे। जब विश्व युद्ध समाप्त हुआ तो चार बिस्तरे वापिस आये। बिस्तरे वापिस आने का अर्थ यह होता था कि सम्बन्धित सैनिकों की मृत्यु हो चुकी है। जिन सैनिकों के बिस्तरे

वापिस आए थे वे चार सैनिक मारे जा चुके थे। बतन सिंह का कोई अता पता नहीं था। किसी तार या पत्र के जरिये भी उसकी कोई खबर नहीं आई। बतन सिंह की पत्नी ठाकुर कौर घबरा उठी।

उसने बापू हरनाम जी के पास नन्दाचौर जाने का निर्णय लिया। उन दिनों सन्दरा से नन्दाचौर तक घना जंगल हुआ करता था। ठाकुर कौर सवेरे सवेरे ही मन्दिर पहुँच गई। बापू हरनाम जी ध्यान में बैठे हुए थे। ठाकुर कौर आई, बैठीं, प्रणाम किया और कुछ समय पश्चात् चुप करके चली गई। अगले दिन वह फिर आई और बापू जी को प्रणाम करके बिना कुछ कहे चली गई। इस प्रकार करते हुए उन्हें छः दिन बीत गए। इन छः दिनों में ठाकुर कौर ने अपने मुख से बापू जी को अपने पति के विषय में कुछ नहीं कहा। सातवें दिन जब वह बापू जी के पास आई तो बापू जी को प्रणाम कर बैठ गई। बापू जी भी शान्तमुद्रा में बैठे थे। यकायक बापू जी खड़े हो गए और कहने लगे, "बापू जी, इसनू मैं नई जाण देणा।" यह वाक्य बापू जी ने तीन बार उच्चारित किया। तत्पश्चात् उन्होनें ठाकुर कौर से कहा, "बीबी, घबरा नहीं, तेरा पति ठीक-ठाक है परन्तु उसकी टाँग में गोली लग गई है। जा वापिस चली जा। वो वापिस आ जाएगा।"

जिस समय बापू हरनाम जी ने यह शब्द कहे उस समय बापू श्रद्धाराम और अन्य भक्तजन भी वहाँ उपस्थित थे। सभी ने यह कौतुक देखा। ठाकुर कौर भी घर वापिस आ गई। एक महीने बाद वतन सिंह भी घर आ गया। इस घटना से उस दम्पत्ति का विश्वास बापू जी में दृढ़ से दृढ़तर हो गया। इसके बाद उनकी छः सन्तानें हुईं परन्तु सभी की मृत्यु हो गई। एक बार फिर वह दम्पत्ति बापू हरनाम जी की शरण में आया और उनके आशीर्वाद से उन्हें पुत्र प्राप्ति हुई जिनका नाम स्वर्ण सिंह था। स्वर्ण सिंह के तीन पुत्र हुए जिनमें से जगविंदर सिंह धामी नन्दाचौर के विशिष्ट नागरिकों में हैं और नरेन्द्र सिंह धामी इंगलैंड में सुखी जीवन व्यतीत कर रहे हैं। उनके तीसरे भाई सुरेन्द्र सिंह का स्वर्गवास हो चुका है।

बापू हरनाम जी अति मृदु स्वभाव के थे। किसी का छोटे से छोटा दुःख भी वह बर्दाशत नहीं कर सकते थे। भगत देवी दित्ता (दिल्ली निवासी) की बहन जब तेरह साल की थी उसे कलाई के ऊपर खूब बड़ी गिल्टी हो गई जिसमें असहनीय पीड़ा हो रही थी। उन दिनों 1947 से पहले देवी दित्ता जी का परिवार पाकिस्तान में रहा करता था। तब गुगेरा में राय साहिब के बाग में बापू हरनाम जी ठहरा करते थे। वह

लड़की अपने पिता वज़ीरचन्द के साथ बापू जी के पास गई। उस समय भी दर्द के कारण वह ज़ोर-ज़ोर से रो रही थी। बापू हरनाम जी ने पूछा,

"बीबी क्यों रोंदी ऐं?"

वजीरचन्द जी ने कहा कि इसकी कलाई पर हुई गिल्टी के कारण इसे बहुत तकलीफ है इसलिए यह रो रही है। यह सुन कर बापू हरनाम जी हँसे और कहा, "असां ओम ओम बोलांगे, एसनूं भजा देवांगे।" ऐसा कह कर बापू जी ने चार-पाँच बार गिल्टी के ऊपर ठप्पा मारा। इसके तुरन्त बाद दर्द बन्द हो गया और गिल्टी भी धीरे-धीरे ठीक हो गई।

किसी भी प्रकार की आधि-व्याधि बापू हरनाम जी के समक्ष ठहर नहीं सकती थी। एक बार सरदार सोभा सिंह का पोता ओंकार चावला जिसे प्यार से सब निक्का कहते थे बहुत बीमार हो गया। वह डेढ़ साल का था और उसका बुखार नहीं उतर रहा था। उसके घर वाले घबराये हुए थे और बापू जी को याद कर रहे थे। इतनी देर में बापू हरनाम जी वहाँ आए और निक्के को बुखार हुआ देख कर कहा, "हम अभी इसका बुखार दूर कर देते हैं।" फिर बापू जी ने कहा, "बुखार, जा छड्डु निक्के नूं।" इतना कह कर बापू जी ने अपना परना बच्चे के सिर

टोहाना निवासी ओंकार चावला बापू जी का परना दिखाते हुए।

पर रखा। इसके कुछ ही देर में बच्चे का बुखार उतर गया और वह बिलकुल ठीक हो गया। बापू हरनाम जी ने उस परने का नाम कष्ट निवारण परना रखा था और परिवार वालों के प्रार्थना करने पर बापू जी ने वह परना उन्हें दे दिया। आज भी वह कष्ट निवारक परना टोहाना निवासी ओंकार चावला (निक्का) के पास है।

बापू हरनाम जी की शक्ति का अनुमान लगाना कतई सम्भव नहीं है। अपनी कृपा से उन्होंने एक ऐसे परिवार को पुत्र-रत्न प्रदान किया जिनकी सन्तानें पैदा होते ही मृत्यु को प्राप्त हो जाती थी। एक बार बापू हरनाम जी अपने चौबारे में ऊपर छत पर टहल रहे थे। तभी उनके कानों में किसी के रोने की आवाज़ आई। उन्होंने पास खड़े एक सेवक से पूछा कि यह किसके रोने की आवाज़ है। उस सेवक ने बताया कि रामरखा मल जी के घर में सन्तान होते ही मृत्यु को प्राप्त हो जाती है, आज भी ऐसा ही हुआ है।

इस घटना के कुछ समय पश्चात् जब रामरखा मल जी के घर में पुत्र उत्पन्न हुआ, तब बापू हरनाम जी ने तुरन्त अपनी धोती का पल्ला फाड़ कर एक सेवक को दिया और कहा कि जाओ, जा कर रामरखा मल के बच्चे को इस कपड़े में लपेट दो। बच्चे को कुछ नहीं होगा। सेवक ने वैसा ही किया और बापू हरनाम जी के आशीर्वाद से, उस बालक ने जिसका नाम फकीर चंद रखा गया, लम्बी आयु प्राप्त की।

फकीर चंद का बापू हरनाम जी से बहुत ही स्नेह था। वह प्रायः बापू जी की सेवा में रहा करते थे और बापू जी की सुन्दर लीलाओं के साक्षी भी थे। एक बार जून के यज्ञ में फकीर चंद जी भण्डारे में सेवा कर रहे थे। उस दिन रात को संगत के भोजन कर लेने के बाद जब फकीर चंद जी अपने साथियों के साथ वापिस जाने लगे तो अचानक संगत की एक बस आ गई। बापू हरनाम जी स्वयं भक्तों को लेकर भण्डारे में आए और कहने लगे, "पंक्ति में बैठ जाओ।" तत्पश्चात् बापू जी ने एक जग में जल लेकर भक्तों के हाथ धुलाने आरम्भ कर दिए। फकीर चंद यह देख कर बहुत परेशान हुए कि भोजन के लिए

तो केवल पूरियां ही बची हैं और सब्ज़ी तो बहुत ही कम है, ऐसे में इतनी संगत को भोजन किस प्रकार करवाया जा सकता है।

फकीर चंद ने इशारे से बापू जी को बुलाने का प्रयत्न किया परन्तु सफल नहीं हुआ। फिर उन्होंने बापू जी को ऊँची आवाज़ में बुलाते हुए कहा, "महाराज जी, इधर आईए।" बापू जी फकीर चंद के पास गए और कहा कि तुम इतनी ऊँची आवाज़ में क्यों बोल रहे हो? इस पर फकीर चंद ने बापू जी को सारी बात बता दी कि इतने कम भोजन में सारी संगत को भोजन नहीं करवाया जा सकता। यह सुन कर बापू जी ने एक कपड़े से सब्ज़ी वाले बर्तन को ढक दिया और कहा कि थोड़ा सा कपड़ा हटा कर सब्ज़ी का वितरण करते चलो। पूरा कपड़ा उठाने की आवश्यकता नहीं है। फकीर चंद ने ऐसा ही किया। सारी संगत ने पेट

भर कर भोजन किया और फकीर चंद जिन्हें सारी सच्चाई का पता था, यह चमत्कार देख कर बेहद रोमांचित हो उठे। वह समझ गए कि बापू हरनाम जी की शक्ति और महिमा का पार पाना मानवीय बुद्धि के लिए असम्भव है।

बापू हरनाम जी भक्तों को ईश्वर भक्ति के लिए प्रेरित करते थे और अत्यन्त सादा जीवन जीते थे। बापू ओम जी से प्राप्त आध्यात्मिक सम्पदा को उन्होंने दो सुपात्र शिष्यों को दिया। उनमें से एक थे अट्टी ग्राम के बापू श्रद्धाराम जी और दूसरे थे अट्टी ग्राम के ही भक्त ज्वाला जी। बापू श्रद्धाराम जी का दिव्य चरित्र हम अगले अध्याय में पढ़ेंगे। बापू हरनाम जी के एक बेहद विलक्षण शिष्य हुए जिनका नाम भक्त ज्वाला जी था। वह सीधे साधे किसान थे और सांसारिक शिक्षा-दीक्षा से अछूते थे। वह अति सरल स्वभाव के थे और बाल्यावस्था से ही उनका ध्यान भक्ति में था।

एक दिन उन्होंने एक बुजुर्ग ग्रामीण से कहा कि वह उन्हें भगवान् की कोई कथा सुनाएं। उस वृद्ध व्यक्ति ने कथा सुनाने के स्थान पर पूछा, "क्या तुम्हारे कोई गुरु हैं?" यह सुन भक्त ज्वाला जी ने कहा, "मेरा तो कोई गुरु नहीं है।" इस पर उस वृद्ध ने कहा, "तो फिर एक निगुरे को क्या कथा सुनायें? निगुरे की तो परछाई से भी बचना चाहिए।" भक्त ज्वाला जी को यह बात लग गई। उस दिन से वह

व्यथित रहने लगे और एक दिन वह बापू श्रद्धाराम जी के पास गये जो अट्टी ग्राम में ही निवास करते थे। ज्वाला जी ने अपने मन की व्यथा उन्हें बताई और उनसे प्रार्थना की कि वे उन्हें नाम-दान दें। बापू श्रद्धाराम जी ने कहा कि वे इस योग्य नहीं हैं कि वे उनके गुरु बन सकें। फिर उन्होंने कहा कि कुछ दिनों में यहाँ बापू हरनाम जी आयेंगे, आप उनसे मिल कर नाम दीक्षा के लिए प्रार्थना करना। भक्त ज्वाला जी बड़ी व्यग्रता से बापू हरनाम जी के आने की राह देखने लगे। इसी बीच जब भी उनका सामना उस वृद्ध से होता तो वह रास्ता बदल लेते और सोचते अब तो मैं तभी अपनी परछाई दूँगा, जब मैं गुरु धारण कर लूंगा।

कुछ समय पश्चात् बापू हरनाम जी अट्टी ग्राम पधारे। भक्त ज्वाला जी उनके दर्शनों के लिए गए और प्रणाम कर वहाँ बैठ गये। बापू श्रद्धा राम जी की माता ने बापू हरनाम जी से भक्त ज्वाला जी की बात की और कहा कि आप कृपा कर के उस लड़के का कुछ कीजिए। बापू हरनाम जी शान्त बैठे रहे। धीरे-धीरे दोपहर से सन्ध्या और सन्ध्या से रात हो गई। भक्त ज्वाला जी बाकी भक्तों के जाने के बाद भी वहाँ बैठे रहे। बापू श्रद्धा राम जी की माता ने फिर प्रार्थना की कि भक्त ज्वाला जी का कल्याण करो। यह सुन कर बापू हरनाम जी ने ज्वाला जी को ऊपर चौबारे में बुलाया। भक्त ज्वाला जी बताशे ले कर बापू हरनाम जी ने जैसे ही उन्हें मन्त्र दीक्षा दी, वैसे ही उन्हें पिछले सात जन्म याद आ गए। उन्हें यह भी ज्ञात हो गया कि पिछले सात जन्मों से वह ईश्वर प्राप्ति के

लिए प्रयत्न कर रहे हैं। उन जन्मों में वह क्या-क्या थे, किस रूप में थे, वह सब स्मरण हो आया।

नोट-भक्त ज्वाला सिंह जी की कथा उनके प्रपौत्रों अष्ट्टी निवासी सरदार निरंजन सिंह, कीरत सिंह और गुरमुख सिंह जी ने बताई है।

दीक्षा प्राप्ति के उपरान्त ज्वाला जी ने पूर्ण एकाग्रता और तन्मयता से बापू हरनाम जी के बताए मार्ग पर चल कर तपस्या एवं साधना की। दिन में वह खेतों में कार्य करते थे और रात्रि में वह चलते-चलते ध्यान करते थे और उनके चारों ओर एक प्रकाश उनके साथ-साथ चलता था। पूरी-पूरी रात्रि वह प्रभु-स्मरण करते थे। 12 से 14 वर्ष ज्वाला जी ने इसी पद्धति से साधना की। उनकी तपस्या पूर्ण भी हुई और इस विषय में बापू हरनाम जी ने कहा कि हमने श्रद्धाराम को तो जाहिर करना है और तुम्हें हम जाहिर नहीं करेंगे। तुम्हें तो हम ऐसे ही ले जायेंगे।

बापू ओम जी ने एक बार भक्त ज्वाला जी के विषय में बापू हरनाम जी को बताते हुए कहा था कि हमारा एक सेवक है भक्त ज्वाला। आपने हमारा हुक्का और कोट उसे देना है। केवल और केवल वह ही उस हुक्के को पी सकता है। यदि किसी मन्दिर में बैठे हुए भी वह हुक्का पीए तो उसे रोकने का साहस कोई न करे। बापू ओम जी के समान उनके सेवकों की लीलाएं भी बड़ी विलक्षण थी। बापू हरनाम जी ने बापू ओम जी का वह चाँदी का हुक्का ज्वाला जी को दे दिया था। ज्वाला जी के पोते निरंजन सिंह जी ने बताया कि दो अलग-अलग

मौकों पर उनके दो परिचितों ने उस हुक्के को पी लिया और उनकी तुरन्त मृत्यु हो गई। बापू ओम जी के हुक्म के अनुसार वह हुक्का केवल ज्वाला जी ही पी सकते थे। जब बापू हरनाम जी ने ज्वाला जी को वह हुक्का दिया था तब ज्वाला जी ने यह कहते हुए मना कर दिया था कि मैं तो जट हूँ। मैं हुक्के का सेवन किस प्रकार कर सकता हूँ। इस पर बापू हरनाम जी ने कहा कि यह आदेश तो बापू ओम जी तुम्हारे लिए पहले ही कर गये हैं। तुम कैसे नहीं पीओगे। इस प्रकार समझाने पर ज्वाला जी ने वह हुक्का लिया।

बापू हरनाम जी का अपने इस शिष्य से अद्वितीय प्रेम था। बापू जी प्रायः अट्टी ग्राम ज्वाला जी के पास आया करते थे और दो-दो महीने वहाँ रुका भी करते थे। गुरु-शिष्य का प्रेम कुछ ऐसा था कि ज्वाला जी खेतों में हल चलाते थे और बापू हरनाम जी उनमें अपने हाथों से बीज डालते चलते थे। बीज डालने के बाद बापू जी कहते थे, "लो जी वड-वड खाई जायो।" बापू हरनाम जी की दिव्य कृपा भक्त ज्वाला जी पर सदैव बनी रही।

भक्त ज्वाला जी बड़े ही परोपकारी और दयालु थे। उनक तपस्या की शक्ति इतनी अधिक थी कि यदि कोई गम्भीर रूप से बीमा व्यक्ति को वह पास पड़ी मिट्टी भी उठा कर दे देते थे तो वह बिल्कुल ठीक हो जाता था। जिस वृक्ष के नीचे बैठे होते थे उसी का एक पत्ता

जिसे दे देते थे वह तुरन्त स्वास्थ्य लाभ कर लेता था। एक बार काले पिंड निवासी काबुल सिंह और बसन्त कौर ज्वाला जी के पास आए। उस दम्पत्ति की सात पुत्रियां थी। उन्हें बेटे की बहुत चाह थी। वह दम्पत्ति ज्वाला जी के पास जा कर रोने बिलखने लगा और उनसे पुत्र प्राप्ति के लिए याचना करने लगा। ज्वाला जी का हृदय पसीज गया और उन्होंने उस दम्पत्ति को पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद दिया। उस आशीर्वाद से उन्हें पुत्र प्राप्ति भी हुई और उसका नाम ब्रह्मा रखा गया। पुत्र तो उत्पन्न हो गया परन्तु बापू हरनाम जी इस घटनाक्रम से नाराज़ हो गये। उन्होंने कहा कि ज्वाला जी, तुम्हारी तपस्या पाँच वर्ष पीछे चली गई है। इस दम्पत्ति को तो पुत्र दो वर्ष बाद देना था। समय बीतता गया और काल प्रभाव से ब्रह्मा की दो वर्ष की अवस्था में मृत्यु हो गई। फिर तीसरे वर्ष उस दम्पत्ति को पुत्र हुआ और उसका नाम गुरदयाल रखा गया। आज कल गुरदयाल अमेरिका में रह रहा है।

भक्त ज्वाला जी त्रिकालदर्शी थे। उनके छः पोते थे। उनका एक पोता कीरत सिंह इंग्लैंड जाना चाहता था। ज्वाला जी ने कहा, "तुम विदेश जा कर क्या करोगे? वहाँ भी काम करना है और यहाँ भी काम करना है तो फिर विदेश गमन की क्या आवश्यकता है?" जब कीरत सिंह नहीं माना तो उन्होंने कहा कि ठीक है तुम विदेश जाना चाहते हो तो जाओ परन्तु यह याद रखना कि तुम्हें तीन महीने काम नहीं मिलेगा। तुम उदास हो जाओगे। घर पर पत्र डालोगे।

फिर एक दिन कोई व्यक्ति सुबह-सुबह आयेगा और तुम्हें काम दिलवायेगा। ज्वाला जी का कहा एक-एक शब्द अक्षरशः सत्य हुआ। उनके पोते कीरत सिंह ने बताया कि वह वाकई बहुत उदास हो गए थे

और बहुत अधिक पत्र व्यवहार करते थे। उन्हें तेरह हफ्ते तक काम नहीं मिला था फिर एक दिन अचानक उन्हें किसी व्यक्ति ने काम दिलवाया था। बाद में किसी दिन जब कीरत सिंह की ज्वाला जी से बात हुई तो उन्होंने कहा, " अब सब ठीक है न।" इस पर कीरत सिंह ने कहा, "आप को कैसे पता कि सब ठीक है?" ज्वाला जी ने कहा, "मैं तो वहाँ रोज ही घूमता हूँ। जब भी मेरे भक्त मुझे याद करते हैं मैं वहाँ पहुँच जाता हूँ।" इस प्रकार के महापुरुष जो स्वेच्छा से देश, स्थान, काल की बाधा का अतिक्रमण कर कहीं भी अपने भक्तों की सहायतार्थ पहुँच जाते हैं नि: सन्देह वन्दनीय हैं। इसमें कोई संशय नहीं है कि बापू हरनाम जी के आशीर्वाद से एक गाँव के साधारण कृषक एक उच्च अवस्था प्राप्त संत हो गए।

बापू हरनाम जी बहुत ही दयालु थे। अपने सभी भक्तों की ओर उनका पूरा ध्यान रहता था। उनके एक भक्त रामचन्द नागपाल के पुत्र कश्मीर लाल गुगेरा पाकिस्तान में विकलांग पैदा हुए थे। भारत विभाजन के बाद उनका परिवार ढक्का, दिल्ली आ गया। कश्मीर लाल जी सही तरीके से बोल भी नहीं पाते थे। बापू हरनाम जी ने उन्हें अपने पास नन्दाचौर ही रख लिया था। भक्त कश्मीर जी बापू जी के साथ

रहते-रहते जप-ध्यान करने लगे थे और बापू जी की आज्ञा से भक्तों के लिए अरदास भी किया करते थे। अरदास करते समय भक्त कश्मीर जी बिल्कुल भी नहीं अटकते नहीं थे। भक्त कश्मीर जी को यह आशीर्वाद था कि वह जिस किसी भी रक्षा कर देंगे वह तुरन्त ठीक हो जाएगा। भक्त जी जल का छींटा दे कर और पाठ कर भक्तों का कष्ट दूर किया करते थे। जब उनका अन्तिम समय आया तब नन्दाचौर के नौजवान लड़कों ने एक समिति बना कर दिन-रात भक्त कश्मीर लाल जी की सेवा की। कश्मीर लाल जी ने बापू हरनाम जी, बापू श्रद्धाराम जी, बापू गुरदास राम जी और बापू भानुदत्त जी की अनथक सेवा की थी। उन्होंने अपनी पार्थिव देह का त्याग 12 फरवरी 2002 को किया। देह-त्याग के बाद उनका चित्र समाधि-साहिब में बापू श्रद्धाराम जी के साथ रखा गया। ऐसे महान् भक्त कश्मीर लाल जी को हमारा नमन।

बापू हरनाम जी बापू ओम जी के निर्दिष्ट मार्ग पर चल कर भगवद् महिमा की सुरभि फैलाते रहो। उन्होंने अपने भक्त उकाड़ा निवासी सरदार सोभा सिंह से वायदा किया था कि वह अपना अन्तिम समय उनके निवास स्थान उकाड़ा (पाकिस्तान) में बितायेंगे। जाने से पूर्व उन्होंने ज्वाला जी को एक रहस्य बताया। उन्होंने कहा कि वैसे तो हमारी आयु पन्द्रह वर्ष और शेष है परन्तु अपने भक्त को दिए वचन के कारण हमें अभी ही इस देह का त्याग करना होगा। बापू हरनाम जी को यह ज्ञात था कि 1947 में पाकिस्तान बन जायेगा, बहुत दंगे होंगे,

रक्तपात होगा और वह यह सब देखना नहीं चाहते थे। फिर उकाड़ा में 1947 के बाद उस भक्त का घर सुरक्षित रहता या नहीं यह भी निश्चित नहीं था। इन सब कारणों से बापू हरनाम जी ने पन्द्रह वर्ष पूर्व ही देह त्यागने का निश्चय किया।

उकाड़ा जाने से पहले बापू जी हरिकिशन नाई की दुकान पर गए। हरिकिशन उनका भक्त था। उसे अपनी सन्तान सम्बन्धी चिन्ता थी। जब उसने बापू जी से इस सम्बन्ध में बात की तो बापू जी ने कहा, "मैं शरीर त्यागने उकाड़ा जा रहा हूँ। बहुत जल्दी खून-खराबा होगा। तुम चिन्ता मत करो, तुम्हारे घर जुड़वां बच्चे होंगे।" बापू जी का यह वचन सत्य सिद्ध हुआ। समय आने पर हरिकिशन के घर एक बेटा और एक बेटी हुए।

जब बापू हरनाम जी उकाड़ा जाने के लिए नन्दाचौर से रेलवे स्टेशन की ओर चले तो रास्ते में एक गाँव आया। वहाँ एक लुहार रहता था। उसने गन्ने के रस की मशीन लगाई हुई थी। बापू हरनाम जी को गन्ने का रस बहुत प्रिय था। उन्होंने वहाँ से तीन कटोरे रस पिया। उस लुहार के कोई सन्तान नहीं थी। उसने बापू जी से प्रार्थना की और कहा कि बापू जी, मेरा घर भी आबाद करते जाओ। बापू जी ने तुरन्त उसे आशीर्वाद दिया और कहा कि तुम्हारे पाँच पुत्र होंगे। समय आने पर उसके पाँच पुत्र हुए और बापू जी का आशीर्वाद फलीभूत हुआ।

उस गाँव से आगे जाने पर फंबिया गाँव भी आया। किसी श्रद्धालु ने कहा कि बापू जी, हमारे घर में भी चरण डालो। बापू जी ने कहा कि अभी नहीं, हम बाद में बैंड-बाजे के साथ तुम्हारे घर आयेंगे। यह कह कर बापू जी उकाड़ा चले गये। वहाँ जा कर बापू जी बीमार हो गये। उन्हें अस्पताल में भर्ती करवाना पड़ा। सभी भक्तजन उनकी सेवा में रत थे। उन भक्तों में एक भक्त देवीदित्ता जी भी थे। सेतिया परिवार बापू हरनाम जी को मानता था और उस परिवार ने ही देवीदित्ता को बापू जी से मिलवाया था। बापू जी ने तेरह वर्ष की आयु में देवीदित्ता जी को दीक्षा दी थी। बापू जी जब अस्पताल में भर्ती थे तब देवीदित्ता जी ने बापू जी की अनथक सेवा की। उनकी सेवा से प्रसन्न हो कर बापू जी ने कहा कि या तो हमारी माँ ने हमारा मल-मूत्र ओर उल्टी उठाई है और या आपने। हम आपका देना नहीं दे सकते। हमारा आशीर्वाद सदा आपके साथ है। आप जब भी हमें बुलायेंगे हम आपके पास अवश्य आएंगे।

बाद में देवीदित्ता जी दिल्ली आ गए और बापू जी की कृपा से बड़ी भारी चल-अचल सम्पत्ति के मालिक हुए। आजकल उनके पुत्र महेन्द्र कुमार ढक्का मन्दिर में लंगर लगाते हैं और बापू दरबार की सेवा करते हैं। समय द्रुत गति से चलता रहा। देह-त्याग का दिन निकट आ गया। तब बापू हरनाम जी ने सन् 1945 ई० की असोज प्रविष्टा को रात्रि के 11:30 बजे अपने पार्थिव शरीर का त्याग कर दिया।

इससे पूर्व उन्होंने बापू श्रद्धाराम जी से कहा कि अब तुम्हें ही सारी संगत का ध्यान रखना है। यह सुन कर बापू श्रद्धाराम जी ने कहा कि मैं इस कार्य के योग्य नहीं हूँ। यह सुन कर बापू हरनाम जी ने अपनी सारी शक्तियां बापू श्रद्धाराम जी में स्थानांतरित कर दीं। उन्होंने बापू श्रद्धाराम जी से कहा कि मेरा सिर अपनी गोद में रखो। बापू श्रद्धाराम जी ने ऐसा ही किया। बापू हरनाम जी ने श्रद्धाराम जी को शहाना योगी कहा और उनकी ओर देखते हुए शरीर छोड़ दिया। बापू हरनाम जी के देखने और शरीर छोड़ते ही बापू श्रद्धाराम जी के कपाट खुल गए और उन्हें दिव्य दर्शन हो गए। वह पूर्ण हो गए।

उकाड़ा में बापू हरनाम जी की समाधि बनाई गई। बापू श्रद्धाराम जी अपने पूज्य गुरुदेव का अस्थि-कलश ले कर वापिस नन्दाचौर की ओर रवाना हुए। रास्ते में जब वह फंबिया गाँव पहुँचे तब घनघोर

वर्षा शुरू हो गई। बैंड-बाजे वाले भी साथ में थे। तभी एक स्थान पर श्रद्धाराम जी के पाँव अपने आप ही ठिठक गए और वह एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा पाए। उसी क्षण आकाशवाणी हुई- "तुम्हें यहाँ रुक कर जाना है। हमने इस भक्त से वायदा किया था कि हम एक रात यहाँ रुक कर जाएंगे।" यह सुन कर बापू श्रद्धाराम जी सामने एक घर में चले गये और बैंड-बाजे वाले भी अन्दर चले गए। यह उसी व्यक्ति का घर था जिसे उकाड़ा जाने से पहले बापू जी ने कहा था कि हम बाद में बैंड-बाजे के साथ आयेंगे। तत्पश्चात् भक्तों ने उस घर में पूरी रात कीर्तन

किया और अगले दिन सुबह बापू श्रद्धाराम जी अस्थिकलश लेकर नन्दाचौर की ओर चल पड़े। बापू हरनाम जी ने देह-त्याग के उपरान्त भी समय-समय पर अपने भक्तों के हितार्थ प्रकट हो कर उनके कार्य संवारे हैं। बापू हरनाम जी सदृश संतों का प्राकट्य उनकी देह के रहने या न रहने पर निर्भर नहीं करता है। उनकी दया भक्तों की करुणा पुकार की प्रतीक्षा नहीं करती। भले ही भक्त को अभास हो या नहीं परन्तु बापू जी सदैव भक्त को आवश्यकता पड़ने पर तुरन्त वहाँ उपस्थित मिलते हैं और उनकी सहायता करते हैं। प्रस्तुत दृष्टान्त इस बात की पुष्टि करते हैं कि देह-त्याग के उपरान्त भी बापू हरनाम जी नित्य निरन्तर भक्तों के साथ रह उनकी रक्षा एवं मार्गदर्शन करते हैं।

एक बार दिल्ली निवासी चौधरी अविनाश चन्द्र ने अपने पुत्र के जन्म दिवस पर भक्त ज्वाला जी को आशीर्वाद प्रदान करने हेतु सादर आमंत्रित किया। ज्वाला जी ने बड़ी प्रसन्नता पूर्वक उनका निमन्त्रण स्वीकार किया और रेलवे स्टेशन जा कर दिल्ली जाने वाली गाड़ी में बैठ गए। सदैव ईश्वर चिन्तन में निमग्न रहने वाले ज्वाला जी अविनाश चन्द्र जी के घर का पता साथ लेना भूल गए। जब गाड़ी दिल्ली रेलवे स्टेशन पहुँची तब ज्वाला जी स्टेशन पर उतरे और त्रिमूर्ति रोड के पास स्थित अविनाश चन्द्र जी के घर पहुँच गए। अविनाश चन्द्र जी भक्त ज्वाला को देख कर अति आनन्दित हुए और आश्चर्यचकित भी हुए। उन्होंने पूछा, "ज्वाला सिंह जी, आप बिना पते के यहाँ कैसे पहुँचे।

आप सूचना देते तो हम गाड़ी की व्यवस्था कर देते।" ज्वाला जी ने कहा, "हम स्टेशन से उतरे और बापू हरनाम जी हमारे आगे-आगे चलने लगे। हम उनके पीछे-पीछे चलते हुए यहाँ तक आ पहुँचे।" यह घटना जिस समय की है उस समय तक बापू हरनाम जी के देह-त्याग को दस-बारह वर्ष हो चुके थे।

ठीक इसी प्रकार की एक घटना खुरजा निवासी श्रीमती विमला आहूजा के साथ हुई। विमला आहूजा दिल्ली में सितम्बर में होने वाले यज्ञ के अवसर पर अकसर आया करती थी। उनका पुत्र भी उनके साथ आया करता था। एक बार उनके पुत्र ने उन्हें गाड़ी में चढ़ा दिया और स्वयं किसी आवश्यक कार्य के चलते अपनी माता के साथ नहीं आ पाया। स्टेशन पर उतर कर वह आटो रिक्शा में बैठ कर ढक्का मन्दिर पहुँच गई। चूंकि वह बहुत वृद्ध थी, इसलिए उनके रिश्तेदारों को यह देख कर बहुत आश्चर्य हुआ कि वह अकेले कैसे वहाँ तक पहुँच गई हैं। तब विमला जी ने कहा, "लो, इसमें कौन सी बड़ी बात है, मुझे तो बापू हरनाम जी यहाँ तक छोड़ गये हैं।" निः सन्देह बापू हरनाम जी की कृपा का कोई अन्त नहीं है।

दिल्ली स्थित ढक्का मन्दिर में अनेक भक्त बापू जी को माथा टेकने आते हैं, संगत की सेवा करते हैं और ध्यान उपासना करके अपना जीवन सफल करते हैं। बापू जी के एक ऐसे ही परम भक्त हैं सरदार

इकबाल सिंह मुटनेजा जो दिल्ली स्थित बापू हरनाम जी के मन्दिर में रोजाना हाजिरी लगवाते हैं। एक बार जब इकबाल सिंह जी मन्दिर की ऊपरी मंजिल में बापू हरनाम जी को माथा टेक रहे थे तब इकबाल सिंह जी को बापू हरनाम जी के स्वरूप में से आवाज आई कि आज मन्दिर में माता स्वयं एक कंजक रूप में पधारेंगी और फूल उठाएंगी। आप उन्हें रोकना नहीं। जैसे ही उन्होंने बापू जी को प्रणाम कर सिर ऊपर उठाया वैसे ही उन्हें एक कंजक खड़ी दिखी।

इकबाल सिंह जी उस कंजक को करीब दस-बारह दिनों से देख रहे थे। वह कन्या सरकारी स्कूल की वर्दी पहने वहाँ आती और बापू जी को प्रणाम कर उन्हें चौर कर वहाँ से चली जाती। इकबाल सिंह जी ने देखा कि उस कंजक ने पहले ही उनके थैले में से कुछ फूल निकाल कर बापू जी को चढ़ा दिए हैं। जब उस कन्या ने दूसरी बार फूल लेने के लिए हाथ बढ़ाया तो अनजाने में ही इकबाल सिंह जी ने हाथ से मनाही का इशारा कर दिया। ऐसा करते ही वह एकदम जड़वत् हो सुन्न हो गए। उन्हें बहुत अधिक

अपराधबोध हुआ कि यह उनसे कैसा अपराध हो गया है। इसके बाद उन्होंने देखा कि वह कन्या राम दरबार में माथा टेक कर वापिस जा रही है।

फिर दूसरे दिन इकबाल सिंह जी ने उसी कन्या को दुबारा देखा। वह कन्या सुबह-सुबह दरबार आई और बापू हरनाम जी और बापू

श्रद्धाराम जी के स्वरूपों को चौर कर के चली गई। जब वह कन्या सीढ़ियां उतर कर जाने लगी तब इकबाल सिंह जी भी उसके पीछे हो लिए परन्तु शीघ्र ही वह कन्या उनकी आँखों से ओझल हो आलोप हो गई। देखने में उस कन्या की आकृति हिन्दोस्तानियों के बच्चों सदृश प्रतीत होती थी।

इकबाल सिंह जी ने मन्दिर के आस-पास हिन्दोस्तानियों के जितने भी घर थे उन घरों से उस कन्या के विषय में पता किया परन्तु कहीं भी उस की कोई जानकारी प्राप्त न हो सकी। इस के बाद तीन महीने बीत गए परन्तु वह कन्या नज़र नहीं आई। इस बीच बापू हरभगवान जी महाराज जी दिल्ली आए। इकबाल सिंह उनसे मिले और पूछा कि वह अपनी भूल का प्रायश्चित् कैसे करें। बापू जी ने कहा कि आप माता के मन्दिर में फूलों के हार लगा दें। आप पर माता की कृपा अवश्य होगी। इस बात को भी तीन-चार महीने बीत गए।

इकबाल सिंह माता के दर्शनों के लिए बेचैन थे। उन्होंने नन्दाचौर बापू जी को फोन किया और पूछा कि अब फिर किस प्रकार उन्हें माता के दर्शन प्राप्त हो सकते हैं। बापू जी ने कहा कि आप आज रात बापू जी का ध्यान कीजिए, आप पर उनकी कृपा अवश्य होगी। यह सुन कर इकबाल जी रात को 12 बजे स्नानादि कर के बापू जी के ध्यान में बैठ गए। वह साढे बारह से डेढ़ बजे तक ध्यानस्थ रहे परन्तु उन्हें कोई

सन्देश प्राप्त नहीं हुआ। तत्पश्चात् जब वह सुबह मन्दिर में गये और बापू हरनाम जी को माथा टेकने के लिए सिर झुकाया तब उन्हें बापू जी की अवाज एक बार फिर से सुनाई पड़ी। बापू जी कह रहे थे-"आज माता रानी कंजक रूप में आएंगी।" जब इकबाल सिंह जी ने सिर ऊपर उठाया तब वहाँ 5-6 वर्षीय छोटी कन्या खड़ी थी। वह कन्या बापू श्रद्धाराम जी को माथा टेक रही थी। इकबाल सिंह जी ने पूरे भक्ति-भाव से उस कन्या के चरण स्पर्श किए और उसे फूल भी दिए। उस कन्या ने फूल ले कर बापू हरनाम जी और बापू श्रद्धाराम जी के चरणों में चढ़ा दिए और फिर बापू जी को चौर किया। उस कन्या का चौर करने का अन्दाज़ ठीक पहले वाली कन्या के समान था।

इसके उपरान्त वह कन्या नीचे चली गई और अपनी समवय लड़कियों के संग खेलने लगी। इकबाल सिंह जी ने देखा कि उन तीनों कन्याओं के साथ और कोई भी नहीं था। वे कन्यायें एक दूसरे की गोदी में सिर रख कर खेल रही थी। इकबाल सिंह जी जैसे ही शीघ्रतापूर्वक सीढ़ियां उतर कर नीचे आए वे तीनों कन्याएं बाहर की ओर चलने लगी। थोड़ी देर तक तो वे सड़क पर जाती दृष्टिगोचर होती रहीं परन्तु बाद में लोप हो गई। इस के बाद जब इकबाल सिंह जी ने नन्दाचौर बापू जी को फोन किया तो बापू जी ने कहा कि माता रानी आप को दर्शन दे गई हैं। आदि शक्ति जगदम्बा जो सर्व प्राणियों में शक्ति, माता और दया के रूप में विद्यमान हैं, ऐसी दिव्य शक्ति और बापू हरनाम जी की

अलौकिक लोला के साक्षी बनने का सौभाग्य इकबाल सिंह जी को प्राप्त हुआ। जब किसी सच्चे भक्त की आराधना स्वीकार होती है तब ही वह इस प्रकार की दिव्य ईश्वरीय लीलाओं का साक्षी बन सकता है। जगजननी ने अपनी इस पवित्र और सुन्दर लीला के लिए इकबाल सिंह मुटनेजा जी को चुना, यह उनका परम सौभाग्य है।

बापू हरनाम जी ने आगे भी कई बार इकबाल सिंह मुटनेजा जी पर आए संकट को टाला। 16 नवम्बर 2009 को दिल्ली ढक्का मन्दिर में बापू हरनाम जी का जन्मदिन मनाया जा रहा था। इकबाल सिंह जी भी वहाँ उपस्थित थे। सुबह 7:50 का समय था। इकबाल सिंह जी ऊपर बापू हरनाम जी को प्रणाम कर रहे थे। नीचे अखण्ड पाठ चल रहा था। अचानक इकबाल सिंह जी को अधरंग हो गया। वह नीचे

गिर गए। उनका शरीर शक्तिहीन हो गया। उनकी गरदन से नीचे का पूरा शरीर अशक्त हो गया। उस समय ऊपर कोई नहीं था।

अपनी यह दुर्दशा देख इकबाल सिंह जी बहुत ही व्यथित हुए और रो-रो कर बापू हरनाम जी से प्रार्थना करने लगे, "बापू जी, मुझसे ऐसा क्या अपराध हो गया कि मेरी दशा हाथ-पैर विहीन भिखारियों के सामान हो गई है।" अभी उन्हें प्रार्थना करते हुए थोड़ा समय ही व्यतीत हुआ था कि उनके अंगों में चेतना वापिस लौटने लगी और धीरे-धीरे करने पर यह खड़े हुए। लगभग 10 मिनटों में यह सब कुछ

घट गया। फिर उन्होंने नीचे जा कर बापू जी को प्रणाम किया। 9:30 बजे भोग भी पड़ गया। इस सबके बाद वह घर आये और बापू जी को नन्दाचौर फोन किया। बापू जी ने कहा कि बापू हरनाम जी की कृपा से आप पर आया संकट टल गया है।

ठीक इसी प्रकार की घटना कुछ महीनों पश्चात् इकबाल सिंह जी के साथ नन्दाचौर दरबार में घटी। इकबाल सिंह जी सुबह हवन घर में हवन पर गये। तब रात्रि में खूब अन्धेरी और वर्षा हो कर हटी थी। हवन की समाप्ति पर जैसे ही इकबाल सिंह जी ने नीचे जाने के लिए पहली सीढ़ी पर पाँव रखा वैसे ही उनका पैर फिसल गया और वह फिसलते हुए आखिरी सीढ़ी पर घिसटते आए और दीवार से जा टकराए। इकबाल जी वहीं बैठे ही रह गए और सोचने लगे कि अवश्य ही मेरी हड्डियां टूट गई होंगी। उन्हें असहनीय पीड़ा हो रही थी। वे किसी प्रकार घिसटते हुए वहाँ आए और खम्बे का सहारा ले कर बैठ गए। वह प्रार्थना में हाथ भी नहीं उठा पा रहे थे। उन्होंने मन ही मन प्रार्थना की कि हे बापू जी। मुझसे मनसा, वाचा, कर्मणा ऐसा क्या पाप घटित हुआ कि मेरे साथ यह घटना घटी।

इकबाल सिंह जी का ऐसा सोचना ही था कि उनके हाथों में जान आ गई। वह एक दम ठीक हो गए। इतनी देर में ऊपर से सच्चखंड से बापू जी आ गये। इकबाल सिंह जी ने बापू हरभगवान जी को यह घटना

सुनाई तो बापू जी ने कहा, "कष्ट था, टल गया।" बापू हरनाम जी, बापू ओम जी की कृपा से उन पर आया संकट अति शीघ्र टल गया। संत कृपा ऐसी ही होती है। विगत जन्मों के संचित दुष्कर्मों का प्रभाव जब प्रकट हो उठता है तब उसका परिणाम किसी भी समय घातक रूप में सामने आ जाता है। यदि व्यक्ति पर संत कृपा हो जाये तो बहुत थोड़े में ही वह कर्म समाप्त हो जाता है। मनुष्य को चाहिए कि वह न तो अतीत के अनुचित कर्मों की प्रेरणाओं से प्रभावित हो और न ही अज्ञानता जनित बहकावों से।

वैसे तो जब भी मनुष्य पर इस प्रकार की संत कृपा होती है वह यह सोचने पर अवश्य ही विवश हो जाता है कि भविष्य में उसे इस प्रकार के कर्म-बन्धन में पड़ना ही नहीं है, उसे नई कर्म-श्रृंखला को जन्म देना ही नहीं है। जब मनुष्य इस प्रकार सोचना आरम्भ कर देता है तब गुरु कृपा से उसके चित्त की शुद्धि अवश्य ही होती है और फिर अति शीघ्र उसका आध्यात्मिक उत्थान भी हो जाता है।

बापू हरनाम जी की लीलाएं अत्यधिक सुमधुर और सरस होती हैं। अपने भक्तों के उत्थान के लिए बापू जी जिन घटनाक्रमों को जन्म देते हैं और जिस प्रकार अपने भक्तों से कार्य सम्पादित करवा, उन्हें यश और सम्मान देते हैं, वह यह सिद्ध करता है कि बापू जी अपने प्यारे भक्तों के लिए अनोखी और विलक्षण लीलाएं रच उन्हें नायक बना देते

हैं। प्रस्तुत दृष्टान्त एक ऐसे भक्त का है जिसे अहर्निश बापू जी का ही ध्यान है, जिसकी गुरु-भक्ति अद्वितीय है, जिसके चिन्तन में केवल और केवल बापू जी का ही वास है, उस भक्त का नाम है- सौरभ चुघ । सौरभ चुघ पर बापू हरनाम जी की सदैव ही असीम कृपा रही है।

17 सितम्बर 2011 को सौरभ बापू हरभगवान् जी के दर्शन करने नन्दाचौर गए। बापू जी ने सौरभ को कहा कि दिल्ली ढक्का मन्दिर में होने वाले यज्ञ में इस बार पर्दे पर बापू हरनाम जी की कथा दिखानी है और यह कार्य तुम्हें करना होगा। बापू जी ने सौरभ को पूरी फिल्म की रूप-रेखा समझाई और कहा कि तुम इस फिल्म पर कार्य शुरु करो। सौरभ ग्राफिक्स और एनिमेशनस का कार्य करते हैं और फिल्म बनाने से सम्बन्धित उन्हें कोई जानकारी नहीं थी। सौरभ मन में सोचने लगे कि वह किस प्रकार यह कार्य सम्पन्न कर पाएंगे। बापू जी से विदा ले कर सौरभ दिल्ली आ गए। 23 सितम्बर तक सौरभ ने

कोई कार्य नहीं किया था क्योंकि उन्हें ऐसा लग रहा था कि इतने कम समय में आखिर किस प्रकार फिल्म बन सकती है।

23 सितम्बर को शुक्रवार को बापू हरभगवान् जी दिल्ली पहुँच गए। सौरभ बापू जी से मिले और बापू जी ने उनसे पूछा, 'क्या फिल्म तैयार हो गई?' सौरभ ने उत्तर दिया, 'बापू जी, कोई काम नहीं हुआ। दो-तीन दिन में फिल्म कैसे बनेगी?' बापू जी ने कहा, 'एक रात जाग

लेना, तीन दिन में बन जाएगी।' फिर बापू जी ने कहा, 'बापू हरनाम जी कह रहे हैं कि फिल्म बनेगी। तुम नहीं बनाओगे, वे स्वयं ही बनाएंगे।'

बापू जी से आशीर्वाद प्राप्त कर सौरभ अपने ऑफिस चले गए, वहाँ बैठ कर पटकथा लिखी, सीन निर्धारित किए और अपनी मौसी श्रीमती चर्चा को फोन किया कि फिल्म के लिए भजन तैयार करो। चर्चा जी बहुत अच्छी कवयित्री हैं, उन्होंने कुछ ही घण्टों में छः पद्म लिख कर फोन पर ही सौरभ को लिखवा दिए। सौरभ ने सुबह सारी पटकथा बापू जी को दिखाई। बापू जी ने कहा, 'बहुत काम हो गया, अब तुम आराम करो।' सौरभ बोला, 'बापू जी, फिर काम कैसे होगा।' बापू जी ने कहा, 'काम तो बापू जी कर रहे हैं। तुम सो जाओ, आराम करो।' अगले दिन शनिवार शाम को बापू जी ने सौरभ को ध्वनि-मुद्रण (साउंड रिकार्डिंग) के लिए स्टूडियो भेजा।

बापू जी ने सौरभ के साथ कुछ भक्त लड़कों काकू, लवी, साहिल, हनी, रवीन्द्र और तरसेम को भेजा। चौधरी अविनाश चंद्र और उनके सुपुत्र राजू भी स्टूडियो गए। पूरी पटकथा की रिकार्डिंग में दो घण्टे लगे। काकू और लवी ने भजन गाए। इसके बाद सौरभ ने अपने ऑफिस आ कर सभी रिकार्डिंगस को क्रमबद्ध कर दिया। अगले दिन रविवार को बापू जी ने सौरभ को रिकार्डिंगस में हुई गलतियों को स्टूडियो से ठीक करवा कर लाने के लिए कहा। अभी तक जो

घटनाक्रम घट रहा था उससे सौरभ को यही लग रहा था कि शायद पर्दे पर बापू जी के स्वरूप दिखाए जायेंगे और पीछे से भजन आदि चलेंगे। तब तक सौरभ यह नहीं जानता था कि एक बहुत बड़ा आश्चर्य उसकी प्रतीक्षा कर रहा है। बापू जी ने कहा कि यह बापू हरनाम जी का कार्य है। इसके लिए कैमरे चलेंगे, शूटिंग होगी और पूरी फिल्म बनेगी।

सोमवार को बापू जी ने सौरभ के घर उन लड़कों को भेज दिया जिन्होंने स्टूडियो में रिकार्डिंग की थी। इसके अतिरिक्त सौरभ ने एक अन्य भक्त करण और उसकी माँ निशा को भी शूटिंग के लिए बुला लिया। सौरभ के घर पर ही सारे लड़के तैयार हो गए। सौरभ की पत्नी मेघा, उसकी पुत्री निहारिका और उसका भाई साहिल भी अपना-अपना रोल करने के लिए तैयार हो गए। शीघ्र ही सारी टीम शूटिंग स्थल के लिए चल पड़ी। पूरी टीम में किसी भी व्यक्ति को अदाकारी का कोई पूर्व अनुभव नहीं था।

बापू जी का नाम ले कर टीम ने एक गाँव में जा कर शूटिंग के लिए उपयुक्त स्थल खोजना शुरु कर दिया। बहुत खोजने पर भी उन्हें पटकथा के अनुसार कोई भी उपयुक्त स्थल नहीं मिला। जब वे पंचायत के सीन के लिए पेड़ ढूँढ रहे थे तभी अचानक उन्हें एक लड़का मिला जो उन्हें अपने गाँव में स्थित एक मन्दिर में ले गया। मन्दिर के अन्दर वैसा ही एक पेड़ था जैसा वो ढूँढ रहे थे और मन्दिर के पास ही एक

नहर भी थी। सौरभ और उसकी टीम को 20-25 दृश्यों के फिल्मांकन के लिए सारे स्थल वहीं मिल गए।

इतनी देर में बापू जी का फोन आ गया कि हरनाम जी का अभिनय कर रहे लड़के के हाथ में खूँटा पकड़ा दो। उस मन्दिर में कोई खूँटा नहीं था। वहाँ दो लड़के माथा टेकने आए थे। जब सौरभ ने उनसे पूछा कि क्या किसी खूँटे का प्रबन्ध हो सकता है तो वे लड़के तुरन्त कहीं जा कर खूँटा ले आए। इस

प्रकार शूटिंग के लिए जिस-जिस वस्तु की आवश्यकता थी उन लड़कों ने सभी वस्तुओं का प्रबन्ध कर दिया। फिल्म में एक दृश्य था जिसमें आँधी, बिजली और वर्षा होती हुई दिखानी थी।

बापू हरनाम जी की ऐसी लीला हुई कि बिलकुल ठीक-ठाक मौसम होते हुए भी अचानक आँधी आ गई और जोरों से बिजली कड़कने लगी। उस दृश्य का फिल्मांकन बहुत ही स्वभाविक बन पड़ा। सौरभ फिल्म की शूटिंग के लिए एक घण्टे की कैसेट ले कर गए थे। कैसेट पूरी होने में केवल दो मिनट ही बचे थे और अभी हरिद्वार के दृश्य का फिल्मांकन होना शेष था। बापू जी की कृपा से वह दृश्य बहुत ही प्रभावशाली बन पड़ा और फिल्म पूरी हो गई।

तत्पश्चात् पूरी टीम वापिस घर आ गई और मंगलवार को सभी

ने शोभा यात्रा में भाग लिया और रात को 11:30 बजे मन्दिर में महाआरती देखी। इसी बीच सौरभ फिल्म का सम्पादन करता रहा। महाआरती के बाद बापू जी ने सौरभ से पूछा, "बन गई फिल्म।" सौरभ ने कुछ नहीं कहा और बापू जी को प्रणाम किया। बापू जी कहा, "फिल्म बनेगी हम सब देखेंगे।" अगले दिन बुधवार को सुबह 6:00 बजे से 12:00 बजे तक सौरभ ने फिल्म का सम्पादन-कार्य किया। इसी बीच फगवाड़ा से अमित शर्मा भी दिल्ली पहुँच गए और फिल्म के कुछ महत्त्वपूर्ण दृश्यों की शूटिंग की। दोपहर को 1:00 बजे सौरभ बापू जी के पास गए और कहा कि बापू जी, अभी 7-8 घण्टे का कार्य शेष है। बापू जी ने कहा, "हमने तीन बजे फिल्म दिखानी है। तुम ऑफिस जाओ और फिल्म बना कर ले आओ।"

सौरभ ने बापू जी की आज्ञा का पालन किया और फुर्ती से कई कम्प्यूटर चला कर कार्य सम्पन्न किया। बापू हरनाम जी की कृपा से जो कार्य 7-8 घण्टे का था, वह कार्य केवल एक घण्टे में ही पूरा हो गया। सौरभ ने 02:15 बजे बापू जी को फोन किया कि फिल्म का नाम क्या रखना है। बापू जी ने कहा, "आत्मकथा बापू हरनाम जी महाराज", उसके बाद सौरभ गाड़ी में फिल्म की फाईल एक्सपोर्ट करने लगे और मन्दिर के लिए चल पडे । ठीक 3:00 बजे वह मन्दिर पहुँच गए और थाडी देर में समस्त

संगत ने बापू हरनाम जी के पावन जीवन पर आधारित वह फिल्म देखी। बापू जी की वह फिल्म देख कर समस्त

संगत भाव-विभोर हो उठी और बापू हरनाम जी के नाम के जयकारे लगाने लगी। इस प्रकार बापू हरनाम जी की कृपा से एक असम्भव दिखने वाला कार्य बहुत ही खूबसूरत तरीके से सम्पन्न हुआ और सौरभको यह अनुभव हुआ कि बापू जी का वरद्-हस्त उस पर सदा-सदा मौजूद है।

बापू हरनाम जी सदैव अपने भक्तों के सर्वतोमुखी कल्याण के लिए तत्पर रहते हैं। बात चाहे लौकिक उत्थान की हो अथवा आध्यात्मिक विकास की, बापू जी की कृपा उनके भक्तों पर बनी ही रहती है। एक बार जब दिल्ली निवासी चौधरी अविनाश चन्द्र ने बापू हरनाम जी की कृपा से दो फलैट बनाए तब उन्होंने अपने घर का मुहूर्त किया। मुहूर्त से एक रात्रि पूर्व अविनाश जी को आभास हुआ कि बापू हरनाम जी उनके फलैट नं 259 और 303 में गए और पानी के छींटें दिए और पूरे घर में चक्कर लगाया, रक्षा की और अपने चरण कमलों से घर को पवित्र किया। ऐसे महान् गुरु सदा-सदा वन्दनीय हैं जो प्रति पल अपने प्रिय भक्तों के साथ रह, उनका माता-पिता से भी अनन्त गुना अधिक ध्यान रखते हैं।

ऐसे महान् गुरु अपने शिष्यों का भार स्वयं ही वहन करते हैं। अपने शिष्यों को प्रत्येक प्रकार के सांसारिक प्रलोभनों से उबार कर ईश-साम्राज्य में ले जाने के लिए वह सदा प्रस्तुत रहते हैं। ऐसे गुरु की

करुणा के विषय में कहा गया है-

करुणाखड्गपातेन छित्त्वा पाशाष्टकं शिशोः ।

सम्यगानन्दजनकः सद्गुरूः सोडभिधीयते ।।

अर्थात करुणा रूपी तलवार के प्रहार से शिष्य के आठो पाशों को काट कर निर्मल आनन्द देने वाले को सद्गुरु कहते हैं।

बापू हरनाम जी ऐसे ही सद्गुरु हैं जिन्होंने अपने भक्तों को अक्षय आनन्द का बहुमूल्य खजाना दिया है। बापू जी के परम प्रिय शिष्य बापू श्रद्धाराम जी ने बापू हरनाम जी की पुण्य स्मृति में ढक्का, दिल्ली-9 में एक भव्य मन्दिर का निर्माण करवाया है। मन्दिर का नाम "श्री ओम नारायण हरनाम जी सत्संग सभा" है। इस मन्दिर को बनाने के लिए श्री हंसराज नागपाल और उनकी पुत्री राजरानी जी ने नागपाल जी के पोते इन्द्रजीत के जन्म पर बापू श्रद्धराम जी से प्रार्थना की थी कि ढक्का दिल्ली में बापू हरनाम जी का एक मन्दिर बनना चाहिए।

उनकी प्रार्थना पर 1952 में बापू श्रद्धाराम जी ने अपने कर कमलों द्वारा यहाँ एक 'ऊँ' के झण्डे के स्वरूप में कल्प-वृक्ष की स्थापना की। उनका वरदान है कि यह झण्डा बापू ओम जी और बापू हरनाम जी का निशान है। जो भी श्रद्धालु भक्त इसके तले आ कर प्रार्थना करेगा, उसकी मनोकामना पूरी हो जायेगी। यह झण्डा कामधेनू है, चिन्तामणि है, कल्प-वृक्ष है। इस विषय में एक और बात

उल्लेखनीय है कि इससे पहले भी एक बार जब बापू जी ढक्का आए हुए थे और कार में बैठ कर एक कच्ची सड़क से गुजर रहे थे तब उनके साथ बैठे बापू हरनाम जी के एक भक्त रामलुभाया जी ने एक स्थान को दिखाते हुए कहा कि यहाँ बापू हरनाम जी का मन्दिर बनना चाहिए। उस स्थान को देखते ही बापू श्रद्धाराम जी ने कार रुकवाई और अपने जूते उतार कर प्रार्थना करते हुए कहा कि यह स्थान तो बापू जी की प्राचीन तपोस्थली है। बापू जी का मन्दिर यहीं बनेगा। कालान्तर में नागपाल आदि भक्तों के कहने पर बापू श्रद्धाराम जी ने उसी स्थान पर मन्दिर का निर्माण करवाया।

इसमें कोई संशय नहीं कि जिस किसी भी भक्त ने झण्डा साहिब पर प्रार्थना की है उसकी प्रार्थना तुरन्त स्वीकृत हुई है। यहाँ यह बात विशेष तौर पर वर्णन योग्य है कि बापू हरनाम जी ने जो अमूल्य

निधि पूरे विश्व को दी, जिसके आविर्भाव से समूचा ब्रह्माण्ड पवित्र हो गया, जिसकी करुणा और कृपा को आज भी इस सृष्टि का कण-कण अनुभव करता है वह अद्भुत, अद्वितीय प्रकाश-पुँज हैं-बापू श्रद्धाराम। भगवान् शिव कहते हैं-

नित्यं ब्रह्म निराकारं निर्गुणं बोधयेत् परम् । भासयन् ब्रह्मभावं च दीपो दीपान्तरं यथा ॥

अर्थात गुरुदेव वे हैं जो नित्य, निर्गुण, निराकार, परमब्रह्म का बोध देते हुए, जैसे एक दीपक दूसरे दीपक को प्रज्ज्वलित करता है वैसे ही शिष्य में ब्रह्म-भाव को प्रकट करते हैं।

बापू हरनाम जी ने अपने अति प्रिय शिष्य श्री श्रद्धाराम जी में अपनी कृपा से ज्ञानाग्नि प्रज्वलित की और उन्हें अपना ही रूप बना लिया। यह रूपान्तरण किस प्रकार हुआ, इसकी परम सुन्दर कथा का विवेचन हम अगले अध्याय में करेंगे।

।। हरि ॐ ।।

परम वन्दनीय बापू श्री हरभगवान जी महाराज श्री ओम नारायण हरनाम जी दरबार, ढक्का, दिल्ली में

बापू जी का पावन कमण्डल एवं खूँटा

ॐ

अथ बापू श्री श्रद्धाराम

-उपाख्यानम्

ॐ

अथ बापू श्री श्रद्धाराम

- उपाख्यानम्

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरण व्रज। अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

भगवान् का यह दिव्य उद्घोष युग-युगान्तर से मनुष्य के लिए सम्बल का एक शक्तिशाली आधार रहा है। साधारणतया मनुष्य जाने-अनजाने में तब तक पाप करता रहता है जब तक उसकी आत्मा में यह भाव सुप्रतिष्ठित नहीं होता कि वह केवल देह नहीं है और इसलिए देहात्म बुद्धि से ऊपर उठ कर उसे स्वयं को जानने की यात्रा का आरम्भभी कभी न कभी करना ही है। जब मनुष्य में इतनी चेतना आ जाती है तब उसे अपने किए भयंकर पापों का स्मरण भी हो जाता है। तब उसे यह एहसास होते देर नहीं लगती कि अपने विगत पाप-कर्मों की अग्निवर्षा में जल कर वह दग्ध हो जायेगा।

ऐसे समय में जब कि मनुष्य किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो दिग्भ्रमित हो जाता है ईश्वर का यह दृढ़ उद्घोष उसके मन में जबरदस्त विश्वास उत्पन्न कर देता है। भगवान् कहते हैं कि सम्पूर्ण धर्मों अर्थात् कर्तव्य

कर्मों को त्याग कर तू केवल एक मुझ सर्वशक्तिमान्, सर्वाधार परमेश्वर की शरण में आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर।

पाठकवृन्द, इस में रत्ती भर भी संशय नहीं कि प्रत्येक युग, काल, देश और स्थान में साक्षात् ईश्वर अपने भक्तों को दिए इस वचन की रक्षा करने अवश्य आते हैं और जब आते हैं तब सारी कायनात जान लेती है कि पापियों का उद्धार करने, अज्ञानता के तम से ज्ञान की प्रखर ज्योति की ओर ले जाने और कण-कण को उस करिश्माई ईश्वरीय उर्जा से परिपूरित करने साक्षात् परमेश्वर का आविर्भाव हो चुका है।

कुछ ऐसी ही अनुभूति जालन्धर के एक ग्राम अट्टी के निवासियों को हुई जब बैसाख 20 प्रविष्टा सं० 1945 को बापू श्रद्धाराम जी के रूप में एक नूरानी जोत का प्राकट्य हुआ। ग्रामवासियों ने देखा कि एक अलौकिक प्रकाश-पुँज से सारा वातावरण एक स्वर्णिम आभा से युक्त हो रहा था जो इस बात का स्पष्ट सन्देश था कि एक महाशक्ति का आविर्भाव हो चुका है और वह शक्ति अपनी चैतन्यता से सभी प्राणियों को अज्ञान-तिमिर से प्रकाश-सिन्धु की ओर परिचालित करने वाली है। श्री गोबिन्द दास और श्रीमती ईश्वर देवी ने स्वयं ईश्वर को पुत्र रूप में प्राप्त करने के लिए बहुत जप-तप किये। उस निर्मल दम्पत्ति की भक्ति से प्रसन्न हो कर ईश्वर ने जो सरकार श्री विग्रह धारण किया उसे

सुनाम मिला' श्रद्धाराम' । रात्रि के साढे ग्यारह बजे जब उस अद्भुत आत्मा का अवतरण हुआ तो देवताओं ने आकाश से पुष्प-वृष्टि की।

ग्रामवासियों को जब पता चला कि गोबिन्द दास जी के घर पुत्र उत्पन्न हुआ है तो सभी ने उन्हें बधाई देते हुए यही कहा कि आपके घर तो प्रभु ने स्वयं अवतार लिया है। उस समय समस्त प्रकृति भी उस स्वर्गिक आनन्द को प्रकट करते हुए सुन्दर लक्षण प्रकट कर रही थी। धीरे-धीरे श्रद्धाराम रूपी ज्ञान-भक्ति कमल खिलने लगा। उस कमल की पंखुरियों के पराग कणों से स्पर्शित वायु में भक्ति और ज्ञान का सौरभ चारों ओर छिटकने लगा।

बाल्यावस्था से ही श्रद्धाराम जी इस संसार से विरक्त थे। पाँच वर्ष की अल्प अवस्था में ही वह घर से निकल कर श्मशान भूमि में आसन लगा कर हरि नाम में लीन हो जाया करते थे। उनका ध्यान इतना गहरा होता कि घंटो बिना खाए-पिए वह उसी अवस्था में बैठे रहते थे। फिर उनकी बड़ी बहिन उन्हें ढूँढ कर लाती और तब सारा परिवार उन्हें भोजन आदि करवा कर बाद में स्वयं तृप्त होता था। जब श्रद्धाराम जी की अवस्था दस वर्ष की हुई तब उनके माता-पिता ने अपने कुल की कोई रीति पूरी करने हेतु उन्हें भिक्षा माँगने के लिए तैयार किया। भिक्षा पात्र हाथ में ले कर श्रद्धाराम जी घर से निकले और दो-चार घरों से भिक्षा प्राप्त कर वहाँ से आगे एक अन्य घर में चले गए। उस घर में एक

खूँखार कुत्ता था जिसने बहुत निर्दयतापूर्वक उन्हें टाँग पर काट कर उसे लहुलूहान कर दिया।

इस घटना से बालक श्रद्धाराम बहुत व्यथित हुए और तुरन्त घर वापिस आ कर भिक्षा पात्र फैंक कर अपने क्रोध का इजहार किया। उन्होंने माँ को अपना घाव दिखाते हुए कहा कि अब भिक्षा माँगने का कार्य मुझ से नहीं होगा। मुझे इस प्रकार खराब हो कर साधु नहीं बनना। श्रद्धाराम जी का हाल देख कर माँ ईश्वर देवी अत्यन्त दुःखी हुई और घाव पर मिर्चे रख कर पट्टी बांध दी। श्रद्धाराम जी ने फिर अपनी मनोस्थिति स्पष्ट करते हुए कहा कि मुझे इस प्रकार की रस्में पूरी कर के कुछ प्राप्त नहीं करना। मुझे भिक्षा माँग कर कोई धन एकत्र नहीं करना है। मेरे जीवन का उद्देश्य तो उस परमात्मा के साथ तार जोड़ कर कण-कण में उसका दर्शन करना है।

एक दस वर्षीय बालक के मुख से इतनी ज्ञान पूर्ण बात निकलना एक ओर ही इंगित करता है कि वह कोई असाधारण आत्मा है जिसे प्रारम्भ से ही अपने जीवन के उद्देश्य का ज्ञान है। उसी उद्देश्य को सामने रख कर श्रद्धाराम जी ने हरि-स्मरण कर कठिन तपस्या करते हुए अपने जीवन के बाईस वर्ष व्यतीत कर दिए। जहाँ साधारण मनुष्य संसारिक विद्योपार्जन करने में अपने जीवन के 20-22 वर्ष लगा देते हैं और ऐसा करने में भी उनका उद्देश्य यही होता है कि विद्यार्जन के उपरान्त धन

कमाया जाए और अपने कुटुम्ब का पालन-पोषण किया जाए वहाँ श्रद्धाराम जी ऐसी भ्रान्तियों से कोसों दूर थे। वह प्रारम्भ से ही यह अच्छी प्रकार जानते थे कि जीवन का एक-एक क्षण कितना बहुमूल्य है और इसलिए ईश्वर प्रदत्त इन कीमती क्षणों का प्रयोग केवल उनकी भक्ति और प्राप्ति में ही लगाना चाहिए। मनसा, वाचा, कर्मणा श्रद्धाराम जी ने अपने इन दृढ़ और सशक्त विचारों को वास्तविकता में कार्यान्वित भी किया। जिन आध्यात्मिक ग्रन्थों का अध्ययन वह करते थे उन ग्रन्थों की केवल पुनरावृत्ति मात्र से ही उन्हें सन्तुष्टि किस प्रकार प्राप्त हो सकती थी। वह तो भाषाई सूत्रों में बद्ध उन अनुभूतियों को साकार कर उन्हें स्वयं अनुभूत करना चाहते थे और इसलिए उन्होंने अपने जीवन का प्रत्येक पल सच्चिदानन्द परमात्मा को प्राप्त करने में लगाने का निश्चय किया। महान् आत्माएं प्रारम्भ से ही यह जानती हैं कि-

अविज्ञाते परे तत्त्वे शास्त्राधीतिस्तु निष्फला । विज्ञातेऽपि परे तत्त्वे शास्त्राधीतिस्तु निष्फला ॥

अर्थात् शास्त्रों का अध्ययन तब तक निष्फल है जब तक परम तत्त्व की प्राप्ति न हो और तब भी निष्फल है जब परम तत्त्व की उपलब्धि हो गई हो।

आदि शंकराचार्य के इस कथन का तात्पर्य यह बिल्कुल भी नहीं

कि शास्त्रों का अध्ययन करना ही नहीं चाहिए वरन् यह है कि समस्त शास्त्र जिस परम तत्त्व या सत्य की ओर बार-बार इशारा करते हैं उस सत्य की अनुभूति की इच्छा के अभाव में केवल मात्र पाण्डित्य प्रदर्शन के लिऐ उन सूत्रों की पुनरावृत्ति करना एकदम व्यर्थ है।

श्रद्धाराम जी भी महान् मनीषियों विरचित ग्रन्थों में निहित सत्य को प्रत्यक्ष अनुभूत करना चाहते थे इसलिए वह जंगल मे जा कर समाधिस्थ हो कर उस अक्षय आनन्द के स्रोत का पान किया करते थे जिसके उपरान्त संसार के सभी आकर्षण स्वभावतः ही फीके और नीरस लगा करते थे। साधु-संतों का संग उन्हें बहुत प्रिय था। जहाँ तक सांसारिक और पारिवारिक उत्तरदायित्वों का प्रश्न है उनमें उन्हें किसी प्रकार की कोई रुचि नहीं थी।

जब माता-पिता ने उनकी इस उदासीन वृत्ति का विवेचन किया तो वे बेहद चिन्ताग्रस्त हो उठे और सोचने लगे कि किस प्रकार उनका चित्त परिवार और संसार में लगाया जाए। बहुत सोच-विचार करने के उपरान्त वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि श्रद्धाराम जी का विवाह कर देना चाहिए, शायद ऐसा करने से उनका मन संसार में रमना आरम्भ हो जाए। ऐसा विचार मन में आते ही श्री गोबिन्द दास और ईश्वर देवी ने श्रद्धराम जी के लिए एक लड़की पसन्द की और उनका रिश्ता पक्का कर दिया। जब यह बात श्रद्धाराम जी को पता चली तो वह बहुत

परेशान हुए। वह सोचने लगे कि गृहस्थी के इस जाल में मुझे नहीं फँसना है। मेरे जीवन का उद्देश्य मुझे एकदम स्पष्ट है। विवाह करके वैवाहिक जीवन जी पाना मुझे तनिक भी अभीष्ट नहीं है। इस प्रकार विचार करते-करते वह घर से भाग कर नन्दाचौर पहुँच गए और बापू हरनाम जी के पास रहने लगे। बापू हरनाम जी उनके मामा थे। बापू जी के मार्गदर्शन में वह भक्ति-पूजा करने लगे। दैवयोग से जिस लड़की से उनका विवाह होना निश्चित हुआ था, उस लड़की की मृत्यु हो गई।

श्रद्धाराम जी के मन में विचार आया कि वह विवाह करने में इच्छुक नहीं थे, कहीं उनकी यह अनिच्छा ही तो उस लड़की की मृत्यु का कारण तो नहीं बनी। उन्होंने अपने मामा बापू हरनाम जी से प्रार्थना की कि मामा जी, आप ही मेरे मन के बोझ को कम करने का कोई उपाय बताएं, कोई ऐसी युक्ति समझाएं जिस से यह बोझ मेरे मन से उतर जाए। इसके साथ ही श्रद्धाराम जी ने बापू हरनाम जी से कहा कि वे कृपा करके उन्हें नाम-दान दें और अपना शिष्य बना लें।

यह सुन कर बापू हरनाम जी ने कहा कि यदि तुम अपने मन का बोझ हल्का करना चाहते हो तो गंगा जाकर राम का नाम लेकर स्नान करो, आठों पहर भगवान् का नाम लो, हाथों से कुछ दान करो और उस लडकी के नाम की पाँच डबकियां भी लगा लेना ताकि उसका भी कल्याण हो जाए। फिर बापू हरनाम जी ने कहा, “यह जो तुमने नाम-

दीक्षा की बात कही है इससे मैं सोच में पड़ गया हूँ। मेरा तुम्हारा मामा-भानजे का रिश्ता है।" यह सुनकर श्रद्धाराम जी ने कहा, "यदि मुझे नाम-दान नहीं मिला तो इस संसार में मेरा जीवन बिल्कुल व्यर्थ है, फिर तो यह जगत् मेरे लिए नरक समान हो जाएगा।" श्रद्धाराम जी ने फिर प्रार्थना करते हुए कहा, "मामा जी, आप मुझे दीक्षित करने की कृपा कीजिए। आप ही मेरा कल्याण कर सकते हैं।"

अपने भानजे का ईश्वर-प्रेम बापू हरनाम जी से छुपा नहीं था। बापू जी जानते थे कि श्रद्धाराम जी की ईश्वर-प्राप्ति के लिए छटपटाहट और बेचैनी बिलकुल सच्ची है। अतैव बापू हरनाम जी ने उनसे कहा, "यदि तुम्हें मुझ से दीक्षित होना है तो यह समझ लेना होगा कि आज से हमारा मामा और भानजे का यह सम्बन्ध समाप्त हो गया। अब हमारे बीच जो सम्बन्ध होगा वह गुरु और शिष्य का शास्त्र मर्यादानुसार दृढ़ सम्बन्ध होगा। यदि तुम्हें यह बात स्वीकार हो तो मैं तुम्हें नाम-दीक्षा दे सकता हूँ।"

बापू हरनाम जी की यह बात सुन कर श्रद्धाराम जी की खुशी का कोई पारावार न रहा। उन्होंने अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने का निश्चय कर बापू हरनाम जी से दीक्षा ली और तुरन्त उस 'नाम' को हृदय में बसा कर अविस्मरणीय तपस्या की। खाने-पीने की कोई सुध न रखते हुए एक गुफा में बैठ कर उस दिव्य नाम की ऐसी अलख लगाई

कि उनकी ईश्वर प्राप्ति का चिर आकांक्षित स्वप्न साकार हो उठा।

दिन-रात समाधिस्थ रह कर उस गुफा में तपस्या करते-करते श्रद्धाराम जी ने आत्म-दर्शन कर लिया और पूर्ण हो गए। बापू हरनाम जी प्रदत्त योग, भक्ति, सेवा, सुमिरन, साधना और उपासना की विधि का श्रद्धाराम जी ने अक्षरशः पालन किया था। अपने गुरु की सेवा में रहते हुए श्रद्धाराम जी ने निष्काम सेवा और साधना का एक ऐसा अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत किया जो शायद ही अन्यत्र देखने को मिले। गुरू आज्ञा शिरोधार्य कर श्रद्धाराम जी कठिन से कठिन कसौटी पर भी खरे उतरे।

पूर्ण विश्वास और श्रद्धा से उन्होंने अपने गुरु का अनुगमन और अनुसरण किया। 27 सितम्बर 1945 को जब बापू हरनाम जी इस अनित्य संसार से विदा ले कर निज स्वरूप में अवस्थान की तैयारी कर रहे थे तब देह-त्याग से पूर्व उन्होंने श्रद्धाराम जी को पास बुला कर उनके सिर पर हाथ रखा और उन्हें पूर्ण बना दिया। बापू हरनाम जी ने श्रद्धाराम जी को 'शहाना योगी' कहा और आदेश दिया कि आज से सारी संगत का उत्तरदायित्व आप का है। इन सब की बागडोर तुम्हारे हाथों में है। बापू हरनाम जी स्वधामगमन से पूर्व श्रद्धाराम जी के रूप में एक ऐसा अनमोल रत्न प्रदान कर गए जिनकी छत्र छाया में नन्दाचौर दरबार वैकुण्ठ धाम सदृश दिव्य लोक बन गया। बापू हरनाम जी के

आशीर्वाद से श्रद्धाराम जी सारी संगत के परम प्रिय बापू श्रद्धाराम बन गए।

महातेजस्वी, महाज्ञानी, महायोगी, चिदम्बरेश, जगत स्वामी बापू श्रद्धाराम जी ने अपनी दिव्य भक्ति, अखण्ड तप और असीम कृपा से नन्दा चौर के कण-कण को ऐसी ओजस्विता से परिपूर्ण किया है जिसके आकर्षण की अप्रतिहत शक्ति आज भी भक्तों को वहाँ खींच लाती है। बापू हरनाम जी के बाद बापू श्रद्धाराम जी सेवा कार्य करते हुए दिन-रात गुरुबाणी का जाप व कीर्तन करने लगे। गुरुबाणी का पाठ करते करते उनका सम्पूर्ण जीवन गुरुबाणी मय ही हो गया था।

बापू श्रद्धाराम जी ने गुरु ग्रन्थ साहिब के 101 पाठ एक टाँग पर खड़े हो कर किए थे। उन्हें सारी बाणी कण्ठस्थ थी। यदि कोई भी उनके सामने बाणी का गलत उच्चारण करता था तो वह तुरन्त उसे सुधार देते थे। प्रत्येक क्षण भगवद् स्मरण में व्यतीत करते हुए बापू जी अपनी दिनचर्या प्रातः ब्रह्म-मुहूर्त में हवन-यज्ञ द्वारा प्रारम्भ करते थे। तत्पश्चात् आसा जी दी वार का कीर्तन, गुरु ग्रन्थ साहिब का पाठ, सुखमनी साहिब का सिमरन एवं भजन-कीर्तन किया जाता था। नन्दाचौर में श्री गुरु ग्रन्थ साहिब के अखण्ड पाठों की परम्परा का प्रारम्भ भी बापू श्रद्धाराम जी ने किया था।

बापू जी निष्काम कर्मयोगी थे। भगवान् कृष्ण के कर्मयोग के उपदेश को बापू जी ने मूर्तिमान रूप प्रदान किया और सम्पूर्ण जीवन संगत की सेवा में लगा दिया। स्वयं आत्म-तत्त्व में स्थित रह कर भी जन-मानस को शिक्षा देने हेतु बापू श्रद्धाराम जी ने जो जीवन-शैली अपनाई वह सही अर्थों में एक स्थित-प्रज्ञ की जीवन जीने की कला है। यह वही शैली है जिसकी विवेचना भगवान् कृष्ण ने गीता के द्वितीय अध्याय में की है।

बापू जी ने जिस प्रकार त्याग और तपस्या को अपने जीवन का आधार बनाया वह अति श्लाघनीय है। बापू जी ने सारा जीवन दरबार का अन्न, जल और नमक तक ग्रहण नहीं किया। बापू जी अपने हाथों से सुरमा बनाया करते थे और उससे प्राप्त आय को ही प्रयोग में लाते थे। उस आय में से भी अधिकाँश दान कर देते थे। बापू जी का वह 'प्रेम-अंजन' सुरमा समाज के लिए ऐसा अनमोल वरदान है जो सभी प्रकार के नेत्र रोगों से पीड़ित लोगों के लिए संजीवनी प्रमाणित होता है।

बापू जी जिस सुरमे का निर्माण करते थे, उसमें डाली जाने वाली जड़ी-बूटियों के विषय में पढ़े वह अपने सेवकों को भी सारी देते थे। विविध प्रकार की बूटियों का रस एकत्र कर वह सुरमे में डालते थे। उक्त सुरमे से सफेद मोतिया जैसी बीमारी भी ठीक होती देखी गई है। प्रेम अंजन सुरमा बनाने के लिए जिन सामग्रियों की आवश्यकता थी,

उनमें से एक थी- गुलाब के फूल। उस समय बापू जी ने कई स्थानों-जैसे जहाँ अब अस्पताल है वहाँ और समाधि-साहिब के आस-पास भी गुलाब के पौधे लगवाए थे और अपने सेवकों को उन फूलों को तोड़ने की विधि भी बताई थी। वह अपनी छड़ी से टहनी को खींचते और एक भी पत्ती को क्षति पहुंचाए बिना पूरे के पूरे गुलाब के फूल को तोड़ कर टोकरी में डाल लेते थे। इस प्रकार उन्होंने यह शिक्षा दी कि प्रकृति को बिना नुकसान पहुंचाए किस प्रकार रोग निवारक औषधि के रूप में उसका प्रयोग किया जाता है।

बापू जी ने संगत के निवास के लिए सराय का निर्माण करवाया। जिस समय संगत के लिये सराय का काम चल रहा था उस समय बापू बद्धाराम जी स्वयं मजदूरों के साथ बैठ कर रोड़ी कूटा करते थे। बापू जी की कार्य करते देख कर सारी संगत भी पंक्तिबद्ध हो खड़ी हो जाती थी और ईंट पर ईट एक दूसरे

को पकड़ाती जाती थी। पंक्ति के अन्तिम छोर पर बापू जी स्वयं हाजिर रहते और ईंट पकड़ कर निर्माण कार्य के लिए आगे देते रहते। सराय की एक-एक ईंट को बापू जी का पावन स्पर्श प्राप्त है। नौजवानों से बढ़ कर चुस्ती-फुर्ती दिखाते हुए बापू जी सेवा-कार्य में लगे रहते थे।

कपड़ों पर मिट्टी गिर जाने पर कहते कि यह तो देवता आकाश से पुष्प वर्षा कर रहे हैं। यह मिट्टी नहीं केसर का तिलक समझो। वह यह

भी कहा करते थे कि भविष्य में संगत बढ़ेगी और तीन-चार सराय भी कम पड़ेंगी। सदैव ब्रह्मज्ञान की मस्ती में रहने वाले बापू जी ऐसा करके संगत को यह प्रेरणा दिया करते थे कि आंतरिक ब्रह्मज्ञान की अनुभूति में रहने का यह अर्थ नहीं कि हम अपने कर्त्तव्य पालन से च्युत हो जायें।

बापू श्रद्धाराम जी युगद्रष्टा थे। वह जानते थे कि मानवीय व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए शिक्षा का प्रचार होना बेहद आवश्यक है। इसलिए उन्होंने लड़कियों की शिक्षा के लिए मन्दिर की ओर से एक हाई स्कूल खोला जिसमें उनकी निः शुल्क शिक्षा का प्रबन्ध किया गया। आज इस स्कूल के साथ ही लड़कियों की उच्च शिक्षा के लिए एक डिग्री कॉलेज भी चलाया जा रहा है। इसके साथ ही छोटे बच्चों के लिए प्राथमिक विद्यालय भी चला रहा है।

बापू जी समाज में व्याप्त कुरीतियों से अनभिज्ञ नहीं थे। उन्होंने दहेज-प्रथा का पूर्ण रूप से उन्मूलन किया। बापू जी ने दरबार में सवा रुपये में विवाह कार्य कराने की प्रथा का शुभारम्भ भी किया। वह प्रथा आज भी दरबार में चलती आ रही है। असंख्य कन्याओं का विवाह नन्दाचौर दरबार में बहुत ही सुन्दर तरीके से सवा रुपये में सम्पन्न हुआ है। इसके अतिरिक्त जातिगत भेदभाव मिटा कर समाज में समानता का भाव लाने के लिए बापू जी ने दरबार में लंगर की प्रथा चलाई जहाँ आज तक समाज के प्रत्येक वर्ग के छोटे, बड़े, अमीर, गरीब एक ही स्थान

पर बैठ कर एक जैसा ही भोजन करते हैं।

बापू जी ने दरबार के कार्यों को सुचारु रूप से चलाने के लिए धर्म अर्थ ट्रस्ट भी बनाई जिसके सदस्य बापू जी की इच्छानुसार ट्रस्ट का कार्यभार संभालते हैं। दरबार की सेवार्थ जितने भी कार्य होते हैं वह सब उसी ट्रस्ट के सदस्यों की देख-रेख में होते हैं। भक्ति-रस के माधुर्य को जन-साधारण में प्रवाहित करने के लिए बापू जी ने कीर्तन के लिए प्रेम-पार्टी भी बनाई। माघ के पवित्र महीने में जनता को ईशानुकम्पा का पात्र बनाने हेतु बापू जी ने 'माघ महात्म' शुरु किया जिसमें पूरा महीना भगवङ्कथा कही जाती थी।

माघ महात्म अर्थात् माघ के पवित्र महीने में ईश्वर की दिव्य कथायों के गुणगान करने का अतिपावन मास, बापू जी स्वयं इस माह होने वाले भजन-कीर्तन में अति उत्साह से सम्मिलित होते थे। भजन-सन्ध्या में श्रद्धालु-जन भाव-विभोर हो कर बापू जी के पावन गुणों का सुन्दर गान करते थे। प्रीतम चंद जी वाक् निकालते और ज्ञानी सोहन सिंह जी उसकी व्याख्या करते थे। इस प्रकार माघ महात्म के साथ-साथ बापू जी ने गुरु रविदास जी का जन्मदिन मनाने के लिए भी नन्दाचौर की जनता को जागृत किया। आज भी भक्त जन दूर-दूर से आ कर माघ महीने में अपनी हाजिरी लगवाते हैं और बापू जी के कृपा-पात्र बनते हैं।

निष्काम कर्म, निष्काम सेवा और निष्काम भक्ति में विश्वास रखने वाले बापू श्रद्धाराम जी ने अपने भक्तों के लिए जो लीलाएं की और आज तक कर रहें हैं वे बेहद अद्भुत और दिव्य हैं। बापू श्रद्धाराम जी ने अपने सुन्दर नाम के बिलकुल अनुरूप ही भक्तों में ऐसी अखण्ड़ श्रद्धा का संचार किया है जिससे उनका जीवन पूर्णतया श्रद्धामय हो गया है। बापू श्रद्धाराम जी का नाम श्रद्धा का पर्याय ही नहीं वरन् उसका साकार रूप ही हो गया है। बापू श्रद्धाराम जी में विश्वास रखने वाले भक्त-जन यह भली भान्ति जानते हैं कि-

तीरथ गए ते एक फल सन्त मिले फल चार। सत् गुरु मिले तो अनन्त फल कहे कबीर विचार ।।

बापू जी की प्यारी और दुलारी संगत को यह ज्ञान है कि बापू श्रद्धाराम सदृश महागुरु के श्रीचरणों का आश्रय लेने पर तीनों लोकों में ऐसा कुछ नहीं जो प्राप्त न हो सके। किसी शब्द-चित्र में इतनी ताकत कहाँ जो बापू श्रद्धाराम जी की गौरव-गाथा का पूर्ण गान कर सके। उनकी लीलाओं का रहस्य कौन समझ सकता है और फिर कहने की तो बात ही क्या है? बापू श्रद्धाराम जी की महिमा अपरिमेय है, अकथनीय है शब्दातीत है। दया इतनी कि भक्तों के सम्पूर्ण दोषों और पापों का पल में नाश कर उन्हें सर्वस्व प्रदान कर दे, तेज इतना कि सूक्ष्म से सूक्ष्मतम पाप-समूहों के सामने आते ही वे पाप स्वयमेव नष्ट हो जाएं और

शक्ति ऐसी कि विधाता के लेख को भी बदल कर भक्त की बिगड़ी तकदीर को क्षण में संवार दें।

आज के अति भौतिकवादी युग में जहाँ व्यक्ति विश्वास और श्रद्धा की अपेक्षा संशय और अविश्वास को अधिक प्रश्रय देता है, जहाँ ईश्वर और संतों के चमत्कारों को तथाकथित वैज्ञानिक और बौद्धिक गवेषणाओं से निरस्त करने के कुप्रयास होते हैं, जहाँ मनुष्य की आत्मा की महत्ता को उजागर करने वाले सत्यों को कपोल कल्पित कह उसका उपहास किया जाता है; ऐसे समय में यदि आज की युवा पीढ़ी को यह प्रत्यक्ष ज्ञान हो जाए कि सृष्टि के सूक्ष्म नियम कोई कपोल कल्पना नहीं, विश्वास और श्रद्धा केवल अन्धविश्वास नहीं बल्कि प्रत्यक्ष अनुभव किये जा सकने वाले तथ्य हैं और यह भी कि संतों की कृपा से ही भौतिक एवं आध्यात्मिक रहस्यों का भेदन सम्भव है, तो उसका सम्पूर्ण दृष्टिकोण ही परिवर्तित हो जायेगा।

बापू श्रद्धाराम जी के आविर्भाव के अनेक कारणों में से एक यह भी था कि उनके करिश्मों और चमत्कारों ने जनमानस के मन में श्रद्धा का वह बीज रोपण करना था जिसने भविष्य में वट-वृक्ष बन कर आने वाली पीढ़ियो को महान् सम्बल प्रदान करना था। बापू श्रद्धाराम जी के चमत्कारों को एक अध्याय अथवा एक पुस्तक में लिपिबद्ध कर पाना किसी के लिए भी सम्भव नहीं है। परन्तु फिर भी उनकी कुछ लीलाओं

के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया जाएगा कि बापू जी कितने भक्त-वत्सल एवं दयालु थे और किस प्रकार अपनी अद्भुत कृपा से वह अपने भक्तों का कल्याण किया करते थे।

एक बार एक भक्त सुरेन्द्र पाल गुम्बर ने बापू जी को पत्र लिखा कि स्कूल मास्टर की नौकरी के लिए मेरी परीक्षा की तिथि आ गई है उस परीक्षा के लिए मेरी तैयारी नाम मात्र भी नहीं है। बापू जी, यह मेरी नौकरी का सवाल है। मुझे आशीर्वाद दीजिये कि आप की कृपा से मैं इस परीक्षा में सफल हो जाऊँ। बापू जी ने उस भक्त के पत्र के उत्तर में लिखा कि चिन्ता मत करो, बापू जी तो स्वयं ही तुम्हें पढ़ाने आये हैं, तुम्हारी पढ़ाई हुई है अथवा नहीं, इससे कोई अंतर नहीं पड़ता। तुम बेधड़क परीक्षा में बैठो। हमारा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। पत्र पढ़ कर सुरेन्द्र पाल निश्चिन्त हो गए और परीक्षा दी। परीक्षा में पास हो कर जब उन्हें नौकरी मिली तब वह अति प्रफुल्लित हो बापू जी के पास आए और उनका आशीर्वाद प्राप्त किया।

बापू जी अकसर शाम को सैर करने जाया करते थे। जब वह थड़ा साहिब की ओर सैर करने निकलते तो लोग सड़क के दोनों ओर खड़े हो कर उन्हें प्रणाम किया करते थे। उस रास्ते में एक स्कूल भी आता था। शाम के समय उस मैदान में बच्चे खेला करते थे। एक दिन बापू जी सैर करते हुए उस मैदान के बीचों-बीच हो कर जाने लगे। वहाँ

खेलते हुए बच्चों ने उन्हें प्रणाम किया। बापू जी ने पूछा कि तुम किस-किस कक्षा में पढ़ते हो। सभी बच्चों ने अपनी-अपनी कक्षा बताई और कहा कि आज कल हमारी परीक्षाएं चल रही हैं। बापू जी ने सभी बच्चों को आशीर्वाद दिया कि तुम सब अच्छे अंकों से अपनी-अपनी परीक्षा उत्तीर्ण करो।

उन बच्चों में एक बच्चा सुखदेव भी था जो आज नन्दाचौर दरबार का दरबारी रागी है। उस समय उसने पाँचवी कक्षा की पंजाब बोर्ड की परीक्षा दी थी। परीक्षा के दौरान अस्वस्थ हो जाने के कारण सुखदेव पंजाबी और गणित की परीक्षा ही नहीं दे पाया। परन्तु आश्चर्य की बात यह थी कि जिन विषयों की

परीक्षा भी उसने नहीं दी थी वह उन विषयों में भी उत्तीर्ण हो गया। बापू श्रद्धाराम जी का प्रेमपूवर्क कहा गया कथन तुरन्त सत्य हो गया। बापू श्रद्धाराम सदृश सत्यनिष्ठ योगियों का कोई भी कथन असाधारण प्रभाव उत्पन्न करने का सामर्थ्य रखता है। सांसारिक इच्छाओं से परे ऐसी योगी की चेतना सदैव ही ब्रह्ममय होती हैं इसीलिए उनके प्रत्येक संकल्प, विचार और कथन में चमत्कारिक प्रभाव पैदा करने की शक्ति होती है इसीलिए सुखदेव उन विषयों में भी पास गया जिनकी परीक्षा उसने दी ही नहीं थी।

बापू श्रद्धाराम जी अपने भक्तों के आचरण पर विशेष नजर रखते थे। यदि कोई भक्त किसी अहंकारवश कोई गलत कार्य करता था तो

वह तुरन्त उसका अहंकार दूर कर उसे उचित मार्ग पर ले आते थे। एक बार दिल्ली निवासी दो भाई दौलत राम और संतराम खरबन्दा जून के यज्ञ में सम्मिलित होने नन्दाचौर गए। दौलत राम बड़े भाई थे और संत राम छोटे। संत राम हमेशा ही अपने बड़े भाई का मज़ाक उड़ाया करते थे और स्वयं की तीव्र बुद्धि समझते हुए उसे मन्द बुद्धि बताया करते थे। इस सबसे दौलत राम बहुत दुःखी रहते थे। यज्ञ के अवसर पर दौलत राम ने बापू श्रद्धाराम जी से मिलकर प्रार्थना करते हुए कहा, “बापू जी, कृपा करके मुझे तीव्र बुद्धि प्रदान कीजिए जिससे मैं भी संसार में अपना कार्य-व्यवहार अच्छी प्रकार कर सकूं।" बापू जी ने उसे वैसा ही आशीर्वाद दिया और कहा कि आज के बाद तुम्हारा छोटा भाई कभी तुम्हारा मज़ाक नहीं उड़ाएगा और तुम अपने सभी कार्य कुशलतापूर्वक कर पाओगे।

फिर यज्ञ समाप्त होने के बाद दोनों भाई घर आ गये और अपनी-अपनी दुकानें खोल ली। उन दोनों का साईकिल बनाने का काम था। संतराम ने दिन भर अपनी दुकान पर काम किया और रात को घर जाने के समय दुकान बन्द कर ली। दुकान बन्द करते समय उसने एक घड़ी निकाल कर बाहर रखी और सोचा कि इसे घर ले जाऊँगा। परन्तु घर जाते समय वह बिल्कुल भूल गया कि उसे घड़ी ले कर जानी भी है। घर पहुँच कर जब संतराम को याद आया तब उसने अपने पुत्र को दुकान पर घड़ी लाने भेजा। पुत्र ने दुकान पर पहुँच कर देखा कि वहाँ तो कोई घड़ी

नहीं पड़ी थी। किसी ने बाहर पड़ी घड़ी देख कर उसे उठा लिया था।

अगले दिन संतराम ने दुकान खोली और थोड़ी देर बाद एक सोल्समैन वहाँ आ गया। उसने ट्रक से टायरों का एक बंडल निकाला और उनकी कीमत चुकाने को कहा। संतराम ने वह बंडल ले कर दुकान के बाहर रखवा दिया और उनकी कीमत चुका कर सारा ध्यान काम में लगा दिया। दिन ढलने पर जब वह घर वापिस आया तो खाना खा कर आराम से सो गया। अगले दिन उसकी पत्नी ने उसे उठाया और खाना आदि खिला कर कहा कि जा कर दुकान खोलो। जब संतराम ने दुकान खोली तो उसे टायरों वाला बंडल कहीं नज़र नहीं आया। दिमाग पर जोर डाला तो याद आया कि बंडल तो अन्दर रखवाया ही नहीं था। संतराम को एहसास हुआ कि बार-बार वह एक ही भूल कैसे कर सकता है। उसकी बुद्धि काम क्यों नहीं कर रही है?

आत्म-मंथन करने पर उसे एहसास हुआ कि वह अपने बड़े भाई का मज्जाक उड़ाता था, उसी दोष के कारण उसकी स्वयं की बुद्धि मन्द पड़ गई थी। उसे तुरन्त अपनी गलती का एहसास हुआ और वह बापू जी से क्षमा माँगने नन्दाचौर जा पहुँचा। वहाँ बापू जी से प्रार्थना करते हुए उसने कहा कि बापू जी, मुझ पर दया कीजिए। मुझे अपनी भूल क एहसास हो गया है, अब मैं कभी भी अपने भाई का मजाक नह उड़ाऊँगा। बापू जी तो शरणागत वत्सल थे। उन्होंने संतराम को क्षमा

कर दिया और संतराम का कार्य फिर से ठीक-ठाक चलने लगा। उधर दौलत राम की बुद्धि बापू जी की कृपा से प्रखर हो गई और उनका कार्य बहुत अच्छे से चलने लगा। आज उन दोनों भाईयों के पुत्र सुरेन्द्र, अशोक और राजिन्द्र खरबन्दा बापू जी के दरबार की अनन्य सेवा करते हैं और सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

उस दिन संतराम ने एक सबक सीखा कि अहंकार वश किए गए किसी भी कार्य का परिणाम दु:खद ही होता है। यह तो बापू जी की लीला थी जो अति शीघ्र संतराम को अपनी भूल का एहसास हो गया और उसने बापू जी से क्षमा माँग कर अपनी भूल स्वीकार भी कर ली, नहीं तो आमतौर पर व्यक्ति धन, बुद्धि, सुन्दरता, बल, यश, मान आदि के अहंकार में उन्मत्त हो उठता है तो ईश्वर का विधान उसका

मान-मर्दन करने के लिए तुरन्त अपना चक चला ही देता है। बापू श्रद्धाराम सरीखे महागुरु तो एक क्षण के लिए भी अपने भक्तों में अहं भाव आने ही नहीं देते। वह तो अपने भक्तों को हृदयों का मार्जन कर उसे परमात्मा की भक्ति के लिए परम शुद्ध बना देते हैं।

बापू श्रद्धाराम जी का प्रेम सभी भक्तों के लिए एक समान था। चाहे कोई हिन्दू हो, सिख अथवा मुसलमान सभी पर बापू जी की कृपा अक्षुण्ण बरसती थी। 1947 में भारत विभाजन के समय जब उपद्रवियों ने अमानवीय अत्याचारों की सभी हदें पार कर दी और धर्म के नाम पर

खूब रक्तपात हो रहा था। तब एक मुसलमान बैंड मास्टर जो खडिआला गाँव का रहने वाला था और बापू श्रद्धाराम जी का परम भक्त था, बापू जी के पास आया। वह नन्दाचौर दरबार की बहुत सेवा करता था। उसके परिवार के कुछ सदस्य पाकिस्तान जाने के लिए जालन्धर के शरणार्थी कैम्प पहुँच गए परन्तु वह बापू जी को छोड़ कर पाकिस्तान नहीं जाना चाहता था। वह नन्दाचौर में रह कर दरबार की सेवा करने का इच्छुक था।

उस भक्त ने बापू जी से कहा, "दंगाई हाथों में कृपाण और खंजर आदि लिए चारों ओर घूम रहे हैं। ऐसी दशा में मैं किस प्रकार जालन्धर जा कर अपने परिवार को वापिस लाऊँ? मुझे बहुत भय लग रहा है। हे बापू जी! अब आप ही दया कर के मेरे परिवार को वापिस लाइए।" उस मुसलमान भक्त का निवेदन सुन कर बापू जी ने उसे अपने हाथों का बनाया सुरमा दिया और कहा, "इस सुरमे को आँखों में डाल कर तू बेधड़क हो कर चला जा। तुम्हें कोई नहीं देख पाएगा और तुम सब को देख सकोगे।" इतना कह कर बापू जी ने एक पत्र लिख कर उसके हाथ में पकड़ा कर कहा कि जालन्धर जा कर सम्बन्धित ऑफिसर को यह पत्र दे देना। वह तुम्हारी सहायता कर देगा। उक्त भक्त आँखों में सुरमा डाल पत्र ले कर रवाना हो गया और भाले-कृपाण और बरच्छे हाथ में लिए उपद्रवियों के बिलकुल पास से हो कर गुजरता गया परन्तु उसे कोई नहीं देख पाया। इस प्रकार उसने 35 कोस का

सफर तय किया और जालन्धर पहुंच कर शरणार्थी शिविर में जा कर कमांडर से मिला। उसने बापू जी का पत्र कमांडर को पकड़ाया और पत्र लेते ही उस कमांडर ने उसे श्रद्धापूर्वक अपने माथे से लगाया।

उस पत्र को पढ़ने के बाद उस कमांडर ने उस मुसलमान भक्त का आदर सत्कार कर जलपान करवाया और उसके परिवार को बुलवा लिया। फिर उसने कहा कि मैं फौजियों को आपके साथ आपके घर तक भेज देता हूँ ताकि रास्ते में आपको कोई परेशानी न आए। यह सुन कर बैंड मास्टर ने हाथ जोड़कर कमांडर को सुरमे वाला करिश्मा बताया और कहा कि बापू जी हमारी रक्षा कर रहें हैं। हमें फौज की कोई आवश्कता नहीं है। बापू जी की कृपा से हम सकुशल घर पहुँच जाएँगे। तत्पश्चात् वह मुस्लिम परिवार वापिस अपने घर पहुँचा और तब से ले कर आज तक उनका परिवार दरबार में हाजिरी भरता है। उनकी अगली पीढ़ी बशीर अहमद, दारा और उसकी पार्टी भी दरबार में अपने मधुर संगीत से बापू जी की सेवा में हाजिरी भरते हैं।

बापू श्रद्धाराम जी की महनीयता और शक्ति को कौन जान सकता हैं। नन्दाचौर में रहते हुए उन्होंने कई बार दूर स्थित भक्तों की रक्षा करने हेतु सशरीर उनके पास प्रकट हो कर उनकी प्राण रक्षा की है। इस सम्बन्ध में आद्रामान निवासी सोहनलाल के पुत्र का प्रसंग विशेष रूप से वर्णनीय है। आद्रामान ग्राम में निवास करने वाले सोहनलाल की

बापू श्रद्धाराम जी में अखण्ड आस्था थी। एक दिन सोहनलाल जी का पुत्र अपने मित्रों के साथ खेलते-खेलते खेतों के मध्य एक पुराना कुँएं में गिर पड़ा। आस-पास खड़े बालक घबरा गए और शीघ्रता से गाँव की ओर भागे। गाँव आ कर उन्होंने शोर मचा दिया कि सोहनलाल जी का पुत्र कुँएं में गिर गया है। यह सुनते ही लोग टोकरियां और रस्सी ले कर घटनास्थल पर पहुँच गए।

सोहनलाल भी ग्रामीणों के साथ वहाँ पहुँच गए। पूरे रास्ते वह बापू जी से करुण प्रार्थना करते आए कि बापू जी ! मेरे पुत्र की रक्षा करो। कुँएं के पास पहुँचने पर जब सोहनलाल ने उसमें झाँक कर देखा तो प्रसन्न से उनके आश्चर्य की सीमा न रही। उनका पुत्र सकुशल कुँएं की दीवार के साथ खड़ा था। बाकि लोग भी यह देख कर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने टोकरी के साथ रस्सा बाँध कर कुँएं में डाल दिया और नीचे लटका दिया। वह लड़का उस टोकरी में बैठ कर बाहर आ गया। वह सिर से पाँव तक भीगा हुआ था। लोगों ने पूछा कि कुँएं में तो बहुत थोड़ा पानी था और तुम आराम से खड़े थे तो फिर तुम सिर तक कैसे भीग गए। उस लड़के ने बताया कि कुँएं में पानी बहुत गहरा है। जब मैं कुँएं में गिरा तो गहरे पानी

में डूबता चला गया। तब साथ ही मैने बापू जी को पुकारा। बापू जी को पुकारते ही बापू जी वहाँ आ गए और मेरे पैरों के नीचे हाथ दे दिए और जब तक आप नहीं आ गये तब तक मुझे अपने हाथों पर उठाए रखा। आप ने जब टोकरी फैंकी और मैं उस पर

बैठ गया तब वह पता नहीं कहाँ अलोप हो गए। हमारे घर में जिन बापू जी की फोटो है वही बापू जी मेरी रक्षा के लिए आए थे। उस बच्चे की बात सुन कर सारे गाँव वाले हैरान हो गए और उन्होंने सोहनलाल जी के घर जा कर बापू जी की फोटो के दर्शन किए। वह फोटो बापू श्रद्धाराम जी का था। सोहनलाल अपने बापू जी की यह करामात देख कर गद्गद् हो गए और बापू जी का शुक्राना अदा करने सारी संगत को साथ ले कर नन्दाचौर जाने का निर्णय लिया।

शीघ्र ही सोहनलाल ढोल ले कर जयकारे लगाते हुए नन्दाचौर आ पहुँचे। बापू श्रद्धाराम जी तो सर्वज्ञ थे फिर भी अनजान बनते हुए उन्होंने पूछा कि यह ढोल किस लिए बज रहा है। यहाँ तो किसी की शादी भी नहीं है। तब सेवकों ने बताया कि यह ढोल आदि के साथ तो आपका भक्त सोहनलाल आया है। उसके साथ बहुत संगत भी आई है। तभी सोहन लाल अन्दर आया और आँखों में आँसू भर कर बापू जी का यशोगन करने लगा। बापू जी की असीम कृपा से उसके वंश की रक्षा हुई थी। यह आश्चर्यजनक घटना बापू जी की सर्वव्यापकता को प्रदर्शित करती है। बापू जी सशरीर नन्दा चौर में विराजमान थे और ठीक उसी समय वह आदरामान में उस बच्चे की प्राणरक्षा भी कर रहे थे। एक ईश्वरतुल्य योगी के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। ठीक ऐसी ही घटना फाजिल्का के पास होजखाल गाँव के संदीप पपनेजा के साथ घटी। संदीप जी की बहिन कमला जी के अनुसार जब संदीप चार वर्ष

के थे तब वह उस खुई में गिर गए थे जहाँ से पशुओं के लिए पानी निकाला जाता था।

संदीप के गिरने से दस मिनट पहले ही उनकी माँ को यह स्वप्न आया कि बापू श्रद्धाराम जी उनके पुत्र को उनकी गोद में डाल गए हैं। इसके कुछ ही समय बाद ही यह शोर मच गया कि संदीप खेलते-खेलते कहीं चला गया है। कमला जी ने जब खुई पर जा कर देखा तो पाया कि उनका भाई खुई में खड़ा है और उसके एक हाथ में एक संतरा है और दूसरे हाथ से उसने ईंटों को पकड़ा हुआ है। जब उसे बाहर निकाला गया तो वह कुछ घबराया हुआ था। अगले दिन उसने बापू श्रद्धाराम जी के स्वरूप की तरफ इशारा करते हुए बताया कि इन्होंने ही कल मेरे गिरने पर मुझे पकड़ लिया था और सीधा खड़ा करके मेरे हाथ में संतरा पकड़ाया और आशीर्वाद दे कर चले गए।

बापू श्रद्धाराम जी ने असंख्य बार अपने भक्तों की रक्षा की है। उनकी दया इतनी अगाध है कि मानवीय बुद्धि उसका पार तो क्या विवेचन तक करने में समर्थ नहीं है। एक बार अमृतसर में गो० रामलाल जी के शिष्य बापू देसराज जी महाराज बापू ओम जी के यज्ञ में संगत के साथ बस में नन्दाचौर आ रहे थे। वहाँ सेठ राममूर्त्ति ने किसी से पूछा कि यह बस कहाँ जा रही है तो किसी ने कहा कि यह सारी संगत नन्दाचौर यज्ञ में जा रही है। वहाँ उनके गुरु बापू श्रद्धाराम जी महाराज हैं जो

साक्षात् ईश्वर हैं।

यह सुन कर सेठ राममूर्ति ने मन में विचार किया कि क्यों न एक बार मैं भी नन्दाचौर जा कर बापू जी के दर्शन पा लूं। यदि वास्तव में ही इनके गुरु पूर्ण हैं तो मैं भी उनसे नाम-दीक्षा ले कर धन्य हो जाऊँगा। यह सोच कर वह संगत के साथ नन्दाचौर आ गए। बापू श्रद्धाराम जी के दर्शन कर वह बेहद प्रभावित हुए परन्तु उनके मन में पहले वाला भाव भी दृढ़ रहा कि मैं इनकी परीक्षा लूँगा और तब इन्हें गुरु रूप में स्वीकार करूँगा। तीन साल सेठ राममूर्ति नन्दाचौर आते रहे और बापू जी के करिश्मे देखते रहे। चौथे साल राममूर्ति जी ने बापू जी के चरण पकड़ लिए और कहने लगे कि आप मुझे अपना बेटा बना लीजिए। मैं आपसे दीक्षित होना चाहता हूँ। मुझे पूरा विश्वास हो गया है कि आप स्वयं पारब्रह्म परमेश्वर हैं। मुझे अपना शिष्य बना कर मेरा उद्धार कीजिए।

राममूर्ति जी की बात सुन कर बापू श्रद्धाराम जी कहने लगे कि जैसा बापू जी का आदेश होगा हम वैसा ही करेंगे। तुम ने तो हमारी परीक्षा कर ली, जरा हम भी तुम्हारा इम्तिहान ले लें। पहले हम देखें तो सही कि तुम नाम-दान के काबिल हो भी या नहीं। अभी तुम प्रसाद ले कर घर जाओ। हम अगले वर्ष देखेंगे कि तुम दीक्षा के लिये अभी तैयार हुए हो अथवा नहीं। दही जमाने के लिए कड़े हुए दूध को ही जाग लगाना पड़ता है। हम तुम्हारे कड़ने की प्रतीक्षा करेंगे।

श्री नारायण चरितामृत

305

जब अगला वर्ष आया तब राममूर्ति जी ने फिर से दीक्षा के लिए प्रार्थना की। बापू श्रद्धाराम जी ने उन्हें फिर टाल दिया और इस प्रकार होते-होते तीन वर्ष व्यतीत हो गए। चौथे वर्ष राममूर्ति जी ने फिर से बापू जी के चरण पकड़ लिए और कहने लगे कि अब तो मैं आपके चरण तभी छोडूंगा जब आप मुझे दीक्षित करेंगे। दया के सागरे बापू श्रद्धाराम जी ने राममूर्ति जी पर दया की और उन्हें नाम-दान दे कर अपना शिष्य बना लिया। राममूर्ति जी ने नाम जपना शुरु कर दिया और प्रत्येक संक्रान्ति को आ कर बापू जी के दर्शन करने का नियम बना लिया। धीरे-धीरे उनके भाई ओम प्रकाश और बहन चंचल भी बापू जी के भक्त बन गए।

एक बार सन् 1957 में ओम प्रकाश और चंचल जी के मन में यह विचार आया कि नन्दाचौर जाकर बापू जी के दर्शन किए जाएं। वे दोनों लुधियाना रहते थे और रेल-गाड़ी द्वारा श्याम चौरासी रेलवे स्टेशन पहुँच गए। स्टेशन से बाहर आने पर उन्हें तांगा खड़ा मिला। ओम प्रकाश जी ने तांगे वाले से पूछा कि क्या वह उन्हें लेकर नन्दाचौर जाएगा। तांगे वाले ने तुरन्त हाँ कर दी। ओम प्रकाश जी को तांगे वाले की नीयत ठीक नहीं लगी। चंचल जी ने बहुत गहने पहन रखे थे। उनके पास धन भी था। अभी ओम प्रकाश जी यह सोच ही रहे थे कि तांगे पर बैठें या न बैठें, इतनी देर में उन्होंने प्रीतम सिंह को देखा। वह बस लेकर आया हुआ था। प्रीतम सिंह ने ओम प्रकाश जी को कहा कि बापू जी ने

आपको लिवाने के लिए बस भेजी है। यह सुन कर ओम प्रकाश जी बड़े हैरान हुए कि बापू जी कितने अन्तर्यामी हैं। बापू जी पहले से ही जानते थे कि ओम प्रकाश और चंचल नन्दाचौर आ रहें है और उन्हें मार्ग में किसी भी प्रकार की कोई समस्या न आ जाए इसीलिए उन्होंने पहले ही बस भेज दी थी। बापू

जी तो पहले ही यह जान गए थे कि ओम प्रकाश जी और उनकी बहन को तांगे वाले की ओर से समस्या आ सकती है।

इसी कारणवश उन्होंने समस्या आने से पहले ही उसका समाधान कर दिया था।

बापू श्रद्धाराम जी अपने भक्तों के मन की बातें जान कर तत्काल उन का समाधान कर दिया करते थे। प्रायः भक्तों के मन में कुछ ऐसे प्रश्न उठते रहते हैं जिनका सम्बन्ध देखने में तो कुछ परिवारिक और दैनिक समस्याओं से होता है परन्तु वास्तविकता में उसकी जड़ें पूर्व जन्मों में किए गए कर्मों के भुगतान से जुड़ी होती है। एक बार बापू जी का एक प्यारा भक्त श्याम दास बापू ओम जी के जून के यज्ञ में सम्मिलित होने दिल्ली से नन्दाचौर संगत की बस में आ रहा था। उस बस में सभी भक्त जन बापू ब्रद्धाराम जी को याद करते हुए यह कह रहे थे कि हम बापू जी के पास जा कर अमुक अमुक बात करेंगे। श्याम दास जी ने भी कहा कि मैं भी बापू जी से अपने इकलौते पुत्र के विषय में बात करूँगा। मेरा बेटा बहुत बिगड़ चुका है और मेरे कहने में नहीं है।

श्री नारायण चरितामृत

307

मैं बापू जी से प्रार्थना करूँगा कि वह मेरे बेटे पर कृपा कर के उसे सुधार दें। इस प्रकार सभी लोग अपनी-अपनी परेशानियां एक दूसरे के साथ बाँटते हुए हँस कर कहने लगे कि यह वास्तव में बहुत आश्चर्य की बात है कि हम ने जिन समस्याओं का जिक्र अभी कल बापू जी से करना है, बापू जी ने तो हमारे बिना बताए ही उनका समाधान भी कर दिया होगा और वैसे भी जो बात बापू जी के मुखारविन्द से निकल जाती है वह कभी टल नहीं सकती। जब हम कल बापू जी के पास प्रस्तुत होंगे तब हमें यह सब कुछ प्रत्यक्ष देखने को मिलेगा।

उन भक्तों का बापू जी पर यह विश्वास अकारण नहीं था। जब उनकी बस नन्दाचौर पहुँची और सभी ने यज्ञ में सम्मिलित हो जब बापू जी को माथा टेका तब श्याम दास जी भी बापू जी को प्रणाम करने आगे बढ़े। बापू जी एक दम मौन हो कर श्याम दास को ध्यानपूर्वक देखने लगे। श्याम दास यह देख कर कुछ घबरा सा गए। बापू जी ने श्याम दास को कहा कि तुम्हारा पुत्र तो पिछले जन्म का पठान है। तुम्हारा और उसका सम्बन्ध कोई इस जन्म का ही नहीं है। यह सम्बन्ध तो कई जन्मों से चला आ रहा है। तुमने

उसका कर्ज अदा करना है। तुमने उसे बड़ी-बड़ी बहियाँ लिखकर दी हैं। जिससे तुमने कर्ज़ लिया है वह तो माँगेगा ही। जब कर्ज वापिस करना ही है तो रो कर ही क्यों, हँस के वापिस क्यों न किया जाए। कर्ज देने में हिचकिचाहट कैसी। कई लोग तो कर्ज ले कर मुकर ही जाते हैं। ऐसा करना समझदारी नहीं है।

बापू जी का यह रहस्योद्घाटन सुन कर श्याम दास जी का मन शान्त हो गया। मन में जितने संशय थे वे सब निवृत हो गए। वास्तव में यह घटना एक बहुत बड़ी सत्यता उजागर करती है। मनुष्य जिन रक्त-सम्बन्धों के बन्धन में पड़ कर दुःख प्राप्त करता है वस्तुतः वे सम्बन्ध उसके स्वयं के पूर्व जन्मों में किए कुकर्मों का साकार रूप मात्र ही होते हैं। इसलिए आत्म-मंथन करना मनुष्य की दिनचर्या का एक अभिन्न अंग होना चाहिए। यदि मानव प्रभु कृपा से किसी संत की शरण ले लेता है तब यह संत उसे धीरे-धीरे भगवान् की ओर उन्मुख कर उसके संचित और प्रारब्ध कर्मों का क्षय कर देते हैं। ऐसा होने पर उस का अज्ञान जनित मोह नष्ट हो जाता है और वह जीवन का वास्तविक उद्देश्य जो कि ईश्वर-प्राप्ति है, की ओर उन्मुख हो जाता है। स्याम दास जी ने भी इस सच्चाई को जान कर बापू श्रद्धाराम जी के श्री चरणों में सर्वस्व समर्पण कर दिया और सारा जीवन उनकी सेवा में लगा दिया।

बापू जी एक ईश्वरतुल्य महागुरु ही नहीं अपितु एक महान् समाज-सुधारक भी थे जिन्होंने दहेज जैसी सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने हेतु दरबार में सवा रुपए में विवाह करवाने की परम्परा शुरु की। एक बार बापू हरनाम जी के अनन्य भक्त संत लाल जी को पाँच बेटियां थी। वह बापू जी के पास अपनी पुत्रियों के विवाहाचं गार और कहने लगे कि बापू जी, आप ही मेरी मझधार में फंसी नैया को पार लगाओ। मेरी पाँच विवाह योग्य पुत्रियाँ हैं। उनका विवाह करने के

लिए मेरे पास घर में आवश्यक सम्पदा नहीं है। आप के सिवा मेरा कोई सहारा नहीं है। अब आप ही उनका घर बसाने के लिए कुछ कीजिए।

उस व्यक्ति की यह बात सुन कर बापू जी दया से भर उठे। उन्होंने अति स्नेहसिक्त स्वर में उसे कहा कि तुम आराम से अपने घर जा कर बैठ जाओ और तनिक भी चिन्ता मत करो। तत्पश्चात् बापू जी ने एक और भक्त परिवार को बुलाया और कहा कि हमने आपके पुत्र का विवाह करना है। यह सुनते ही

उस भक्त परिवार ने कहा "सत्यवचन"। बापू जी ने दोनों परिवारों को हुक्म लगा दिया और पूर्णिमा के दिन विवाह के लिए दरबार बुला लिया। फिर तो बापू जी की कृपा से दोनों परिवार आऐ और बिना किसी औपचारिकता के, बिना कोई बैंड-बाजे के विवाह सम्पन्न हो गया। वहीं दरबार में फेरे करवाए गए और बापू जी का प्रसाद स्वरूप लंगर खा कर दोनों परिवार बापू जी के पावन आशीर्वाद से परिपूरित हो कर तृप्त हो गए।

पहली कन्या के विवाह के पश्चात् बापू जी ने एक और जमींदार परिवार को संत लाल जी की दूसरी पुत्री से विवाह के लिए कहा। माघ के पवित्र माह में दूसरी कन्या का विवाह भी उस भक्त जमींदार परिवार के बेटे के साथ सम्पन्न हुआ। बापू जी की आज्ञा से दोनों विवाह मात्र सावा रुपए में ही सम्पन्न हो गए। फिर कुछ समय पश्चात् बापू जी ने रामलाल मुटनेजा नामक एक भक्त के पुत्र हंसराज से उस व्यक्ति की

तीसरी पुत्री की शादी कर दी।

उसके बाद बापू जी ने शेष दो पुत्रियों का विवाह भी अच्छे घर में कर दिया। संत लाल जी अक्सर कहते थे कि मैं एक लड़की की शादी करने की भी सामर्थ्य नहीं रखता था परन्तु बापू जी कृपा से मेरी सभी पुत्रियों का विवाह अच्छे घरों में हुआ है। बापू जी की शरण में जो भी आ जाता है उसकी सारी मनोकामनाएं बापू जी अवश्य पूरी करते हैं। बापू जी की दया इतनी असीम है कि उस दया से भक्तों के सभी कार्य बड़ी श्रेष्ठता से सम्पन्न होते हैं।

जो व्यक्ति अपने गुरु के वचनों को शिरोधार्य कर उसका मन-प्राण से पालन करता है उसकी भौतिक और आध्यात्मिक प्रगति को कोई रोक नहीं सकता। एक बार बापू जी ने अपने सेवकों की परीक्षा ली। नन्दाचौर में एक नलका लगवाना था और उसके लिए जो पाईप लाना था वह बुलीवाल से मंगवाया जाना था। बापू जी ने कई सेवकों से पूछा कि वह पाईप लेने कौन जा रहा है? सभी ने जवाब दिया कि पाईप तो बहुत भारी है और उसे ले कर आना अकेले हमारे बस की बात नहीं है। वहाँ एक भक्त देसराज चावला जी भी बैठे थे। उन्होंने कहा. "लाओ मुझे साईकिल दो, चिन्ता करने की कोई बात नहीं है। मैं यह पाईप ले कर आता हूँ।" इतना कह कर देसराज चावला बुलोवाल गार और पाईप कंधे पर टिका कर साईकिल चलाते हुए नन्दाचौर आ गए।

उन्हें दूर से आता देख कर बापू जी गद्गद् प्रसन्न हो उठे और उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा, "देखो, हमारा हनुमान आ रहा है।"

देसराज चावला जी परीक्षा में सफल हो गए और बापू जी की विशेष कृपा उन पर सदैव बनी रही। जीवन में परीक्षा के क्षण अचानक ही आते हैं और इस परीक्षा में सफल होने के लिए जिन गुणों की आवश्यकता होती है वे गुण गुरु कृपा से धीरे-धीरे व्यक्ति के चरित्र में समाहित हो जाते हैं। जो व्यक्ति इस परीक्षा में सफल होते हैं वह अपने गुरु से दिव्य वरदान प्राप्त कर धन्य हो जाते हैं ठीक वैसे ही जैसे देसराज चावला जी हुए। देस राज जी आजीवन दरबारों की सेवा करते रहे और बापू जी के कृपा-पात्र भी बने रहे।

एक बार वर्तमान गद्दीनशीन बापू श्री हरभगवान जी की माता श्रीमती जमुना देवी, धर्मपत्नी श्री जयगोपाल जग्गा आठ-नौ वर्षों से बहुत बीमार थीं और इलाज करवाने के बावजूद उनकी तबीयत में कोई खास सुधार नहीं हुआ था। उनकी बहुएँ उनकी बहुत सेवा किया करती थीं परन्तु धीरे-धीरे उनकी पीठ पर घाव हो गए क्योंकि उस समय वह लगातार बिस्तर पर ही थीं और चल-फिर नहीं सकती थीं। एक दिन बापू श्रद्धाराम जी महाराज ढक्का मन्दिर आए तो जमुना देवी जी के पुत्र श्री राजकृष्ण जी जग्गा उन्हें अपनी गोद में उठा कर बापू जी के दर्शन करवाने मन्दिर ले गए। दर्शन करवाने के बाद जमुना देवी जी को घर ले

जाया गया क्योंकि उनकी तबीयत ठीक नहीं थी। घर आ कर जमुना देवी जी ने कहा कि मेरा मन बापू जी के दर्शन करके तृप्त नहीं हुआ। मेरा मन उनकी आरती करने था। अपनी माता की इच्छा जान कर राजकृष्ण जी दोबारा बापू जी के पास गए और उनसे अपने घर चलने के लिए प्रार्थना की। बापू जी ने उनकी प्रार्थना स्वीकार करते हुए कहा, "ठीक है, मैं तुम्हारे घर चलूँगा परन्तु आप मुझे बैठने के लिए नहीं कहना, न ही प्रसाद भेंट करना और न ही माथा टेकना।"

शीघ्र ही बापू जी उनके घर चले गए। उनके साथ देसराज चावला जी भी थे। अपने कथनानुसार बापू जी दरवाजे पर ही दो-तीन मिनट खड़े हुए और जमुना देवी जी को दर्शन दे उन पर नजरे-करम कर उन्हें

आरोग्यता प्रदान की। इन दर्शनों के एक सप्ताह के अंदर ही जमुना देवी के घाव भरने लगे और बापू जी की अपार कृपा से वह बिल्कुल स्वस्थ हो गई।

बापू श्रद्धाराम जी ने कई ऐसे व्यक्तियों को असमय काल-कवलित होने से बचाया जिन्हें डॉक्टरों ने जवाब दे दिया था। सहारनपुर निवासी गंगा देवी के सुपुत्र गुरुबक्श लाल गाबा को टी०बी० हो गई। देश भर के डॉक्टरों ने उसका इलाज किया और कह दिया कि इसके बचने की कोई उम्मीद नहीं है। मँहगी से मँहगी दवाई का भी उस पर कोई असर नहीं हुआ। गंगा देवी यह सोच कर अत्यन्त व्यथित हो गई कि

उसका विवाहित नौजवान पुत्र उसकी आँखों के सामने ही चला बाएगा और वह कुछ नहीं कर पाएंगी। गंगा देवी ने बापू श्रद्धाराम जी के पास जा कर अपने पुत्र की प्राण रक्षा हेतु बापू जी से फरियाद करने का निश्चय किया।

गंगा देवी नन्दाचौर गई और बापू जी से मिल कर अपने पुत्र का सारा हाल बताया। गंगा देवी के पास अपने पुत्र की दवाईयों की बोतल भी थी। गंगा देवी की बात सुनकर बापू जी ने मुस्कुराते हुए सारी बात सुनी और सारी दवाईयों की बोतलें खिड़की से बाहर फेंक दी और कहा कि प्रातः काल स्नान करवा कर गुरुबक्श लाल को हवन पर ले आओ, साथ में एक जल की बोतल भी ले आना। फिर बापू जी ने कहा कि बापू ओम जी की कृपा से उस जल को पीने से तुम्हारा पुत्र ठीक हो जाएगा। गंगा देवी ने बापू जी के कथनानुसार कार्य किया और साथ ही दरबार में सेवा भी की और शीघ्र ही बापू जी के आशीर्वाद से गुरुबक्श लाल एक दम ठीक हो गए।

ठीक ऐसे ही बापू जी की कृपा से आगरा निवासी सन्तोख राज गुम्बर भी टीबी की भयावह बीमारी से मुक्त हुए। डॉक्टर ने उन्हें कहा था कि टी बी से लड़ने के लिए तुम्हें मीट, अंडा आदि खाना पड़ेगा नहीं तो तुम्हारा बचना असम्भव है। ऐसा सुन कर सन्तोख राज ने बापू जी को पत्र लिख कर उन्हें सारी बात बताते हुए लिखा कि भले ही मेरी

मृत्यु हो जाए मैं अपना धर्म किसी भी हाल में नहीं छोदूँगा। उसने यह भी लिखा कि अब मेरा जीवन आपके हाथ में है। यदि आप मेरी रक्षा करना चाहते हैं तो ठीक है, नहीं तो आप की जो भी इच्छा है वह मुझे स्वीकार्य है?

जब बापू जी को उसका पत्र मिला तो उन्होंने उसके उत्तर में चिट्ठी भेजी कि बेटा, काल तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। यदि तुम अंडा, मीट नहीं खा सकते तो कोई बात नहीं। हमारा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। तुम बिना माँसाहार के भी बच जाओगे। हम तुम्हारी अपने धर्म पर अडिग रहने की प्रतिज्ञा से बहुत प्रसन्न हैं। बापू जी के वचनानुसार सन्तोख राज को टी बी की बीमारी से छुटकारा मिल गया। शारीरिक व्याधियों के कारण जो भी हो, ईश्वर की भक्ति और प्रार्थना से बड़ी दवा और कोई नहीं हो सकती। असाध्य समझी जाने वाली बीमारियां भी महान् गुरु की कृपा-प्रसाद से क्षण भर में ठीक हो सकती हैं।

बापू श्रद्धाराम जी के आशीर्वाद से बे-औलाद को सन्तान सुख निर्धन को धन और अल्प शिक्षितों को बेशुमार धन की प्राप्ति होने के असंख्य प्रसंग हैं। एक बार दिल्ली निवासी दयाल चन्द शकरसुधा के पुत्र जोगिन्दर लाल ने अपने पिता से कहा कि मेरी पढ़ने-लिखने में कोई रुचि नहीं है इसलिए आप मुझे पढ़ाई करने के स्थान पर किसी थे अन्य कार्य के लिए कहेंगे तो वह मैं अवश्य कर लेगा। दयाल चन्द की

यह बात सुन कर जोगिन्दर लाल बहुत परेशान हुए। वह बापू जी के पास गए और अपने पुत्र की इस इच्छा के विषय में बापू जी से सारी बात की। बापू जी ने जोगिन्दर लाल को बुला कर पूछा कि तुम्हारी किस कार्य में रुचि है।

जोगिन्दर लाल ने बताया कि वह दुकान खोलना चाहता है और उसकी रुचि व्यापार कर के अच्छा कारोबार करने की है। साथ ही उसने यह भी कहा कि व्यापार कर के वह जो भी धन कमाएगा, वह अपने पिता के चरणों में रख देगा और दरबार आ कर अपनी हाजिरी भी लगवाएगा। बापू जी उस लड़के की सीधी सच्ची बात सुन कर बहुत प्रसन्न हुए और दयाल चन्द से कहने लगे कि तुम दुकान की चाबियां बिना किसी हिचकिचाहट के जोगिन्दर को दे दो। यह लड़का व्यापार में इतना सफल होगा कि

नोटों की गड्डियों के ढेर लगा देगा और आप नोट गिन-गिन कर थक जाओगे। बापू जी का वचन समय आने पर फलीभूत भी हुआ और जोगिन्दर लाल का सम्पूर्ण जीवन बापू जी की प्रेम भरी कृपा तले सुखमय व्यतीत हुआ। आज वह दिल्ली के अच्छे बिजनेसमैन हैं और बापू जी की तन-मन-धन से सेवा कर रहे हैं।

बापू जी साक्षात् पूर्ण परमात्मा थे। उन्हें अपने भक्तों पर आने वाले संकट का पूर्व ज्ञान रहता था और अपने भक्तों के बिना जाने ही यह उसे दूर करने के लिए लीला कर उनका उद्धार कर देते थे। अगला

दृष्टान्त यह इंगित करता है कि किस प्रकार त्रिकालदर्शी बापू जी ने एक पाँच वर्षीय बालक की प्राण रक्षा की। नन्दाचौर के पास एक गाँव पीपलांवाली था। जहाँ बापू जी का एक भक्त नन्दलाल पण्डित रहता था। एक दिन उसने सोचा कि आज चल कर क्यों न नन्दाचौर जा कर बापू जी का आशीर्वाद प्राप्त किया जाए। उधर नन्दाचौर में बापू जी ने अपने सेवक गुरांदित्ता से कहा कि जल्दी से तैयार हो जाओ। आज हमने पीपलांवाली गाँव जाना है। तुम जा कर किसी सवारी का प्रबन्ध करो। इधर से नन्दलाल जी चलने के लिए तैयार हुए और उधर से बापू श्रद्धाराम जी निकल पड़े। नन्दलाल जी जब चलने ही वाले थे तब उनके पाँच वर्षीय पुत्र ने कहा कि पिता जी मुझे एक आना दे दो। मुझे एक आने के पकौड़े खरीद कर खाने हैं। फिर आप को जहाँ जाना है वहाँ चले जाना। नन्दलाल जी ने कहा कि बेटा तुम अभी घर जाओ, जब मैं वापिस आ जाऊँगा तब तुम एक छोड़ दो आने ले लेना।

इतना कह कर वह ताँगे में बैठ गए और ताँगे वाले को चलने के लिए कह दिया। वह बालक घर न जा कर ताँगे के आगे आ कर ताँगा रोकने की कोशिश में उसके नीचे आ गया और गम्भीर रूप से घायल हो गया। नन्दलाल जी को काटो तो खून नहीं। अपने बच्चे को इस प्रकार मरणासन्न देख कर उन्हें घोर सन्ताप हुआ और वह तुरन्त उसे उठा कर वापिस घर में ले आए और डॉक्टर को बुला लिया। डॉक्टर ने जाँच करने पर कहा कि अब यह बालक कुछ क्षणों का मेहमान है,

इसका बचना असम्भव है। यह कह कर जैसे ही वह डॉक्टर घर से बाहर निकला बापू श्रद्धाराम जी वहाँ पहुंच गए। उतनी देर में नन्दलाल जी ने अपने पुत्र को चादर में लपेटा और अन्दर के कमरे में लिटा दिया। बापू जी के घर में पहुँचने पर उन्होंने बापू जी के चरणों में प्रणाम किया और बैठक में सम्मानपूर्वक उन्हें बिठाया। नन्दलाल जी और उनकी पत्नी का धैर्य इतना अधिक था कि अपनी छाती पर पत्थर रख कर दोनों अपने बेटे की चिन्ता छोड़ कर बापू जी की सेवा में जुट गए।

नन्दलाल जी की पत्नी बापू जी के लिए भोजन बनाने में जुट गई और भोजन तैयार होने के पश्चात् नन्दलाल जी ने बापू जी से विनती की कि बापू जी, आ कर भोजन ग्रहण करें। बापू जी तो नन्दलाल जी के संकट के विषय में सब कुछ जानते थे। उन्होंने पूछा, "तुम्हारा बाल पण्डित कहाँ है? वह तो बड़े प्रेम से मेरी सेवा करता है। वह कहीं नज़र नहीं आ रहा।"

पं० नन्दलाल ने कहा कि वह यहीं कहीं खेल रहा होगा, अभी आ जाएगा। बापू जी ने कहा, "नहीं, उसे अभी बुला कर लाओ। वह भी आ कर सेवा करेगा।" पं० नन्दलाल धर्मसंकट में पड़ गए। वह चाहते थे कि बापू जी पहले भोजन कर लें और फिर बाद में उन्हें पुत्र के विषय में बताया जाए परन्तु बापू जी के बार-बार पूछने पर वह फूट पड़े और रो-रो कर सारा वृत्तान्त सुना दिया फिर नन्दलाल जी ने बापू जी से कहा

कि "बापू जी, मेरी एक विनती है कि वह अपने होठों से केवल एक बार फिर से एक आना माँग ले, भले ही इसके बाद कुछ भी हो जाए। ऐसा न होने पर दुनिया सारी जिन्दगी मुझे ताना मारेगी कि एक आने के लिए मैने अपना पुत्र गंवा दिया। बापू जी, आप यह कृपा मुझ पर अवश्य कर दें कि एक बार मेरा पुत्र मुझ से एक आना माँग ले और मैं उसे वह दे हूँ।"

नन्दलाल जी की यह प्रार्थना सुन कर बापू जी ने कहा कि "जल्दी करो। एक गिलास पानी लाओ। पं० जी, आप थोड़ी हिम्मत रखें और ईश्वर में विश्वास को डगमगाने न दें।" बापू जी ने मन्त्र पढ़ कर बच्चे पर जल का छींटा मारा और जल का स्पर्श होते ही जो बालक बेहोश था, उसके होंठ हिले और वह उठ कर बैठ गया। फिर उसने एक आना माँगा और आना माँग कर फिर से अचेत हो गया। नन्दलाल और

उसकी पत्नी अत्यन्त आश्चर्यचकित हुए और बच्चे की माँ ने तुरन्त बापू जी के चरण पकड़ लिए और अपने पुत्र के लिए जीवन दान माँगने लगी। उसने अपनी झोली आगे कर ली और बापू जी से कहने लगी कि आप ने आज तक किसी को अपने दर से खाली नहीं लौटाया। आप मुझ पर भी दया करें और मेरे पुत्र को ठीक कर दें।

बापू जी यह सुन कर कहने लगे कि पहले तो पिता की इच्छा पूरी की और अब माँ ने हमें निरुत्तर ही कर दिया है। हम माँ की ममता से

मजबूर हो गए हैं। इतना कह कर बापू जी ने मन्त्र पढ़ कर दोबारा जल छिड़क कर उस बालक को बेहोशी से उठा दिया। बापू श्रद्धाराम जी के लिए कुछ भी असम्भव नहीं था। उनकी दया का इससे बड़ा उदाहरण और क्या होगा कि साक्षात् परमेश्वर अपने भक्त के घर उसके कुल-दीपक की रक्षा हेतु पधारे और उसकी रक्षा की।

बापू जी ने किसी भक्त के कुल-दीपक की रक्षा की और किसी को कुल का चिराग प्रदान किया। ग्राम कला होलम्बी का रहने वाला जयलाल सैनी दूध बेचते थे। वह बापू जी का बहुत प्यारा सेवक थे। उसकी सात पुत्रियां थी और पुत्र एक भी नहीं था। उनकी पुत्र प्राप्ति की बहुत इच्छा थी। एक बार वह दिल्ली महाराज जी के दर्शन करने गए और अर्ज करने लगे कि "बापू जी, मेरा कोई पुत्र नहीं है। सब कहते हैं कि बेटियां तो पराया धन होती हैं और पुत्र से ही घर की शोभा होती है। आप तो स्वयं परमात्मा हैं। आप की इच्छा से क्या नहीं हो सकता। आप ही मुझ पर कृपा कर मुझे पुत्र प्रदान करें।"

बापू जी ने उसकी बात सुन कर कहा कि तुम पुत्रेष्टि यज्ञ करवाओ। किसी विद्वान् पण्डित को बुला कर, हवन यज्ञ करवा कर उसे सात्विक, भोजन करवा कर, दान दक्षिणा दे कर प्रसन्न करो और उसका आशार्वाद लो। बापू जी की बात सुन कर जय लाल कहने लगा, "महाराज जी, आप के समान इस विश्व में और दूसरा कौन महान् है?

आप के भण्डार में किस चीज की कमी है? आप सभी शक्तियों के स्वामी हो। आप सब कुछ कर सकते हैं। आप के होते किसी और की क्या आवश्यकता है।" जयलाल की बात सुन कर बापू जी ने उसके लिए यज्ञ करने की सहमति दे दी और यज्ञ के लिए सारा सामान इकठ्ठा करवाया। जब हवन प्रारम्भ होने लगा तो जोत बुझ गई। जयलाल यह देख कर हैरान परेशान होने लगा और सोचने लगा कि यह प्रभु का कैसा खेल है? हमारे भाग्य जगाने वाली जोत ही बुझ गई है।

जब उसका मन डगमगाने लगा तो बापू जी समझ गए कि जयलाल का मन अविश्वास के भंवर में गोते लगा रहा है। बापू जी ने तत्काल बुझी हुई जोत पर हाथ फेरा और जोत जागृत कर दी। जयलाल यह देख कर हैरान हो गया और उसे विश्वास हो गया कि बापू जी के रहते उसका कोई कार्य विफल नहीं हो सकता। यज्ञ सम्पन्न होने के पश्चात् जय लाल को बापू जी ने आशीर्वाद दिया और फिर उसे तीन पुत्रों की प्राप्ति हुई।

बापू श्रद्धाराम जी ने अपने जीवन में, उन सनातन सत्यों को जिन्हें समय-समय पर विभिन्न धर्माचार्यों ने अपने-अपने ग्रन्थों में लिपिबद्ध किया है, को साक्षात् चरितार्थ कर के दिखाया। जिन भक्तों को ऐसी महान् लीलाओं का साक्षी बनने का सौभाग्य प्राप्त होता है उनका जीवन सार्थक हो जाता है। सनातन धर्म में एक प्रथा है कि स्वयं भोजन

करने से पहले ईश्वर को धन्यवाद ज्ञापित करते हुए उन्हें भोजन समर्पित किया जाता है और कहा जाता है-

त्वदीयं वस्तु गोविन्दं तुभ्यमेव समर्पये

अर्थात् हे गोविन्द ! आपकी ही वस्तु आपको समर्पित है। इस प्रकार भगवान् को भोग लगा कर जब उस भोजन को ग्रहण किया जाता है तब वह भोजन अमृत रूप हो जाता है और शरीर को पुष्ट करने के

साथ-साथ अन्त: करण को भी पवित्र और पुष्ट करता है। जब हम अपने गृह-मन्दिर में विराजमान अपने ईष्ट देव को भोग लगाते है तो हमारे प्रभु बहुत प्रेम से उस भोजन को स्वीकार करते है और तृप्त होते हैं। हम कभी भी केवल औपचारिकता वश यह सोच कर भोग नहीं लगाते कि हम एक तस्वीर या मूर्ति को भोग लगा रहे हैं।

लुधियाना निवासी शंकर लाल सेठी और उनकी पत्नी चंचल बापू श्रद्धाराम जी को ईश्वर रूप समझ कर उनसे बहुत प्रेम रखते थे। किसी भी प्रकार की समस्या आने पर वह तुरन्त बापू जी को अरदास करते और बापू जी उनकी हर समस्या का समाधान भी करते थे। जब भी बापू जी लुधियाना जाते तो बीबी चंचल के घर ही ठहरते। चंचल जी ने बापू जी के विश्रामार्थ एक अलग कमरा बनवाया हुआ था। पूरा सेठी परिवार सुबह शाम बापू जी की आरती करता और भोजन के

समय पहले बापू जी को भोग लगवा कर फिर स्वयं भोजन ग्रहण करता था। एक दिन चंचल जी ने दूध उबाल कर उसमें मीठा डाल कर गरम दूध का भोग लगा दिया। अगले दिन उन्होंने नन्दाचौर जाना था। जब वह नन्दाचौर गई और बापू जी का आशीर्वाद लिया। चंचल जी ने देखा कि बापू जी कम बात कर रहे हैं।

उन्होंने पूछा कि बापू जी आपको क्या तकलीफ है? पहले तो बापू जी ने कुछ नहीं बताया परन्तु बार-बार पूछने पर बापू जी ने कहा कि बेटी, बहुत गरम दूध और बहुत गरम भोजन का भोग कभी भूल कर भी नहीं लगाना चाहिए। इतना कह कर बापू जी ने उन्हें अपने मुँह में छाले पड़े होने की बात बताई। बापू जी की बात सुन कर चंचल बहुत ही हैरान हुई। उन्हें अपनी भूल का अनुभव हुआ और यह भी ज्ञान हुआ कि बापू जी सदैव अपने भक्तों के संग विराजमान हैं और प्रेम से उन्हें समर्पित भोजन का भोग भी लगाते हैं। इस घटना से बाकी भक्तों को भी यह समझ में आ गया कि बापू जी का उन के घरों में नित्य वास है।

बापू श्रद्धाराम जी की एक अनन्य सेविका थी जिसका नाम बीबी चिन्ती थी। वह बाल्यावस्था से ही बापू श्रद्धाराम जी के पास रह कर उनकी सेवा किया करती थी। उनके भाई गौरी शंकर के पुत्र नहीं था। गौरी

शंकर ने कई बार बापू जी से पुत्र-प्राप्ति हेतु प्रार्थना की थी। उनकी आयु साठ वर्ष की हो चुकी थी। यह घटना 1933 की है। एक

बार बापू हरनाम जी, बापू श्रद्धाराम जी और ऋषि ठाकुर दास जी गौरी शंकर के घर गए। बापू हरनाम जी ने ऋषि ठाकुर दास जी को कहा कि आप इन्हें बताइए कि वह एक नेत्रहीन लड़की से विवाह करें। इसके बाद ही उन्हें पुत्र की प्राप्ति हो सकती है। संतों की आज्ञा मान कर गौरी शंकर जी ने एक नेत्रहीन लड़की से विवाह किया और मन ही मन मन्नत मानी कि यदि बापू जी की कृपा से मेरे घर पुत्र हुआ तो मैं बापू जी को एक सुन्दर कार भेंट करूँगा। बापू जी तो सभी की इच्छायें पूरी करते थे। उसे भी बापू जी ने एक पुत्र बख्श दिया। उस पुत्र का नाम हरदयाल रखा गया। गौरी शंकर पुत्र-प्राप्ति से बहुत प्रसन्न हो गए और उनके परिवार को वह मन्नत याद आई जो गौरी शंकर ने मानी थी।

गौरी शंकर के मन में विचार आया कि क्यों न बापू जी से यह पूछ लिया जाए कि उन्हें किस रंग की कार पसन्द है। ऐसा विचार मन में आते ही वह बापू जी को खुशखबरी सुनाने और धन्यवाद देने नन्दाचौर के लिए चल पड़ा। वहाँ पहुँच कर उसने बापू जी के चरणों में शीश झुका कर प्रणाम किया और बहुत-बहुत बधाई दे कर प्रसन्न मन से बापू जी से पूछा कि उन्हें कार का कौन सा रंग पसन्द है। बापू जी ने कहा, "यह तुम किन चक्करों में पड़ रहे हो? हमें तो कार चलानी आती नहीं। यह तो दरवाजे पर हाथी बाँधने वाली बात हो जाएगी। वैसे भी इसके लिए एक ड्राईवर रखना पड़ेगा और पैट्रोल का जो खर्च होगा सो अलग।" गौरी शंकर ने कहा कि महाराज जी, ड्राईवर की तनख्वाह

और पेट्रोल का खर्च भी मैं ही उठाऊँगा। इसके अतिरिक्त गाड़ी का जो भी मुरम्मत आदि का खर्च होगा वह भी मैं ही वहन करूँगा। अब तो आप मान जाईए। मेरे पास जो कुछ भी है वह सब आप ही का तो दिया हुआ है। गौरी शंकर का बार-बार आग्रह सुन कर बापू जी ने कहा कि "तुम मेरे एक सवाल का जवाब दो। यदि कोई व्यक्ति कार माँगने मेरे पास आता है तो उसे क्या जवाब देना है? उसे 'हाँ" ना'

कौन करेगा?" गौरी शंकर ने कहा, "यह जवाब तो आप ही को देना होगा। हाँ, उस स्थिति में भी खर्चे की चिन्ता आप न करें। मैं उस का भी सारा खर्चा उठा लूँगा।"

यह सुन कर बापू जी बोले तो फिर सुनो गौरी शंकर, ज़्यादा मनोकामनाओं को बढ़ाना अच्छा नहीं होता। लोभ करने से बन्धन अपने शिकंजे में कस लेते हैं और संतों के लिए यह उचित नहीं है। बापू जी की दी हुई हमारे पास एक कार पहले ही है। हमें दूसरी कार की कोई आवश्यकता ही नहीं है। जो देह रूपी कार हमें ईश्वर ने दी है उसे साध कर हमने भव-सागर को पार कर जाना है। यह मनुष्य जन्म जिस उद्देश्य के लिए मिला है उसे भुला कर व्यर्थ के प्रपंचों में उलझना हमारे लिए बिलकुल भी उचित नहीं है। बापू श्रद्धाराम जी जिस त्यागी गुरु के शिष्य थे उनके लिये ऐसा करना सर्वथा उपयुक्त ही था। बापू जी तो नमक तक भी अपनी ही कमाई का ग्रहण करते थे। सुरमा बना कर जो भी आय होती थी उसी से वह अपना भोजन ग्रहण करते थे। दरबार का

नमक तक लेना भी उन्हें स्वीकार नहीं था।

एक बार एक ततैया ने उन्हें काट लिया। पास ही एक सेवादार खड़ा था। वह झटपट लंगरघर में गया और चुटकी भर नमक लंगर से ला कर उस स्थान पर मल दिया जहाँ उस ततैया ने काटा था। बापू जी ने पूछा, "तुम नमक कहाँ से लाए हो?" सेवक डर के मारे चुप रहा और कोई जवाब नहीं दिया। बापू जी ने फिर प्यार से पूछा, "बेटा, तुम यह नमक कहाँ से लाए हो?" सेवक डर के मारे चुप रहा और कोई जवाब नहीं दिया। बापू जी ने फिर प्यार से पूछा, "बेटा, तुम यह नमक कहाँ से लाए हो? बिना किसी भय और घबराहट के मुझे सच-सच बताओ।" तब सेवक ने बताया कि महाराज, नमक तो मैं लंगर घर से लाया था। आप को काटे हुए स्थान पर सूजन न हो जाए यही सोच कर मैने नमक को वहाँ मल दिया था।

सेवक की बात सुनने के बाद बापू जी ने कहा कि मेरी बात ध्यान से सुनो। यह संसार तो अज्ञान वश अज्ञानता की नींद में सोया हुआ है। साधारण मनुष्य को यह ज्ञान नहीं है कि जिस का नमक खाओ उसकी कभी निन्दा नहीं करनी चाहिए। नमक खा कर उसका कर्ज अवश्य ही अदा करना चाहिए। इतना कह कर बापू जी ने उस सेवक को पैसे दिए और कहा कि इन्हें बापू जी की गोलक में डाल दो तब ही हमें आराम आयेगा, अन्यथा नहीं।

बापू जी की ऐसी अनेक छोटी-छोटी लीलाएं है जो अपने आप में एक गहन अर्थ समेटे हुए हैं। एक बार बापू जी के घुटनों में असहनीय दर्द हो गया। दर्द इतना बढ़ गया कि उसने गठिए का रूप ले लिया। ऐसी अवस्था में बापू जी का चलना फिरना बहुत ही कठिन हो गया। कई बार भक्त उन्हें सहारा दे कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया करते थे। बापू जी की ऐसी अवस्था लगभग दो वर्ष तक रही। एक दिन किसी के पूछने पर उन्होंने बताया कि मैने गलती से दान के पैसे को हाथ लगा दिया था इसलिए यह बीमारी हुई है।

एक साधारण मनुष्य के लिए यह सब समझना बहुत कठिन है कि पैसे को गलती से हाथ लगा लेने पर किसी को इतने लम्बे समय तक कष्ट कैसे रह सकता है? वास्तव में जिन महापुरुषों का सम्पूर्ण चिन्तन, कर्म और संकल्प सत्यमय हो जाते हैं उनका शारीरिक श्री विग्रह भी सत्य का साकार रूप ही हो जाता है। ऐसी अवस्था में जब वे किसी भी विचार और वस्तु का त्याग कर देते हैं तब अनजाने में भी उस वस्तु के स्पर्श मात्र से उन्हें भीषण दाह होता है। बापू श्रद्धाराम जी के साथ भी वही हुआ।

बापू जी सदृश त्यागी महापुरुषों के कारण ही पृथ्वी पर पुण्यों के प्रभावी रहने से पृथ्वी पर धर्म का टिकाव सम्भव हो पाता है। जो महापुरुष किसी भी वस्तु का त्याग कर देते हैं, तब त्याग केवल

शारीरिक न हो कर मानसिक और वाचिक भी होता है। ऐसे श्री संतों की देह वास्तव में देखने पर स्थूल भौतिक देह प्रतीत होने पर भी दिव्य ही हो जाती है। इसीलिए साक्षात् दिव्य ज्योतिर्मय देह से यदि अनजाने में त्याग की गई वस्तु का स्पर्श होता है तो उन्हें बहुत कष्ट होता है।

जहाँ भक्तों को ऐसे दिव्य महापुरुषों के चरित्र सुमधुर और सरस लगते हैं वहीं दूसरी ओर कुछ अश्रद्धावान् लोगों को इन सुन्दर कथाओं में कुछ भी रुचिकर प्रतीत नहीं होता। कई बार ऐसे व्यक्ति

किसी महापुरुष की परीक्षा लेने की धृष्टता कर बैठते हैं और परीक्षा लेने का उद्देश्य उन संतों को परख कर गुरु बनाना नहीं अपितु अपने अहंकार की तुष्टि होता है।

एक बार मास्टर सुरिन्द्र पाल जी दिल्ली मन्दिर में बैठे हुए थे। उनके पास दीवान चन्द नागपाल आ कर बैठ गए और बापू जी का हाल-चाल पूछने लगे। दीवान चन्द कहने लगे कि सुरिन्द्र बताओ कि, बापू श्रद्धाराम जी की भक्ति कहाँ तक पहुँची है? उनकी शक्तियों की क्या सीमा है? सुरिन्द्र पाल ने कहा कि बापू जी की माया का कोई अन्त नहीं और जहाँ तक उनकी शक्तियों का सम्बन्ध है, उनका भेद तो पाया ही नहीं जा सकता। यह सुन कर दीवान चन्द ने कहा कि ऐसी बात है तो ठीक है। मैं भी आपके साथ यज्ञ में जाऊँगा और आपके बापू श्रद्धाराम की परीक्षा लूंगा। फिर अहंकारवश उन्होंने कहा कि मैं दीवान चन्द हूँ

और दुनिया मुझे जानती है। आठ दिन बाद संगत की बस ने नन्दाचौर जाना था। सुरिन्द्र पाल ने दीवान चन्द को कह दिया कि आप अपने मन की पूरी तसल्ली कर लें। आप भी हमारे साथ नन्दाचौर के लिए चलें। देखते ही देखते यज्ञ का दिन निकट आ पहुँचा और सारी संगत बस में सवार हो कर नन्दाचौर आ पहुँची। दीवान चन्द भी सुरिन्दर पाल के साथ बस में बैठ गए। बस रात को नौ बजे चली और प्रातः काल नन्दाचौर पहुँच गई।

संगत ने सराय में सामान रखा और बापू जी के दर्शनार्थ पहुँच गई। सुरिन्दर पाल जी दीवान चन्द को साथ लेकर दरबार चले गए और ऊपर चौबारे पर चढ़ कर, सिर झुका कर बापू जी को प्रणाम किया। बापू श्रद्धाराम जी पलंग पर विराजमान थे और उनके तेज से चारों दिशायें व्याप्त हो रहीं थी। बहुत से भक्त गण उनके पद्म-चरणों के पास बैठे उनके अलौकिक साहचर्य का आनन्द उठा रहे थे। लोग उनकी एक झलक पा कर स्वयं को तृप्त एवम् धन्य समझ रहे थे। सुरिन्दर पाल और दीवान चन्द संगत के पीछे बैठ गए और संगत के चले जाने के उपरान्त भी वहीं बैठे रहे। बापू जी ने उन दोनों को पास बुलाया और अपने पास बिठा लिया। फिर बापू जी ने सुरिन्दर पाल से उसका हाल-चाल पूछा और यह भी ज्ञात किया कि उसके साथ कौन-कौन आया है। बापू जी तो अंतर्यामी थे। उन्होंने जान लिया कि जो शख्स साथ में बैठा है वह उनकी परीक्षा लेने हेतु आया है। बापू जी ने

सीधा दीवान चन्द से पूछा, "तुम्हारा क्या नाम है और तुम किस स्थान के रहने वाले हो? तुम किसी उद्देश्य से आये हो और किस ने तुम्हें बुलाया है? तुम्हारे मन में जो कुछ भी है सब कह डालो।"

दीवान चन्द बापू जी का तेज़ देख कर दंग रह गया। उसके मुख से एक भी शब्द नहीं निकला। उसका वाक्चातुर्य पल भर में हवा हो गया। उसका मस्तिष्क विचार शून्य हो गया। बापू जी ने फिर कहा कि आ गये हो तो दिल में जो भी है, कह डालो। बापू जी का गम्भीर स्वर सुन कर दीवान चन्द की रही सही हिम्मत भी जाती रही। उसने सुरिन्दर पाल के कान में फुसफुसा कर कहा कि इनका तेज और तप देख कर मेरे तो पसीने छूट गए हैं। मेरी इतनी हिम्मत ही नहीं हो रही है कि मैं इनके आगे सिर उठाऊँ। इनके तेजस्वी नेत्रों में देखने का साहस मैं नहीं जुटा पा रहा हूँ। मेरी गर्दन इनका ओज देख कर झुक गई है।

फिर दीवान चन्द कहने लगे कि सुरिन्दर जी, आप ही बापू जी को उत्तर दे दीजिए। मैं लेने तो परीक्षा आया था परन्तु हो गया उल्टा। कृपा शीघ्रता से नीचे उतरिये। मेरा दिल तो बहुत घबरा रहा है। मुझसे तो बहुत बड़ी भूल हो गई जो मैने इन्हें पहले नहीं पहचाना। दीवान चन्द जी की ऐसी दशा देख कर सुरिन्दर पाल ने बापू जी से कहा कि बापू जी यह दीवान चन्द नागपाल हैं और भक्त कश्मीर के ताया जी हैं। आप इन्हें आशीर्वाद दे कर इनका कल्याण करें। फिर बापू जी ने दीवान चन्द

को आशीर्वाद दिया और तब दीवान चन्द जी को यह बात समझ में आई कि उन्होंने अपने अहंकार की पुष्टि के लिए एक ईश्वरकोटि महान् सन्त की परीक्षा लेने का विचार कर के भी कितनी बड़ी धृष्टता की है।

बापू जी तो सदैव ही सभी पर कृपा करते थे। जो भी उनके पास आ जाता था वह उनकी आशीर्वर्षा की फुहार में भीग कर पवित्र हुए बिना नहीं रहता था। बापू जी के प्रिय सेवक मन-प्राण से बापू जी की सेवा

करते थे और अपने सेवा कार्य में कभी भी कोताही नहीं बरतते थे।

एक बार बापू जी के एक परम सेवक शिवनाथ कक्कड़ रोग ग्रस्त हो गए। उनके पूरे शरीर पर दानें निकल आए। बहुत इलाज करवाने पर भी दानें ठीक नहीं हुए। शिवनाथ सोचने लगे कि जीवन में हर्ष और शोक तो आते ही रहते हैं और सुख-दुःख तो केवल शरीर का ही भाग है जो जीवों को प्रारब्ध के अनुसार भोगना ही पड़ता है। यह सोच कर उन्होंने और भी कई प्रकार की चिकित्सा करवाई परन्तु ठीक न हो सके। अन्ततः एक दिन राजरानी जसूजा से उनकी मुलाकात हुई। राजरानी बापू जी की अनन्य भक्त थी। उन्होंने शिवनाथ जी को बताया कि बापू जी दिल्ली आए हुए हैं और हमें उनसे मिल कर इस समस्या के बारे में बातचीत करनी चाहिए। बापू जी से प्रार्थना करने पर बापू जी ने शिवनाथ जी को सात धागे पहनने के लिए दिए और पन्द्रहवें दिन धागा बदलने के लिए कहा। बापू जी की कृपा से शिवनाथ कक्कड़ जी

बिलकुल स्वस्थ हो गए। शिवनाथ जी ने तदुपरान्त बापू जी की अनथक सेवा की और अपना जीवन सफल किया। आज भी शिवनाथ जी बापू दरबार की सेवा में सलंग्न हैं।

बापू जी के एक और अनन्य और लाडले सेवक हैं- चौधरी अविनाश चन्द्र, जो बापू जी के परम आशीर्वाद से दिल्ली पुलिस में डिप्टी कमिश्नर पद पर शोभायमान हुए और सम्पूर्ण जीवन ईमानदारी और ज़बरदस्त कर्त्तव्य निष्ठा से अपने कर्त्तव्य का पालन किया। चौ० अविनाश जी ने बापू हरनाम जी से लेकर वर्तमान गद्दीनशीन बापू जी महाराज जी के दर्शनों और सेवा का सौभाग्य प्राप्त किया है। पुलिस में नौकरी के कारण अविनाश जी को खतरनाक अपराधियों और गुंडों से टक्कर लेनी पड़ती थी। अपनी जान हथेली पर रख कर कई बेहद खतरनाक अभियानों को अंजाम देना पड़ता था। परन्तु बापू श्रद्धाराम जी की उन पर ऐसी कृपा थी कि कई बार ऐक्सीडेंट होने और चोटें लगने के बावजूद वह ठीक-ठाक हो कर अपना फर्ज निभाते रहे।

एक बार उनकी माता रुकमण देवी ने बापू श्रद्धाराम जी से प्रार्थना की कि बापू जी, मेरे पुत्र की जान हर समय संकट में रहती है। इससे मेरा मन बहुत घबराता है। मैं चाहती हूँ कि मेरा पुत्र यह नौकरी ही छोड़

दे। आपकी दया से जैसा भी होगा हमारा गुज़ारा हो जाएगा। रुकमण देवी की यह बात सुन कर बापू जी ने कहा कि आप किसी प्रकार की

चिन्ता न करें। इतना कह कर बापू जी ने चौ० अविनाश जी के सिर से ले कर पाँवों तक सारे शरीर पर हाथ फेर कर कहा, "लो, हमने इसे ऐसा फौलादी कवच पहना दिया है कि कोई गोली, कोई तलवार, कोई बरछा इसका बाल भी बाँका नहीं कर सकता। तुम इसके नौकरी छोड़ने की बात करती हो, इसके लिए तो हमने एक ऊँची कुर्सी रखी है जो इसकी प्रतीक्षा कर रही है।"

बापू जी से अभय और पदोन्नति का आशीर्वाद प्राप्त कर चौ० अविनाश चन्द्र बिलकुल निर्भय हो कर और भी अधिक दृढ़-संकल्प और आत्मविश्वास से अपना कर्त्तव्य करते रहे और समय आने पर डिप्टी कमिश्नर आफ पुलिस, दिल्ली के पद को प्राप्त किया। उन्होंने अनेक वर्ष पुलिस में नौकरी की और सेवानिवृत्ति के पश्चात् भी पूरी तरह स्वस्थ रहते हुए कार्यरत हैं। बापू जी का उन्हें यह वरदान है कि जब तक वह चाहेंगे वह अपनी इच्छा से कार्य करते रहेंगे। दरबार के यज्ञ में भले ही वह दिल्ली में हो, सहारनपुर में हो अथवा नन्दाचौर में हो, चौ० अविनाश चन्द को घोड़े पर सवार हो कर सबसे आगे बापू जी की अगुवाई करते देखा जाता है। वह सचमुच ही एक नयनाभिराम दृश्य होता है। बापू जी के प्रिय भक्तों को उनकी मनोरम लीलाओं का सहभागी बना देखना भी वास्तव में मन को प्रफुल्लित कर देने वाला दृश्य होता है। बापू श्रद्धाराम जी ने कहा था कि अविनाश चन्द्र की फोटो मेरे पलंग के पास रखी जाए। वह मेरा पार्षद है जो भी मुझसे

मिलना चाहेगा वह पहले अविनाश से इजाज़त लेगा, फिर वह मेरे पास पहुँचेगा। बापू जी का यह कथन अविनाश जी के लिए एक बहुत बड़ा आशीर्वाद है।

बापू श्रद्धाराम जी के कई शिष्य थे जिन्होंने बापू जी से नाम-दान लिया हुआ था। एक बार एक शिष्य ने बापू जी से कहा कि उसने दीक्षा तो ले ली है परन्तु वह नियमित रूप से जप आदि नहीं कर पाता। इसी से वह परेशान है कि कहीं मुक्ति प्राप्त करने के स्थान पर चौरासी लाख योनियों में फिर से भटकना न पड़े। यह कह कर उस शिष्य ने बापू जी से अपने कल्याण का उपाय पूछा। बापू जी ने उसकी बात सुन कर उत्तर दिया कि तुम्हें घबराने की कोई आवश्यकता नहीं है। बापू जी के घर किस चीज़ की कमी है। फिर भी मैं तुम्हें बताता हूँ कि सेवा और सिमरन दो ऐसी सीढ़ियां हैं जिनके सहारे मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। शिव ज्ञान से जीव की सेवा करने के साथ-साथ प्रभु स्मरण करने से हृदय की सभी ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं। सेवा से विनम्रता आती है और अहंकार का मर्दन होता है।

बापू जी जो कहते थे उसे चरितार्थ भी कर के दिखाते थे। जब संगत के निवास के लिए सराय का निर्माण हो रहा था, तब बापू जी रोड़ी कूटने के साथ-साथ नालियों का कूड़ा भी अपने हाथों से उठाया करते थे। बापू जी रोड़ी कूटते हुए भजन गाया करते थे-

बापू द्वारे उते आ के ढोड़ए टोकरी उच्चे भागां वाले करदे शहंशाह दी नौकरी।

बापू जी को इस प्रकार करते देख कर संगत के मन में भी उस प्रकार सेवा करने की स्फुरणा होती थी और वह भी बापू जी के साथ सेवा कर अपना जीवन सफल किया करती थी। बापू श्रद्धाराम जी सदृश महापुरुषों के कार्यों का विवेचन करना साधारण मानवीय बुद्धि के वश की बात नहीं है।

एक बार सेवकों ने देखा कि बापू जी रात्रि के समय गमलों में पानी डाल रहे हैं। यह सिलसिला कई दिन चला। भक्त-जन इस बात को नहीं समझ पाए कि बापू जी का रात्रि के समय गमलों में जल डालने का क्या उद्देश्य हो सकता था। बापू जी से यह प्रश्न पूछने का साहस तो किसी में भी नहीं था। उन्हीं दिनों भारत-पाकिस्तान का 1965 का युद्ध चल रहा था। नन्दाचौर के पास आदमपुर में जो एयर-बेस था उसे बमों से उड़ा देने के उद्देश्य से पाकिस्तान के लड़ाकू बम वर्षक विमान रात के समय वहाँ चक्कर लगाया करते थे। एक दिन पाकिस्तान का एक पायलट पकड़ा गया और पूछताछ में उसने जो खुलासा किया वह आश्चर्यचकित कर देने वाला था। उस पायलट ने बताया कि जब वह उस इलाके के ऊपर से गुजरता था तब उसे नीचे चारों ओर पानी ही पानी नज़र आता था। इसलिए वह कभी बम गिरा ही नहीं पाया और

वह इलाका बिलकुल सुरक्षित बच गया। वास्तव में जब बापू जी गमलों का पानी दिया करते थे तब उस समय उस पायलट को नीचे भूमि दिखाई ही नहीं देती थी और उसके स्थान पर जल ही जल दिखाई देता था। बापू श्रद्धाराम जी ने इस अति अद्भुत करिशमे से नन्दाचौर के समस्त क्षेत्र की बमबारी से रक्षा की।

बापू जी का यह भी कहना था कि लाउड स्पीकर से दरबार में हो रहे कीर्तन और पाठ की ध्वनि जहाँ तक जाएगी वहाँ कोई अनिष्ट होने वाला नहीं है। इन्सान भले ही कुत्सित इरादों से निर्दोष व्यक्तियों की हत्या करने के लिए विज्ञान की शक्तियों का दुरुपयोग ही क्यों न करे, एक महान् और सच्चे शहाना योगी के तपोबल की शक्ति के आगे सब व्यर्थ हो जाते हैं।

बापू श्रद्धाराम जी की शक्तियों का न कोई आदि था न अन्त। अपने भक्तों पर आने वाले कष्टों का पूर्व ज्ञान तो उन्हें होता ही था, साथ ही यदि कोई भक्त संकट में पड़ कर उन्हें पुकारता था, तब वह तत्काल उसकी सहायता हेतु वहाँ पहुँचते थे और उसकी रक्षा करते थे। एक बार दिल्ली निवासी इन्दिरा जी, उनके पुत्र कृष्ण लाल नागपाल और एक अन्य सत्संगी श्याम दास गंगा स्नान के लिए हरिद्वार गए। जब वे तीनों भक्त लोहे की संगल पकड़ कर स्नान कर रहे थे तब अचानक पानी के तीव्र प्रवाह के कारण वह संगल उनके हाथों से छूट गई और

तीनों पानी में डूबने लगे। तीनों भक्तों के मुख से निकला " बापू जी हमें बचाओ, बापू जी हमें बचाओ।"

जिस वक्त उन भक्तों के हृदय से प्राण-रक्षा के लिए बापू जी के लिए पुकार निकल रही थी उस समय बापू जी नन्दाचौर में प्रातः सात बजे बैठ कर सुखमनी साहब का पाठ कर रहे थे। साथ ही प्रीतम लाल कीर्तन कर रहे थे। अचानक बापू जी ने बोलना आरम्भ किया, "डूबतों को बचाओ, डूबतों को बचाओ।"

बापू जी कुछ देर ऐसा ही बोलते रहे। जब बापू जी यह बोल रहे थे तब कीर्तन करने वालों ने कीर्तन बन्द कर दिया। थोड़ी देर में जब बापू जी सामान्य हुए तब कीर्तन वालों ने फिर से कीर्तन आरम्भ कर दिया। उस समय दरबार में जो व्यक्ति थे उन में से कुछ ने वह समय नोट कर के लिख लिया, उधर हरिद्वार में चमत्कारिक तरीके से वह तीनों भक्त बच गए। उन्हें आभास हुआ कि पानी की लहरों ने उन्हें स्वतः ही किनारे की ओर ला कर छोड़ दिया है और संगल फिर से हाथ में आ जाने से वे धीरे-धीरे सीढ़ियां चढ़ कर ऊपर आ गए।

अपनी प्राण-रक्षा के तीन-चार दिन बाद वे भक्त नन्दाचौर आये और बापू जी का शुक्राना अदा किया। जब उन्होंने सारी घटना सुनाई और बताया कि वह वाकया सुबह सात बजे घटित हुआ था तब कुछ भक्त जिन्होंने उस दिन समय नोट किया था, उन्हें यह रहस्य समझ में

आ गया कि उस दिन बापू जी ने ' डूबतों को बचाओ' क्यों और किन के लिए कहा था।

यहाँ एक बात विशेष रूप से वर्णनीय है कि जहाँ गृहस्थ अपने माता-पिता, पति-पत्नी, पुत्र-पुत्री और अन्य सम्बन्धियों का उत्तरदायित्व निभाते हैं वहीं एक संत जो ईश्वर के लिए अन्य सांसारिक बन्धनों और सम्बन्धों का त्याग करते हैं, उन्हें ईश्वर एक रक्त-सम्बन्धों पर आधारित परिवार की अपेक्षा प्रेम के दिव्य सम्बन्धों से परिपूरित बहुत बड़ा परिवार दे देते हैं। उन ईश्वरीय सन्तानों के जन्म से ले कर लालन-पालन तक और शिक्षा-प्राप्ति से ले कर विवाह तक और फिर जीवन के हर एक पड़ाव पर वह संत प्रति पल उनके संग रह उनकी रक्षा करते हैं। बापू श्रद्धाराम जी को भी बापू ओम जी और बापू हरनाम जी से ऐसा ही बृहद् परिवार मिला था।

बापू श्रद्धाराम जी की समस्त सन्तानें उन्हें अत्यधिक प्रिय थी। उनका वह दिव्य परिवार आज खूब फल-फूल कर लहलहा रहा है। उनकी सन्तानें जीवन के हर क्षेत्र में अपनी सफलता के झण्डे गाड़ रही हैं। बापू श्रद्धाराम जी का वह अलौकिक, दिव्य प्रेम सभी सन्तानों की नस-नस में प्रवाहित हो, उन्हें सदैव प्रसन्न चित्त एवं, आनन्दित रखता है। बापू जी की कोई सन्तान उदास या दुःखी हो, यह उन्हें कतई अभीष्ट नहीं है।

नन्दाचौर में एक भक्त बिशन सिंह कीर्तन करने आता था।

उसका रोज का नियम था कि वह बापू जी के दर्शन कर उनका, आशीर्वाद ले कर, भगवान का कीर्तन किया करता था। एक दिन जब वह नन्दाचौर आ रहा था उसे एक पण्डित मिला। उस पण्डित ने उसका हाथ देखा और कहा कि तुम्हारी आयु तो केवल तीन वर्ष ही शेष है। पण्डित की इस बात का बिशन सिंह पर बहुत नकारात्मक असर हुआ। उस दिन वह दरबार न जा कर घर वापिस चला गया और यह सोच-सोच कर बीमार हो गया कि उसके अब बहुत थोड़े दिन ही बचे हैं। उसने कीर्तन पर आना भी बन्द कर दिया। बापू जी जब बिशन सिंह से मिले तो उन्होंने उस का हाथ पकड़ कर अपना हाथ उस पर घुमाते हुए कहा, "अभी तो तेरे पोते भी होने हैं और तू अभी से जाने की तैयारी कर रहा है।"

बापू जी के स्पर्श का उस पर ऐसा असर हुआ कि वह ठीक हो कर उठ बैठा और उनके चरणों में प्रणाम किया। उसने फिर से अपना नियम शुरु कर दिया और कीर्तन करने लगा। बाद में उसका विवाह हुआ, बच्चे हुए और पोते भी हुए। कई वर्षों बाद वह पण्डित उसे दोबारा मिला और उसका हाथ देखकर बोला कि आयु तो तुम्हारी तीन वर्ष ही शेष थी, यह तो किसी संत ने कृपा कर के तुम्हारा भाग्य ही फिर से लिख दिया है। ऐसे थे बापू श्रद्धाराम और ऐसी सुन्दर थीं उनकी लीलायें।

बापू जी अपने प्यारे भक्तों के आग्रह पर उनके घर भी जाया करते थे। उनके भक्त उनके श्री चरणों को अपने घर में डलवा कर बहुत सन्तुष्ट और प्रसन्न हुआ करते थे। एक बार 1972 में बापू जी लुधियाना में करमचन्द चुघ के घर गए। उन दिनों करमचन्द जी के पास एमबैस्डर गाड़ी थी। उस गाड़ी में वह बापू श्रद्धाराम जी को लाए थे। बापू जी का सेवक गुरु भी उनके साथ था। बापू जी करमचन्द जी के घर गए, जलपान किया, कुछ देर रुके और फिर वापिस जाने के लिए जैसे ही गाड़ी में बैठे वैसे ही करमचन्द जी का छोटा पुत्र बॉबी चुघ भी बापू जी के पीछे-पीछे आ गया और गाड़ी का दरवाजा खोल कर अन्दर बैठना ही चाहता था कि अचानक दरवाजा बन्द हो गया और उसका हाथ दरवाज़े में आ गया।

बॉबी का आधा हाथ गाड़ी के अन्दर और आधा बाहर था। बॉबी ने रोना शुरू कर दिया। उस समय ड्राईवर कहीं बाहर चाय पीने गया हुआ था। वहाँ जो लोग उपस्थित थे उन्हें गाड़ी खोलनी नहीं आती थी।

करीब सात-आठ मिनट यही स्थिति रही। जब ड्राईवर वापिस आया और दरवाजा खोला तब बापू जी ने तुरन्त अपना रुमाल बॉबी के हाथ पर रख दिया और पाठ करने लगे। थोड़ी देर बाद जब बापू जी ने रूमाल हटाया और हाथ देखा तब हाथ बिल्कुल ठीक-ठाक निकला और उसमें किसी भी प्रकार का कोई नील या कोई अन्य विकार दृष्टि गोचर नहीं हुआ। आज तक लोग बापू जी के प्रति श्रद्धा और आदर दिखाते

हुए बॉबी चुघ का हाथ चूमते हैं और उस भगवतुल्य गुरु को याद करते हैं जिन्होनें उस दिन उस बच्चे पर आये संकट का निवारण किया और उसे हल्का सा भी नुकसान नहीं होने दिया ।

बापू जी के प्रिय भक्तों का काल भी असमय कुछ नहीं बिगाड़ सकता। प्रस्तुत दृष्टान्त बापू जी की करुणा, ममता, कृपा, दया और अपने भक्तों के लिए असीम प्रेम का विलक्षण उदाहरण हैं। 1970 में एक चौदह वर्षीय बालक बलबीर सैंडी अपनी बहन के विवाह के अवसर पर होशियारपुर आया हुआ था। वह अपने भाई के साथ खेलते-खेलते मकान के ऊपर बनी बालकनी पर चला गया और करीब 15 फीट की ऊँचाई से नीचे गिर पड़ा। नीचे हलवाई एक बड़े कड़ाहे में कुछ भोज्य पदार्थ बना रहा था। उस कड़ाहे में खौलता हुआ तेल था जिसमें खाद्य-पदार्थ बन रहे थे।

बलबीर सीधा उसी कड़ाहे में गिरा। उसके गिरते ही चारों ओर शोर मच गया। लोगों ने तुरन्त उसे बाहर निकाला और एक ओर बने कमरे में ले गए। परन्तु घोर आश्चर्य ! बलबीर के पूरे शरीर में एक खरोंच का निशान भी नहीं था। उसके पैर का एक नाखून जरूर जड़ से अलग हो गया था। इसके अतिरिक्त उसके शरीर में गरम तेल के पड़ने का तनिक भी प्रभाव नहीं था। बलबीर तो ठीक-ठाक था परन्तु बापू जी जो इस घटना के घटने के समय नन्दाचौर में बैठे थे अचानक गिर पड़े

और उनका शरीर खून से लथपथ हो गया। उनके शरीर में जगह-जगह छाले भी पड़ गए।

फिर एक चमत्कार और हुआ, जिस समय बलबीर गिरा उसके दो मिनट के अन्दर ही बापू जी का एक सेवक साईकिल द्वारा नन्दाचौर से होशियारपुर उनके घर आया और कहने लगा कि मुझे बापू श्रद्धाराम जी ने भेजा है कि जा कर सेवादास सैंडी के पुत्र का हाल पता कर के आओ, वह कड़ाहे में गिर गया है। सेवादास सैंडी यह सुन कर बहुत अधिक हैरान हो गए और कहने लगे कि अभी तो बलबीर गिरा ही है और अभी आप पहुँच भी गए। आप कह रहे हैं कि बापू जी ने आपको भेजा है। वह सब तो ठीक है परन्तु आप इतनी जल्दी नन्दाचौर से होशियारपुर कैसे पहुँच गए।

तब उस सेवक ने उत्तर दिया कि मुझे तो बापू श्रद्धाराम जी ने आपके बेटे का हाल पता करने भेजा है और उन्होंने यह भी कहा है कि शाम को बलबीर को माथा टिकाने नन्दाचौर दरबार ले कर आओ। इतना कह कर बलबीर को देख कर सेवक चला गया। अब सेवादास भी सब कुछ समझ गये थे। वह बलबीर को ले कर नन्दाचौर गए और बापू श्रद्धाराम जी को माथा टेका। उन्हें यह देख कर बहुत विस्मय हुआ कि बापू जी का पूरा शरीर घायल था, उन्हें जगह-जगह छाले पड़े हुए थे। स्पष्ट था कि बापू जी ने बलबीर का सारा कष्ट अपने ऊपर ले लिया

था और काल से उसकी रक्षा की थी। बापू जी ने बलबीर को मिल कर बहुत प्यार किया और दो थापड़े मारे। फिर उसे अपने दिव्य आशीर्वाद से नवाज़ा और अभय दान दिया।

क्या कोई लेखनी बापू जी की इस अनूठी कृपा का विवेचन कर सकती है? बापू जी ने अपने जीवन-चरित्र से बार-बार यह बात प्रकट की है कि प्रेम का भाव और प्रेम का सम्बन्ध अन्य सभी मनोभावों से उच्च और श्रेष्ठ है। बापू जी के पवित्र और दिव्य प्रेम का पान एक बार जिसने कर लिया वह और केवल

वह ही यह समझ सकता है कि प्रेम कितना शक्तिशाली है और यह भी कि प्रेम का स्पन्दन कितनी शीघ्रता से किसी के भी व्यक्तित्व का पुनर्गठन कर सकता है।

जब कोई प्रेम के नेत्रों से देखता है, प्रेम के कानों से सुनता है, प्रेम की वाणी से बोलता है और प्रेम के हृदय से महसूस करता है तो सम्पूर्ण प्रेममय ईश्वर को वह तुरन्त ही अनुभूत कर सकता है और ऐसे अद्भुत प्रेम की अनुभूति तब ही होती है जब मनुष्य सम्पूर्ण सृष्टि के एक-एक कण को ईश्वरमय देखता है। जब वह देखता है कि किसी भी देहधारी जीव की पीड़ा, भले ही वह मनुष्य हो अथवा पशु, केवल उस सम्बन्धित मनुष्य अथवा पशु की ही नहीं वरन् उसकी भी है, तब वह बड़ी प्रसन्नता से उन पर आने वाले कष्टों को ग्रहण कर दूसरों को उस कष्ट से मुक्ति दे देता है। बापू श्रद्धाराम जी जैसे कोमल हृदयी संत

किसी भी मनुष्य पर आये संकट को बर्दाशत नहीं कर सकते थे और तत्काल उसे दूर कर देते थे। बापू जी ने जहाँ अपने भक्तों की प्राण रक्षा की वहीं ऐसे अनेक भक्तों की आजीविका चलाने हेतु आशीर्वाद दिए, जिनके किसी प्रारब्ध के कारण उनकी आजीविका का कार्य बाधित हो रहा था अथवा हो सकता था।

लुधियाना निवासी श्री रमेश गुम्बर की माता श्रीमती वीरां बाई जिन्हें बापू श्रद्धाराम जी स्नेह से मीरां बाई कहते थे, की बापू श्रद्धाराम जी में अटूट श्रद्धा थी। उनके पुत्र रमेश जी ने अपनी दुकान का मुहूर्त करना था, वीरां बाई जी ने अपने पुत्र से कहा कि वह नन्दाचौर जा कर बापू जी से शुभ मुहूत निकलवाये और उसी दिन अपनी दुकान शुरु करे। अपनी माँ की यह इच्छा जान कर रमेश जी थोड़े असमंजस में पड़ गए। वह सोचने लगे कि हम तो सारे कार्य लुधियाना निवासी पण्डित लक्ष्मण दास से पूछ कर करते हैं और वह पंचांग में से शुभ मुहूर्त देख कर जो शुभ लग्न बताते हैं, हम उसी हिसाब से कार्य करते हैं। रमेश जी ने अपने इस विचार से वीरां बाई जी को अवगत करवा दिया परन्तु वीरां जी ने फिर भी रमेश जी को नन्दाचौर जाने के लिए आदेश दे दिया।

माता की आज्ञा शिरोधार्य करके रमेश जी नन्दाचौर के लिए चल पड़े परन्तु पूरे मार्ग में वह यही सोचते रहे कि उनकी माता जी इस कार्य के लिए उन्हें नन्दाचौर क्यों भेज रही हैं? वह कार्य तो पं० जी पंचांग देख

कर लुधियाना में भी कर सकते थे। ऐसा सोचते-सोचते रमेश जी नन्दाचौर पहुँच गए। उन्हें पहुँचते हुए शाम हो गई थी। रमेश जी ने पहुँच कर बापू जी के श्री चरणों में प्रणाम किया और बैठ गए। बापू जी ने आशीर्वाद दे कर पूछा, "कहो, कैसे आये हो?" रमेश जी ने हाथ जोड़ कर कहा, “आपने जो दुकान ले कर दी है, उसकी फिटिंग आदि का कार्य पूरा हो गया है। अब आप बताइए कि मैं किस दिन उसका मुहूर्त करूँ?"

रमेश जी की बात सुन कर बापू जी ने कहा, "सामने पंचांग पड़ी है। उसे ले आओ।" रामेश जी पंचांग ले आए। बापू जी ने एक पृष्ठ खोला जिसमें कई कोष्ठक बने हुए थे। बापू जी ने रमेश जी से कहा कि किसी भी एक कोष्ठक में उगंली रख दो। रमेश जी ने वैसा ही किया। बापू जी ने कहा कि जिस नंबर पर तुमने उंगली रखी है उसका फलादेश आगे दिया हुआ है। उसे पढ़ लो। रमेश जी ने फलादेश पढ़ा और एकदम खामोश हो गए। बापू जी ने पूछा "क्या लिखा है?" रमेश जी चुप ही रहे। बापू जी ने फिर पूछा कि क्या लिखा है? रमेश जी दबे स्वर में बोले, "इस में लिखा है कि जो कार्य तू आरम्भ करने जा रहा है वह चलना नहीं है।" रमेश जी यह पढ़ने के बाद बहुत व्यथित हो गए थे कि वहाँ मैं तो मुहूर्त की बात सोच कर बहुत प्रसन्न हो रहा था और कहाँ इस प्रकार का फलादेश निकल आया है। बापू जी ने रमेश जी की तन्द्रा भंग करते हुए कहा, “पंचांग का काम पूरा हो गया। जहाँ से

उठाया था वहीं रख आओ।" रमेश जी घबराते हुए बहुत मायूस हो कर पंचांग वापिस रखने चले गए। वापिस आए तो बापू जी दिलासा देते हुए बोले कि घबराता क्यूँ है? हम बैठे हैं। पंचांग का कार्य पूरा हो गया है और हमारा काम तो अब शुरू होगा। यह कह कर बापू जी ने पूछा, "आज कौन सा दिन है।"?

रमेश जी ने बताया कि आज मंगलवार है। बापू जी ने कहा, "ठीक है, तुमने आने वाले रविवार को सुबह मुहूर्त करना है। पं० लक्ष्मण दास को बुला लेना। वह पूजा कर के मुहूर्त कर देगा। और हाँ, यदि आप मुझे बोलेंगे कि मैं उस मुहूर्त पर आऊँ तो मैं मना नहीं करूंगा परन्तु आप बोलना नहीं।" बापू जी के यह वचन सुन कर रमेश जी और भी असमंजस में पड़ गए। उनके मन में दुविधा उठी कि बापू जी ने ऐसा क्यों कहा? उनके मन की दुविधा देख कर बापू जी ने कहा, "बेटा, तुम धर्मसंकट में न पड़ो। अब यहाँ रह कर तुम्हारी दुकान के लिए बापू जी से प्रार्थना करना आवश्यक हो गया है और यह काम यहीं नन्दाचौर में ही हो सकता है। फिर भी यदि तुम कहोगे तो मैं आ जाऊँगा।" बापू जी की बात सुन कर रमेश जी ने कहा कि आप जो उचित समझें, वह कर लें। बापू जी ने कहा, "जो तुम बोलोगे वह करेंगे। तुम्हें स्पष्ट बोलना पड़ेगा कि मैं यहाँ नन्दाचौर में रहूँ या वहाँ लुधियाना जाऊँ।" रमेश जी एक बार फिर दुविधा में पड़ गए परन्तु हिम्मत कर के बोले कि बापू जी, आप यहीं रूकें। जैसा आदेश है वैसा करें। यह सुन कर बापू जी ने

कहा,"तेरे साथ वादा है। जब भी लुधियाना आयेंगे, तेरी दुकान पर अवश्य आयेंगे।"

इसके बाद रमेश जी बापू जी से आशीर्वाद प्राप्त कर घर आ गए और बापू जी के बताए दिन के अनुसार 30 सितंबर 1974 को दुकान का मुहूर्त कर दिया। अगले महीने अक्तूबर के आखिरी सप्ताह में बापू जी लुधियाना किसी के घर आए। उन दिनों कुछ राजनीतिक अस्थिरता के कारण माहौल कुछ ठीक नहीं था। बापू जी जहाँ ठहरे थे उन्होंने उन घर वालों से कहा कि रमेश की दुकान पर जाना है। उन लोगों ने यह कह कर मना कर दिया कि बापू जी जहाँ आप जाना चाहते हैं, वहाँ हालात बहुत खराब है। वहाँ गाड़ी भेजना सम्भव नहीं होगा। तब बापू जी ने रमेश जी को बुला कर कहा कि तुम टैक्सी ले कर आओ। हमने तुमसे जो वादा किया था वह पूरा करना है। फिर बापू जी ने उन घरवालों को कहा कि आप भी हमारे साथ टैक्सी में चलोगे।

घरवालों ने कहा कि हमारी गाड़ी किसलिए है। बापू जी ने कहा कि मेरी यही इच्छा है कि हम टैक्सी में जाएं। बापू जी सांयकाल दुकान में पधारे। उनके साथ गुरु लक्ष्मण दास भी थे। बापू जी ने ढेर सारा प्यार और आशीर्वाद दिया। रमेश जी की माता वींरा बाई और पिता श्री देसराज गुम्बर जी को भी बापू जी ने बहुत प्यार दिया। बापू जी ने रमेश जी की माताजी से कहा, " मीरां बाई हमारी यह इच्छा थी कि हम

दुकान में उस समय आयें जब दुकान ग्राहकों से भरी हो। आज बापू जी ने हमारी विनती को स्वीकार कर लिया है। हम उसी समय आये हैं जब दुकान भरी हुई है।" फिर बापू जी ने समस्त परिवार के लिए मंगलकामना की और रवाना हो गए। आज बापू जी का दिया वह आशीर्वाद ही फलीभूत हो रहा है और रमेश जी का परिवार हर प्रकार से सुखी और सम्पन्न है।

कुछ इसी प्रकार का आशीर्वाद बापू जी ने कानपुर निवासी श्री विनोद कुमार सेतिया को भी दिया था। 1973 में विनोद जी सरकार से अपना टैन्डर पास करवाने की जी तोड़ कोशिश कर रहे थे। वह सरकारी कान्ट्रैक्टर थे और ट्यूबवैल फिट करने का कार्य करते थे। बहुत कोशिश करने पर भी उनका टैन्डर पास नहीं होता था। एक दिन उन्हें परेशान देख कर उनके पिता धर्मचन्द सेतिया ने कहा कि अब की बार टैन्डर भरने से पहले बापू श्रद्धाराम जी से पैन बनवा लाओ। विनोद जी ने अपने पिता का कहा मान कर वैसा ही किया। बापू जी से आशीर्वाद प्राप्त कर और पैन बनवा कर वह कानपुर लौट आए और उस पैन से टैन्डर भर दिया। तत्पश्चात् बड़े ही चमत्कारिक तरीके से उनका टैन्डर पास हो गया। आश्चर्य की बात तो यह थी कि उनका टैन्डर केवल एक रुपये के अन्तर से पास हुआ था। उनके विपक्षी ने 19800 रु का टैन्डर भरा था और विनोद जी ने 19799 रुका। बापू जी की अपार कृपा से टैन्डर विनोद जी को मिल गया। यह देख कर उनका

प्रतिद्वंदी बहुत परेशान हो गया। उसमें ईर्ष्या भाव जागृत हो गया और वह सोचने लगा कि हो न हो अवश्य ही विनोद ने कोई जासूस मेरे पीछे लगा रखा था अन्यथा केवल एक रुपये के अन्तर पर इसका टैन्डर कैसे पास हो सकता है। उसने मन ही मन विनोद जी के कार्य में विघ्न डालने का निश्चय किया।

जब विनोद जी ने ट्यूबवैल फिट करवाने के लिए मेहनत आरम्भ की तो विपक्षी ने उनकी हर एक गतिविधि पर नज़र रखना शुरु कर दिया। उसने सोच लिया था कि किसी भी तरीके विनोद का ट्यूबवैल फेल करवाना है ताकि आगे के लिए यह काली सूची में आ जाए और भविष्य में कभी भी और कोई

कान्ट्रैक्ट हासिल करने के लायक न रहे। एक दिन जब ट्यूबवैल की फिटिंग का कार्य चल रहा था तब किसी प्रकार उस विपक्षी ने कोई बहुत महत्वपूर्ण तार ही काट दी जिससे कि वह ट्यूबवैल चलने के लायक ही न रहे।

वैसे तो वह विपक्षी विनोद जी को प्रति दिन मिलता था और हाल-चाल पूछता था परन्तु अन्दर ही अन्दर वह उनका अहित ही चाहता था। जिस दिन उस ट्यूबवैल का परीक्षण होना था उस से एक दिन पहले विनोद जी ने टयूबवैल का स्वयं परीक्षण करने के लिए जब बटन दबाया तब ट्यूबवैल नहीं चला। जब विनोद जी ने सारी तारों की जाँच-पड़ताल करवाई तब भी उस समय उन्हें कोई दोष नजर नहीं

आया। अब विनोद जी को घबराहट होने लगी। अगले दिन अधिकारियों ने आना था और ट्यूबवैल की समस्या का पता नहीं चल पा रहा था। विनोद जी की घबराहट जान कर उनके पिता ने कहा कि सब फिक्र छोड़ दो। अब यह बापू श्रद्धाराम जी का कार्य है। यह कार्य उन्होंने ही सिरे चढ़ाना है।

कल जब अधिकारी आएंगे तब तुम बटन दबाने से पहले बापू श्रद्धाराम जी के नाम का जयकारा लगाना। विनोद जी ने अपने पिता का कहा मान कर बापू जी को स्मरण करना शुरु कर दिया। अगले दिन जब अधिकारी परीक्षण के लिए आये तो विनोद जी ने बापू जी के नाम का जोरदार जयकारा लगा कर बटन दबा दिया। बटन दबाते ही चमत्कार घटित हुआ। टयूबवैल शानदार तरीके से चल पड़ा और फर-फर कर के पानी खूब तेजी से बहने लगा।

यह देख कर विनोद जी भाव-विभोर हो उठे और बापू जी का बारम्बार धन्यवाद करने लगे। अधिकारी भी पानी चलता देख कर बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे कि विनोद जी, आपकी कम्पनी बहुत ही बढ़िया है। कहाँ तो विनोद जी को अपनी कम्पनी का नाम काली सूची में डाले जाने का भय था और कहाँ उनकी कम्पनी की बेशुमार तारीफ की गई। इस घटना के बाद विनोद जी का काम चल निकला और बापू जी में उनका प्यार और विश्वास और भी दृढ़ हो गया।

समय आने पर बापू जी की कृपा से विनोद जी का विवाह हुआ। विवाहोपरान्त धर्मचन्द सेतिया और उनकी पत्नी लाजवंती अपने तीनों पुत्रों मनोहर लाल सेतिया, रंजीत कुमार और विनोद कुमार एवम् उनकी पत्नियों को ले कर नन्दाचौर आए और बापू जी से प्रार्थना की कि वह सभी बच्चों को दीक्षा दें। बापू जी ने पूछा- "क्या तुम शराब, मीट, अण्डा आदि लेते हो?" तीनों भाईयों ने कहा कि कभी-कभार ले लेते हैं। बापू जी ने उन्हें समझाते हुए कहा कि दीक्षा होने के पश्चात् यह सब ग्रहण नहीं करना है। तीनों भाईयों ने कहा कि ठीक है, हम नहीं खायेंगे। धीरे-धीरे समय बीतता गया। तीन साल बीतने को आए।

मनोहर लाल कभी-कभार निषिद्ध चीजों को ग्रहण कर लिया करते थे। किसी के पूछने पर कहते थे कि बापू जी ने इतनी सख्ती से मना थोड़े ही किया है। 1976 में विनोद सेतिया बीमार पड़ गए। उन्हें अचानक मलेरिया हो गया जो उनके सिर पर चढ़ गया। उन्हें 23 दिन अस्पताल में रहना पड़ा। इसी बीच मनोहर लाल सेतिया को एक गहन अनुभूति हुई कि उन्होंने अण्डा, मीट नहीं छोड़ा था इसलिए उनके भाई को यह कष्ट है। यह बात मन में आते ही उन्होंने मुर्गा बन कर अपने कान पकड़े और बापू जी को हाज़िरनाज़िर जान कर कहा कि आज के बाद मैं कभी अंडा, मीट नहीं खाऊँगा। बापू जी, आप मेरे भाई को बचा लीजिए। मनोहर जी की इस प्रार्थना के बाद उनका भाई धीरे-धीरे ठीक होने लगा और बापू जी की कृपा से बिल्कुल स्वस्थ हो गया।

श्री नारायण चरितामृत

बापू जी का अपने भक्तों से जो सम्बन्ध है वह केवल एक जीवन या एक जन्म तक ही सीमित नहीं है। जन्मों-जन्मों से ये भक्त किसी न किसी रूप में उस चैतन्य सत्ता से जुड़े होते हैं। ईश्वर की दृष्टि से वे कभी भी ओझल नहीं होते। अपने कर्मों के हिसाब से फल-भोगते हुए ऐसे व्यक्ति कभी न कभी महान् सन्तों की शरण में पहुँच ही जाते हैं। कोई न कोई घटना या कोई माध्यम उन्हें उस महापुरुष तक ले ही आता है जिनके हाथों उस व्यक्ति का उद्धार सम्भव होता है।

एक ऐसी ही आत्मा उत्तर-प्रदेश के मेरठ के पास एक कस्बे रामराज के पश्चिम में एक गाँव पुठ्ठी इब्राहिम पुर में निवास कर रही थी। उसका नाम था शीश पाल। वह एक जाट थे। वह विवाहित थे और उनके तीन बेटे थे। काम के नाम पर वह मारना, पीटना, लूटना आदि बुरे काम करते थे। हर प्रकार के नशे करना भी उनका शौक था। उस क्षेत्र में उनके नाम की दहशत थी। एक बार शीश पाल नशा करके

चलने लगे और चलते-चलते मीरा पुर पहुँच गए। वहाँ वह चरण दास जसूजा नामक एक कपड़े वाले की दुकान में जा कर लेट गए और बड़े रोब से कहने लगे, “आज मैं तेरी दुकान में लेटूँगां।" यह कह कर पास पड़े एक बैंच पर लेट गए और सो गए। उधर चरण दास की दुकान पर डर के मारे कोई ग्राहक नहीं आया, फिर भी वह शान्त रह कर शीश पाल के उठने की प्रतीक्षा करता रहा। जब शाम को शीश पाल कई घण्टे की नींद के बाद उठे तो गरज़ के बोले-"पानी लाओ।" चरण दास पानी ले

आया। उस पानी को पीते ही उनकी बुद्धि पलट गई। शीश पाल सोचने लगे कि यह आदमी कितना भला है। एक तो मैं जबरदस्ती इसकी दुकान में घुस आया और इसकी ग्राहकी भी खराब की और दूसरी तरफ यह व्यक्ति तनिक भी क्रोध न कर के मेरी सेवा में लगा है।

तब शीश पाल ने चरण दास से पूछा कि वह इतना शान्त और सन्तुष्ट कैसे है? चरण दास ने बताया कि यह तो मेरे बापू की दया है। यदि आप को भी यह शान्ति चाहिए तो आप भी मेरे बापू के पास चलिए। यह सुन शीश पाल बोले-"तेरे बापू से तो मैं रोज सुबह मिलता हूँ।" चरण दास ने उत्तर दिया कि मैं तो उस बापू की बात कर रहा हूँ जो कि परमात्मा है, पूर्ण है। सारी दुनिया के वह बापू तो नन्दाचौर में विराजमान हैं। यदि आप भी उस बापू के दर्शनाभिलाषी हैं तो मैं आप को नन्दाचौर ले जाऊंगा। नन्दा चौर का नाम सुन कर शीश पाल बोले-"अबे, एक चोर तो मैं खुद ही हूँ। अब नन्दाचौर में तू मुझे किन चोरों के बीच ले जायेगा।" यह सुन चरण दास ने कहा, "एक बार चलो तो सही, मेरे बापू तेरे सभी ऐब चुरा लेंगे।" चरण दास से मिलने के बाद शीश पाल के मन में नन्दाचौर जाने की बात बैठ गई। तब 1969 के माघ का महीना था। शीश पाल कुछ दिनों बाद चरण दास के साथ नन्दाचौर की यात्रा पर निकल पड़े। उनके साथ चरण दास के पिता और एक अन्य लड़का संजीव भी था।

पूरे रास्ते शीश पाल के मन में बापू जी की छवि उभरती रही। वह सोच रहा था कि बापू जी कोई बड़ी-बड़ी जटाओं वाले साधु होंगे जिन्होंने धूनी रमाई होगी, पास में चिमटा पड़ा होगा, भस्म का लेप किया होगा, चिलम पी रहे होंगे। चिलम की कल्पना मन में आते ही शीश पाल खुश हो गये। नशेड़ी तो थे ही

सोचने लगे कि मैं भी उनके पास बैठ कर भांग पीऊगा। यही कल्पना करते-करते वे शाम चौरासी स्टेशन पहुँच गए और वहाँ से पैदल चलते-चलते नन्दाचौर आ गए। जिस समय वे सब वहाँ पहुँचे, बापू जी ऊपर आराम कर रहे थे। थोड़ी देर बैठने के बाद उन्हें ऊपर बुलाया गया।

शीश पाल ने पहली बार बापू जी के दर्शन किए और सोचने लगे कि इनकी छवि तो कतई उनकी की हुई कल्पना से मेल नहीं खाती। शीश पाल को कई वर्ष पहले किसी फकीर ने बताया था कि सच्चे साधुओं के नाखून ऐसे होते हैं। उसने ध्यान से, देखा और सोचा कि बापू जी के नाखून तो वैसे ही लगते है जैसे कि सुना था। फिर भी उस समय तक शीश पाल को सन्तुष्टि नहीं हुई कि सामने विराजमान बापू जी कोई बहुत पहुँचे हुए फकीर हो सकते हैं। उसने सोचा कि यह मैं कहाँ फँस गया। यह सादे वस्त्र धारण किए तो हमारे बाप-दादा जैसे लग रहे हैं। इनमें भला क्या खास बात हो सकती है। फिर उसने सोचा-"चमगीदड़ों के मेहमान चमगीदड़। जैसे ये लटकेंगे वैसे ही हम भी लटक लेंगे।" शीश पाल अभी यह सोच ही रहे थे कि चरण दास और

दूसरे लोगों ने बापू जी को माथा टेका।

तत्पश्चात् शीशपाल जी की बारी आई। जैसे ही शीशपाल ने बापू जी को माथा टेका उनके हाथ बापू जी के चरणों से चिपक गए। बहुत जोर लगाने पर भी उनके हाथ चरणों से अलग नहीं हुए। उन्हें बहुत जल्दी ही अपने संशयों का उत्तर मिल गया था। फिर शीश पाल ने बापू जी के चरणों में माथा टेका। उनका माथा भी चरणों से चिपक गया। अब तो शीश पाल कुछ भयभीत भी हुए। ऐसी विचित्र स्थिति की कल्पना भी उन्होंने नहीं की थी। फिर बापू जी ने उनकी पीठ पर थापड़े मारे। शीश पाल को यह अनुभव हुआ मानो कोई बहुत तगड़ा पहलवान उनकी पिटाई कर रहा हो। उनका रोम-रोम दर्द करने लगा।

फिर बापू जी ने उनकी ठुड्डी को पकड़ कर बहुत ज़ोर से भींचा और ऊपर को उठा कर उन्हें सीधा खड़ा कर दिया। बापू जी ने इतने आराम से उन्हें उठाया मानो वह भार शून्य हों। फिर बापू जी ने कहा, "बैठ जाओ।" बापू जी के ऐसा कहते ही शीश पाल बैठना तो दूर की बात, एकदम से गिर गए। बापू जी ने

उन्हें बिठा कर उनका बांया कान पकड़ लिया और पूछा-"क्या करता है?" शीश पाल ने बताया कि मेरे पास दो एकड़ जमीन है परन्तु पानी नहीं है। इसलिए कोई खास काम नहीं हो पाता है। शीश पाल की बात सुन कर बापू जी ने कहा कि फिक्र करने की कोई बात नहीं है। बापू ओम जी की कृपा से तुम्हारे वारे-न्यारे

हो जायेंगे। अब तुम यहाँ से वापिस जा कर एक मोटर खरीदो, ट्यूबवैल लगवाओ। तुम्हारे खेतों में खूब पानी होगा। तुम लोगों को पानी दिया भी करोगे।

तत्पश्चात् शीश पाल बापू जी को प्रणाम कर एक ओर बैठ गए। अभी तो बापू जी की दया-वृष्टि शुरू ही हुई थी। अगली सुबह वह घटित हुआ जिसकी कल्पना कोई भी नहीं कर सकता था। बापू जी ने स्वयं शीश पाल को बुलाया और उसे नाम-दीक्षा दे दी। यह स्पष्ट था कि बापू जी ने शीश पाल का उद्धार करने का निश्चय कर लिया था। शीश पाल का वर्तमान जीवन भले ही कैसा भी हो इस बात को दरकिनार कर बापू जी ने अपने इस भक्त के जीवन की दिशा को बदलने के लिए उसे अपना शिष्य बना लिया था।

दीक्षा देने के उपरान्त बापू जी ने शीश पाल को वापिस भेज दिया। अपने गाँव वापिस आ कर शीश पाल अपनी पत्नी और घर वालों से मिले। उसकी पत्नी ने पूछा- "मिल आए बापू जी से।" शीश पाल ने 'हाँ' में सिर हिला दिया। फिर उनकी पत्नी ने पूछा कि क्या बापू जी सिर पर पगड़ी पहनते हैं और कुर्ता-पायजामा डालते हैं। इसके अलावा भी उनकी पत्नी ने बापू जी से सम्बन्धित दो-चार बातें और बताई जिससे प्रतीत होता था कि उसने बापू जी को प्रत्यक्ष देखा था। शीश पाल यह विवरण सुन और भी हैरान हो गया। अब उसे पूर्ण विश्वास हो

गया कि ईश्वर की कृपा से अब उसका भार बापू जी ने स्वयं ही उठा लिया है। अगले दिन शीशपाल ने गाँव के कुछ लोगों से बात की कि वह अपने खेत में ट्यूबवैल लगवाना चाहता है। सभी लोगों ने उसका मजाक उड़ाया और एक ठेकेदार ने यह भी कह दिया कि "न नौ मन तेल होगा और न राधिका नाचेगी।"

शीश पाल ने उसकी बात की कोई परवाह नहीं की। उसका स्वभाव भी पूरी तरह बदल चुका था। उसे कोई क्रोध नहीं आया। फिर एक अन्य ग्रामीण शीश पाल को मेरठ ले गया और एक दुकान दिखा दी जहाँ मोटर आदि का सामान मिलता था। उस दुकान का मालिक अभी आया नहीं था और शीश पाल उस दुकान के बाहर ही बैठ गए। कुछ देर बाद जब वह मालिक आया तो उसने दुकान खोली और शीश पाल को अन्दर बुला लिया। दुकान का मालिक एक राजवंशी नामक बनिया था। उसने शीश पाल को आदरपूर्वक पानी पिलाया और पूछा-"क्या चाहिए?" शीश पाल ने बताया कि मैं अपने खेत में ट्यूबवैल लगवाना चाहता हूँ और मेरे पास मोटर नहीं है। मैं मोटर खरीदने आया हूँ परन्तु इस समय मेरे पास केवल तीन सौ रुपये हैं। राजवंशी ने सारी बात सुनी और अपने नौकर को बुला कर कहा कि इस व्यक्ति को 1500 हॉर्स पावर की मोटर दे दो। फिर राजवंशी ने शीश पाल को कहा कि तुम जा कर मोटर की फिटिंग करवाओ और ये तीन सौ रुपये फिटिंग करने वाले व्यक्ति को दे देना।

जब तुम्हारे पास पैसे हो जायेंगे, तब मुझे लौटा देना। उस मालिक ने शीश पाल का नाम तक नहीं पूछा, गाँव का नाम नहीं पूछा और उसे मोटर दे कर भेज दिया। शीश पाल ने गाँव आ कर मोटर लगवा ली और उसके ट्यूबवैल से झर-झर कर के पानी बहने लगा। उसके अपने खेतों की सिंचाई तो हुई ही, साथ ही वह पाँच रुपये प्रति घंटे के हिसाब से लोगों को भी पानी देने लगा। बापू जी की ऐसी कृपा हुई कि एक महीने के अन्दर ही शीश पाल ने उस बनिए को 3000 रुपये लौटा दिये। जब वह पैसे चुकाने गये तब राजवंशी ने पूछा कि तुम कौन हो, कहाँ से आए हो? मैने तुम्हें कब मोटर दी थी। फिर शीश पाल के याद दिलाने पर उसे ध्यान आया कि एक महीना पहले उस ने शीश पाल को मोटर दी थी।

प्रिय पाठक गण, अब तक आप समझ ही गए होंगे कि बापू जी ने उस बनिए की बुद्धि ऐसी कर दी थी कि वह शीश पाल की सहायता के लिए ही सारे कार्य करता चला गया। आज शीश पाल के पास चालीस एकड़ जमीन है, चार ट्यूबवैल हैं और दुनिया भर की सुख-सुविधा है। उनके तीन पुत्र हैं

जिन्होंने बहुत अच्छी प्रकार से, जीवन में प्रगति की है। उनका सारा परिवार बापू जी का उपकार मानता है और उनमें अटूट श्रद्धा रखता है। जिस प्रकार महात्मा बुद्ध ने अंगुलिमाल का कायाकल्प कर उसे दुर्जन से बौद्ध भिक्षु बना दिया था उसी प्रकार बापू श्रद्धाराम जी ने शीश पाल को एक चोर और लुटेरे से भगवान का प्रिय

भक्त बना दिया। आज शीश पाल दरबार के खेतों की सेवा करते हैं और उनकी सभी सन्तानें बापू जी के दरबार में श्रद्धा-भक्ति रखती हैं।

ईश्वर में मन और चित्त लगाने वाले भक्तों को ईश्वर प्राप्त होते ही हैं, इसमें कोई संशय नहीं है। भगवान् ने गीता में इस तथ्य की बड़ी खूबसूरत मीमांसा करते हुए बताया है-

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु । मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥

अर्थात् मुझमें मन वाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करने वाला बन, मुझको प्रणाम करो इस प्राकर आत्मा को मुझमें नियुक्त करके मेरे परायण हो कर तू मुझको ही प्राप्त होगा।

भगवान् ने सदैव अपने इस वचन की लाज रखी है। जो भी मनुष्य पूर्ण विश्वास से भगवान में प्रेम रखता हुआ उन्हें पुकारता है और अपना मन, अपनी बुद्धि सभी कुछ उन्हें समर्पित कर उनके परायण हो कर रहता है, वह उन्हें अवश्य प्राप्त करता है। बापू श्रद्धाराम जी के श्री चरणों में जिन्होंने भी समर्पण किया है, उन्होंने उनके कृपा-प्रसाद की अनुभूति एक बार नहीं अपितु जीवन के प्रत्येक पल में की है।

बापू जी ने अपने भक्तों के भौतिक और दैविक, हर प्रकार के कष्टों को हरा है। यदि किसी मनुष्य के भाग्य में सन्तान सुख नहीं था तो भी बापू जी ने उस पर करुणा करते हुए उसे एक नहीं अपितु कई

सन्तानों से नवाज़ा था। कुछ ऐसी ही घटना है दिल्ली निवासी रामप्यारी जी की जिन्हें विवाहोपरान्त सन्तान सुख नसीब नहीं हुआ। जब उनकी माता जी उन्हें बापू श्रद्धाराम जी के पास ले कर गई तब उन्होंने कहा कि इसके भाग्य में सन्तान नहीं है। रामप्यारी जी वापिस चली गई और उनके ससुराल वालों ने उन्हें बहुत तंग करना शुरु कर दिया। जब बापू जी को इस विषय में पता चला तो वह क्रोधित हो गए और उन्होंने उनके ससुराल वालों से सम्बन्ध विच्छेद की बात कही, फिर गुरु के समझाने पर बापू जी शांत हो गए।

उसके बाद रामप्यारी जी के पति श्री हंस राज चावला बापू जी से मिले और कहा कि उन्होंने अपनी पत्नी को सन्तान न होने के विषय में कभी कुछ नहीं कहा। इसके बाद बापू जी से रामप्यारी जी ने पुनः प्रार्थना की परन्तु बापू जी ने कहा कि तुम्हारे भाग्य में यह सुख नहीं है। फिर तो रामप्यारी जी ने बहुत विलाप किया। वह सुबह से शाम तक रुदन करती रही। बापू जी ने नीचे आ कर देखा तो पाया कि वह सुबह से शाम तक रो रही थी। बापू जी ने उसे हंसने के लिए कहा और बोले कि हंसने वालों के घर ही बसते हैं। इसी बीच रामप्यारी जी की माता ने कहा कि यदि आपने इनकी किस्मत में सन्तान सुख नहीं लिखा तो अब

लिख दीजिए। यहाँ भी आपने लिखना है और वहाँ भी आपने ही लिखना है।

यह सुन कर बापू जी उन्हें समाधि साहिब ले गए, जहाँ रामप्यारी जी और हंस राज चावला को गले से लगा कर सन्तान प्राप्ति का आशीर्वाद दिया। बापू जी से आशीर्वाद प्राप्ति के पश्चात् उक्त दम्पति को चार पुत्र और एक पुत्री की प्राप्ति हई। जिस स्त्री को उसके घर वाले स्वीकारने तक को तैयार नहीं थे उसे पाँच सन्तानों की प्राप्ति हई। आज रामप्यारी जी अपने परिवार के साथ हँसी-खुशी रह रही हैं। बापू जी तो ममता और करुणा का साकार रूप थे। किस्मत में सन्तान न होने के बावजूद किसी को पाँच सन्तानें बख्श देना-ऐसी अनूठी कृपा तो बापू श्रद्धाराम ही कर सकते थे। रामप्यारी जी ढक्का मन्दिर में दिन-रात भजन-कीर्तन करती हैं और उनका सारा परिवार बापू जी के दरबार की अनथक सेवा करता है।

बापू जी ने सारी संगत को आनन्द के ऐसे सागर में उतार दिया था जिसमें रह कर संगत उस आनन्दमय सागर का रूप ही हो गई थी। बापू जी ने बहुत लोगों का उद्धार किया और कई शिष्य बनाए। उनके शिष्यों में प्रमुख शिष्य थे बापू गुरदास राम जी और बापू भानुदत्त जी महाराज जिनके जीवन चरित्रों का वर्णन हम अगले अध्यायों में करेंगे। बापू जी के अन्य शिष्यों में ऋषि ठाकुर दास जी महाराज, संत अमर सिंह जी,

और संत महिन्द्र पाल जी की जीवन-लीलाओं का वर्णन हम 'ओम वाटिका के महकते कुमुद' में करेंगे।

बापू जी ने अपने भक्तों के लिए क्या नहीं किया। सन्तानहीन को सन्तान दी, निर्धन को धनवान बनाया, रोगियों को स्वस्थ किया और अपने भक्तों का उद्धार कर उन्हें भगवद्-पथ पर परिचालित किया। जहाँ किसी की सहायता करने वाला कोई नहीं था, वहाँ बापू जी ने स्वयं किसी न किसी रूप में उन भक्तों की सहायता की और उन्हें जीवन दान दिया। कुछ ऐसा ही हुआ 1966 में श्री रमेश सिडाना सुपुत्र श्री दौलत राम सिडाना के साथ। आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नत सच्चे महापुरुष अपने भक्तों के हितार्थ कहीं भी शरीर धारण करके जा सकते हैं। कुछ ऐसा ही अनुभव रमेश सिडाना जी को हुआ जब वह आर्मी में नौकरी कर रहे थे। उस समय वह क्वार्टर-मास्टर की हैसियत से काम करते थे। सेना में जाने की वजह से उन्होंने माँसाहार भी शुरु कर दिया था। एक बार खाने के समय पहुँचने पर उन्हें बताया गया कि मीट तो खत्म हो चुका है।

इस पर उन्होंने कहा कि कोई बात नहीं, जो है वही दे दो। जब उन्हें रोटी के साथ तरी खाने को दी गई तो उन्होंने खाना शुरु कर दिया। खाते-खाते उनके गले में हड्डी फँस गई जिससे उनकी जान पर बन आई। उन्हें तुरन्त आपरेशन थियेटर में ले जाया गया। इससे पहले नेवी

के एक आफिसर की एक हफ्ता पहले गले में मछली का कांटा फंसने से मौत हो गई थी। आपरेशन थियेटर में जब वह लेटे हुए थे तब उन्होंने बापू जी को याद करते हुए कहा कि हे ईश्वर ! यहां मेरा कौन है मेरी रक्षा करो। मैं फिर कभी मीट नहीं खाऊगा।

इतने में एक पी० टी० की ड्रैस पहने एक व्यक्ति वहाँ आया और उन्हें बिठा कर हाथ में पकड़े चावल खाने के लिए कहने लगा। रमेश जी ने असमर्थता जतलाते हुए कहा कि मैं यह चावल नहीं खा सकता। तब उस व्यक्ति ने कहा कि पानी की तरह इन्हें पी जाओ और इतना कह कर उसने रमेश जी के मुँह में चावल डाले, नाक बंद की, मुँह पर हल्की सी चपत लगाई और ऐसा करते ही आश्चर्यजनक तरीके से चावलों के साथ वह हड्डी भी भीतर चली गई।

जब डॉक्टर अंदर आया तो रमेश जी ने कहा कि मेरी हड्डी तो अंदर चली गई है। यह सुन कर डॉक्टर बहुत हैरान हुआ और पूछा कि यहाँ कौन आया था? इसके बाद डॉक्टर ने एक्स-रे करके देखा तो पाया कि गले में कोई हड्डी नहीं फँसी थी। इसके बाद डॉक्टर ने रमेश जी को कहा कि वह दो दिन तक केवल केले और ब्रेड ही खाएं। इस प्रकार बापू श्रद्धाराम जी की अतुलनीय कृपा के कारण रमेश जी की प्राण-रक्षा हुई। ऐसे महान् गुरु का कोटि-कोटि अभिनन्दन है।

श्री नारायण चरितामृत

जीवन के हर सांसारिक सम्बन्धों से बहुत ऊपर है बापू जी का प्रेम का सम्बन्ध। एक माँ जितनी सावधानी से अपने छोटे बच्चे का ध्यान रखती है, एक पिता जितने यत्न से अपने बच्चे की परवरिश करता है उस से लाख गुना अधिक एकाग्रता और शौक से बापू जी अपनी सभी सन्तानों का ध्यान रखते हैं और उनकी रक्षा करने से कभी नहीं चूकते। एक साधारण मनुष्य में इतनी क्षमता नहीं होती कि वह आने वाले संकट को भांप कर उसे टाल सके या उसे घटित होने से रोक सके परन्तु एक गुरु अपने शिष्य पर आने वाले संकट को रोक भी सकते हैं और संकट आने पर समाप्त भी कर सकते हैं।

एक बार कर्नल अमर सिंह जो बाद में बूढ़पुर की गद्दी के महन्त बने, सन् 1985 बेस अस्पताल दिल्ली कैंट से डयूटी के बाद अपने घर गाँव बूढ़पुर आ रहे थे। तभी रास्ते में डाबड़ी मोड़ जनकपुरी के पास तीन लोगों ने उनसे लिफ्ट मांगी। उनमें दो मोने और एक सरदार था। उन तीनों को कार में लिफ्ट दे कर

अमर सिंह जी घर की तरफ आ रहे थे तभी उनमें से एक व्यक्ति ने मधुवन चौक के पास पहुँचने पर पीठ पर रिवाल्वर लगा कर कहा कि कार को रिठाला की तरफ ले चलो और कुछ देर बाद जब कार सुनसान जगह पर पहुँची तो वे तीनों कहने लगे कि गाड़ी की चाबी हमें दे दो। तभी अमर सिंह जी ने कहा कि गाड़ी तो मेरे गुरु जी की है। उनके आपत्ति करने पर एक युवक ने अमर सिंह जी पर दो गोलियां चलाई, जिससे कट-कट की आवाज़ तो आई पर

गोली नहीं चली। तभी उनमें से दूसरे व्यक्ति ने पंजाबी भाषा में कहा, "ऐहनूं चाकू नाल वड दे।"

जब उस बदमाश ने अमर सिंह जी पर वार करने के लिए अपना हाथ ऊपर उठाया तो उसका हाथ हवा में वैसे का वैसे ही रह गया। इतनी देर में 6-7 फुट का लंबा-चौड़ा व्यक्ति वहाँ आया और उन तीन व्यक्तियों को पीट-पीट कर कहने लगा कि यदि इस तरह की हरकत तुमने दोबारा की तो तुम्हें वहीं आकर मारूंगा। इसके बाद वे तीनों व्यक्ति डर कर अंधेरे में भाग गए। इसके बाद उस सफेद पोशाकधारी ने अमर सिंह जी को कहा कि जब तेरा कुछ है ही नहीं और तुमने सब कुछ मेरे ऊपर ही छोड़ दिया तो हमें तो तुम्हारी रक्षा करनी ही थी और ऐसा कहने के बाद वह अलोप हो गए।

उस व्यक्ति ने यह भी कहा था कि आगे से अनजान व्यक्तियों को कभी लिफ्ट मत देना। अमर सिंह जी इस सारे घटनाक्रम से यह समझ गए थे कि उस घने जंगल में जहाँ दूर-दूर तक कोई नज़र नहीं आ रहा था, वहाँ उनकी प्राण-रक्षा हेतु स्वयं बापू श्रद्धाराम जी ही आये थे। यह घटना अमिट रूप से उनके मानस-पटल पर अंकित हो गई और उन्हें बापू जी की करुणा पर और भी अडिग विश्वास हो गया। बापू जी की महिमा को समझना और समझाना किसी मनुष्य के वश की बात नहीं। बापू जी ने केवल उन्हीं भक्तों की ही रक्षा नहीं की जिन्होंने बापू

जी की शरण ली हुई थी अपितु अजन्मे शिशु की भी रक्षा कर उन्हें इस पृथ्वी पर जीवन धारण करने में सहायता की।

एक बार कृष्ण चन्द गुप्ता अपनी पत्नी नरेश और दो वर्षीय पुत्री आशु के साथ नन्दाचौर आए हुए थे। उस समय उनकी पत्नी छः महीने की गर्भवती थीं। वह अपने परिवार सहित ऊपर चौबारे पर खड़े थे और बापू जी के दर्शन कर रहे थे। बापू जी उस समय छज्जे पर बैठे थे और नरेश छोटी दीवार का सहारा लेकर खड़ी थीं। कृष्ण चन्द जी ने बापू जी से जाने की आज्ञा माँगी। उस समय बापू जी ने उन्हें वहाँ से जाने की आज्ञा नहीं दी। इतनी देर में नरेश अपनी पुत्री आशु के साथ छज्जे से नीचे गली में गिर गई।

उनके गिरते ही चारों तरफ हड़कम्प मच गया। लोगों ने तुरन्त नरेश जी को उठाया और बीबी चिन्ती के कमरे में ले गए। नरेश बेहोश हो गई थीं परन्तु उन्हें कोई चोट नहीं आई थी और आशु को भी कोई चोट नहीं थी। बापू श्रद्धाराम जी ने उन्हें चरणामृत का छींटा दीया और नरेश जी ने आँखें खोल ली। जिस समय नरेश जी गिरीं उस समय संगत के कई और लोग भी अचानक गिर पड़े थे। बापू जी ने अपनी जुराब उतार कर दिखाया कि आज हमारे भी चोट लगी है। फिर बापू जी ने बताया कि संगत के कई लोगों ने नरेश जी का कष्ट अपने पर ले लिया था और इसीलिए वह बिल्कुल ठीक-ठाक थीं और उनके बच्चे को भी

कोई क्षति नहीं पहुँची थी। बाद में बापू जी की कृपा से उनकी पुत्री सीमा हुई जो आज एक कॉलेज में प्रोफैसर है। उनकी बड़ी पुत्री आशु एक सफल डॉक्टर हैं।

इस प्रकार बापू जी ने उस गर्भवती स्त्री की रक्षा की और कहा कि जिस तरह प्रभु ने प्रह्लाद की रक्षा की थी ठीक उसी प्रकार ईश्वर ने आज तुम्हारी रक्षा की है। तत्पश्चात् बापू जी ने खुशी-खुशी उन पति-पत्नी को वहां से जाने की आज्ञा दी। बाद में बापू जी के आशीर्वाद से उनका पुत्र ईश गुप्ता हुआ। आज सारा परिवार बापू जी की सेवा में संलग्न है। भौतिक विज्ञान के हिसाब से तो उस स्त्री और बच्चे का बचना

असम्भव था, परन्तु जहाँ विज्ञान की सीमा समाप्त होती है वहाँ संतों की महिमा शुरु होती है। बापू जी ने उस अजन्मे शिशु की रक्षा कर उसे जीवन का बहुमूल्य उपहार दिया।

विज्ञान की पराजय और संत कृपा का एक और उदाहरण श्री मदन लाल मुटनेजा सुपुत्र श्री जगन्नाथ मुटनेजा दिल्ली, मुखर्जी नगर निवासी जी का है। जब वह आठवीं-नौवीं कक्षा में पढ़ते थे तब उनकी आँख बंद हो गई थी। डॉक्टर कहते थे कि वह कभी पढ़ नहीं पाएँगे। उनके पिता जी उन्हें नन्दाचौर लाए और बापू जी ने उन्हें अपने हाथों से तीन नम्बर सुरमा बना कर दिया और उनकी आँखें बिल्कुल ठीक हो गई। मदन लाल जी पहले पढ़ाई में अच्छे नहीं थे। उस दिन बापू जी ने

उन्हें आशीर्वाद दिया कि तुम बहुत पढ़ोगे। उस आशीर्वाद के फलस्वरूप मदन लाल जी ने सी० ए० की और बाद में उनकी बेटियों ने भी सी० ए० किया। आज उनका परिवार बापू जी में अपार श्रद्धा रखता है और दरबार में सेवा-कार्य भी करता है।

बापू श्रद्धाराम जी की दिनचर्या कुछ ऐसी थी कि वह प्रात: 4 बजे उठ कर अपने हाथों से बनाया प्रेम अंजन सुरमा लगा कर, दातुन कर, स्नान कर कुर्सी पर बैठ जाया करते थे। 1-2 सेवक उनकी मालिश किया करते थे। तत्पश्चात् बापू जी हवन-यज्ञ किया करते थे, फिर वह 12:30 बजे तक पूजा, जप, ध्यान आदि में लीन हो जाया करते थे। फिर संगत को कुछ समय दे कर दोपहर का भोजन करके 2 से 5 बजे तक अपने कमरे में बंद हो जाया करते थे। इस समय में किसी भी व्यक्ति को उनके कमरे का दरवाजा खड़काने की हिम्मत नहीं होती थी।

एक बार नन्दाचौर में रहने वाला 10-11 वर्षीय बालक राम आसरा अपने घरवालों से निषिद्ध भोजन अर्थात मीट आदि बनाने की वजह से नाराज हो गए। भोजन करने की इच्छा होने पर जब उन्होंने देखा कि घर पर मीट बना है तो वह नाराज़ हो गए और बापू जी के पास भाग आए और उनके कमरे के पास जा कर बैठ गए। उस समय 2 बज चुके थे और बापू जी अपने कमरे में थे। बालक के आते ही बापू जी अपने कमरे से निकले और उसे अपने साथ ले कर रसोईघर की ओर

चले गए। वहाँ एक वस्त्र से ढका हुआ नाना प्रकार के भोज्य पदार्थों से चाल सुसज्जित एक ओर उसी के साथ ही पानी का लौटा भी था। उस दिन के उस दिव्य भोजन की स्मृति आने पर राम आसरा जी कहते हैं कि उस भोजन में जो अलौकिक, स्वर्गीय आनन्द था वह अन्यत्र कही नहीं मिल सकता। उस दिन भोजन करवा कर बापू जी ने न जाने कितने आशीर्वादों से उन्हें कृतार्थ कर दिया।

बापू जी राम आसरा की मांसाहार न करने की बात से बहुत प्रसन्न थे। बाद में बड़े होने पर राम आसरा जी बापू जी को रिक्शे पर बिठा कर गाँव में घुमाया करते थे और उनके साथ काफी समय बिताया करते थे। बापू जी के आशीर्वाद से राम आसरा नन्दाचौर के सरपंच भी बने। आज भी गाँव के सरपंच के रूप में वह सभी की सेवा कर रहे हैं और बापू जी में पूर्ण श्रद्धा-भाव रखते हैं।

बापू जी के दो प्यारे भक्त हुए हैं- अमेरिका निवासी कुन्दन लाल जसूजा और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती संतोष जसूजा । कुन्दन लाल जी बापू जी से बहुत प्रेम करते थे। एक बार उन्होंने 'अबीब फाजिल' उर्दू की परीक्षा देनी थी। परीक्षा से पहले वह बापू जी के पास आए। बापू जी ने आशीर्वाद देते हुए कहा कि तुम जो भी पाँच अध्याय खोलोगे उसी में से सारा पेपर आ जाएगा। इसके बाद जो हुआ पाठकगण उसकी कल्पना कर ही सकते हैं। कुन्दन लाल जी बहुत अच्छे अंकों से परीक्षा

श्री नारायण चरितामृत

में पास हो गए। बापू जी कुन्दन लाल जी को लोला पुत्त कहते थे।

एक बार कुन्दन लाल जी और उनकी भाभी अबोहर निवासी राजरानी जसूजा जी नन्दाचौर गए हुए थे। राजरानी जी ने सोचा कि बापू जी कुन्दन लाल को लोला पुत्त क्यों कहते हैं? अभी वह यह सोच ही रहीं थीं कि बापू जी ने फौरन कहा कि हमें पूछ कि हम कुन्दन लाल को लोला पुत्त क्यों कहते हैं? यह सुन कर राजरानी जी घबरा गई कि बापू जी ने तो उनके मन की बात पढ़ ली है। बापू जी ने कहा कि मेरे अंदर एक्स-रे लगा है। कुन्दन लाल बहुत पवित्र है, इसीलिए हम इसे लोला पुत्त कहते हैं। कुन्दन लाल

जी के पुत्र बुद्धप्रकाश और शुद्धप्रकाश जसूजा जी भी अपने माता-पिता की तरह ही दरबार के अनन्य भक्त हैं और दरबार के सेवा-कार्यों में संलग्न हैं।

बापू जी संतोष जसूजा जी को अपनी पुत्री समझते थे और आजीवन बापू जी की कृपा उन पर और उनके परिवार पर हमेशा बनी रही। एक बार संतोष जी सहारनपुर में थीं उन्होंने देखा कि संगत संत दया किशन जी की आरती करने आई है। यह देख कर उनके मन में विचार आया कि मैने कभी बापू श्रद्धाराम जी की आरती इस प्रकार कभी नहीं की। यह जिस समय की बात है उस समय तक बापू जी अपना शरीर त्याग चुके थे। अभी संतोष जी ने ऐसा सोचा ही था कि उन्होंने देखा कि आकाश से बापू श्रद्धाराम जी नीचे उतरते हुए आए

और संत दया किशन जी के साथ बैठ गए। संतोष जी की प्रसन्नता का कोई ठिकाना न रहा। उन्होंने बहुत प्रसन्न मन से बापू जी की आरती की और अपने मन की इच्छा पूरी की। इस प्रसंग से यह पता चलता है कि बापू जी अपने देह-त्याग के बाद भी अपने भक्तों की इच्छा का मान रखने के लिए तुरन्त प्रकट हो जाते हैं और उन्हें आशीर्वाद देते हैं।

कुन्दन लाल जसूजा जी की बहिन अपने पति अबोहर निवासी श्री कश्मीर लाल वधवा को अकसर नन्दाचौर जाने के लिए कहा करती थीं। उस समय कश्मीर लाल जी की श्रद्धा बापू जी में नहीं थी। एक दिन अपनी पत्नी के बहुत जोर देने पर वह नन्दाचौर चले गए और जब वह लंगर में प्रसाद ग्रहण कर रहे थे तो उनके पास एक थोड़ी सी जली हुई रोटी आ गई। उन्होंने अपनी पत्नी को कहा कि तुम मुझे यहाँ जली हुई रोटी खिलाने लाई हो। इसके बाद जब वह वापिस अबोहर गए तो कुछ दिनों में ही उनके ऊपर एक भयंकर मुकदमा आन पड़ा जिससे बचाव के हर उपाय विफल हो गए।

उस समय उन्हें अपनी गलती का एहसास हुआ और वह बापू जी के पास क्षमा माँगने गए। बापू जी ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा कि आप चिन्ता न करें। आप इस मुकदमे से बरी हो जाएंगे। कश्मीर लाल जी ने इसके बाद जिन-जिन अदालतों में अपील की, वे सारी की सारी निरस्त हो गई। अब उनका जेल जाना निश्चित हो गया। जेल जाने

पहले वह एक नाई की दुकान पर हजामत बनवाने गए। वहाँ बैठे-बैठे वह सोचने लगे, "वड्डा शरदा राम बणया फिरदा ए। मेरियां सारियां अपीलां रद्द हो गईयां ने।" इसके बाद जब वह जेल जाने के लिए घर से निकले और जेल में कदम रखने ही वाले थे कि पीछे से उनका भानजा भागता हुआ आया और बोला, "मामा जी, मामा जी हमारी अपील मंजूर हो गई है। अब आपको जेल जाने की कोई ज़रूरत नहीं।" बापू जी की कृपा से उनका जेल जाना टल गया और उसके बाद वह बापू जी के इतने मुरीद हुए कि आज तक वह बापू दरबार की सेवा कर रहे हैं।

बापू श्रद्धाराम जी की उपस्थिति से दरबार में जो रौनक होती थी उसे शब्दों में बयान करना तो सम्भव ही नहीं है। दरबार में, ऊपर सच्चखंड में, भक्तों की बहुत भीड़ लगी रहती थी। एक बार सच्च खंड में आग लग गई और फायर ब्रिगेड से भी वह आग नहीं बुझी। आग बुझाने आए ऑफिसर ने कहा कि बापू जी, अब आप ही कुछ करिए। इसके बाद बापू जी ने ध्यान लगाया और पाठ किया जिसके बाद आग स्वयमेव ही धीरे-धीरे कम होती हुई बुझ गई। लोगों ने यह कहना शुरु कर दिया कि पहले तो सच्च खंड से बाहर आने का भी मन नहीं होता था परन्तु आग लगने के बाद तो कोई भी उधर का रुख करना नहीं चाहता। यह सुन कर बापू जी बोले कि 10-15 दिन में सब यहाँ की रौनक देखेंगे। कुछ ही दिनों में बापू जी के कथानानुसार सच्च खंड में पहले की तरह रौनक हो गई और भक्तों ने उसे पहले से भी अधिक

अच्छी प्रकार से सुसज्जित कर दिया।

वैसे तो स्थान-स्थान से भक्तजन बापू जी के दर्शनार्थ आया करते थे और बापू जी सभी पर कृपा भी किया करते थे फिर भी आद्रामान और महतपुर की संगत पर बापू जी की अलग ही कृपा थी। इन दोनों स्थानों के निवासी बापू श्रद्धाराम जी को साक्षात् परमेश्वर समझते थे और उनका हर आगमन उनके लिए एक उत्सव ही होता था।

बापू जी सर्वप्रथम आद्रामान अपने एक बहुत ही प्रिय भक्त श्री नन्द लाल जी के अनुरोध पर गए थे। उस समय महतपुर तक बस जाया करती थी और लोग ताँगे द्वारा ही आद्रामान जाया करते थे। बापू जी नन्द लाल जी के साथ पैदल ही आद्रामान के लिए निकल पड़े। जब आद्रामान थोड़ी दूर ही रह गया तब नन्द लाल जी के मन में विचार आया कि "मैं तो बहुत निर्धन हूँ। मैं बापू जी को ले कर तो जा रहा हूँ परन्तु उन्हें ठहराऊँगा कहाँ?" मेरे पास न तो अच्छा पलंग है और न ही सुन्दर आसन की कोई व्यवस्था है। नन्द लाल इसी सोच में डूबे हुए थे कि बापू जी फौरन उनके मन की बात ताड़ गए और बोले-" भक्त जी, आप रुको, मैं अभी जंगल पानी हो कर आता हूँ?"

इतना कह कर बापू जी एक खेत की ओर चल दिए। नन्द लाल के मन में यह बात आई कि जितनी देर बापू जी वापिस आते है, इतने

समय में क्यों न मैं तेजी से जा कर बापू जी के ठहरने की कोई व्यवस्था करो। नन्द लाल बहुत तेजी से चलते हुए आद्रामान पहुँच गए और बाबा सरदार अतर सिंह और उनके पुत्र सरदार रघुबीर सिंह के पास जा कर कहा, "मैं बापू जी को लेकर आया हूँ तो क्या आप अपने घर में रहने के लिए उन्हें स्थान देंगे?" यह सुनकर उन्होंने कहा कि यह तो हमारा सौभाग्य होगा यदि बापू जी के श्रीचरण हमारे घर डलेंगे। हमारे घर के ऊपर जो चौबारा है बापू जी वहाँ रुक जाएंगे।

नन्द लाल बापू जी के ठहरने की व्यवस्था कर शीघ्रता से लम्बे-लम्बे डग भरते हुए उसी स्थान पर जा पहुँचे, जहाँ से बापू जी खेतों की ओर रवाना हुए थे। नन्द लाल ने वहाँ पहुँच कर देखा कि बापू जी खेतों से होकर अभी आ ही रहे हैं। नन्द लाल को आने जाने में लगभग एक से डेढ किलोमीटर तक का रास्ता तय करना पड़ा था परन्तु बापू जी तो सर्वज्ञ थे, सब जानते थे। अपने भक्त की इच्छा का सम्मान करने हेतु वह उतने समय खेतों में ही घूमते रहे। फिर बापू जी आद्रामान रघुबीर सिंह के चौबारे पर गए और भक्तों को निहाल किया।

फिर तो बापू जी हर वर्ष उन्हीं दिनों आद्रामान आने लगे और सात आठ दिन अतर सिंह-रघुबीर सिंह के चौबारे पर ही रहने लगे। प्रतिदिन शाम को वहाँ सत्संग होता था। बाद में उस स्थान पर एक बहुत ही

सुन्दर मन्दिर बनाया गया, जहाँ बापू जी ने अपने कर कमलों से

झण्डा चढ़ाया था। बापू जी का वरदान था कि उस मन्दिर में जो चालीस दिन दिया जलाएगा, उसकी सभी मनोकामनाएँ पूर्ण होंगी।

एक बार ऐसे ही बापू जी आद्रामान आए हुए थे। सभी भक्त उनके दर्शनों के लिए उनके पास गए। वहाँ भक्त नन्द लाल जी उपस्थित नहीं थे। बापू जी प्यार से उन्हें 'नरसि भक्त' कहते थे। बापू जी ने उन्हें किसी को कह कर उन्हें बुलावा भेजा। नन्द लाल जी तुरन्त वहाँ उपस्थित हो गए। बापू जी के यह पूछने पर कि वह आए क्यों नहीं थे, उन्होंने बताया, "बापू जी मेरे कानों में से बहुत पीक आती है। मुझे बहुत ज़्यादा दर्द है।" नन्द लाल जी की व्यथा सुन कर बापू जी ने बताया कि "सरसों के तेल में आक की डोडी जला कर उस तेल को को कान में डालो।" नन्द लाल जी ने वैसा ही किया और एक बार डालने पर ही उनका कान एकदम ठीक हो गया।

कुछ दिनों बाद एक बार फिर उनकी तबीयत खराब हो गई। इन्हें डायरिया हो गया। पूरी रात उन्हें उल्टी आदि से बहुत कष्ट रहा। घर वाले घबरा गए। सुबह होते होते उन्हें नींद आ गई। जब उठे तो घर वालों ने पूछा अब कैसा लग रहा है? नन्द लाल जी ने बताया कि मैं एकदम ठीक हूँ। बापू जी आए थे और मुँह में दवाई डाल गए। उसके बाद से मैं एकदम स्वस्थ अनुभव कर रहा हूँ। नन्द लाल जी पर बापू जी ने एक और कृपा की नन्द लाल जी अपने माता पिता जी इकलौती

सन्तान थे और उनके पिता जी और दादा जी भी अकेले ही थे। बापू जी ने नन्द लाल जी को सुयोग्य सन्तानों का आशीर्वाद भी दिया। बापू जी के आशीर्वाद से उन्हें चार पुत्र और तीन पुत्रियों की प्राप्ति हुई। आज उनकी सारी सन्तानें बापू जी के चरणों में पूरी आस्था रखती हैं। नन्द लाल जी का भरा पूरा सात्विक परिवार बापू श्रद्धाराम जी का ही वरदान है।

जब नन्द लाल जी ने आद्रामान से महतपुर आ कर रहना शुरु किया तब बापू जी आद्रामान आने पर अपना सामान नन्द लाल जी के घर रखवा कर उसी घर रहा करते थे और शाम को वापिस आद्रामान चले जाते थे। महतपुर में जिस चौबारे पर बापू जी रहते थे वहाँ पर बापू जी ने श्री ओम बापू जी का पलंग बिछवाया हुआ था। बापू श्रद्धाराम जी ने यह हुक्म लगाया हुआ था कि संगत प्रत्येक मंगलवार वहाँ कीर्तन करे। आज नन्द लाल जी का वह चौबारा एक सुन्दर मन्दिर में परिणत हो गया है। वहाँ भी बापू जी ने झण्डा साहिब की स्थापना की थी।

भक्त नन्द लाल पर कृपा करते हुए बापू जी ने एक बार कहा था कि आप जो किरयाने का काम करते हो यह तो थोड़ा है। हम चाहते हैं कि आप का होल सेल का काम हो जाए। तत्पश्चात् बापू जी ने नन्द लाल जी पर बहुत ही कृपा की और उनके बड़े बेटे हरबंस लाल अरोड़ा को एस० डी० ओ० के पद पर लगाया। वह बाद में हरियाणा के चीफ

इंजीनियर के पद से सेवा निवृत्त हुए। नन्द लाल जी की सभी सन्तानों की आज होल सेल की दुकानें हैं और बापू जी की कृपा से किसी के घर में भी कोई कमी नहीं है।

आद्रामान और महतपुर की शेष संगत पर भी बापू जी की असीम कृपा रही है। आद्रामान और महतपुर जाने पर तो ऐसा प्रतीत होता है, मानो वहाँ का कण-कण श्रद्धाराममय ही हो गया हो। वहाँ के निवासियों का मानना है जो व्यक्ति आद्रामान और महतपुर में निवास करते हैं वे सदा बापू जी की कृपा पाते है और वह साक्षात् स्वर्ग में निवास करते हैं।

महतपुर और आद्रामान के भक्तों का प्रसंग चले और राजरानी की बात न हो तो कुछ अधूरा सा लगता है। राजरानी का बापू श्रद्धाराम जी से अनोखा ही प्रेम था। वह केवल वाणी से ही बापू जी को बापू नहीं पुकारती थी अपितु उन्हें सच्चे मन से बापू समझती भी थी। महतपुर की राजरानी जी की बापू जी में अटूट श्रद्धा है। विवाहोपरान्त राजरानी जी का एक पुत्र हुआ जो अधिक देर जीवित न रह सका। फिर उन्हें एक पुत्री हुई। जब वह 3-4 वर्ष की थी तब बापू जी के भानजे गुरु के कहने पर वह उसे ले कर

नन्दाचौर बापू जी के पास आई। राजरानी जी की बहिन भी उनके साथ गई थी। उस बच्ची ने अपनी तोतली जुबान में बापू जी से कहा कि उसे एक 'वीर' चाहिए। बापू जी उस बच्ची पर

प्रसन्न तो हुए परन्तु राजरानी जी को यह कहा कि अभी हमारे पास दवाई नहीं है। राजरानी और उनकी बहन सत्या नीचे आकर बैठ गई कि तभी गुरु ने ऊपर जा कर बापू जी से महतपुर से आई संगत पर कृपा करने हेतु प्रार्थना की। इस पर बापू जी ने उसे 'नारद मुनि' कहते हुए कहा कि तुम स्वयं ही तो उन्हें यहाँ लाए हो। फिर गुरु ने कहा कि बापू जी मेरे पास दवाई की एक पुड़िया रखी है यदि आपकी इजाजत हो तो मैं उन्हें दवाई दे दूँ। बापू जी की स्वीकृति पा कर उसने राज जी को वह पुड़िया दे दी। राज जी के भाई गंगाराम को भी सन्तान प्राप्ति के लिए दवा दी गई। तदनन्तर दोनों को समय आने पर पुत्र प्राप्ति हुई।

पुत्र-प्राप्ति के पश्चात् जब राजरानी जी के भाई गंगाराम ने पुत्र को चोला पहनाने के उपलक्ष्य में उत्सव किया तब बापू जी वहाँ बच्चे को आशीर्वाद देने हेतु उनके घर गए। वहाँ आद्रामान में उन्होंने एक सेवक से कहा कि उन्हें महतपुर उस के घर जाना है जो साईकिल से नन्दाचौर दवाई लेने आता था। आद्रामान से महतपुर का सफर बापू जी ने पैदल तय किया। राज जी के घर पहुँचने पर उन्होंने देखा कि वह कपड़े धो रही थीं। बापू जी के दर्शन पाकर राज भाव-विभोर हो उठीं। उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था कि साक्षात् बापू श्रद्धाराम जी महाराज जी उनके घर पधारे हैं। उनकी सच्ची भावना और प्रेम देख कर ही बापू जी वहाँ आए थे। बापू जी को अपने सामने खड़े देख कर राजरानी प्रसन्न तो हुई परन्तु मन में सोचने लगी कि मैं बापू जी का स्वागत किस

प्रकार करूँ। मेरे घर में तो बापू जी को बिठाने के लिए न तो कोई ढंग की जगह है और बापू जी के योग्य कुछ खिलाने के लिए है।

फिर राजरानी जी भाग कर पड़ोसन के घर गई और कुछ पैसे माँग कर बापू जी के लिए चाय आदि का प्रबन्ध किया। उनके वापिस आने पर बापू जी ने बहुत प्रसन्न हो कर राजरानी के पुत्र को अपनी गोद में उठा लिया और पूछा कि "तुमने इसको 'चोली' पहनाई है 'चोला' क्यों नहीं पहनाया?" यह सुन कर वह चुप रह गई और उसने कोई उत्तर नहीं दिया। बापू जी को उनके घर की आर्थिक स्थिति अच्छी तरह

पता थी। राज जी के पति 10 साल से सब्जी बेच कर गुजारा कर रहे थे। फिर बापू जी ने उनसे पूछा कि तुम्हारा नाम क्या है? उन्होंने बताया-राज। बापू जी तपाक से बोले, "बीबी अब से तुम राज ही करोगी।"

बापू जी का यह वाक् वेद-वाक्य सदृश सत्य प्रमाणित हुआ। समय गुजरा और देखते ही देखते राजरानी जी के दिन फिरने लगे। आज उनके परिवार को किसी भी चीज की कमी नहीं है। बापू जी की दया से उनका परिवार महतपुर के धनी एवं समृद्ध परिवारों में गिना जाता है। राजरानी की ही तरह बापू जी ने और भी कई भक्तों का कायाकल्प किया। उन्हें फर्श से अर्श पर पहुँचा दिया। कभी भक्तों के कर्म-भोग से उत्पन्न संकटो का निवारण कर बापू जी ने उन्हें कष्टों से बचाया तो कभी अपनी दया से प्राकृतिक विपदाओं का रुख मोड़ अपने भक्तों को

अभय दान दिया।

कई वर्ष पूर्व आद्रामान की तरफ दरिया के तेज बहाव के कारण फसलें नष्ट हो जाती थी। लोगों ने जब अपनी समस्या बापू जी को बताई तो उन्होंने कहा कि अब से हर साल 'ख्वाजा खिदर' जल के पीर को दलिए की देग अर्पण की जाएगी और अखण्ड पाठ करवा जाएगा। ऐसा कह कर बापू जी ने दलिए की देग 'ख्वाजा खिदर' को अर्पण करते हुए जल प्रवाह को वहाँ से दूर हटने को कहा। इसके बाद दरिया का पानी वहाँ से 12-14 किलोमीटर तक हट गया। इसके बाद से लोग वहां अखण्ड पाठ करवा कर, दरिया को प्रसाद अर्पण कर खुशी-खुशी जीवन यापन कर रहे हैं। केवल दरिया के पानी के बहाव की ही नहीं अपितु आद्रामान के निवासियों की अन्य समस्याएं भी बापू जी ने दूर कर दी।

बापू जी की सरदार रघुबीर सिंह जी पर विशेष कृपा थी। एक बार बापू जी और रघुबीर सिंह जी अलग-अलग रिक्शा पर महतपुर की ओर जा रहे थे। बापू जी की रिक्शा आगे चल रही थी। तभी रघुबीर सिंह जी के मन में विचार आया कि यदि हमें यहाँ एक दुकान मिल जाए तो हम यहीं बस जाएं। इतनी देर में ही बापू जी रिक्शा से उतर गए और रघुबीर सिंह जी को भी रिक्शा से उतरने के लिए कहा और उनके उतरते ही कहा कि तुम दुकान की बात करते हो। यहाँ तो तुम्हारी बड़ी-

बड़ी फैक्टरियां बनेंगी। बापू जी के आशीर्वाद से उनकी ' श्रद्धा राईस मिल' बनी और आजकल उनके पुत्र करनैल सिंह, जरनैल सिंह और सुरेन्द्र सिंह अपने पिता की तरह बापू दरबार की अनथक सेवा कर रहें हैं।

गाँव आद्रामान में बिजली की बहुत समस्या थी। रात के समय वहाँ बहुत अन्धेरा होता था। एक बार जब सरदार रघुबीर सिंह चिलाना ने बापू जी से इस समस्या के विषय में बताया तो बापू जी ने कहा कि जा कर संगत को बता दो कि जो भी सच्चे मन से वहाँ चालीस दिन दिया जलाएगा उसकी सभी मनोकामनाएं पूर्ण होंगी। एक बार वहाँ बिडावड़ियां के जाटों के परिवार का लड़का विदेश चला गया। 10 वर्ष बीते जाने पर भी जब उसकी कोई खबर नहीं आई तब उसके घर वालों ने वहां दिया जला कर अखण्ठ पाठ करवाया। कुछ ही दिनों में उस लड़के का टेलीग्राम आ गया कि वह ठीक है और शीघ्र ही आ रहा है। तत्पश्चात् वह लड़का न सिर्फ वापिस आया अपितु अपने सारे परिवार > को भी बाहर ले गया। आद्रामान के बापूजी के मंदिर में जो भी 40 दिन दिया जला लेता है उसकी समस्त इच्छाएं बापू जी पूर्ण करते हैं।

अगला वृत्तान्त एक ऐसे भक्त का है जिसे बापू जी ने कृपा कर के ज़मीन से आसमान तक पहुँचा दिया। गंगाराम जी जब पाकिस्तान से भारत आए तब उन्हें नकसीर फूटने की समस्या थी। दिन में दो-दो बार

श्री नारायण चरितामृत

उन्हें यह समस्या हो जाया करती थी। बाद में बापू श्रद्धाराम जी से धागा ले कर धारण करने से उन्हें इस समस्या से हमेशा-हमेशा के लिए मुक्ति प्राप्त हो गई।

जीवन के आरंभिक दिनों में गंगाराम जी की आर्थिक अवस्था ठीक नहीं थी। वह सब्जी बेचने का काम किया करते थे। एक बार गाँव के किसी ज्योतिषी ने उनका हाथ देख कर कहा कि ताउम्र उनकी

आर्थिक स्थिति ऐसी ही रहेगी। उसमें कोई सुधार नहीं हो सकता। गंगा राम जी ने यह सुन कर धैर्य धारण करते हुए कहा, "कोई बात नहीं " और पूर्ववत अपना काम करते रहे। धीरे-धीरे उन्होंने एक छोटे से कमरे में किरयाने की दुकान खोल ली। सुबह सिर पर सौदा लाद कर लाते और शाम होते-होते उसे बेच देते।

एक बार बापू जी ने उनसे पूछा कि तुम कितने भाई हो, तो उन्होंने कहा कि मैं भाई तो अकेला ही हूं पर बहन चार हैं। बापू जी ने कहा कि फिर तो तुम्हें उनके साथ काफी लौकिक व्यवहार करना पड़ता होगा, तो गंगाराम जी ने कहा कि मैं अपने सामर्थ्य के हिसाब से कभी 1 रुपया, 5 या 10 रुपये तक दे देता हूँ। यह सुन कर बापू जी बोले, "आज हम तुम्हारी तन्ख्वाह बढ़ा रहे हैं?" उस समय तो गंगाराम जी को कुछ समझ में नहीं आया लेकिन धीरे-धीरे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार आता चला गया। एक बार उन्हें किसी

कार्यवश 20-25 किलोमीटर दूर एक स्थान पर कुछ पैसे लेने जाना था परन्तु उनके पास जो साईकिल था वह काफी प्राना था। उन्होंने पास ही में एक पड़ोसन से उनका नया साईकिल मांग लिया। रास्ते में जाते हुए वह सोचने लगे कि मेरे पास भी ऐसा साईकिल होता तो कितना अच्छा होता। उसके 10 दिन बाद ही वह पडोसन अपना साईकिल ले कर वहां आई और कहने लगी कि वह अपना साईकिल जो उसने 100 रुपए में खरीदा था 80 रुपये में देने को तैयर है।

उसने कहा कि 20 रुपए नकद दे कर गंगाराम जी वह साईकिल ले सकते हैं। 30-35 रुपए का उधार का सौदा उसने उनकी दुकान से लिया हुआ था। बाकी के बचे पैसे का भी सौदा लेने की बात उसने कर ली। इस प्रकार केवल 20 रुपए में गंगाराम जी को नया साईकिल प्राप्त हुआ। कुछ दिनों के पश्चात् बापू जी ने अपने भानजे लक्ष्मणदास को गंगाराम जी को 500 रुपये देने के लिए कहा और निर्देश दिया कि जो मुंज वह थोडी-थोडी करके बेचते हैं उसे नंबरदार के पशुओं वाले कमरे को खाली करवा कर धीरे-धीरे जमा करें और इकठ्ठी हो जाने पर ही बेचे। गंगाराम जी ने ऐसा ही किया।

पहले वह डेढ आने सेर मुंज खरीद कर पौने चार रुपए मन बेचते थे। अब 100 मन मुंज इकठ्ठी हो जाने पर जब उसे बेचने का विचार किया तो पता चला कि मुंज के दाम पाँच रुपये मन हो चुके हैं। तीन बार

मुंज इकट्ठी करने पर उसके दाम में वृद्धि होती रही। पाँच रुपये से साढे छः और फिर आठ रुपये के हिसाब से मुंज बेचने पर उन्हें साढे पाँच सौ रुपये का फायदा हुआ। जब वह बापू जी को 500 रुपये वापिस करने गए तो बापू जी ने कहा कि पहले के 500 और फायदे के 550 रुपये मिला कर सामान खरीदो और अगले मुनाफे पर पैसे वापिस करना।

बापू जी के निर्देशानुसार काम करने पर गंगाराम जी को 2 साल में 4000 से 5000 रुपए तक फायदा हुआ और उन्होंने महतपुर में एक बड़ी दुकान भी बनाई। बापू जी के चरण-कमल दुकान में पड़ते ही उनके सितारे बुलन्द हो गए। जीवन के आरंभिक दिनों में जब उनके पास छोटी सी दुकान थी तब भी बापू जी उनके पास आये थे। तब गंगाराम जी ने उन्हें कुछ पताशे और एक रुपया निकाल कर माथा टेका था। उस समय बापू जी ने वह एक रुपया गल्ले में डाल कर कहा, "आज से हमारा हिस्सा भी इस दुकान में हो गया। अब यह मत कहना कि यह हमारी दुकान है।"

गंगाराम जी बोले, “बापू जी, मैं तो शुरु से ही कहता हूँ कि यह बापू जी की दुकान है।" बाद में जब उन्होंने अपना मकान बनवाया तो लैंटर डलने से पहले बापू जी को बुलाया। बापू जी ने चावलों का छींटा मकान में दिया और आशीर्वाद दे कर उन्हें निहाल कर दिया।

एक वक्त में गंगाराम जी बापू जी को साईकिल पर बिठा कर आद्रामान ले जाया करते थे और आज बापू जी की कृपा से उनकी फैक्टरी, कोठी और कई प्लाट हैं। धन्य हैं बापू श्रद्धाराम जिन्होंने अपने भक्तों के चहुँमुखी उत्कर्ष के लिए उन्हें अपने आशीर्वाद रूपी वरदान से नवाजा और उनका जीवन आनन्दमय कर दिया।

महतपुर और आद्रमान के भक्तों जगदीश मिगलानी, हरभजन सिंह और हरि सिंह सुपुत्र श्री जगीर सिंह, सुरेन्द्र पाल काला सुपुत्र श्री दीवान चन्द कक्कड़, दीपक चिलाना, श्याम सुन्दर जी और उनके पुत्र अजय एवं हरीश, सरदार बख्तावर चिलाना का सारा वंश, गुरदास राम एवं सरदारी लाल जी, पवन कुमार और अन्य सभी भक्तों पर बापू जी की अपार कृपा है। ये सभी भक्त बापू जी के आशीर्वाद से अत्यन्त सुखी जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

श्री ओम दरबार आद्रामान

बापू जी की लीलाएं अनन्त हैं और अपनी सभी लीलाओं में उन्होंने अपने भक्तों के लिए असम्भव को भी सम्भव करके दिखाया है। बापू श्रद्धाराम जी के अनन्य सेवकों में से एक हैं जालन्धर निवासी श्रीमती सुरक्षा छाबड़ा, जिन्होंने अपने पूर्ण विश्वास और अखण्ड भक्ति से और बापू श्रद्धाराम जी की कृपा से पुत्र-रत्न प्राप्त किया। अपने ससुराल वालों के तानों से दुखी होकर वह पुत्र प्राप्ति का वरदान प्राप्त करने हेतु बापू श्रद्धाराम जी की शरण में आई। इससे पूर्व वह कई ज्योतिषियों के पास भी अपनी मनोकामना की पूर्ति हेतु जा चुकी थी, इसलिए बापू श्रद्धाराम जी ने उनके विश्वास की दो वर्ष कठिन परीक्षा ली।

एक बार उन्हें परखने हेतु बापू जी ने उन्हें चौक में कुछ सामान रख कर आने और पीछे मुड़ कर न देखने को कहा। इस पर सुरक्षा जी ने कहा कि अब वह इस प्रकार के कार्य न करके केवल अपने बापू पर ही पूर्ण विश्वास रखना चाहती हैं। उनका कहना था कि पुत्र तो वह बापू जी से लेकर ही जाएँगी। हालांकि बापू जी ने उन्हें बताया था कि उनकी किस्मत में सात पुत्रियाँ हैं परन्तु बापू जी ने सुरक्षा जी पर ऐसी कृपा की कि उन्हें दो पुत्रियों के बाद पुत्र-रत्न की प्राप्ति हो गई। आज सुरक्षा जी का पूरा परिवार बापू जी में अपार श्रद्धा रखता है।

बापू जी के मुखारविन्द से जिस भक्त के लिए जो भी आशीर्वाद

निकलता था वह पूर्ण भी अवश्य होता था। दिल्ली के श्री अविनाश चौधरी की धर्मपत्नी ने एक बार बापू जी को दस रुपये अर्पण करते हुए माथा टेका। बापू जी ने उन रुपयों को वापिस उनकी झोली में डालकर कहा कि इन रुपयों से तुम्हारे दो मकान बनेंगे। हालांकि उन्होंने वो पैसे खर्च कर दिए फिर भी समय आने पर उनके दो मकान बने और आज भी उनके परिवार पर बापू जी की कृपा बनी हुई है।

बापू श्रद्धाराम जी के एक अनन्य भक्त थे जिनका नाम हरीश भाटिया थे। ढक्का निवासी के पिता पुलिस विभाग में हैड कांस्टेबल थे। बेहद ईमानदार प्रवृति के हरीश भाटिया के पिता ने अपनी छः सन्तानों का पालन-पोषण आर्थिक कठिनाईओं के बावजूद बहुत अच्छी तरह किया। कई बार वे अपने बेटे हरीश भाटिया के स्कूल की फीस भी समय पर दे नहीं पाते थे। ऐसे में उनकी पत्नी ने ढक्का स्थित मंदिर में जाना आरम्भ किया। धीरे धीरे अपने पति और बच्चों को भी बापू जी के चरणों में लगाना आरम्भ किया। एक बार बापू श्रद्धाराम जी ने ढक्का स्थित अपने भक्तजनों के घर में जाने का निश्चय किया।

जब समस्त श्रद्धालुओं के घरों को अपने पावन चरणों की रज से पवित्र कर, वह ग्रेटर कैलाश स्थित एक अन्य भक्त के घर जाने को तैयार हुए तब हरीश भाटिया जी की छोटी बहन राज जो उस वक्त 6-7 वर्ष की थी, ने बापू जी से प्रार्थना की कि बापू जी, आप हमारे घर को

भी अपनी चरण रज से पवित्र करें। इस पर बापू जी ने कहा हम अभी नहीं, फिर कभी आएँगे। राज के पुनः प्रार्थना करने पर बापू जी ने उन्हें ग्रेटर कैलाश स्थित उस भक्त के घर आने को कहा जहाँ वे जा रहे थे। इस पर राज ने कहा कि बापू जी हम कैसे आ सकते हैं, हमारे पास तो कुछ भी नहीं है। इस पर बापू जी ने कहा कि आप गाड़ी से आओगे। किसी की समझ में नहीं आया कि आर्थिक विपन्नता का शिकार परिवार गाड़ी में किस तरह आ सकता है।

इस घटना के 10-12 दिन बाद हरीश भाटिया के पिता जी को किसी कार्य हेतु हरियाणा में जाना पड़ा। वहाँ उन्होंने मजबूरी वश लाटरी के पांच टिकट खरीद लिए जिसमें से उन्होंने तीन टिकट अपने

साले को तीन रुपये में दे दिए। वापिस आ कर जब लाटरी का परिणाम एक अखबार में चैक किया तो उनके आश्चर्य की सीमा न रही। उनका एक लाख का पहला ड्रा निकला जब उन्होंने अपने से बड़े उच्चायुक्त को इसके बारे में बताया तो उन्होंने हरियाणा फोन कर के सारी सूचनायें एकत्र की। उनके आश्चर्य की कोई सीमा न रही, जब उन्हें पता चला कि पहले ईनाम में एक लाख रुपये और एक एम्बैसेडर कार जोड़ दी गई थी।

हरियाणा के तत्कालीन मंत्री श्रीमती ओम प्रभा जैन के हाथों उन्होंने अपना ईनाम प्राप्त किया। यह घटना 1969 की है। इसके बाद

उन्होंने 5000 रुपए ढक्का साहिब मन्दिर में अर्पण कर गाड़ी में नन्दाचौर के लिए प्रस्थान किया और बापू जी का आशीर्वाद प्राप्त किया। केवल 10-12 दिन में बापू जी के आशीर्वचनों के कारण यह परिवार 1 लाख 80 हजार रुपए और एक ऐम्बैसेडर कार का मालिक चन गए। हरीश भाटिया जी से सम्बन्धित एक दूसरा प्रसंग उनके हृदय रोग से सम्बन्धित है। डॉक्टरों के मतानुसार उनके दिल में ब्लाकेज थी जिसका इलाज केवल आपरेशन ही था। उनकी माता जी को किसी ने बताया था कि इस बीमारी के कारण दो अन्य मरीजों की जान पहले ही जा चुकी थी। इसीलिए दो महीने अस्पताल में रहने के बाद भी हरीश जी के माता-पिता उन्हें अस्पताल से सीधा नन्दाचौर ले आए जहाँ बापू जी ने उन्हें दो दिन हवन पर बिठाया और कहा कि तुम्हारा आपरेशन हो चुका है। उसके बाद से लेकर आज तक हरीश जी को हृदय सम्बन्धी कोई समस्या नहीं आई और बापू जी के आशीर्वाद से आज तक वह बिल्कुल स्वस्थ हैं।

करतारपुर निवासी लाला सांई दास और आज्ञावती बापू जी के परम सेवक थे और 1952 से वह बापू जी से जुड़े थे। बापू जी प्रति चैत्र की अमावस्या को उनके घर आते थे और सुबह हवन करते थे। आज्ञावती जी की सन्तानें पैदा होते ही मृत्यु को प्राप्त हो जाती थीं। एक दिन जब लाला सांई दास जी ने बापू जी से प्रार्थना की तो बापू जी कहा कि घबराओ मत, अब की बार जब बच्चा होगा तो उसे मेरे पास ले

आना, मैं उसकी रक्षा करूँगा। कुछ समय पश्चात् जब उस दम्पत्ति के सन्तान हुई तो वह उसे बापू जी के पास ले गए और बापू जी ने उस बच्चे की रक्षा कर उसका नाम नत्था राम रखा। बापू जी के आशीर्वाद से लाला सांई दास की चार पुत्रियां और तीन पुत्र हुए। उनका पूरा परिवार बापू जी में अपार निष्ठा रखता है और विशेष तौर पर लाला सांई दास जी के पुत्र जोगिन्दर पाल बापू दरबार के सेवा-कार्यों में रत हैं।

बापू जी जिस किसी पर भी कृपा कर देते थे उसका सारा परिवार तर जाता था। वेरावल (पोरबंदर) निवासी श्रीमती सुरक्षा भाटिया जिन्हें बापू जी की कृपा से गुजरात में नारी रत्न पुरस्कार और राष्ट्रीय गौरव पुरस्कार मिले, एक बार बस में शिमला से पानीपत जा रही थीं। बस बहुत तेज चल रही थी और अचानक बस एक ट्राली से टकरा कर दुर्घटनाग्रस्त हो गई और टेढी होकर चलने लगी। जब ऐसा हुआ तब ड्राईवर ने बस से छलांग लगा दी और भाग गया। सभी यात्री घबरा कर चीखने-चिल्लाने लगे। इतनी देर में सुरक्षा जी जोर से बोलीं, "नन्दाचौर वाले बापू जी का नाम लो। सब ठीक हो जाएगा।"

अभी सुरक्षा जी ने ऐसा कहा ही था कि बस धीरे-धीरे स्वयं ही सीधी होती-होती एक पेड़ के सहारे लग कर खड़ी हो गई और सभी यात्री सुरक्षित बच गए। सुरक्षा जी का पूरा परिवार बापू जी का अनन्य भक्त हैं। बापू जी की कृपा से उनकी पुत्री तनु का विवाह भारतीय

क्रिकेट टीम के नयन मोंगिया के साथ हुआ था।

बापू श्रद्धाराम जी का आशीर्वाद उनके सभी भक्तों के साथ सर्वदा रहता है। बापू जी के भक्तों को उनके चित्रस्वरूप रखने का बहुत चाव होता था और बापू जी अपनी तस्वीर खिंचवाना पसन्द नहीं करते थे। एक बार बापू जी के सेवक श्री मोहन चावला जिन्होंने फोटोग्राफी का काम शुरु किया था, अभ्यास न होने के कारण फोटो खींचने में थोड़ी हिचकिचाहट दिखाया करते थे। एक बार बापू श्रद्धाराम जी म्यूजियम के बाहर चारपाई पर बैठ कर पाठ कर रहे थे तभी उन्होंने मोहन जी से कहा कि वह उनकी फोटो खींचें। मोहन जी ने थोड़ा हिचकिचाते हुए फोटो खींच दी और वह फोटो इतनी खूबसूरत बन पड़ी

कि आज वह फोटो 'पलंग साहिब' पर विराजमान है और बापू श्रद्धाराम जी के अधिकतर भक्तों के घर में मोहन जी के द्वारा खींची गई वही फोटो विद्यमान है। आज मोहन जी और उनके भाई विनोद जी का जालन्धर में इस व्यवसाय में प्रतिष्ठित नाम है।

बापू श्रद्धाराम जी ने पृथ्वी पर ऐसा स्वर्ग बना दिया कि उनके सम्पर्क में आने वाले सभी भक्त सात्विक हो गए। लोग पृथ्वी छोड़ कर जाना ही नहीं चाहते थे। एक दिन यमराज ने ब्रह्मा जी से कहा, “श्री नारायण ने बापू श्रद्धाराम जी के रूप में जो अंशावतार धारण किया है, उसे समेटने का समय आ गया है। मनुष्य अब पाप ही नहीं करते, नर्क

में कोई आता ही नहीं है, बापू श्रद्धाराम जी मुक्त-हस्त से सभी को मोक्ष प्रदान कर रहे हैं। हे ब्रह्मा जी, आप श्री हरि से प्रार्थना कीजिए कि वह निजधामगमन करें।" यह सुन कर ब्रह्मा जी ने भगवान् श्री विष्णु से प्रार्थना की, "हे हरि! आप कृपा करके अपने धाम पधारें और अपना लीला संवरण करें।" ब्रह्मा जी की प्रार्थना सुन कर श्री हरि ने अपनी लीला समेटने का निश्चय किया और अपने भक्तों पर आध्यात्मिक प्रसाद की अमूल्य मणियाँ न्यौछावर करते-करते अन्ततः अपनी लीला संवरण का समय निर्धारित कर लिया।

3 दिसम्बर 1974 को बापू जी ने रात के समय ट्रस्ट के सैकेट्ररी सरदार मुकन्द लाल जी को कहा कि आज के बाद हम नहीं आएंगे। मुकन्द लाल जी ने घबरा कर कहा कि महाराज जी, आप ऐसा क्यों कह रहे है? तब बापू जी ने कहा, "हम तो ऐसे ही कह रहे हैं क्योंकि अभी रात हो गई है।" उसके बाद वह विश्राम के लिए चले गए। चार दिसम्बर 1974 को बापू जी प्रातः ब्रह्म-मुहूर्त में उठे और स्नान कर के अपने पलंग पर लेट गए और यौगिक क्रिया द्वारा देह त्याग कर ब्रह्मलीन हो गए।

बापू जी के पास ही उनके सेवक लेख जी सो रहे थे। किसी को भी पता नहीं लगा कि बापू जी ने कब शरीर का त्याग कर दिया। बापू जी का नित्य हवन करने का नियम था। जब उस दिन बापू जी हवन पर

392

नहीं गए और बाकी सेवकों ने भी उठ कर देखा तो पाया कि बापू जी तो निज धाम प्रस्थान कर चुके थे। उधर अट्टी गाँव में बापू जी के भानजे जगदीश जी जब प्रातः चार बजे अपने पूजा कक्ष में पाठ के लिए बैठे तब उनके सामने जो बापू ओम जी, बापू हरनाम जी और बापू श्रद्धाराम जी की तस्वीर लगी हुई थी वह नीचे गिर गई और उस तस्वीर में जहाँ बापू श्रद्धाराम जी की फोटो थी उस हिस्से में दरार आ गई। उस समय सवा चार हुए थे। तब यह मान लिया गया कि बापू जी ने सवा चार बजे ही देह त्याग किया था।

बापू जी के ब्रह्मलीन होने का समाचार जैसे ही संगत को मिला सारी संगत शोक के सागर में डूब गई। भक्तों को विश्वास ही नहीं हो रहा था कि उनके भगवान् अपनी लीला समेट चुके हैं। जन-जन के प्यारे बापू श्रद्धाराम जी का तिरोधान भक्तों के लिए एक सदमे के समान था। भक्त उनके आश्रय तले स्वयं को सुरक्षित अनुभव करते थे। बापू जी के देह-त्याग के पश्चात् भक्त स्वयं को अनाथ की भांति समझने लगे। उनका रुदन, उनका दुःख असीम था। जब बापू जी का अंतिम संस्कार किया गया, तब एक और चमत्कार घटित हुआ। उनके मस्तक की हड्डी पर स्वयमेव 'स्वामी' शब्द उभर आया। लोग तो बापू जी को वैसे भी 'जगत स्वामी' कहते थे और अब स्वयं ईश्वर ने भी इस की पुष्टि कर दी कि बापू श्रद्धाराम साक्षात् ब्रह्म हैं, जगत स्वामी हैं।

श्री नारायण चरितामृत

393

बापू जी अपने स्वधामगमन से पूर्व अपने प्रमुख शिष्य बापू गुरदास राम शर्मा जी को यह कह चुके थे कि आप मेरे रहते ही यहाँ आ जाओ और अपना दरबार सम्भालो। बापू जी के ब्रह्मलीन होने पर बापू गुरदास राम जी को गद्दी पर बिठाया गया। इस घटना के कुछ दिनों पश्चात् लुधियाना निवासी चंचल जी को रात को एक स्वप्न आया। चंचल जी का मन बापू श्रद्धाराम जी के जाने के बाद से बहुत व्यथित था। वह सोचा करती थी कि अब नन्दाचौर जा कर क्या करना? बापू जी के दर्शनों के बिना वहाँ जाने का मतलब ही क्या है? चंचल जी के इन्हीं सवालों का जवाब देने बापू जी उनके स्वप्न में आ गए।

स्वप्न में चंचल ने देखा कि अचानक ही बिना किसी तार और टेलीफोन के बापू जी उनके घर आ गए। चंचल ने बापू जी का कक्ष खोल दिया और वहाँ पहले से बिछे हुए एक पलंग पर बापू जी विराजमान हो

गए। चंचल ने दोपहर का समय जान कर बापू जी को भोजन करने के लिए कहा। बापू जी ने भी कहा कि ठीक है- जल्दी भोजन लाओ।

जब चंचल भोजन ले कर वापिस आई तो देखा कि बापू श्रद्धाराम जी के स्थान पर बापू गुरदास राम जी बैठे हैं। उन्होंने हैरान हो कर अपनी आँखें मल के फिर से देखा तो पाया कि बापू श्रद्धाराम जी वहा विराजमान हैं। फिर बापू जी ने चंचल को कहा कि मुझ में और गुरदास

राम में कोई भेद नहीं है। हम दोनों में जो जोत विद्यमान है वह एक ही है। इसके बाद चंचल की आँखे खुल गई। उसने अपने पति को जगा कर सारा स्वप्न सुनाया और कहा कि वे अगले ही दिन नन्दाचौर जायेंगे और बापू गुरदास राम जी के दर्शन करेंगे। फिर अगले दिन दोनों पति-पत्नी ने नन्दाचौर जाकर बापू जी को माथा टेका और उनका प्यार, दुलार और आशीर्वाद प्राप्त किया।

बापू श्रद्धाराम जी ने देह-त्याग के उपरान्त भी बहुत भक्तों को दर्शन दिए और उनके संकट दूर किए। आज भी यदि कोई सच्चे मन से उन्हें स्मरण करता है तो वह तत्काल प्रकट हो कर उसे दर्शन देते हैं। प्रस्तुत दृष्टान्त एक ऐसे बालक भक्त का है जिसे इतनी कम आयु में बापू श्रद्धाराम जी की अनोखी लीला का सहभागी बनने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

दिल्ली निवासी परम खरबन्दा सुपुत्र श्री सुरेन्द्र खरबन्दा 'सरस्वती बाल मन्दिर' स्कूल का विद्यार्थी था। उसके सातवीं कक्षा की फाईनल परीक्षा थी। मार्च 2010 में अपनी हिन्दी की परीक्षा के एक दिन पहले रात को परम के माता-पिता बापू श्रद्धाराम जी की महिमा विषय पर वार्ता कर रहे थे। परम ने बापू जी के चमत्कारों की चर्चा सुन कर कहा कि मैं तो बापू जी की परीक्षा लूँगा और तब ही इन कथाओं पर विश्वास करूँगा।

अगले दिन परम पूरी तैयारी के साथ परीक्षा देने गया। जब उसे प्रश्न-पत्र मिला तो उसने पाया कि प्रश्न-पत्र में दिए प्रश्नों में एक का भी उत्तर उसे याद नहीं था। जो कुछ भी उसने याद किया था वह सब भूल गया था। परम को समझ नहीं आ रहा था कि ऐसा कैसे हो सकता है? उसने घबरा कर रोना शुरु कर दिया और रोते-रोते उसे पता ही नहीं चला कि कब उसकी आँख लग गई। वह मेज़ पर सिर टिका कर सो गया। जब तीन घंटे पूरे हो गए तो अध्यापक की आवाज़ से उसकी नींद टूटी और वह हड़बड़ा कर उठ गया। जब अध्यापक ने उससे उत्तर पुस्तिका माँगी तो परम ने कहा कि उसने तो कुछ भी नहीं लिखा है।

अध्यापक ने कहा, "तुम ऐसा क्यों कह रहे हो? तुमने तो बहुत जल्दी पेपर कर लिया था और उसके बाद ही तुम सोये थे।" इतना कह कर उस अध्यापक ने परम को उसका पेपर खोल कर दिखाया। परम के आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं था। उसने देखा कि वास्तव में ही सारा पेपर किया पड़ा था। उसे समझ में नहीं आया कि ऐसा कैसे हो सकता है। अध्यापक ने फिर कहा कि जब तुम पेपर कर रहे थे तब धोती पहने एक बुजुर्ग यहाँ आए थे और उन्होंने मुझसे कहा कि परम का ख्याल रखना। परम ने अपने अध्यापक को फिर कहा कि उसने तो पेपर किया ही नहीं था, वह तो सो गया था परन्तु सामने तो पेपर हल किया हुआ पड़ा था। वह तो कुछ और ही कहानी कह रहा था।

परम घर वापिस चला आया और घरवालों से सारी बात कही।

परम के पिता ने कहा कि कल तुमने जो बापू जी की परीक्षा की बात कही थी उसी के कारण आज बापू जी ने तुम्हें यह प्रत्यक्ष दिखाया है कि वह आज भी विराजमान हैं और सदैव अपने भक्तों के अंग-संग हैं। परन्तु अभी तो वह सुन्दर लीला आरम्भ ही हुई थी। अगले दिन परम का अंग्रेजी का पेपर था। अब की बार उसे सारा पेपर याद था।

जब वह आखिरी प्रश्न का उत्तर लिख रहा था तब ऐसा लगा मानो उसके साथ वाली कुर्सी पर कोई आ कर बैठा है। उसने आँख उठा कर देखा तो साक्षात् बापू श्रद्धाराम जी को वहाँ बैठा पाया। पहले तो परम थोड़ा डर गया परन्तु फिर वह जय बापू जी की करता रहा। उसके बाद आनन्द की अवस्था में कैसे

उसने वह आखिरी प्रश्न पूरा किया, यह तो उसे याद नहीं रहा परन्तु इस दिव्य अनुभव के बाद उसे कई बार बापू जी के दर्शन प्राप्त हुए।

इन दर्शनों से परम का विश्वास इतना दृढ़ हो गया कि अब वह बापू जी के ही ध्यान में रह कर उनके दिव्य दर्शनों और आशीर्वाद से दुर्लभ आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त कर रहा है। इस प्रकार के दिव्य दर्शन बिना ईश्वरीय आज्ञा और कृपा के प्राप्त नहीं हो सकते। यह परम का परम सौभाग्य है कि वह ईश्वर की गौरव-गाथा को प्रकट करने वाली अद्भुत लीला का साक्षी बना।

श्री नारायण चरितामृत

397

बापू श्रद्धाराम जी प्रत्यक्ष आ कर अपने बच्चों की रक्षा करते हैं, इस का एक अन्य उदाहरण है दिल्ली निवासी इकबाल सिंह मुटनेजा की पोती सांची का। 1991 में चार वर्षीय सांची अपने घर की छत पर खड़ी हो कर आतिशबाजी देख रही थी। नीचे उसके चाचा जीवन अपने मित्रों के साथ खड़े थे। जीवन जी ने सांची से पीछे हटने को कहा परन्तु सांची फिर भी वहाँ खड़ी रही और नीचे झुक कर गली में देखती रही।

थोड़ी देर बाद जीवन जी को लगा कि जैसे कोई कपड़ा ऊपर से नीचे गिरा है और उनके पैरों के पास कोई चीज़ आ कर पड़ी है। उन्होंने नीचे देखा तो सांची वहाँ उनके पैरों के पास बैठी हुई थी। जीवन जी बहुत हैरान हुए और भयभीत भी हुए कि सांची घर की पहली मंजिल से नीचे कैसे गिरी है? इसके गिरने की कोई आवाज़ भी नहीं आई है। वह तुरन्त उसे उठा कर एक डॉक्टर के पास ले गए और डॉक्टर ने चैक कर के बताया कि सांची बिलकुल ठीक है। उसे कोई चोट नहीं पहुँची थी। उसे एक खरोंच तक नहीं आई थी।

एक दिन बाद जब सांची अपने परिवार के साथ ढक्का मन्दिर गई तब अपनी दादी के पूछने पर कि सांची, तू कैसे गिरी थी? सांची ने बापू श्रद्धाराम जी के स्वरूप की ओर इशारा करते हुए बताया कि जब मैं गिर रही थी तब इन्होंने मुझे पकड़ लिया और सीधा खड़ा कर के बिठा

श्री नारायण चरितामृत

398

दिया। छोटी बच्ची की यह बात सुन कर सभी भाव-विभोर हो उठे और बापू जी की जय-जयकार की।

देहत्याग से अस्तित्त्व का नाश नहीं होता। शरीर भस्म होने के बाद भी ईश्वरकोटि महापुरुष अपने भक्तों के सहायतार्थ फिर से स्वयं को किसी भी समय प्रकट कर सकते हैं। ललिता नंदवानी का अनुभव भी कुछ ऐसा ही है। जब वे पाँच वर्ष की थीं तो खेलते-खेलते घर की छत से नीचे गिर गई। उनकी छत से ढक्का स्थित मंदिर का गुंबद दिखाई देता था। जब वह छत से नीचे गिर रही थी तब बापू श्रद्धाराम जी साफा लिए उन्हें बचाते हुए ललिता को नज़र आए । उन्होंने हाथ देकर उनकी रक्षा की। छत से गिरने के कारण उन्हें गंभीर क्षति भी पहुँच सकती थी परन्तु ऐसा कुछ नही हुआ।

दस दिन अस्पताल में रहने के बाद वह भली-चंगी हो गई। उस दुर्घटना के कारण उन्हें चश्मा तो लग गया लेकिन बाद में उन्होंने अपने जीवन में रेकी मास्टर के तौर पर उल्लेखनीय प्रगति की। इस घटना में सबसे बड़ा चमत्कार यह है कि जिस समय ललिता को बापू जी ने बचाया उस समय तक बापू जी देहत्याग कर चुके थे। इस घटना में संगत को यह जानकारी हुई कि बापू जी हरदम, हर समय उनके साथ हैं और उनकी रक्षा करते हैं।

श्री नारायण चरितामृत

399

होशियारपुर निवासी प्रभदयाल वालिया पर बापू श्रद्धाराम जी की विशेष कृपा थी। एक बार 1990 में प्रभदयाल जी को बिजनेस में घाटा होने से ब्रेन हैमरेज हो गया। उनके दिमाग में एक रक्त का एक थक्का बन गया जिसका इलाज डॉक्टर ने आपरेशन बता दिया। दिल्ली के गंगाराम अस्पताल में आपरेशन का कराना निश्चित हुआ।

जब प्रभदयाल जी अपनी पत्नी वीना वालिया के साथ रात के समय डीलक्स बस में जा रहे थे तो उन्हें ऐसा आभास हुआ कि बापू श्रद्धाराम जी उनके साथ ही आकर बैठ गए हैं और कह रहे हैं कि घबराने की कोई बात नहीं है। मैं तुम्हारे साथ हूँ और इतना कह कर बापू जी ने उनकी झोली मिठाई से भर दी। जब सुबह हुई और प्रभदयाल जी की आँख खुली तो वह बापू जी को ढूँढने लगे और कहने लगे कि मेरे

बापू जी कहाँ चले गए। उनकी पत्नी ने बताया कि आप के साथ तो मैं बैठी थी फिर आप बापू जी को क्यों ढूँढ रहे हैं?

तब प्रभदयाल जी ने बताया कि पूरी रात स्वप्न में बापू श्रद्धाराम जी मेरे साथ थे और अब मुझे पूर्ण विश्वास है कि मैं ठीक हो जाऊँगा। तत्पश्चात् जब उनका आपरेशन हुआ तो वह एकदम ठीक हो गए। प्रभदयाल जी के दोनों पुत्र शिव और विशाल वालिया और पुत्र-वधुएं मोनिका और रुचि वालिया भी अपने माता-पिता की तरह बापू जी में अखण्ड श्रद्धा रखतीं हैं और उनका पूरा परिवार बापू जी की सेवा में

श्री नारायण चरितामृत

तल्लीन हैं।

बापू जी की कृपा अपने जिस भक्त पर हो जाती है उसका कल्याण तो निश्चित ही होता है। पिंजौर निवासी श्री अश्विनी कुमार जी को बापू श्रद्धाराम जी ने कई बार अपने दिव्य रूप में दर्शन दिए हैं। एक बार माघ 2012 के महीने में वह नन्दाचौर दरबार में बैठे हुए थे। अचानक उनकी नजर बापू श्रद्धाराम जी की सुन्दर मूर्ति पर पड़ी और उन्होंने देखा कि मूर्ति की पलकें झपक रहीं हैं और उनके होंठ हिल रहे हैं। अश्विनी जी को सुनाई दिया कि बापू जी कह रहे हैं कि फूल लाओ। उस वक्त उन्हें समझ में नहीं आया कि बापू जी के ऐसा कहने का क्या अर्थ हो सकता है। उन्होंने एक भक्त प्रभदयाल वालिया जी को अगले दिन फूल लाने के लिए कह दिया।

जब अगले दिन सुबह अश्विनी जी वालिया जी द्वारा लाए फूल लेकर दरबार में बैठे थे, तभी बूढ़पुर गद्दी के संत सत्यपाल जी महाराज जी वहाँ आ गए और तभी बापू हरभगवान जी ने अश्विनी जी को कहा कि आप आगे आइए और महाराज जी पर फूलों की वर्षा कीजिए। अश्विनी जी अति आश्चर्यचकित हुए और तुरन्त आगे आकर संत सत्यपाल जी महाराज जी पर फूलों की वर्षा की। इस अद्भुत अनुभव से अश्विनी जी भाव- विभोर हो गए और गद्गद् हो कर बापू जी के चरणों में नत-मस्तक हो गए।

श्री नारायण चरितामृत

जो भक्त बापू जी में दृढ़ विश्वास रख उनके आगे पूर्ण समर्पण कर देता है बापू स्वयं उसका सारा भार वहन करते हैं और उसके लिए कठिन से कठिन कार्य भी सुलभ कर देते हैं जैसा कि प्रीति अनेजा के लिए किया। प्रीति अनेजा धर्मपत्नी श्री अमृत तनेजा मुम्बई में सुभाष घई के फिल्म इंस्टीटयूट से फिल्म निर्देशन का कोर्स कर रही थीं। प्रीति ने एक लघु फिल्म 'काला पानी' बनाई जिसे वह नासिक अंतर्राष्ट्रीय फिल्म उत्सव में नामांकन दिलवाना चाहती थीं। प्रीति की फिल्म के साथ-साथ 128 फिल्में रेस में थीं। प्रीति नवम्बर 2010 में सहारनपुर यज्ञ में बापू हरभगवान जी का आशीर्वाद लेने आई थीं। उसने बापू जी से कहा कि बापू जी, मैं फार्म तभी भरूँगी यदि आप मुझे आश्वासन देंगे कि मेरी फिल्म को नामांकन मिलेगा।

बापू जी ने कहा कि वह बापू श्रद्धाराम जी से उसके लिए अरदास करेंगे। फिर बापू जी ने उसे फार्म भरने के लिए कह दिया। इसके बाद प्रीति नन्दाचौर आई और बापू जी से आशीर्वाद लेकर वापिस फरीदाबाद चली गई। 1 जनवरी 2011 को जब प्रीति ने बापू जी को फोन किया तो बापू जी ने उसे खूब यश, शोहरत, नाम-सम्मान मिलने का आशीर्वाद दिया। आशीर्वाद मिलने के दो घण्टे बाद ही प्रीति को नासिक से फोन आ गया कि उनकी फिल्म 'काला पानी' का नामांकन हो गया है। यह खबर आते ही हर समाचार-पत्र और हर टी. वी. चैनल पर प्रीति ही प्रीति छा गई।

श्री नारायण चरितामृत

उसके बाद 17 जनवरी को प्रीति पाँच दिनों के लिए नासिक रवाना हो गई। नासिक पहुँच कर उसने बापू जी को फोन किया कि बापू जी अब कृपा करके मुझे यह अवार्ड भी दिलवा दीजिए। बापू जी ने कहा, "बेटी ज़्यादा लालच नहीं करते। अभी तुम्हें वहाँ से अनुभव प्राप्त करना चाहिए।" प्रीति का मन और चित्त एक इसी बात में रम गया था कि उसे हर हाल में यह अवार्ड चाहिए। बापू जी ने प्रीति की इच्छा समझ कर बापू श्रद्धाराम जी से घण्टों अरदास की। जिस जिस संगत के व्यक्ति को प्रीति की इस इच्छा के विषय में पता चला उन सभी में प्रीति के लिए प्रार्थना की कि अवार्ड उसी को मिले। जिस दिन प्रीति की फिल्म का प्रमोशन था उस दिन बापू जी कृपा से हाल खचाखच भरा हुआ था।

सारी संगत की अरदास और बापू श्रद्धाराम जी के आशीर्वाद से प्रीति को एक नई श्रेणी में 'सर्वश्रेष्ठ प्रमोशनल फिल्म अवार्ड' और 'सर्वश्रेष्ठ निर्देशक' का दादा साहिब फालके अवार्ड प्राप्त हुआ। यह वह अवार्ड है जो केवल अपने क्षेत्र में विशिष्ट योग्यता प्राप्त व्यक्तियों को ही दिया जाता है और प्रीति को अपने करियर के आरम्भ में ही प्राप्त हो गया और इससे उसका विश्वास और श्रद्धा और भी दृढ़ हो गई। प्रीति का यह दृष्टांत श्रद्धा और विश्वास के महत्व को दर्शाता है।

भगवान कृष्ण ने अर्जन को श्रद्धा और विश्वास का महत्व बताते

हुए कहा है कि-

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति । नायं लोकोडस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ।।

अर्थात् विवेकहीन, श्रद्धारहित और संशयात्मा मनुष्य का पतन हो जाता है। ऐसे संशयात्मा मनुष्य के लिए न तो यह लोक (हितकारक) है, न परलोक (हितकारक) है और न ही सुख ही है।

वास्तव में आज के युग के मानव की यह तीन बहुत बड़ी समस्याएं हैं। इनमें से एक भी दुर्बलता रहने पर व्यक्ति इस माया खचित विश्व से परे परमात्मा तक पहुँच नहीं सकता। अपनी सन्तान की इन कमजोरियों से परमात्मा भली-भान्ति अवगत हैं। इसीलिये उन्होंने स्वयं बापू श्रद्धाराम जी के रूप में अवतरित हो कर भक्तों में ऐसा विवेक, ऐसी श्रद्धा, ऐसा विश्वास स्थापित किया जो चट्टान की तरह अडिग और आकाश की तरह अनन्त है। बापू श्रद्धाराम जी तो एक पत्थर को भी ब्रह्मानुभूति करवा सकते थे। उनकी महिमा के विषय में यह कहना बड़ा उपयुक्त होगा-

पत्थर की भी तकदीर संवर सकती है शर्त ये है कि श्रद्धा से सजाया जाए।

बापू श्रद्धाराम जी ने अपनी भावी संगत के लिए किस प्रकार अपने बहुत प्रिय शिष्य बापू गुरदास राम जी को श्रद्धा से सिंचित और पल्लवित कर तैयार किया उसका वर्णन हम अगले अध्याय में करेंगे।

।। हरि ॐ ।।

बापू श्री श्रद्धाराम महाराज जी का पावन खूँटा

ॐ

अथ बापू श्री गुरदास राम

- संकीर्तनम

ॐ

अथ बापू गुरदास राम

- संकीर्तनम्

ध्यान मूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् । मन्त्र मूलं गुरोर्वाक्यं मोक्ष मूलं गुरोः कृपा ।।

शास्त्र कहते हैं कि गुरु की मूर्ति अर्थात् उनका स्वरूप ही ध्यान का मूल है, गुरु के श्री चरण पूजा का मूल हैं, गुरु के वचन मन्त्र का मूल हैं और गुरु की कृपा मोक्ष का मूल है।

शास्त्रों का यह मत एक अकाट्य सत्य है क्योंकि जो भक्त गुरु-कृपा की महत्ता को समझते हैं वे यह जानते हैं कि ध्यान, मन्त्र और प्रत्येक प्रकार की पूजा-पद्धति का लय अन्ततः गुरु-कृपा में ही हो जाता है और ऐसा भाव दृढ़ हो जाने पर वे गुरु के पाद-पंकजों के सदैव के लिए दास हो जाते हैं और फिर उनकी अक्षुण्ण कृपा से ब्रह्म-तत्त्व को जानने के अधिकारी भी हो जाते हैं।

ऐसे ही गुरु के दास हुए एक ऐसे भक्त, एक ऐसे ज्ञानी, एक ऐसे साधक जिन्होंने एक अवतार कोटि महापुरुष का जीवन जिया, जो

जीवन्मुक्त थे, जो सागर के समान गम्भीर एवं धीर, पृथ्वी के समान सहनशील और आकाश की भांति अनन्त थे। निष्काम प्रेम ही जिनका जीवन-आदर्श था और मधुरता जिनका स्वभाव था। जिनके प्रत्येक निः श्वास में राम नाम की मधुर झंकार थी, जिनके नेत्रों में भक्ति, ज्ञान और वैराग्य की अद्भुत त्रिवेणी का संगम था, जो भगवान शिव के समान गृहस्थ और वैराग्य के अद्भुत सांमजस्य के सुन्दर उदाहरण थे, जिनका जीवन भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा निर्देशित स्थितप्रज्ञता की अवधारणा का जीता जागता साकार रूप था, ऐसे ईश्वरकोटि सन्त का सुनाम था-गुरदास राम ।

साधारण मनुष्यों को तो अपने जन्म का ध्येय ज्ञात होने में बहुत समय लग जाता है परन्तु गुरदास राम जी के जन्म का उद्देश्य तो बहुत पहले ही बापू ओम नारायण दत्त जी महाराज जी ने निर्धारित कर दिया था। बापू ओम जी जिस आध्यात्मिक पुँज को भविष्य में दरबार की सेवा हेतु लाना चाहते थे उस दिव्य आत्मा के माता-पिता बनने का सौभाग्य उन्होंने अपने एक अनन्य भक्त लब्भुराम और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती हुक्म देवी को दिया।

लब्भुराम जी पंजाब के जालन्धर शहर के दोसांझकलाँ ग्राम में रहते थे। वह एक अति प्रतिष्ठित यूनानी हकीम थे। उन्होंने वेदों और पुराणों का विधिवत् अध्ययन किया था। लब्भुराम जी का जीवन भी

सन्त-सदृश ही था। वह निष्काम भाव से समाज की सेवा किया करते थे। एक भक्त-हृदय होने के कारण वह मधुर कण्ठ से कीर्त्तन किया करते थे। लब्भुराम जी शास्त्रीय संगीत के भी अच्छे ज्ञाता थे। वह बापू ओम जी के प्रिय शिष्य थे और उनसे दीक्षा प्राप्त कर साधना, उपासना किया करते थे। उन्होंने अपने घर में एक चौबारे में बापू ओम जी का एक स्थान बना रखा था जहाँ नित्य प्रति ध्यान, पूजन हुआ करता था। लब्धुराम जी की पत्नी श्रीमती हुक्म देवी भले ही शिक्षित नहीं थी परन्तु आध्यात्मिक शिक्षा में वह कतई पीछे नहीं थी। सुसंस्कारी श्रीमती हुक्म देवी भी सुबह-शाम बापू जी का ध्यान किया करती थी और वेद, पुराण एवं बापू ओम जी और गोसांई राम लाल द्वारा रचित पुस्तकों को सिर पर रख कर घर के चौबारे में रखे बापू ओम जी के पलंग के चारों ओर तीन बार प्रदक्षिणा कर और फिर आरती कर के अपना दैनिक कार्य सम्पन्न किया करती थी।

लब्भुराम जी जब नन्दाचौर बापू ओम जी के दर्शनार्थ जाते तब बापू जी उन्हें प्रसाद दे कर विदा करते। दोसांझकलाँ वापिस आते समय लब्भुराम जी रास्ते में कहीं भी रुकते नहीं थे। वह सीधे घर जाते और अपनी पत्नी को कहते कि वह स्नान कर के आए और बापू ओम जी का दिया प्रसाद अपनी झोली में स्वीकार करे। जब तक उनकी पत्नी स्नान कर वापिस नहीं आती थी तब तक वह खड़े हो कर उनकी प्रतीक्षा करते और उसके बाद ही अन्य कोई कार्य करते थे। लब्भुराम जी का

एक पुत्र भी था जो दैव योग से असमय ही काल कवलित हो गया था।

एक बार लब्भुराम जी बापू ओम जी की सेवा में नन्दाचौर गए हुए थे। वह प्रायः नन्दाचौर जाते समय बापू ओम जी के लिए भोजन बनवा कर उसे श्रद्धापूर्वक सिर पर रख कर लाया करते थे। बापू ओम जी उन पर प्रसन्न रहा करते थे। ऐसे ही एक दिन जब लब्भुराम जी बापू ओम जी की सेवा में उपस्थित थे तब थड़ा साहिब जाते हुए रास्ते में एक आम के वृक्ष के पास ओम जी रुक गए और दो आम तोड़ कर लब्भुराम जी की झोली में डाल दिये और जो पहला आम दिया था उसे वापिस निकाल लिया। दूसरा आम लब्भुराम जी की झोली में ही रहा। फिर पहला आम वापिस देते समय बापू ओम जी ने फरमाया, "ओम यह (पहला आम) हमारे दरबार की ईंट होगा, समय आने पर हम इसे वापिस ले लेंगे और दूसरा आम आपका ही होगा।"

इस प्रकार लब्भुराम जी को दो पुत्र-रत्नों की प्राप्ति हुई। बड़े बेटे का जन्म 31 भादों विकम्री संवत 1973 (16 सितंबर, 1916) को हुआ। बड़े बेटे का नाम गुरदास राम और छोटे पुत्र का नाम शिवदत्त रखा गया। लब्भुराम जी को दो पुत्रियों, ज्ञान देवी और शीला देवी की प्राप्ति भी हुई। ज्येष्ठ पुत्र गुरदास राम की बाल्यावस्था से यह इंगित हो चुका था कि उनका भावी जीवन महान् सन्तों के पथ पर चलने के लिए उन्हीं संतों द्वारा निर्देशित हो रहा है जिन संतों की कृपा से उन्हें अवतार

लेना पड़ा। गुरदास राम जी की वृति बचपन से ही सामान्य बालको' से हट कर थी। जहाँ पाँच वर्ष की अवस्था के बालकों की प्राथमिकता खेल-कूद कर समय व्यतीत करने की होती है वहीं पाँच वर्षीय गुरदास राम जी को अपने पिता के साथ ध्यान में बैठना अति रुचिकर लगता था। वह अपने पिता से आग्रह करते कि मुझे भी छोटी धोती ला दो। अपने पिता के सुमधुर कर्णप्रिय शास्त्रीय संगीत से गुरदास राम जी के मन में भी संगीत के प्रति रुझान पैदा हो गया। संगीत, भजन, कीर्तन आदि के प्रति अनुराग उन्हें विरासत में अपने पिता से मिला था।

उनका कोमल मन भगवद्-कीर्तन सुन कर आनन्द के सागर में हिलोरें लेता और जहाँ कहीं भी भजन, नात, कव्वाली और सूफी कलाम का गुंजन उनके कर्ण पटल तक पहुँचता, वह भाव विह्वल हो उठते और उनके कदम स्वतः ही उस ध्वनि की ओर चल पड़ते थे। भगवान् का पवित्र नाम कानों में पड़ते ही उनका शरीर रोमांचित हो उठता, उनकी एकाग्रता का स्तर सांसारिक भावनाओं और संवेदनाओं का अतिक्रमण कर एक उच्च भावभूमि में विचरण करने लगता। ऐसी अवस्था में उन्हें समय का कोई ज्ञान नहीं रहता था।

गुरदास राम जी अपने पिता के साथ नन्दाचौर जाया करते थे और बापू हरनाम जी और बापू श्रद्धाराम जी के दर्शन कर बहुत रोमांचित हो जाते थे। बापू जी के सम्पर्क और दर्शनों से उनकी वृत्ति और भी

ईश्वराभिमुख होने लगी। समय बीता और धीरे-धीरे उनकी सांसारिक शिक्षा का प्रारम्भ हुआ। गुरदास राम जी कुशाग्र बुद्धि के स्वामी थे। उन्होंने अंग्रेजी साहित्य में बी० ए० किया और पंजाबी में ज्ञानी भी की। उन्हें पढ़ने का बहुत शौंक था। जब भी उन्हें किसी भी प्रकार ज्ञान प्राप्त करने का मौका मिलता था वह उस मौके को हाथ से नहीं जाने देते थे। इस प्रकार की स्कूल, कॉलेज की पढ़ाई करने के साथ-साथ वह अपना पैतृक व्यवसाय भी सीख रहे थे।

पूरे पंजाब में उनका परिवार आयुर्वेद के क्षेत्र में सम्मानीय स्थान रखता था। लब्भुराम जी की हार्दिक इच्छा थी कि उनका पुत्र भी उनके इस पैतृक गुण को आत्मसात करे। गुरदास राम जी अपने पिता की इच्छा का सम्मान करते हुए यह सब कुछ सीख भी रहे थे परन्तु एक दिन एक छोटे से आपरेशन के दौरान रक्त देख कर वह विचलित हो गए और उनका मन इस तरफ से हट गया। फिर उन्होंने लाहौर जा कर आगे की पढ़ाई पूरी की और नौकरी भी आरम्भ कर दी। उन्होंने अपने जीवन काल में लाहौर, शिमला, पटियाला और चंडीगढ़ में कार्य किया और पंजाब लोक सेवा आयोग के 'फूड एण्ड सिविल सप्लाई विभाग' में भी कार्यरत रहे।

गुरदास राम जी एक बहुत अच्छे भाषाविद् थे। उनका पंजाबी, हिन्दी, उर्दू और अंग्रेज़ी आदि सभी भाषाओं पर असाधारण अधिकार

था। उनकी लेखन शैली बहुत प्रभावशाली थी। उनके द्वारा लिखित पत्र भले ही वे व्यक्तिगत हों या आफिस के काम-काज के हों, पढ़ने वाले पर अमिट छाप छोड़ते थे। जब वह अंग्रेज़ी भाषा में बात करते थे तब हर किसी को अपनी वाचन शैली से मंत्रमुग्ध कर लेते थे। उनका लेख बहुत ही आकर्षक था और उनके ऊपर के पदाधिकारी उनके इस गुण के कायल थे। गुरदास राम जी का कानून सम्बन्धी ज्ञान भी श्लाघनीय था। वह सरकारी कार्य प्रणाली की खामियों के चलते उन असहाय और गरीब लोगों की सहायता किया करते थे जिनकी मदद कोई नहीं कर रहा होता था, ऐसे व्यक्ति रोते हुए उनके पास आते और जाते हुए उनके होठों पर मधुर मुस्कान खेल रही होती थी।

नौकरी के साथ-साथ उनकी साधना भी अबाध रूप से चलती रही। एक बार जब वह लाहौर में उच्च शिक्षा प्राप्त करने गए थे तब बापू श्रद्धाराम जी लाहौर जा कर गुरदास राम जी से मिले और उन्हें आशीर्वाद दे कर कहा, "मैने जो देखना था वह देख लिया।" बापू जी के इन शब्दों का मर्म तो बाद में पता लगना था जब भविष्य में गुरदास राम जी ने नन्दाचौर दरबार का कार्यभार सम्भालना था। बापू श्रद्धाराम जी जानते थे कि कालान्तर में गुरदास राम जी ने ही उनके बाद दरबार की सेवा करनी है।

1937 ई० में उनका विवाह कंगजगीर निवासी सावित्री देवी के

साथ हुआ। उनका गृहस्थ जीवन बापू जी की कृपा से सुखमय रहा। विवाहोपरान्त दोनों पति-पत्नी ने बापू श्रद्धाराम जी से दीक्षा प्राप्त की। बापू ब्रद्धाराम जी गुरदास राम जी अतिशय स्नेह करते थे और उनसे पुत्र समान व्यवहार करते हुए सावित्री देवी को अपनी पुत्रवधू समझ कर उन्हें खूब दुलार दिया करते थे। बापू श्रद्धाराम जी गुरदास राम जी के पास अकसर रहने जाया करते थे और साधना में उनका मार्गदर्शन किया करते थे। शिमला में रहते हुए गुरदास राम जी गहन वनों में चले जाते थे और वहाँ तपस्यारत साधुओं की सेवा किया करते थे। उन साधुओं को जिस किसी वस्तु की आवश्यकता होती थी उस वस्तु को उन तक पहुँचाया भी करते थे।

एक समय बापू श्रद्धा राम जी गुरदास राम जी के पास शिमला गए। उनके साथ बीबी चिन्ती, बीबी माया और लक्ष्मण दास भी थे। एक दिन बापू श्रद्धा राम जी ने इन तीन भक्तों को कहा, "आओ, तुम्हें कुछ दिखायें।" यह कह कर वह उन्हें एक जंगल की ओर ले गए। वहाँ जा कर उन्होंने देखा कि गुरदास राम जी एक झरने के पास एक टाँग पर खड़े हो कर तपस्या कर रहे हैं। उन्हें अपने शरीर की कोई सुधि नहीं है। मुखमण्डल पर शाश्वत शान्ति का भाव लिए गुरदास राम जी ईश्वर चिन्तन में निमग्न थे।

बापू श्रद्धाराम जी यह देख कर अति प्रसन्न हुए और बहुत गर्व से

अपने उन तीन भक्तों को गुरदास राम जी की ओर इशारा कर के दिखाने लगे कि देखो, मेरा शिष्य कैसी अद्भुत भगवद्-भक्ति में लीन है। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि गुरदास राम जी की विवाह करवाने में कोई रुचि नहीं थी। वह तो बचपन से ही जीवन के वास्तविक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कृत संकल्प थे। परन्तु हर माँ की तरह गुरदास राम जी की माता जी भी अपनी बहू का मुख देखना चाहती थी। अपनी माँ की इच्छापूर्ति के लिए उन्होंने गृहस्थ-जीवन स्वीकार किया था।

गुरदास राम जी की कर्त्तव्यपरायणता विलक्षण और अद्वितीय थी। उन्होंने कभी भी अपनी भक्ति के चलते अपने किसी भी पारिवारिक, सामाजिक और व्यवसायिक उत्तरदायित्व की अवहेलना नहीं की। अपने माता-पिता की सेवा वह मन-प्राण से किया करते थे। जब लब्भुराम जी मृत्यु-शैय्या पर थे तब गुरदास राम जी अपने हाथों से उनके शरीर की मालिश किया करते थे, उन्हें स्नान करवाया करते थे, नाखून काट कर, उन्हें स्वच्छ वस्त्र पहना कर उनकी पूरी देखभाल किया करते थे। प्रायः वह अपने पिता का मन प्रसन्न करने के लिए उनसे हँसी-मज़ाक भी किया करते थे। कभी-कभी अपने पिता के प्रति कृतज्ञ भाव से उनकी आँखों में आँसू आ जाते। धन्य हैं ऐसे माता-पिता और धन्य है ऐसी सन्तान ।

गुरदास राम जी के कर्त्तव्य-पालन का एक और दृष्टान्त वर्णनीय

श्री नारायण चरितामृत

415

है। 1947 में भारत विभाजन के दौरान जब देश साम्प्रदायिक दंगों से बुरी तरह त्रस्त था और हिन्दू लोग पाकिस्तान छोड़ कर भारत आ रहे थे, उस भयंकर और विकट परिस्थिति में भी गुरदास राम जी ने अपने उत्तरदायित्व को निभाने की खातिर अपनी जान संकट में डाल ली। उस समय आवश्यक सरकारी फाईलों और दस्तावेज़ों को भी भारत भेजा जा रहा था। गुरदास राम जी के दफ्तर का हर एक कर्मचारी भारत आ चुका था। गुरदास राम जी अभी पाकिस्तान में ही थे और आवश्यक फाईलें और जरूरी चाबियाँ सम्बन्धित अधिकारी को सौंपने साईकिल द्वारा रेलवे स्टेशन जा रहे थे। रास्ते में एक पैट्रोल बम उनकी साईकिल के पिछले हिस्से में आ कर लगा और फट गया। साईकिल का टायर क्षतिग्रस्त हो गया और उनकी टाँग और पैर भी घायल हो गए। इतना कुछ होने पर भी गुरदास राम जी व्यथित नहीं हुए और सारे दस्तावेज़ उस अधिकारी को देने के बाद ही भारत के लिए रवाना हुए।

अपनी पत्नी और सन्तानों के लिए भी गुरदास राम जी ने अपने कर्त्तव्य का पूरी तरह से पालन किया। उनकी चार पुत्रियाँ थी- रमेश शर्मा, रवि कान्ता शर्मा, रमा शर्मा एवम् रूपा शर्मा। गुरदास राम जी ने सभी पुत्रियों को उच्च शिक्षा दिलाई और अच्छे सुसंस्कारी परिवारों में उनका विवाह किया। उनकी बड़ी पुत्री रमेश शर्मा बापू श्रद्धाराम जी के आशीर्वाद से फरवरी 1964 में उत्तर भारत की प्रथम महिला प्रोबेशनरी आफिसर बनी जो स्वयं में एक उल्लेखनीय उपलब्धि थी।

गुरदास राम जी वास्तव में एक पूर्ण सन्त थे। स्वयं कष्ट में रह कर भी वह उन लोगों की सहायता किया करते थे जो संकटग्रस्त हो कर उनसे सहायता की याचना किया करते थे। 'श्रीरामचरितमानस' में तुलसीदास जी ने ऐसे सन्तों के विषय में लिखा है-

संत हृदय नवनीत समाना। कहा कबिन्ह परि कहै न जाना ॥ निज परिताप द्रवइ नवनीता। पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता ॥

तुलसीदास जी कहते हैं कि कवियों के अनुसार संतों का हृदय मक्खन के समान होता है, परन्तु कवि संत हृदय की कोमलता का आकलन नहीं कर सकते। मक्खन तो तब पिघलता है जब उसे ताप लगता है परन्तु संत तो दूसरों के कष्ट से ही पिघल जाते हैं।

गुरदास राम जी भी ऐसे ही संत थे जिनके हृदय की कोमलता की थाह पाना सम्भव ही नहीं था। गुरदास राम जी की कोमल हृदयी मनोवृत्ति को प्रदर्शित करने वाला एक प्रसंग यहाँ दिया जा रहा है जो यह दर्शाता है कि गुरदास राम जी की करुणा का तो कोई अन्त ही नहीं था। पाकिस्तान बनने के समय की बात है, गुरदास राम जी भारत आने वाले थे। उनके दफ्तर में सभी कर्मचारियों को तनख्वाह दे दी गई थी। सभी लोग भारत आने की तैयारी कर रहे थे। एक दिन एक सहकर्मी उनके पास आया और मिन्नतें करने लगा कि उसकी बेटी की शादी है

और उसके लिए उसके पास समुचित धन की व्यवस्था नहीं है। फिर वह व्यक्ति गुरदास राम जी से उनकी पूरी तनख्वाह माँगने लगा और कहने लगा कि भारत पहुँच कर वह उनके सारे पैसे लौटा देगा। गुरदास राम जी का दिल पसीज गया और उन्होंने उस सहकर्मी को अपनी सारी तनख्वाह दे दी। भारत आने पर उसे सहकर्मी को अमृतसर में नौकरी मिल गई। गुरदास राम जी को अभी नौकरी नहीं मिली थी। जब गुरदास राम जी को पैसे की आवश्यकता पड़ी तो वह उस व्यक्ति के पास गए और अपने पैसे माँगे। पहले तो वह व्यक्ति उन्हें टालता रहा फिर बाद में गुरदास राम जी को बुला कर कहने लगा कि आप घर आ कर अपने पैसे ले जाइए।

जब गुरदास राम जी पैसे लेने गए तो सहकर्मी ने बहुत आग्रह कर के उन्हें खाना खिलाया। खाना खिलाने से पहले उसने खाने में जहर मिला दिया था। खाना खाते ही गुरदास राम जी की तबीयत खराब होनी शुरू हो गई। अपने पिता से मिले आयुर्वेद के ज्ञान के कारण उन्हें यह समझने में देर नहीं लगी कि उनके साथ क्या हुआ है? वे बिना कुछ कहे वहाँ से चल पड़े और हलवाई की दुकान से पानी में बहुत सा नमक डाल कर पानी पिआ ताकि पेट साफ हो जाए। तबीयत सम्भलने पर वह वापिस घर आ गए और वापिस कभी उस व्यक्ति को नहीं मिले।

उसके कुछ समय पश्चात् गुरदास राम जी को पब्लिक सर्विस

कमीशन शिमला में नौकरी मिल गई। दैवयोग से कुछ ऐसा हुआ कि उसी व्यक्ति के पदोन्नति के कागजात गुरदास राम जी के पास आ गये।

जब वह व्यक्ति इस सम्बन्ध में ग्रदास राम जी से मिला तो गुरदास राम जी ने क्रोधित होने की बजाय उसका स्वागत-सत्कार किया। पहले तो गुरदास राम जी के परिवार वालों ने उस व्यक्ति की मेहमाननवाजी करने से इन्कार कर दिया फिर गुरदास राम जी के समझाने पर कि कोई किसी के साथ बुरा नहीं करता, न कर सकता है। ये सब विधि के विधान हैं, अपने कर्म हैं। आप सभी को उसके कर्म का फल देने का

कोई अधिकार नहीं। उसके कर्म का फल देना तो भगवान् का कार्य है। आप सभी तो अपना कार्य करो, जो भगवान् ने आपके लिए निश्चित किया है। वह आपका अतिथि है, उसकी सेवा करना हमारा धर्म है।

परिवार वालों को यह समझा कर गुरदास राम जी ने उस व्यक्ति को रात घर पर रखा और सुबह नाश्ता करवा कर ऑफिस लेकर गए। तत्पश्चात् उसका कार्य सम्पन्न करके उसे बस पर चढ़ा कर अपने घर लौट आये। जो व्यक्ति तुच्छ धन के लिए उनके प्राण हरण करना चाहता था, ऐसे व्यक्ति को न केवल क्षमा-दान देना अपितु उससे सद्व्यवहार करते हुए अपना फर्ज निभाना और परिवार वालों को भी प्रेरित करना, वास्तव में उनके ईश्वर तत्त्व में पूर्ण स्थिति की ओर इशारा करते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण ने ऐसे समत्व बुद्धि साधक के लक्षण बताते हुए कहा है-

दुःखेषु अनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः । वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरूच्यते ।।

अर्थात् दुःखों की प्राप्ति होने पर जिसके मन में उद्वेग नहीं होता, सुखों की प्राप्ति में जो सर्वथा निःस्पृह है तथा जिसके राग, भय और क्रोध नष्ट हो गए हैं, ऐसा मुनि स्थिरबुद्धि कहा जाता है।

गुरदास राम जी भगवान श्रीकृष्ण कथित इस स्थिरबुद्धि साधक की परिभाषा में बिलकुल खरे उतरते हैं। उद्वेग, विषाद, क्रोध और भय से परे गुरदास राम जी का यह ईश्वरतुल्य आचरण समस्त भक्तों को यह प्रेरणा देता है कि अपना अपकार करने वाले मनुष्य को क्षमा करने से व्यक्ति और भी महान् हो जाता है।

गुरदास राम जी के व्यक्तित्व का एक और भी बहुत ही खूबसूरत आयाम था और वह था उनका भगवद् कीर्तन के प्रति असाधारण प्रेम चैतन्य महाप्रभु की भांति श्री गुरदास राम भी भगवान् के प्रेम की रसधारा में ऐसे प्रवाहित हो जाते थे कि उन्हें समय और स्थान का कोई बोध ही नहीं रहता था। गुरदास राम जी की यह प्रबल इच्छा रहती थी कि उनका परिवार भी इकट्ठे बैठ कर कीर्तन किया करे। उनकी पत्नी भी अपने पति की तरह बहुत आनन्दित हो हर मंगलवार को घर पर ही स्त्रियों के साथ कीर्तन किया करती थी।

जब गुरदास राम जी लाहौर में थे तब भी वह एक कीर्तन सभा से जुड़े हुए थे, पाकिस्तान से आने के बाद शिमला में उस सभा में सदस्य दोबारा से मिल गए और गुरदास राम जी ने उन सदस्यों के साथ मिल कर लाहौर संकीर्तन मण्डल का गठन किया जो सनातन धर्म मन्दिर शिमला में प्रति शनिवार को कीर्तन करता था। रात को दस बजे कीर्तन प्रारम्भ होता था। कीर्तन में भगवान् श्रीकृष्ण का बहुत भव्य स्वरूप रखा जाता था। कक्ष में सभी रोशनियों को बन्द कर दिया जाता था और सिर्फ भगवान् कृष्ण के मुखारविन्द पर टॉर्च से प्रकाश केन्द्रित कर दिया जाता था। फिर कृष्ण भक्ति विषयक संगीत की ऐसी धूम मचती थी कि सभी कुछ कृष्णमय हो जाता था। गुरदास राम जी कीर्तन से देर रात घर लौटते थे परन्तु सुबह जल्दी उठने में कभी देर नहीं करते थे।

सनातन धर्म मन्दिर शिमला में हर वर्ष सन्त सम्मेलन करवाया जाता था और हर वर्ष बापू गुरदास राम जी सभी संतों को अपने घर पर आमन्त्रित करते थे, और सपरिवार सभी संतों की सेवा करते थे। इसके अतिरिक्त गुरदास राम जी प्रतिमाह गऊशाला में गायों को पढे डालते थे और गर्मियों एवम् सर्दियों के मौसम में कपड़े, जूते आदि अपनी धर्मपत्नी के साथ जा कर स्वयं वितरित करते थे। गुरदास राम जी प्रत्येक रविवार नाश्ते के बाद अपने मित्र श्री राओ जो कि एक आयकर अधिकारी थे, के साथ शिमला के जंगलों में निकल जाया करते थे। वहाँ दोनों मित्र मौन रह कर साधना किया करते थे। यदि वन में कोई साधु

महात्मा मिलते तो दोनों उनकी सेवा का लाभ लिया करते थे। बापू श्रद्धाराम जी की कृपा से गुरदास राम जी को प्रभु नाम की ऐसी मस्ती चढ़ती थी कि वह अपनी सुध-बुध खो कर आत्मानन्द की गहराईयों में उतरते चले जाते ।

1961 में गुरदास राम जी शिमला से डेपूटेशन पर चण्डीगढ़ स्थानांतरित हुए। चण्डीगढ़ में गुरदास राम जी गोकर्ण नाथ मिश्र जी, जो बनारस के एक महान् कथा वाचक थे, से सेक्टर 19 में रामायण जी की कथा करवाया करते थे। गुरदास राम जी बहुत अनुशासन प्रिय थे। प्रातः जल्दी उठ कर पूजा पाठ और

आरती वन्दना करने के उपरान्त बच्चों को समय पर तैयार कर स्कूल भेज कर, घर के कार्य में सहायता करके स्वयं काम पर जाते थे। प्रत्येक रविवार को वह हमेशा प्रातःकाल हवन-यज्ञादि करते थे जिसमें घर के सभी सदस्य उपस्थित होते थे। प्रत्येक माह गुरदास राम जी घर पर ही परिवार के सदस्यों सहित एक रामायण जी का अखण्ड पाठ अवश्य करते थे। नवरात्रों में विधिपूर्वक खेत्री बीज कर देवी माँ की उपासना भी किया करते थे। शिवरात्रि, कृष्ण जन्माष्टमी, राम नवमी और निर्जला एकादशी का व्रत भी गुरदास राम जी क्यिा करते थे।

एक बार कीर्तन में श्री अमर नाथ मिश्र नामक एक भक्त मीरा बाई का भजन " कोई कहियो री हरि आवन की" गा रहे थे। जैसे-जैसे

भजन आगे बढ़ता गया वैसे-वैसे गुरदास राम जी का भाव प्रगाढ़ होता गया। धीरे-धीरे गुरदास राम जी भाव-समाधि में चले गए और उनका बाह्य ज्ञान लुप्त हो गया। उनकी यह दशा देख कर सभी लोग घबरा उठे और भगवान् कृष्ण का पावन नाम बार-बार उच्चारित करने लगे। कई घण्टों तक भगवन्नाम सुनाने के बाद गुरदास राम जी प्रकृतिस्थ हुए और अपनी आँखें खोल ली।

जो भी गुरदास राम जी के सान्निध्य में आया उसका जीवन बदल गया। शिमला में ही जिस दफतर में वह कार्यरत थे वहाँ एक चपरासी काम करता था जिसका नाम गोबिन्द दास था। गोबिन्द दास गुरदास राम जी से बहुत प्रेम रखता था। उसके सिर पर काफी कर्जा था जिसके कारण वह परेशान रहता था। उसकी परेशानी का कारण जान कर गुरदास राम जी ने उसे अपने घर पर ही रख लिया और कहा कि तुम अपनी सारी तनख्वाह अपने घर भेजो ताकि तुम्हारा कर्जा उतर जाए। इसके बाद गोबिन्द दास ने गुरदास राम जी के साथ रहना आरम्भ कर दिया।

गुरदास राम जी के साथ रहने से गोबिन्द दास का आमूलचूल रूपान्तरण हो गया और राम नाम में उनकी दृढ़ प्रीति हो गई। धीरे-धीरे उन पर भक्ति का ऐसा रंग चढ़ा कि उन्हें वैराग्य हो गया। साक्षात् हनुमान जी से उन्हें दीक्षा प्राप्त हुई और उनका आध्यात्मिक जीवन

अत्यन्त उन्नत हो गया। बाद में वह गोबिन्द दास 108 श्री मुनि गौरवानन्द गिरि जी के नाम से प्रसिद्ध सन्त हुए। बाद में अपना अधिकांश समय उन्होंने चण्डीगढ़ में व्यतीत किया और आज उनकी याद में महावीर मन्दिर मुनि सभा (साधु आश्रम) सेक्टर 23-डी चण्डीगढ़ में विद्यमान है।

मन्दिरों के निर्माण कार्य में सहयोग देना और मन्दिरों की सेवा करना गुरदास राम जी को बहुत प्रिय था। जब उनका तबादला पटियाला हुआ तब वह मॉडल टाउन में रहने लगे। उनके घर के पास एक शाम लाट नामक स्थान था जहाँ कोई मन्दिर नहीं था। गुरदास राम जी ने वहाँ के धार्मिक लोगों की सहायता से एक सभा बना कर सरकार से उस स्थान को मन्दिर के लिए स्वीकृति दिलवाई और वहाँ राधा कृष्ण मन्दिर का निर्माण करवाया। मन्दिर की व्यवस्था देखने के लिए उन्होंने वृन्दावन से पण्डित को बुला कर वहाँ का कार्य भार उन्हें सौंप दिया। उक्त पण्डित जी की चौथी पीढ़ी अब उस मन्दिर की सेवा कर रही है।

कुछ समय पश्चात् जब गुरदास राम जी को पटिआला में ही ऑफिसरों के लिए निर्मित बंगले में जाना पड़ा तब वहाँ पर 'वीर हकीकत राय मन्दिर' जो राजपुरा कालोनी में स्थित था, वह बहुत ही जीर्ण अवस्था में था। गुरदास राम जी ने उस मन्दिर को ठीक करवाया और वहाँ पर एक पण्डित परिवार सेवा के लिए नियुक्त किया। आज

भी उस परिवार के पड़पोते वहाँ सेवारत हैं।

गुरदास राम जी को संगीत से बहुत लगाव था। उन्होंने अपनी दूसरी बेटी रवि कान्ता शर्मा को शास्त्रीय संगीत की विधिवत् शिक्षा दिलवाई थी। रविकान्ता जी पाँच वर्ष की आयु से ही ऑल इंडिया रेडियो पर

बाल कलाकार की हैसियत से कार्यक्रम दिया करती थी। बड़ी होने पर रविकान्ता ने शास्त्रीय संगीत में पटिआला से एम० ए० किया और गोल्ड मेडल प्राप्त किया। उनके गोल्ड मेडल प्राप्त करने के पीछे गुरदास राम जी की ही प्रेरणा और विश्वास था।

जब रविकान्ता जी ने एम० ए० प्रथम वर्ष में पटिआला विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान प्राप्त किया तब उनके एक शिक्षक को छोड़ कर अन्य सभी को बहुत प्रसन्नता हुई। वह शिक्षक महोदय अपनी किसी दूसरी शिष्या को प्रथम स्थान पर देखना चाहते थे। ईर्ष्यावश उस शिक्षक ने कक्षा में एक पार्टी का आयोजन किया और चाय में कुछ मिला कर रविकान्ता को पिला दिया। चाय पीते ही उसका गला बैठ गया। वह समझ गई कि शिक्षक ने ईर्ष्यावश उसका अहित करने हेतु ही ऐसा किया है।

गुरदास राम जी को इस घटना का पता चला तो उन्होंने रविकान्ता को समझाया कि जिसने भी ऐसा किया है उसके प्रति द्वेष

भाव न रखते हुए तुम अपना कर्म करो और सब कुछ ईश्वर पर छोड़ दो। तुम नियमित रूप से अपनी कक्षा में जाओ और शिक्षा ग्रहण करो। बापू जी तुम्हारा कल्याण करेंगे। रविकान्ता का गला लगभग एक वर्ष तक खराब रहा। वह कभी-कभी बहुत परेशान हो कर यह सोचती थी कि क्या वह कभी गा भी पाएंगी अथवा नहीं! धीरे-धीरे एम० ए० द्वितीय वर्ष का वह सत्र समाप्त हुआ और प्रेक्टिकल परीक्षा का दिन आ पहुँचा। गुरदास राम जी ने अपनी बेटी को समझाते हुए कहा कि बापू जी पर विश्वास रखो। वह तुम्हारे सब काम संवारेंगे।

रविकान्ता परीक्षा देने पहुँच तो गई परन्तु मन में बहुत घबराहट होने के कारण वह परीक्षा लेने आई परीक्षक से मिल कर कहने लगी कि आप बाकी विद्यार्थियों से पहले ही मेरी परीक्षा ले लीजिए क्योंकि मेरा गला बहुत खराब है और मैं नहीं चाहती कि दूसरे विद्यार्थियों को अच्छा गाते देख कर मैं हतोत्सहित हो जाऊँ। यह सुन परीक्षक इस बात के लिए राजी हो गई और कहने लगीं कि ठीक है, तुम बाहर खड़ी हो कर प्रतीक्षा करो, मैं थोड़ी देर में तुम्हें बुलाती हूँ।

जब रविकान्ता परीक्षा भवन के बाहर खड़ी प्रतीक्षा कर रही थी तब अचानक उन्हें उनके परिचित एक शिक्षक बलबीर सिंह मिले। वह रविकान्ता से मिल कर बहुत प्रसन्न हुए और उसका हाल-चाल पूछने लगे। रविकान्ता जो पहले ही दु:खी थी, अपने शिक्षक के प्यार और

हमदर्दी से बात करने पर भावुक हो पड़ी और उन्हें अपने गले की समस्या के विषय में बता दिया। तब मानो किसी ईश्वरीय प्रेरणा से बलबीर सिंह जी ने अपने पर्स में से एक गोली निकाली और रविकान्ता को देते हुए कहा कि जब गाने लगो तब इस गोली को अपने मुँह में रख लेना, तुम्हारा गला खुल जाएगा। फिर जब रविकान्ता के गाने का समय आया तब उसने गोली मुँह में रख कर गाना शुरू कर दिया। जैसे-जैसे वह गाती गई वैसे-वैसे उनकी आवाज खुलती गई। फिर तो पिछले एक वर्ष का न गा पाने का सारा गुबार निकल गया और रविकान्ता ने बहुत ही खूबसूरत गायन प्रस्तुत कर उस परीक्षक का दिल जीत लिया।

परीक्षक ने हैरान हो कर पूछा कि तुम्हारा तो गला खराब था फिर तुमने इतना अच्छा गायन कैसे प्रस्तुत किया? रविकान्ता के पास तो इस का एक ही जवाब था और वह था 'ईश्वर की कृपा और बापू श्रद्धाराम जी की दया।' बापू जी की दया से रविकान्ता जी का न केवल गला ही ठीक हुआ अपितु उन्होंने एक बार फिर से विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान हासिल कर गोल्ड मेडल प्राप्त किया। अपने पिता श्री गुरदास राम जी का यह समझाना कि 'तुम द्वेषरहित और क्रोधरहित हो कर कार्य करो, ईश्वर तुम्हारी सहायता करेंगे', इन शब्दों का मर्म रविकान्ता जी को अब समझ में आ रहा था।

श्री गुरदास राम जी ने अपने पूरे जीवन में भगवान के सदुपदेशों

को चरितार्थ कर के दिखाया है। न केवल अपनी पुत्रियों अपितु सम्पूर्ण समाज को अपने आचरण से उन्होंने यह सुशिक्षा दी है कि एक आदर्श मनुष्य का आचरण किस प्रकार होना चाहिए।

गुरदास राम जी की योग्यता को देखते हुए बापू श्रद्धाराम जी ने उन्हें नन्दा चौर ट्रस्ट का प्रधान नियुक्त किया। बापू श्रद्धाराम जी को ज्ञात था कि गुरदास राम जी ने ही आगे चल कर बापू ओम जी की भविष्यवाणी के अनुसार मन्दिर की कार्य व्यवस्था देखनी है। बापू जी यह चाहते थे कि अब गुरदास राम जी सच्ची सरकार अर्थात् बापू ओम जी की नौकरी में आ जायें और गद्दी का कार्यभार संभाले परन्तु गुरदास राम जी सदैव यही कहते थे, "महाराज जी, मैं केवल गुरु का दास ही बन कर रहना चाहता हूँ। कहाँ मैं एक अकिंचन गृहस्थी और कहाँ आप महान् त्यागी, ब्रह्मचारी योगी। गद्दी पर बैठना मेरे लिए असम्भव है।"

गुरदास राम जी इस प्रस्ताव को टालते ही रहे। अन्ततः बापू श्रद्धाराम जी ने गुरदास राम जी को एक बहुत ही मार्मिक पत्र लिखा। उस पत्र में बापू श्रद्धाराम जी ने गुरदास राम जी को नन्दाचौर आ कर अपनी जिम्मेवारी संभालने हेतु बार-बार बुलाया है। बापू श्रद्धाराम जी तहेदिल से यह चाहते थे कि उनके रहते-रहते ही गुरदास राम जी अपनी पत्नी सहित वहाँ आएं और सेवा कार्य करें। गुरदास राम जी के मन में गद्दी को स्वीकार करने में जो असमंजस था वह उनकी पुत्रियों के

विवाह को लेकर था। वह अपनी पुत्रियों की ज़िम्मेवारी पूरी करके ही नन्दाचौर आना चाहते थे। जब बापू श्रद्धाराम जी 1974 में ब्रह्मलीन हो गए तब बापू जी की ही इच्छानुसार गुरदास राम जी को नन्दाचौर की गद्दी का कार्यभार सौंपा गया। नन्दाचौर मन्दिर की सेवा में आते ही गुरदास राम जी ने बापू जी से प्रार्थना की, "हे बापू जी, मैने अपने जीवन का भार आपको सौंप दिया है, आप मेरी लाज रखना कि मैं अन्तिम श्वास तक संगत की सेवा में रत रह पाऊँ।"

बापू श्रद्धाराम जी ने उनकी यह प्रार्थना स्वीकार की और पग-पग पर देहत्याग के उपरान्त भी गुरदास राम जी का मार्गदर्शन करते रहे। गुरदास राम जी अब बापू गुरदास राम जी हो गए और बापू ओम जी, बापू हरनाम जी और बापू श्रद्धाराम जी के सम्पूर्ण भक्त-परिवार की बागडोर उनके हाथों में आ गई। बापू गुरदास राम जी ने संगत को इतना प्यार दिया कि लोग कह उठे, "धन्य धन्य बापू श्रद्धाराम, आपने एक ऐसे अमूल्य हीरे का चयन किया है जो विलक्षण है, अद्वितीय है।"

बापू गुरदास राम जी ने अपने प्रिय गुरुदेव के स्त्री शिक्षा के स्वप्न को साकार करते हुए सराय में श्री श्रद्धा राम डिग्री कॉलेज फार वीमैन आरम्भ किया। बहुत ही कम फीस में गाँव की बच्चियों को शिक्षित करने का सुप्रयास रंग लाया और गाँव के लोगों ने प्रसन्नचित्त हो कर अपनी बच्चियों को कॉलेज में भेजना आरम्भ किया। कॉलेज खोलने के

उपरान्त बापू गुरदास राम जी ने बापू श्रद्धाराम जी के एक और स्वप्न को मूर्त रूप दिया। बापू श्रद्धाराम जी आयुर्वेद के ज्ञाता थे और जन-कल्याण की भावना से दवाईयां बना कर और बनवा कर लोगों को दिया करते थे। इसी बात को ध्यान में रखते हुए बापू गुरदास राम जी ने सराय के एक कमरे में दरबार की ओर से अस्पताल शुरू किया। परन्तु उनके बहुत शीघ्र देह-त्याग के कारण वह कार्य सुचारू रूप से नहीं हो पाया और बाद में बापू भानुदत्त जी महाराज जी ने अस्पताल बनवाया और डॉक्टर रखा जो आज नन्दाचौर गाँव और उसके आस-पास के इलाकों की जनता की सेवा कर रहा है।

बापू गुरदास राम जी नन्दाचौर में एक आँखों का कैम्प भी लगाया करते थे। जिसमें जालन्धर के राजन अस्पताल से आँखों का सर्जन एवं उसका स्टाफ आ कर लोगों की आँखों का निःशुल्क ईलाज करता था और जिन लोगों को आपरेशन की आवश्यकता होती थी उनका ऑपरेशन भी किया जाता था। रोगियों के रहने, खाने एवम् दवाईयों का इन्तजाम भी निः शुल्क ही किया जाता था।

इन गतिविधियों के अतिरिक्त बापू गुरदास राम जी ने समाधि साहिब में बापू श्रद्धाराम जी की पावन समाधि का निर्माण करवाया और थड़ा साहिब पर बापू ओम जी की तपोस्थली को दर्शनीय रूप प्रदान किया। थड़ा साहिब में ही बापू गुरदास राम जी ने झण्डा साहिब की

स्थापना की। नन्दाचौर दरबार में बापू श्रद्धाराम जी की सुन्दर सजीव मूर्ति की स्थापना भी बापू गुरदास राम जी ने करवाई। बापू जी ने अपने पूजनीय गुरुदेव बापू श्रद्धाराम जी के जन्म दिवस पर नन्दाचौर दरबार में स्कूल और कॉलेज के प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थानों पर आने वाले विद्यार्थियों को पुरस्कार

वितरण की प्रथा भी चलाई। इस अवसर पर स्कूल व कॉलेज के अध्यापकों एवं अन्य कर्मियों को भी दरबार की तरफ से सरोपे व प्रसाद वितरण किया जाता था। इसी दिन ही श्री रामायण जी और श्री गुरु ग्रन्थ साहिब के पाठियों को भी सम्मानित करने की प्रथा चलाई जो आज तक चलती आ रही है।

गुरदास राम जी कभी समय व्यर्थ नष्ट नहीं करते थे। लोक कल्याण की भावना से उन्होंने होम्योपैथी की डिग्री भी हासिल की और लोगों का निःशुल्क ईलाज करना शुरू कर दिया। बापू गुरदास राम जी 'श्रीरामचरितमानस' के प्रकाण्ड पण्डित थे। रामभक्त होने के कारण उनके स्वभाव में शालीनता, धैर्य, गम्भीरता, विनम्रता और मृदुभाषी होना जैसे गुण स्वतः ही आ गए थे। बापू जी अंतर्यामी तो थे ही। वह सामने आये व्यक्ति के मनोभावों को तत्काल जान लेते थे और उसके स्वभाव को दर्शाने वाली चौपाई तुरन्त बोल दिया करते थे। वर्तमान में गद्दीनशीन परम वन्दनीय बापू हरभगवान जी की धर्मपत्नी माता निर्मल जी, जब भी बापू गुरदास राम जी को मिलती थी बापू जी उन्हें देखते ही सदैव रामचरितमानस की यह चौपाई दोहराते थे-

निर्मल मन जन सोई मोहे पावा मोहि कपट छल छिद्र ना भावा

माता निर्मल जी का सम्पूर्ण व्यक्तित्व वास्तव में ही अत्यन्त निर्मल है जिसमें किसी भी प्रकार की कोई निष्कपटता नहीं है। उनका मन गंगा के समान पवित्र है और उनका मातृ हृदय सदैव अपने भक्तों को अपनी ममता की गोद में आश्रय दे कर पवित्र कर देता है।

बापू गुरदास राम जी ने प्रति माह श्रीरामचरितमानस का अखण्ड पाठ करवाना आरम्भ किया। इसके लिए उन्होंने बनारस से श्री गोकर्ण नाथ मिश्र जी को बुलाया। श्री गोकर्ण नाथ जी बापू गुरदास राम जी के साथ शिमला सनातन धर्म मन्दिर के सन्त सम्मेलन में अकसर रामायण जी की कथा किया करते थे। उन दोनों का आपस में सगे भाईयों की तरह प्रेम था। गोकर्ण नाथ जी नन्दाचौर में भी प्रति रात्रि रामायण जी की कथा करते। समस्त ग्रामवासी उस कथा में उपस्थित होते थे।

गाँव की स्त्रियों को श्री गोकर्ण नाथ जी ने रामचरितमानस जी के प्रारम्भ एवं समाप्ति का ढंग सिखाया। इसके अतिरिक्त संस्कृत के श्लोक, छन्द, चौपाईयां और दोहे, सोरठ पढ़ने की सही रीति

सिखाई। "सिया रघुवर जी की आरती शुभ आरती कीजे" भी बापू गुरदास राम जी ने गाँव की भक्त महिलाओं को सिखाया। बापू गुरदास राम जी के

समय से ही श्री रामचरित मानस के पाठ आज तक दरबार में चल रहे हैं। बापू जी दरबार में होने वाले विवाह में कन्या को आशीर्वाद स्वरूप 'श्री रामचरितमानस' देते थे। वह चाहते थे कि नव विवाहिता अपने नए सफर का आरम्भ सुन्दर तरीके से करे और जब भी जीवन में उसे कोई भी समस्या आये तब वह उसका समाधान 'श्री रामचरितमानस' में से ढूँढ कर उसे दूर करे।

बापू गुरदास राम जी इतनी गतिविधियों के मध्य भी अपना मन, अपना भाव सदैव ईश्वर के चरणों में रखते थे। उनकी आध्यात्मिक उर्जा और शक्ति भी बापू श्रद्धाराम जी ही के समान थी। बापू श्रद्धाराम जी ने उन्हें पूर्ण किया था। इस सम्बन्ध में एक दृष्टान्त द्रष्टव्य है। एक बार गद्दीनशीन होने के कुछ महीनों बाद बापू गुरदास राम जी प्रातः काल हवन कर रहे थे। उन दिनों हवन घर मन्दिर में नीचे स्थित था और बापू जी वहीं पर हवन किया करते थे।

उस दिन बापू जी की द्वितीय पुत्री रविकान्ता शर्मा भी वहाँ उपस्थित थी। उस दिन उनके मन में विचार आया कि क्या बापू गुरदास राम जी इतने सिद्ध हैं, इतने पूर्ण हैं कि बापू श्रद्धाराम जी ने इन्हें सुयोग्य अधिकारी समझ कर अपने स्थान पर गद्दी पर बिठाया है। वास्तव में रविकान्ता के मन में बापू गुरदास राम जी की पितृ छवि ही थी, इसलिए इस सत्य को अंगीकार करने में उन्हें कठिनाई आ रही थी कि क्या

वास्तव में ही बापू गुरदास राम जी बहुत उच्च अवस्था प्राप्त योगी हैं। यह विचार मन में आने के बाद रविकान्ता जी हवन के बाद वहाँ से उठीं और ऊपर स्थित सच्चखण्ड में बापू जी के स्वरूप को प्रणाम करने हेतु पहुँच गई। ऊपर जो दृश्य उन्होंने देखा वह उनकी कल्पना से भी परे था। ऊपर सच्चखण्ड में

बापू गुरदास राम जी उपस्थित थे और बापू श्रद्धाराम जी की चरण पादुकाएं साफ कर रहे थे। रविकान्ता जी बहुत आश्चर्यचकित हुई और सोचने लगीं कि बापू जी इतनी शीघ्रता पूर्वक कब और कैसे ऊपर आ गए। नीचे से ऊपर जाने वाली सीढ़ियाँ इतनी तंग थी कि एक समय में एक ही व्यक्ति आराम से वहाँ से निकल सकता था। ऐसे में रविकान्ता सोच में पड़ गई कि बापू जी हवन घर से उठ कर कब सच्चखण्ड में आ गए।

यह सोचते-सोचते रविकान्ता वापिस हवन घर पहुँची और देखा कि बापू जी जल बना रहे हैं और भक्तों को धागे बाँट रहे हैं। यह दृश्य देख कर वह विस्मय से भर उठी। उन्हें अपने मन के संशय का उत्तर मिलता दिख रहा था। फिर वह वापिस सच्चखण्ड में गई और देखा कि बापू गुरदास राम जी सभी संतों को चौर कर रहे हैं। इस प्रकार कई बार ऊपर नीचे आते जाते रविकान्ता जी को यह सपष्ट अनुभव हुआ कि जिन्हें अभी तक वह अपने पिता के रूप में ही देखती आई हैं वह तो सम्पूर्ण भक्तों के पिता हैं, परमेश्वर हैं। बापू गुरदास राम जी एक ही समय में दो स्थानों पर प्रकट थे और दोनों जगह अपना कार्य कर रहे थे।

रविकान्ता जी को मुख से कुछ भी न कहते हुए अपनी शक्ति से सब कुछ बयान कर बापू जी ने यह बता दिया कि उनमें भी वही ज्योति है जो बापू ओम जी, बापू हरनाम जी और बापू श्रद्धाराम जी में थी। रविकान्ता और उनके पति श्री अनिल शर्मा ने बापू जी से दीक्षा प्राप्त की और सदैव उनके आशीर्वाद की छत्र-छाया में फलते फूलते रहे। एक बार रविकान्ता शर्मा जी कि जी० एन० बी० एल० कॉलेज (फगवाड़ा) में संगीत विभाग की अध्यक्षा थी, अपने विद्यार्थियों को लेकर अमृतसर 'युवा महोत्सव' में ले कर जा रहीं थी। उनके साथ उनके विद्यार्थी, उनके पति प्रो० अनिल शर्मा और कई कलाकार थे।

रास्ते में अचानक एक तेल के टैंकर के सामने आ जाने से उनकी वैन के ड्राईवर ने गाड़ी एक तरफ करने की कोशिश की। जब वैन की टक्कर उस टैंकर से होने वाली थी तब रविकान्ता जी ने करोड़ो सूर्यो की प्रभा के समकक्ष एक दिव्य प्रकाश के दर्शन किए। बापू जी की कृपा से वह प्रकाश टैंकर के मध्य आ गया और उस प्रकाश ने वैन की भिडन्त टैंकर से बचाने के लिए वैन की सड़क के एक तरफ धकेल दिया। वैन अपना संतुलन खो कर सड़क के एक तरफ चली गई और गोल-गोल घूमने लगी। रविकान्ता और उनके पति प्रतिक्षण बापू जी को याद करते रहे। जब वह वैन जोरों से घूम रही थी तब

एक-एक करके वैन में जितने भी सदस्य बैठे थे वे सब स्वयं ही दरवाजे और खिड़की के रास्ते वैन से बाहर गिरने लगे। एक मात्र प्रो० अनिल शर्मा ही वैन में बचे थे

और वह एकदम सुरक्षित थे। जो लोग वैन से बाहर गिरे थे उन्हें भी साधारण खरोंचे ही आई और वे सब एकदम ठीक ठाक थे। यह घटना किसी चमत्कार से कम नहीं थी। संकट की उस विभीषिका में भी बापू गुरदास राम जी ने सभी के प्राणों की रक्षा की। इस घटना के बाद भी किसी विद्यार्थी के मनोबल में कोई कमी नहीं आई और सभी ने अमृतसर पहुँच कर बेहद शानदार तरीके से युवा महोत्सव में प्रदर्शन किया और लोगों का मन जीत लिया। बापू गुरदास राम जी ने स्वयं प्रकाश रूप हो कर उन सभी की रक्षा की थी।

बापू गुरदास राम जी की अपनी इस पुत्री पर विशेष कृपा दृष्टि थी। इस सम्बन्ध में कुछ और दृष्टान्त वर्णनीय हैं जिनसे यह ज्ञात होता है कि बापू जी का वरद्-हस्त सदैव अपनी इस पुत्री पर रहा है। जब बापू श्रद्धा राम जी ब्रह्मलीन हो गए थे तब किसी कारणवश प्रो० अनिल शर्मा उनके अन्तिम दर्शन नहीं कर सके थे। बाद में उनके मन में बापू श्रद्धाराम जी के अस्थि-कलश के दर्शनों की इच्छा पैदा हो गई। वह अपनी पत्नी श्रीमति रविकान्ता के साथ हरिद्वार चल पड़े और हर की पौड़ी, कनखल आदि कई स्थानों पर जा कर बापू जी की संगत और उस अस्थि-कलश की तलाश करने लगे परन्तु उन्हें कहीं पर भी उसके दर्शन नहीं हुए। अन्ततः वह थक-हार कर रात को किसी सराय में ठहर गए। सुबह-सुबह किसी ने उनके कमरे का दरवाज़ा खटखटाया, जब उन्होंने दरवाजा खोला तो यह देख कर वह आश्चर्यचकित रह गये कि

बापू गुरदास राम जी स्वयं वहाँ खड़े थे और उन्हें लेने आए थे ताकि वे भी बापू श्रद्धाराम जी के अस्थि-कलश के दर्शन कर सकें। प्रो० अनिल शर्मा यह देख कर बहुत हैरान हुए कि इतने बड़े हरिद्वार में जहाँ सैंकड़ों की संख्या में सराय और होटल है, बापू गुरदास राम जी को यह कैसे ज्ञात हुआ कि वे लोग उस सराय में ठहरे हैं। उन्होंने कई बार बापू जी से इस विषय में पूछा लेकिन उन्होंने हर बार टाल दिया। इस

घटना से प्रो० अनिल शर्मा को यह ज्ञान हो गया कि बापू गुरदास राम जी तो अंतर्यामी हैं। उनकी दिव्य दृष्टि से कुछ भी छिपा नहीं है।

इस घटना के कुछ वर्ष पश्चात् प्रो० शर्मा को दो और अनुभव हुए जिनसे उन्हें बापू गुरदास राम जी के सामर्थ्य और अपरिमित शक्ति का पता चला। प्रो० शर्मा के गले के बाईं ओर एक गिल्टी हो गई। डॉक्टर को दिखाने पर उसने प्रो० शर्मा को बायोप्सी करवाने के लिए कहा। प्रो० शर्मा यह सुन कर घबरा गये और सोच विचार में पड़ गए कि बायोप्सी करवायें अथवा न करवायें। प्रो० शर्मा की एक आदत हो गई थी कि वह बार-बार गिल्टी पर हाथ लगा कर शीशे में देखते थे कि कहीं वह गिल्टी बड़ी तो नहीं हो गई।

एक दिन जब वह ऐसे ही शीशे में देख रहे थे तभी उनके घर में अचानक बापू गुरदास राम जी आ गये। बापू जी द्वारा हालचाल पुछने पर प्रो० शर्मा ने उन्हें अपनी समस्या के विषय में बताया। उनकी

तकलीफ जान कर बापू जी ने उनके गले पर हाथ फेरा और कहा कि कोई बात नहीं, आप को मीठी गोलियां दे देंगे। आप एक दम ठीक हो जाएंगे। इतना कह कर थोड़ी देर बाद बापू जी चले गए। उनके जाने के पश्चात् आदतवश प्रो० शर्मा ने अपने गले पर हाथ फेरा तो पाया कि उस स्थान पर कोई गिल्टी नहीं थी। उन्होंने तुरन्त शीशे में जा कर देखा तो उनका मन आश्चर्यमिश्रित प्रसन्नता से व्याप्त हो गया कि वास्तव में ही वहाँ किसी प्रकार की गिल्टी का कोई नामोनिशान नहीं था। डॉक्टर को दिखाने पर उसने भी यही कहा कि अब बायोप्सी की कोई आवश्यकता नहीं है। बापू गुरदास राम जी ने अपने स्पर्श मात्र से ही उस गिल्टी को दूर कर दिया था। इस प्रसंग के बाद बापू जी में प्रो० शर्मा का विश्वास और भी दृढ़ हो गया।

प्रो० शर्मा जी के जीवन की एक और महत्त्वपूर्ण घटना बापू गुरदास राम जी की सर्वशक्तिमत्ता को प्रदर्शित करती है। प्रो० शर्मा के पिता जी श्री टेक चन्द शर्मा का देहान्त प्रो० शर्मा के विवाह से पूर्व ही हो गया था। प्रो० शर्मा अपने पिता जी को बहुत याद करते थे और कई बार उनके लिए उदास भी हो जाते थे। एक रात स्वप्न में प्रो० शर्मा ने देखा कि बापू गुरदास राम जी आए हैं और उन्हें ले कर तेजी से उच्च से उच्चतर लोकों में जा रहे हैं। अन्ततः वे एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ बहुत सारे ऋषि-मुनि तपस्यारत थे। वहाँ एक तरफ उनके पिता जी भी बैठे थे और पाठ कर रहे थे। बापू गुरदास राम जी ने इशारे से प्रो० शर्मा

को उनके पिता दिखाए। प्रो० शर्मा अपने पिता के पास गए और उनके पिता ने उनसे कुछ बातें की और फिर बापू गुरदास राम जी प्रो० शर्मा को वापिस पृथ्वी पर ले आये।

उपर्युक्त सभी प्रसंग यह सिद्ध करते हैं कि बापू गुरदास राम जी एक महान् आध्यात्मिक शक्ति के वाहक थे। वह सर्वज्ञ, सर्वव्यापक और सर्वसमर्थ थे। ईश्वरतुल्य योगी होने के कारण उनके लिए कुछ भी असम्भव नहीं था। गृहस्थ होने के बावजूद बापू जी ने एक आदर्श कर्मयोगी का जीवन जिया है। यदि कोई मनुष्य यथार्थ में ही कर्म के रहस्य का भेद प्राप्त कर ले तो वह गृहस्थ होते हुए भी उसी स्थिति को प्राप्त करता है जिस की प्राप्ति संन्यासियों और योगियों को होती है। बापू गुरदास राम सदृश कर्मयोगी महापुरुष का जीवन देख कर साधारण मनुष्य शास्त्र लिखित रहस्य हृदयंगम कर सकते हैं। इस विषय में भगवान् श्रीकृष्ण का यह कथन बिलकुल सटीक है कि-

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः । स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ।।

अर्थात् श्रेष्ठ पुरुष जो-जो आचारण करता है, अन्य पुरुष भी वैसा-वैसा ही आचरण करते हैं। वह जो कुछ प्रमाण कर देता है, समस्त मनुष्य-समुदाय उसी के अनुसार कार्य व्यवहार करने लग जाते हैं।

बापू गुरदास राम जी ने अपने कर्म और जीवन से यह सिखाया कि मनुष्य को आत्मानुभूति के लिए किस प्रकार से कर्म करना चाहिए। बहुत भक्तों ने उनके पावन जीवन से प्रेरणा प्राप्त की और अपना जीवन सफल किया।

बापू गुरदास राम जी ने एक बार जून के यज्ञ के पश्चात् पुरानी सराय में रात्रि जागरण कर बापू जी की आराधना कर रही संगत को बापू श्रद्धाराम जी के दर्शन करवाये थे। उन्होंने अपनी शक्ति से समस्त भक्त मण्डल के मन, चित्त एवं बुद्धि को एक ऐसी अलौकिक भावभूमि में अवस्थित कर दिया था कि सभी भक्तों को एक साथ एक अविस्मरणीय दिव्य अनुभूति हुई।

उस रात सराय में भक्तों ने रात्रि में बापू श्रद्धाराम जी के पावन नाम का कीर्तन करना आरम्भ किया। उस समय बापू गुरदास राम जी दरबार में थे। सराय में उपस्थित संगत जैसे-जैसे कीर्तन की मस्ती में डूबती गई वैस-वैसे उनका भावान्तर होता गया। उन का मन इस लौकिक जगत की सीमा का त्याग कर अलौकिक एवं आध्यात्मिक राज्य की सीमा का स्पर्श करने लगा। मन में कोई विषय-वासना न रहने से सभी के मन निर्मल हो गए और फिर उस निर्मल मन में बापू श्रद्धाराम जी का सुन्दर स्वरूप प्रतिबिम्बित होने लगा। जब भक्तजन कीर्तन कर रहे थे तब सराये का बड़ा दरवाज्जा बन्द था और उस दरवाजे के निचले

भाग में जो लोहे की खुली जालियां थी, उन जालियों में से सभी भक्तों को बापू श्रद्धाराम जी की चरण पादुकाएं दृष्टिगोचर होने लगीं। किसी किसी भक्त को दरवाजे के ऊपर की जालियों में बापू श्रद्धाराम जी की सुन्दर पगड़ी दृष्टिगोचर होने लगी। दिल्ली निवासी राजरानी जी ने भाव विभोर हो कर कहना शुरू कर दिया, "बापू जी आ गए, बापू जी आ गए।" फिर उन्होंने चारों ओर पानी का छिड़काव करना शुरू कर दिया। कुछ भक्तों को सराय के दरवाज़े के स्थान पर हिलारें लेते हुए आकाश और उसमें झिलमिलाते हुए ग्रह-नक्षत्र और तारामण्डल नज़र आने लगे।

इतनी देर में कुछ भक्त बापू गुरदास राम जी को बुलाने हेतु पिछले छोटे दरवाजे से दरबार की ओर गए। बापू गुरदास राम जी भी उसी ओर आ रहे थे। बापू जी ने भक्तों को देखते ही कहा कि बापू श्रद्धाराम जी तो आज स्वयं आप सब के मध्य विराजमान हैं। फिर बापू गुरदास राम जी भी उन भक्तों के साथ सराय में आये और उनके आने से भक्तों का आनन्द द्विगुणित हो गया। सभी भक्तों का भावावेश हो गया। कोई भक्त बापू जी को दण्डवत् प्रणाम करने लगा तो कोई दरवाज़े की ओर जा कर भाव विह्वल हो उन्हें पुकारने लगा। कई घण्टों तक आनन्द की वह स्थिति बनी रही। उस समय संगत में वर्तमान गद्दीनशीन बापू हरभगवान जी महाराज जी भी उपस्थित थे।

इसमें कोई संशय नहीं कि शुद्ध मन से सामूहिक रूप में की गई प्रार्थना और स्तुति से बापू श्रद्धाराम जी वहाँ प्रकट हुए और इसमें भी कोई संशय नहीं कि बापू गुरदास राम जी की इच्छा और आशीर्वाद भी इस अनूठे अनुभव का एक कारण रहा था। साधारणतया एक आम मनुष्य का मन बहुत ही कम क्षणों के लिए पंच विकारों काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि से मुक्त हो पाता है, परन्तु उस रात्रि को सभी भक्तों का मन कुछ समय के लिए इन विकारों से परे हट गया था। बापू गुरदास राम जी की कृपा से भक्तों ने एक अद्वितीय अनुभव लाभ किया जो शायद साधारण अवस्था में उन्हें प्राप्त नहीं हो सकता था। तुलसीदास जी ने 'श्रीरामचरितमानस' में ऐसे गुरुओं के चरण कमलों की राज की वन्दना करते हुए कहा है-

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा ।। अमिअ मूरिमय चूरन चारू । समन सकल भव रुज परिवारू ।।

इस चौपाई में तुलसीदास जी कहते हैं कि मैं गुरु महाराज के चरण-कमलों की रज की वन्दना करता हूँ, जो सुन्दर स्वाद, सुगन्ध तथा अनुराग रूपी रस से परिपूर्ण हैं। वे अमर मूल (संजीवनी जड़ी) का सुन्दर चूर्ण है, जो सम्पूर्ण भवरोगों के परिवार का नाश करने वाला है। बापू गुरदास राम जी के कृपा-प्रसाद से समूह संगत के समस्त विकारों का नाश हुआ और उन्हें एक दुर्लभ अतींद्रिय अनुभूति हुई। बापू गुरदास

राम जी ने अपने भक्तों के विषय-विकारों को तो शान्त किया ही, साथ ही उनके शारीरिक कष्टों का निवारण भी चमत्कारिक तरीके से ठीक किया। दिल्ली निवासी श्री राजकृष्ण जग्गा जी बापू जी के अनन्य भक्त थे। एक बार उनका हीमोग्लोबिन केवल चार रह गया। चिकित्सकों के मतानुसार उनकी हालत काफी गम्भीर थी। संयोगवश बापू गुरदास राम जी दिल्ली गए हुए थे। जब उन्हें राजकृष्ण जग्गा की नाजुक स्थिति का पता चला तो वह उनसे मिलने गए और एक थाली में थोड़ा सा खाना खा कर राजकृष्ण जी से कहा कि वह शेष बचा भोजन ग्रहण कर लें। राजकृष्ण जी ने ऐसा ही क्रिया अगले दिन जब राजकृष्ण जी ने एच० बी० चैक करवाया तब वह चार की बजाय नौ हो गया। एक ही रात में चार से नौ एच० बी० पहुँच जाना बापू जी की अपूर्व कृपा का ही परिचायक था।

कुछ ऐसा ही चमत्कार कुरुक्षेत्र निवासी सुमन सेतिया के साथ भी घटित हुआ। उनका एच० बी० छः ही रहता था। उनका स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता था। एक बार वह अपनी सासु माँ लाजवन्ती सेतिया के साथ नन्दाचौर आई और सुबह हवन पर गई। तब बापू गुरदास राम जी हवन कर रहे थे। हवन के उपरान्त बापू जी ने सुमन जी से पूछा कि तुम्हारा रंग पीला क्यों पड़ा हुआ है? यह सुन कर सुमन की बजाय लाजवन्ती जी बोलीं कि बापू जी, इसकी चार पुत्रियां हैं। उन्हीं की चिन्ता करती है। इसीलिए इसका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। लाजवन्ती

की बात सुन कर बापू जी बोले, "चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे घर रिश्ते चल कर आयेंगे।" बापू गुरदास राम जी वचनसिद्ध थे। जैसा उन्होंने कहा, ठीक वैसा ही हुआ। सुमन की चारों पुत्रियों के लिए लड़के वाले स्वयं घर चल कर आये और चारों पुत्रियों का विवाह बहुत अच्छे घरों में हुआ। सुमन जी का एक बी भी छः की बजाय ग्यारह हो गया और वह पूर्णतया स्वस्थ हो गई।

बापू गुरदास राम जी ने ऐसे कई भक्तों को आरोग्य-लाभकरवाया जो किसी कारणवश कष्ट पा रहे थे। एक बार नन्दाचौर में जून 1976 का यज्ञ मनाया जा रहा था। लुधियाना से बापू जी की एक भक्त वीरां जी सेवा-कार्य के लिए आई हुई थी। उनकी पुत्री वीना जसूजा अबोहर मंडी में विवाहित थीं। अचानक वीना की तबीयत दिल की धड़कन बढ़ जाने से बहुत ज़्यादा खराब हो गई। डॉक्टर ने कहा कि इन्हें तुरन्त लुधियाना ले जाओ। वीना के पिता जो कि लुधियाना में ही रहते थे, को भी यह समाचार दे दिया गया। वीना के पिता श्री देसराज गुंबर जी ने बापू जी को फोन किया और कहा कि बापू जी, वीना पर कृपा करो और उसे अच्छा कर दो। बापू जी ने देसराज जी को हिम्मत बंधाई और उनके पुत्र रमेश जी को कहा कि वह अपनी माँ वीरां जी को बुला कर लाएं। वीरां जी लंगर में सेवा-कार्य कर रहीं थी।

बापू जी ने रमेश जी को कहा कि वीना को लुधियाना की बजाय

नन्दाचौर ले कर आना है। बापू जी की आज्ञा का पालन किया गया। वीना को नन्दाचौर लाया गया। वीना की हालत इतनी खराब थी कि वह चलना तो दूर बैठ भी नहीं पा रही थी। तभी बापू गुरदास राम

जी वहाँ आए और उन्होंने वीना को ऊपर दरबार में ले आने के लिए कहा। वीना को पकड़ कर दरबार लाया गया और बापू जी ने उसके लिए अरदास की। अरदास के तुरन्त बाद वीना की तबीयत ठीक होनी शुरू हो गई और उसकी प्राण-रक्षा हो गई। उस दिन के बाद से वीना को हृदय सम्बन्धी कभी कोई समस्या नहीं आई। बापू जी की कृपा से वह बहुत सुखी जीवन व्यतीत कर रही है।

बापू गुरदास राम जी ने बूढ़पुर गद्दीनशीन संत श्री अमर सिंह जी के सुपुत्र श्री सत्यपाल जी पर भी बहुत कृपा की। सन् 1981 में सत्यपाल जी नन्दाचौर आए और बापू जी से नाम-दीक्षा के लिए प्रार्थना की। बापू जी ने सत्यपाल जी के बिना बोले ही बता दिया कि आप आई. ई. टी. ई. से शिक्षा प्राप्त कर रहें हैं। फिर बापू जी सत्यपाल जी को कहने लगे कि पहले अपनी शिक्षा पूर्ण करें। फिर बापू जी ने कहा इसके अतिरिक्त कोई और बात मन में हो तो कहें। तब सत्यपाल जी ने कहा कि मेरे सिर में दो वर्षों से अति भयंकर दर्द रहता है जिससे निजात पाने में कोई दवाई कारगर सिद्ध नहीं होती। यह सुन कर बापू जी ने उन्हें सुबह हवन पर बुलाया और सिर पर हाथ रख कर कहा कि यह सिर दर्द मुझे दे दें। इसके बाद बापू जी ने कहा कि अब आप को कभी भी सिर

दर्द नहीं होगा। बापू जी के इतना कहते ही वह दर्द तुरन्त ठीक हो गया और फिर कभी नहीं हुआ। इस प्रकार बापू गुरदास राम जी ने अपनी शक्ति और करुणा से सत्यपाल जी का कष्ट दूर किया।

बापू गुरदास राम जी सर्वज्ञानी और सर्वसमर्थ थे। उनका जीवन एक ईश्वरकोटि संत का जीवन था। उन्हें वाक् सिद्धि प्राप्त थी। इसका एक अन्य उदाहरण दिल्ली निवासी निशा तनेजा से सम्बन्धित है। निशा ने जब 1977 में हायर सेकैन्डरी की परीक्षा देनी थी उन दिनों वह बहुत बीमार हो गई। निशा की हार्दिक इच्छा थी कि वह प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हों। परीक्षा से कुछ दिन पूर्व वह जालन्धर में बापू गुरदास राम जी से मिली थीं और बापू जी ने उन्हें प्रथम श्रेणी में पास होने का आशीर्वाद दिया था। जब परीक्षा के दिनों में निशा बीमार हो गई तब मेहनत करना तो दूर वह ठीक से किसी भी विषय की तैयारी और अभ्यास भी नहीं कर पाई। फिर भी बीमारी की हालत में भी बापू जी का नाम लेकर उसने परीक्षा दी।

बापू जी ने उनके पिता श्री हरभगवान जी (वर्तमान गद्दीनशीन) को कहा कि वे अपनी पुत्री का नाम निशा की बजाए ऊषा रख दें क्योंकि नाम का प्रभाव व्यक्ति के जीवन के हर पहलू पर पर रहता है। बापू जी की आज्ञा मान कर निशा जी का नाम ऊषा रख दिया गया। जब परिणाम घोषित हुआ तो निशा 450 अंकों के साथ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण

हो गई। पूरे विद्यालय में केवल निशा ही प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुई थी। आश्चर्य की बात तो यह थी कि प्रथम श्रेणी 450 अंकों से ही शुरू होती थी और निशा के ठीक उतने ही अंक आये थे। आज निशा ऊषा के नाम से जानी जाती हैं और सुखी जीवन व्यतीत कर रहीं हैं।

बापू जी त्रिकालज्ञ थे। किसी भी व्यक्ति के सामने आते ही वह उसका भूत, वर्तमान और भविष्य देख लेते थे। एक बार सन् 1981 में रामराज के पुष्ठी गाँव से जयकरण खरे अपने पिता श्री शीशपाल जी के साथ बापू गुरदास राम जी के दर्शन हेतु आए। उसे देखते ही बापू जी ने कहा कि तुम तो वायुसेना में जाओगे। उस समय तक जयकरण जी ने अपने आगामी जीवन के विषय में कुछ सोचा नहीं था। इसके दो वर्ष उपरान्त वायुसेना में भर्ती के लिए फॉर्म निकले। जयकरण जी के एक मित्र ने उनका भी फॉर्म भर दिया। जब भर्ती के लिए परीक्षा हुई तब जयकरण जी ने परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया और बैंग्लूर में प्रशिक्षण के लिए गए।

जयकरण जी के गाँव के लोग कहते थे कि तुम्हारा दाखिला वायुसेना में नहीं हो सकता परन्तु जयकरण जी को बापू जी पर पूर्ण विश्वास था। बापू जी के आशीर्वाद से न केवल उनका दाखिला वायुसेना में हुआ अपितु उन्होंने 26 वर्ष और 10 महीने बड़ी शान से भारतीय वायुसेना की सेवा की। इसके बाद 15 दिसम्बर 2010 को

जयकरण जी ने भारत इलैक्ट्रोनिक्स मिनिस्टरी ऑफ डिफेन्स, गाज़ियाबाद में कार्यभार संभाला। बापू गुरदास राम जी का दिया आशीर्वाद आज भी फलीभूत हो रहा है और जयकरण खरे बापू जी में सम्पूर्ण श्रद्धा रखते हुए बहुत गौरव के साथ कार्यरत हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि जयकरण जी के पिता श्री शीशपाल जी पर बापू श्रद्धाराम जी की अपार कृपा रही है और जयकरण जी ने भी बापू गुरदास राम जी की कृपा-वर्षा में स्नान किया है।

बापू गुरदास राम जी नन्दाचौर दरबार में 'श्रीरामचरितमानस' के पाठ रखवाते थे। जब वह स्वयं भी पाठ करते थे तब प्रभु प्रेम से उनके नेत्रों से अविराम अश्रुधारा बहा करती थी। राम-भरत मिलन के प्रसंग के अवसर पर तो बापू गुरदास जी मानो साक्षात् भरत रूप हो कर उस मिलन के आनन्द को अनुभव कर भाव मग्न हो जाते थे।

एक बार बापू गुरदास राम जी ने दरबार में 'श्रीरामचरितमानस' का पाठ करवाया हुआ था और जालन्धर निवासी अनिल सहगल ने भी पाठ के लिए नन्दाचौर आना था। अनिल ने अपने काम-काज के पश्चात् बस पकड़ी और शाम को जालन्धर से भोगपुर पहुँच गए। भोगपुर पहुँचने तक अन्धेरा हो गया था और नन्दाचौर जाने के लिए उन्हें कोई बस नहीं मिल रही थी। अनिल सहगल को यह चिन्ता सता

रही थी कि यदि वह समय पर नहीं पहुंचे तो पाठ शुरू होने में देरी हो जाएगी। फिर उन्होंने पैदल नन्दाचौर जाने का निश्चय किया और भोगपुर से पैदल ही चल पड़े। तीन-चार किलोमीटर चलने पर उन्हें कुछ भय लगने लगा और उन्होंने सोचा कि इस प्रकार बिलकुल अन्धेरे में मैं कैसे नन्दाचौर जा पाउँगा। यह सोच कर वह रुक गए और वापिस मुड़ कर भोगपुर की तरफ जाने लगे। उनके मुड़ते ही कहीं से आवाज़ आई- "कहाँ जा रहे हो?" अनिल ने घबरा कर इधर-उधर देखा और पाया कि आस-पास तो कोई भी नहीं था।

अनिल कुछ अनिर्णय की स्थिति में फिर से नन्दाचौर के लिए चल पड़े और तब एक चमत्कार हुआ। जब वह चल रहे थे तब उनके दाई और बाईं तरफ पीछे से कोई तीव्र प्रकाश उन्हें रास्ता दिखाता हुआ उनके साथ-साथ चलने लगा। इस प्रकार अनिल बहरामपुर तक पहुँच गए। वहाँ सड़क पर एक व्यक्ति

सलेटी रंग का स्कूटर ले कर खड़ा था उसने धोती, सफेद कुर्ता और पगड़ी पहनी हुई थी। उस व्यक्ति ने अनिल से पूछा-“इतनी रात गए तुम कहाँ जा रहे हो? क्या तुम नहीं जानते कि इस समय यहाँ कोई बस नहीं मिलती?" उस व्यक्ति की बात सुन अनिल ने उत्तर दिया कि वह नन्दाचौर जा रहे हैं और बस न मिलने के कारण वह पैदल ही जा रहे हैं। फिर उस व्यक्ति ने अनिल को कहा कि वह भी नन्दाचौर ही जा रहे हैं और वह उनके स्कूटर के पीछे बैठ जाए।

अनिल उस व्यक्ति के स्कूटर के पीछे बैठ गए और थोड़ी देर बाद उस व्यक्ति ने अनिल को पूछा कि क्या उन्हें 'हनुमान चालीसा' आती है? अनिल के हाँ करने पर उसने कहा कि ज़ोर-ज़ोर से 'हनुमान चालीसा' का पाठ करो। अनिल ने पाठ करना शुरू कर दिया। कुछ ही देर में नन्दाचौर आ गया। अनिल स्कूटर से उतर गए और उस व्यक्ति का धन्यवाद किया। दो कदम चल कर जैसे ही अनिल ने पीछे मुड़ कर देखा वहाँ न तो कोई स्कूटर वाला था और न ही कोई स्कूटर।

उसके बाद अनिल तेजी से चलते हुए दरबार गए और वहाँ पहुँच कर बापू गुरदास राम जी को प्रणाम किया। बापू जी ने अनिल को कहा कि आज तो तुम इतनी रात को आ गए हो। आगे से ऐसा मत करना, समय पर ही आना। आज स्वयं बापू श्रद्धाराम जी महाराज तुम्हें यहाँ तक छोड़ गए हैं। अनिल यह सत्य जान कर गद्गद् हो उठे और बापू जी की बारम्बार चरण-वन्दना करने लगे। वह समझ गए कि बापू गुरदास राम जी ने ही उन पर कृपा करते हुए उन्हें सकुशल पाठ के लिए पहुँचाया है।

बापू गुरदास राम जी ने दरबार में जो 'श्रीरामचरितमानस' का पाठ शुरू करवाया था उसे सभी भक्तों ने प्रसन्न मन से स्वीकार किया था। भक्तजन आनन्दित हो कर राम कथा का गान किया करते थे। दरबार में रामकथा के साथ-साथ 'श्री गुरु ग्रन्थ साहिब का पाठ भी

किया जाता था। एक दिन वहाँ रामकथा का पाठ चल रहा था और उसमें 'सुन्दर काण्ड' का सुन्दर पाठ किया जा रहा था। दरबार में एक पाठी भी बैठे थे और उनके मन में राम कथा को लेकर आपत्तिजनक विचार आ गए। जैसे ही उनके मन में वे विचार आए वैसे ही तत्काल उनके समक्ष एक दृश्य प्रकट हुआ।

उन्होंने देखा कि एक विशालकाय वानर का पैर जिस पर सुनहरी रंग के बाल थे और उस पैर में एक कंगन भी था, वह पैर दरबार में बहुत ही बड़े आकार में नज़र आने लगा। वह पाठी उस दृश्य को देख कर घबरा गया और उसे आभास हुआ मानो वह विशाल वानर अपना घुटना नीचे की ओर कर रहा है और तब उस पाठी को ऐसा लगा मानो उस पर कितने ही मन भार पड़ रहा है और वह उस भार को सहन करने में बिलकुल असमर्थ है। फिर तो उस पाठी की मनोदशा बहुत विचित्र हो उठी और उसने घबरा कर दूसरे पाठियों को बुलाने के लिए घंटिया बजानी शुरू कर दी। जब दूसरे पाठी वहाँ आये तब भी वह पाठी कुछ बोलने की स्थिति में नहीं था और डर के मारे बहुत देर तक घंटियाँ बजाता रहा। फिर बापू गुरदास राम जी के आने के बाद ही वह कुछ समान्य हुआ और उसने अपना अनुभव बापू जी को बताया।

तब बापू गुरदास राम जी ने उसे समझाया कि यह जो तुम बाणी का पाठ करते हो इसमें भी तो उसी राम की, उसी परमेश्वर की महिमा

का प्रकाश है। विविध ग्रन्थों में उसी एक ईश्वर की महनीयता का वर्णन विभिन्न प्रकार से किया गया है। वेद भी कहते हैं "एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति" अर्थात् सत्य एक ही है और विद्वान् पुरुष उसकी अभिव्यक्ति अलग-अलग तरीकों से करते हैं। बापू जी ने उसे यह भी समझाया कि तुमने हनुमान जी के जिस विराट रूप के दर्शन किए, उसका उद्देश्य तुम्हें भयभीत करना बिलकुल नहीं था। वह तो तुम्हें यह बताने आए थे कि ईश्वरीय शक्ति के किसी भी रूप को कम अथवा हीन आँकना अनुचित है।

बापू जी के ऐसा समझाने से उस पाठी को अपनी सोच की तुच्छता पर घोर सन्ताप हुआ और उसने सच्चे मन से भगवान् से क्षमा-प्रार्थना की और 'श्रीरामचरितमानस' को बहुत ही श्रद्धा से माथा टेका। इस घटना के बाद उसका पूरा जीवन ही बदल गया और राम कथा में उसकी अपार श्रद्धा हो गई।

बापू गुरदास राम जी ने अपने सम्पूर्ण जीवन में भक्तों की सर्वविध उन्नति के लिए भरसक प्रयास किए। उन्होंने अपने एक भक्त पिंजौर निवासी अश्विनी कुमार शर्मा पर कई अनूठी कृपाएं की। बापू गुरदास राम जी होम्योपैथी के अच्छे जानकार थे। उन्होंने अश्विनी जी को होम्योपैथी की एक पुस्तक दी और उन्हें हृदय से आशीर्वाद दिया कि वह इस ज्ञान को प्राप्त कर दीन, दुखियों व असहाय व्यक्तियों की

सहायता करें। बापू गुरदास राम जी की अपूर्व कृपा से अश्विनी जी के मन में स्वयमेव ही उन औषधियों का ज्ञान प्रकट होता चला गया और आज की तारीख में अश्विनी जी एक सफल चिकित्सक हैं और बापू गुरदास राम जी की आज्ञा अनुसार जरूरतमन्द व्यक्तियों की चिकित्सा करते हैं।

अश्विनी जी की 1975 में जालन्धर में हिन्दुस्तान कमर्शियल बैंक लिमिटेड में कार्य करते थे। उस समय उनकी नौकरी स्थाई नहीं थी। अश्विनी जी बडाला पक्का से भोगपुर तक साईकिल पर आया करते थे और फिर वहाँ से जालन्धर रेलगाड़ी द्वारा जाया करते थे। लगभग दो महीने तक कार्य करने के बाद एक दिन अश्विनी जी के मन में विचार आया कि उन्हें अस्थाई नौकरी नहीं करनी है। इतना पढ़ने लिखने के बाद भी अस्थाई नौकरी करने का कोई मतलब नहीं है। अश्विनी जी ने अंग्रेजी और दर्शन शास्त्र में एम० ए० किया हुआ था।

जब उनके मन में यह विचार आया तब उन्होंने नन्दाचौर जा कर बापू जी से मिलने का निश्चय कर अपने मन की बात उनसे करने का फैसला किया। उन्होंने सोचा कि वह बापू जी से कहेंगे कि बापू जी, या तो मुझे स्थाई नौकरी दिलवा दीजिए और या यह नौकरी भी वापिस ले लीजिए। काम के बाद रेलगाड़ी से भोगपुर पहुँच कर उन्होंने साईकिल उठाया और नन्दाचौर की ओर चल पड़े। जुलाई का महीना था,

चिलचिलाती धूप थी। पसीने से तरबतर अश्विनी जब नन्दाचौर के उस कच्चे स्थान पर पहुँचे जहाँ से दरबार के लिए सड़क मुड़ती थी, तब उनका मन बेईमान हो गया और वह सोचने लगे कि मैं फिर कभी बापू जी के दर्शन कर लूँगा और अभी मैं घर के लिए प्रस्थान करता हूँ। यह सोच कर वह साईकिल से उतरे और साईकिल खड़ी कर के जमीन पर सिर झुका कर दरबार की ओर मुख कर के प्रणाम कर जैसे ही सिर ऊपर किया वैसे ही साक्षात् बापू गुरदास राम जी को सामने खड़े देखा।

बापू जी ने सफेद रंग का कुर्ता-पायजामा पहना हुआ था, सिर पर पगड़ी थी और चरणों में खड़ाऊँ थे। अश्विनी जी पहले तो एकाएक अचानक बापू जी को सामने देख कर घबरा गए परन्तु फिर थोड़ी देर बाद सहज हो गए। बापू जी ने उनसे कहा "विचलित क्यों होते हो? तुम्हारा कार्य तो बापू जी ने पहले ही किया हुआ है। इस प्रकार विचलित नहीं हुआ करते" इतना कहने के पश्चात् बापू जी उनके देखते ही देखते आलोप हो गए। अश्विनी जी ने इन दर्शनों के लिए बापू जी का अति धन्यवाद किया और घर आ कर अपने पिता श्री महंगा राम शर्मा जी को यह अनुभव सुनाया।

बापू गुरदास राम जी के वचनानुसार अगले दिन जब अश्विनी बैंक गये तो उनकी अस्थाई नौकरी स्थाई नौकरी में परिवर्तित हो गई। फिर बाद में भी बापू जी की कृपा से अश्विनी जी ने, क्लर्क से

एकाउंटेन्ट और एकाउंटेन्ट से मैनेजर तक की पदोन्नति प्राप्त की और अपने कार्य क्षेत्र में अत्यधिक सम्मान और यश प्राप्त किया। बापू गुरदास राम जी सदृश ईश्वर कोटि महापुरुष किसी भी मनुष्य को दर्लभआध्यात्मिक अनुभूतियों से उत्पन्न दिव्य दर्शन करवा सकते हैं। अश्विनी जी पर बापू जी की यह कृपा सदैव बनी रही और इस घटना के बाद भी बहुत बार उन्हें बापू जी के विभिन्न रूपों में दर्शन होते रहे हैं और आज भी हो रहे हैं। अश्विनी जी के दादा श्री अनन्त राम जी शर्मा पर बापू ओम जी की विशेष कृपा थी और अश्विनी जी के पिता श्री महंगा राम जी शर्मा पर बापू हरनाम जी और बापू श्रद्धा राम जी की खास कृपा थी।

बापू गुरदास राम जी तो दया के सागर थे। जो भी भक्त उनकी शरण में आ जाता वह उस पर तत्काल कृपा कर दिया करते थे। एक बार खटीमा निवासी सुदेश अरोड़ा अपने पति श्री मंगत राम अरोड़ा के

साथ बापू गुरदास राम जी से मिली। उनके विवाह को तेरह वर्ष बीत चुके थे और उनकी कोई सन्तान नहीं थी। बापू जी ने सुदेश को कहा कि वह सवा महीना माघ के पवित्र महीने में नन्दाचौर रह कर सेवा करे। सुदेश प्रसन्न मन से सेवा के लिए तैयार हो गई। वह नन्दाचौर रुकी और जी जान से सेवा की। वह प्रातः ढाई-तीन बजे उठ जाती और बापू जी की आज्ञानुसार कभी थड़ा साहिब तो कभी समाधि साहिब पर जा कर झाड़ू लगाया करती थी। लंगर घर में भी बर्तनों को साफ कर वह

सेवा कार्य किया करती थी। एक दिन बापूजी ने सुरेश को बुला कर कहा कि आज तुम्हारी परीक्षा है। इतना कह कर बापू जी उसे सच्चखण्ड ले गए और वहाँ रखी सभी तस्वीरों को साफ करने के लिए कहा। सुदेश ने देखा कि तस्वीरों पर बहुत अधिक मिट्टी चड़ी हुई है। सुदेश ने तुरन्त कार्य करना आरम्भ कर दिया। उसने सुबह नौ बजे से ले कर शाम के छः बजे तक लगातार कार्य किया और सभी तस्वीरों के ऊपर चढ़े वरवों को धो कर और सुखा कर शाम तक सच्चखण्ड को भली प्रकार सुन्दर बना दिया। सुदेश ने यह सारा सेवा कार्य अकेले ही किया था।

जब बापू गुरदास राम जी शाम के समय ऊपर गये तो सुदेश की सेवा भावना देख कर बहुत प्रसन्न हुए। नीचे आ कर उन्होंने माता सावित्री देवी से कहा कि आज तो सुदेश ने सौ में से एक सौ बीस नंबर लिए हैं। जिन दिनों सुदेश वहाँ रह रही थी उन्हीं दिनों नन्दाचौर में मरकरी लाईट लगवाई जा रही थी। एक रात दरबार में ऊपर छत की तरफ मरकरी लाईट लगी। सुदेश उस लाईट की ओर देखने लगीं। तभी बापू जी ने कहा कि तेरी रोशनी तो खटीमा पहुँच गई है। तत्पश्चात् बापू जी ने उसे तीन थापड़े मारते हुए आशीर्वाद दिया। सुदेश अपना सेवा कार्य कर के खटीमा चली गई।

उसके जाने के लगभग एक लगभग एक महीने के अन्दर बापू

जी भी दिल्ली अपने इलाज के लिए चले गए और वहीं देह त्याग कर दिया। खटीमा जाने के चौदह माह बाद 27 जून 1983 को सुदेश को एक पुत्री की प्राप्ति हुई और पुत्री होने के ठीक चौदह महीने बाद 31 अगस्त 1984 को पुत्र प्राप्ति हुई। उस पुत्र के पाँच वर्ष उपरान्त उसे एक और पुत्र-रत्न की प्राप्ति

हुई। इस प्रकार बापू गुरदास राम जी की अपार करुणा और कृपा से सुदेश अरोड़ा को तीन सन्तानों की प्राप्ति हुई।

सुदेश की तरह ही कंगजगीर निवासी जसविन्दर कुमारी को भी विवाह के दस वर्षों पश्चात् दो सन्तानों की प्राप्ति हुई। जसविन्दर ने नन्दाचौर आ कर बापू जी के कहने पर अपने सिर पर रोड़ी और सीमेन्ट के तसले ढो कर बापू श्रद्धाराम जी के कमरे के निर्माण कार्य के दौरान सेवा कार्य किया था। जसविन्दर छः महीने नन्दाचौर में रही और इस समय में उसने पूर्ण मन से दरबार में सेवा कार्य किया। उस सेवा के फलस्वरूप उसे एक पुत्र और एक पुत्री की प्राप्ति हुई थी।

वास्तव में सच्चे मन से किए गए सेवा कार्य में प्रारब्ध को मिटा डालने का सामर्थ्य होता है और यदि गुरु कृपा हो जाये तो कोई पूर्वकृत पाप उस कृपा के आगे टिक नहीं सकता। गुरु कृपा से मनुष्य को भौतिक सम्पदाएं तो क्या दुर्लभ से दुर्लभतम आध्यात्मिक पूँजी तक प्राप्त हो सकती है। बापू जी की ऐसी ही कृपा अपने एक भक्त दिल्ली निवासी इन्द्रजीत तनेजा पर हुई जब सन् 1974 में वह बापू जी को

अपनी ऐमबेसेडर कार में नन्दाचौर छोड़ कर वापिस अपने घर भटिंडा जा रहे थे। तब वह भटिंडा में रहते थे। उन दिनों बापू जी अबोहर, फाजिल्का और आस-पास के क्षेत्रों में अपने भक्तों के घर यज्ञ-कीर्तन करने जाया करते थे। इन्द्रजीत जी भी बापू जी के साथ-साथ रह कर उनकी बहुत सेवा किया करते थे। उस दिन जब इन्द्रजीत जी कार चला रहे थे तो नींद आ जाने के कारण कार पर से उनका नियंत्रण समाप्त हो गया और उनकी कार एक धमाके के साथ एक ट्रक से जा टकराई। उनकी कार का इंजन पूर्णतया क्षतिग्रस्त हो गया। उस कार की दुर्दशा देख कर यह कोई नहीं कह सकता था कि उसे चलाने वाला व्यक्ति जीवित बचा होगा परन्तु लोग यह नहीं जानते थे कि जिसके सिर पर बापू जी का हाथ हो, उसका काल कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

इन्द्रजीत जी के नन्दाचौर से चलने से पहले ही बापू जी ने उन्हें प्रसाद में कुछ बादाम देते हुए कहा था कि ये बादाम अवश्य खा लेना। इन्द्रजीत जी ने वह प्रसाद खा कर ही यात्रा के लिए प्रस्थान किया था। उस भयंकर दुर्घटना के बाद भी इन्द्रजीत जी को एक खरोंच तक नहीं आई थी। बापू जी का रक्षा कवच इतना मज़बूत था कि वह उस दुर्घटना से बिलकुल सुरक्षित अपने घर पहुँच गए थे। जीवन के अन्तिम

क्षण तक वह दरबार की सेवा में लगे रहे। उनकी पत्नी श्रीमती कृष्णा तनेजा और पुत्र संजय तनेजा, राजीव तनेजा और विक्रांत तनेजा भी उन्हीं के समान बापू जी में श्रद्धा रखते हैं और दरबार की सेवा में रत हैं।

श्री नारायण चरितामृत

458

बापू गुरदास राम जी की दिनचर्या कुछ ऐसी थी कि उन्हें विश्राम करने का तनिक भी समय नहीं मिलता था। एक बार बापू जी की एक भक्त श्रीमती उर्मिल रानी और उनके पति श्री राम प्रताप ने बापू जी से निवेदन किया कि बापू जी, आप हमारे पास विश्राम के लिए हल्द्वानी आएं। उर्मिल जी के बार-बार प्रार्थना करने पर बापू जी ने हाँ कर दी और अपनी पत्नी के साथ उनके पास चले गए। यह घटना 1981 की है। हल्द्वानी में राम प्रताप जी की तेल की मिल थी। बापू जी जब उनके पास गए तब उन लोगों ने बापू जी की बहुत सेवा की और एक दिन बापू जी और माता जी को नैनीताल झील में घुमाने ले गए।

झील में सुन्दर नौका में भ्रमण करते हुए बापू जी सामने नयनाभिराम दृश्यावली का आनन्द ले रहे थे। सामने कतार में कई होटल नज़र आ रहे थे। तभी अचानक माता सावित्री जी ने उर्मिल से कहा कि तुम भी बापू जी से 5-7 होटल माँग लो। यह सुन कर उर्मिल ने कहा कि माता जी, मेरी इतनी औकात कहाँ है? तब माता सावित्री जी ने कहा कि बापू जी के लिए क्या कठिन है, तुम वैसा ही करो जैसा मैने कहा है।

माता जी की आज्ञा प्राप्त कर उर्मिल जी ने झोली फैला कर बापू जी से कृपा करने की प्रार्थना की। बापू जी ने प्रसन्न मन से उन्हें आशीर्वाद दिया और कहा कि तुम्हारी होटलों की लाईन लग जाएगी।

श्री नारायण चरितामृत

459

इसके बाद बापू जी वापिस नन्दाचौर आ गए। उधर बापू जी का आशीर्वाद फलीभूत हुआ और धीरे-धीरे उर्मिल जी के 1987 में दो होटल नैनीताल में और एक होटल 1994 में महाबलेश्वर में निर्मित हुआ।

उसके बाद बापू जी की कृपा से उनके दो रेस्तरां मुम्बई में और एक रेस्तरां नैनीताल में निर्मित हुआ। इस परिवार पर बापू गुरदास राम जी की ऐसी कृपा है कि पूरा परिवार बापू जी की सेवा में मन-प्राण से सदैव जुटा रहता है। उर्मिल जी के दोनों पुत्र श्री संजय प्रताप और रंजय प्रताप एवं पुत्रवधुएं श्रीमती सीमा और विनीता भी अपने माता-पिता के पदचिन्हों पर चल रहे हैं और दरबार के सेवा कार्यों में संलग्न हैं।

बापू गुरदास राम जी में गजब की सहनशीलता थी। जीवन के अन्तिम दिनों में उन्हें एक असाध्य रोग हो गया था जिसके कारण उन्हें शौचादि जाने में बहुत तकलीफ होती थी। एक बार बापू जी किसी भक्त के विवाह कार्य के लिए गए। रात को जब उन्हें शौचादि जाने की आवश्यकता लगती थी तब वह किसी को कष्ट न देते हुए छोटे रास्ते को छोड़ कर लम्बे रास्ते से जाया करते थे ताकि किसी को कोई असुविधा न हो। पूरी रात्रि वह पीड़ा में रहे परन्तु किसी को कष्ट नहीं दिया। सुबह होते-होते उनकी हालत बहुत खराब हो गई।

बापू जी जानते थे कि उनका ब्रह्म लीन होने का समय आ चुका है। उनके भक्तों ने उन्हें दिल्ली के वेलिंगटन अस्पताल में ले जाने का

मन बना लिया था। वहाँ जाने से पहले बापू जी एक बार अपनी पुत्री रविकान्ता शर्मा के घर जालन्धर उनसे मिलने के लिए गए। वहाँ बापू जी की बड़ी पुत्री रमेश और प्रो० शर्मा के जीजा जी श्री कृष्णकांत वसिष्ठ आए हुए थे। बापू जी ने रमेश जी से कहा कि अच्छा हुआ तुम आ गई, नहीं तो हमारी मुलाकात नहीं होनी थी। बापू जी ने श्री कृष्णकांत वसिष्ठ जी को भी कह दिया, "अब हम वापिस नहीं आएंगे। आप अनिल को यह बात मत बताना।" वह दिल्ली के वेलिंगटन अस्पताल जो आज कल राम मनोहर लोहिया अस्पताल के नाम से जाना जाता है, में आ गए।

सारा दिन अस्पताल में संगत का तांता लगा रहता था। गुरदास राम जी ने वहाँ हर पल सुन्दरकाण्ड जी का पाठ शुरु कर दिया और अपनी आँखों के समक्ष बापू श्रद्धाराम जी का स्वरूप रखवा लिया। बापू गुरदास राम जी ने अपना अधिकाँश समय ध्यान में बिताना शुरु कर दिया। 13 मार्च 1982 को

शनिवार के दिन डॉक्टर ने कहा कि वे उन्हें दो दिन तक अस्पताल से छुट्टी दे देंगे। बापू जी ने नन्दाचौर सन्देश भेज दिया कि मंगलवार को उन्हें छुट्टी हो जाएगी, इसलिए श्री रामायण जी का पाठ रख लिया जाए। मंगलवार को बापू जी की इच्छानुसार दरबार में पाठ आरम्भ कर दिया गया।

उधर अस्पताल में बापू जी ने संगत के एक व्यक्ति को कहा कि

ओम प्रकाश ठुकराल जी को कहो कि वह वापिस न जाए, शाम को बहुत लोगों की आवश्यकता होगी। दोपहर को बापू जी ने खाना खाया और अपनी सेवा में लगे सेवादारों को कहा कि सभी नीचे जा कर खाना खाईए। सेवादार खाना खा कर आए तो बापू जी ने सभी से कहा-"पाठ करो।" सुन्दर काण्ड का 17 वां दोहा चल रहा था तभी वहाँ उपस्थित रमेश गुम्बर जी को लगा कि बापू जी की मुख मुद्रा कुछ और ही इशारा कर रही है। फिर उन्होंने बापू जी की धर्मपत्नी को बुलाया। सावित्री देवी ने आ कर कहा कि डाक्टर को बुलाओ। डॉक्टर ने आ कर पम्पिंग की और बापू जी की तबीयत कुछ ठीक जान पड़ी।

डॉक्टर ने बापू जी से पूछा- "क्या बात है?" बापू जी बोले, "कुछ नहीं, नींद आ रही थी।" तत्पश्चात बापू जी ने नन्दाचौर का जल लिया और अपने प्रिय गुरुदेव बापू श्रद्धाराम जी को टकटकी लगा कर निहारने लगे। फिर लम्बा श्वास भर के तीन बार ओम का उच्चारण किया और अपनी चेतना को उस परम चेतना में लीन कर दिया। जब यह सब घटित हुआ उस समय बहुत तेज धूप तेज धूप थी और दोपहर का समय 16 March 1988 था परन्तु बापू जी के देह त्याग करते ही उसी क्षण मौसम बदल गया आकाश में काले मेघ छा गए, बिजली कड़कने लगी, बहुत तेज़ आँधी आई और घनघोर वर्षा आरम्भ हो गई।

कुछ ही समय बाद मौसम फिर से पहले जैसा हो गया। जहाँ

दिल्ली में प्रकृति ने उस महान् आत्मा के निज रूप में अवस्थित होने को इस प्रकार प्रकट किया वहीं नन्दाचौर में भी कुछ भक्त जिनमें मालती और अनिल सहगल आदि भक्त उपस्थित थे और पाठ कर रहे थे, उन्होंने भी एक अपूर्व दृश्य देखा। मालती ने देखा कि अचानक ही सामने जल रही जोत बुझ गई है। इसके तुरन्त बाद बापू गुरदास राम जी सफेद वस्त्र पहने वहाँ आए, श्री रामायण जी को माथा टेका और सच्चखण्ड की ओर चले गए। पहले तो उन भक्तों ने यही समझा कि बापू गुरदास राम जी दिल्ली से आ गए हैं परन्तु बाद में कुछ देर पश्चात् जब उन्हें सूचना मिली कि बापू जी ने तो दिल्ली में देह त्याग कर दिया है तब उन्हें पहले के दर्शनों का रहस्य समझ में आया।

बापू गुरदास राम जी ने अपना लीला-संवरण बहुत शीघ्र किया। सात वर्ष से थोड़ा ही अधिक समय वह गद्दी पर रहे परन्तु इतने कम समय में भी पूरी संगत को उन्होंने जो प्रेम दिया वह निस्सन्देह बहुत अदभुत और अनूठा था। उनके जाने के बाद संगत एक बार फिर शोकाकुल हो उठी। भक्तों के शोक का कोई अन्त ही नहीं था। भले ही ईश्वरतुल्य महापुरुषों के मानव देह के त्याग का अर्थ उनका सदैव के लिए अपने भक्तों का त्याग कदापि नहीं है परन्तु फिर भी भक्तों के मन में बापू गुरदास राम जी के ब्रह्मलीन होने से जो रिक्तता उत्पन्न हुई उसे एक लम्बे समय तक भरा नहीं जा सका।

-

बापूजी ने अपने बाहोने के भक्तों की आध्याधिक उन्नति के लिए उनका मार्गदर्शन किया है और उन्हें आशीर्वाद स्वरूप अपना वास्तविक स्वरूप प्रतीकात्मक ढंग से दर्शा कर एक अविस्मरणीय अनुभव प्रदान किया है। इस सम्बन्ध में एक प्रसंग वर्णनीय है जिसे पढ़ कर पाठक गण उस महान् आभा के आशीर्वाद का रहस्य हृदयंगम कर सकते हैं। सन् 2003 में बापू गुरदास राम जी पुत्री रविकान्ता शर्मा जब प्रात:काल अपने गृह मन्दिर में गई तब दीवार के दाई ओर लिखा हुआ ओम्' शब्द देखा। उस दीवार पर संगमरमर लगा था और जिस प्रकार वह ओम् शब्द उस पर उभरा था उससे ऐसा नहीं लगता था कि किसी ने चाकू या किसी अन्य धारदार वस्तु से उसे उभारा हो। वह शब्द तो स्वतः ही उस दीवार पर प्रकट हुआ प्रतीत होता था। ऐसा लगता था मानो किसी ने अपनी अंगुली से 'ओम्' शब्द लिखा हो।

रविकान्ता यह देख कर विस्मय से भर उठीं और अपने हाथों से छू कर और फिर उसे साफ कर यह जानने का प्रयत्न किया कि आखिर यह शब्द स्वतः ही कैसे प्रकट हुआ। फिर उन्होंने घर के बाकी सदस्यों को भी यह दिखाया। घर के सदस्यों को भी यह देख कर हैरत हुई कि स्वत: ही दीवार पर '

ओम्' प्रकट होने का क्या रहस्य है? इसके पश्चात् रविकान्ता जी ने गद्दीनशीन बापू हरभगवान जी महाराज जी से पूछा तो उन्होंने बताया कि यह तो बापू गुरदास राम जी महाराज जी का

-

आशीर्वाद है जो इस साकार रूप में आपके परिवार पर प्रकट हुआ है। वह' ओम्' का चिन्ह आज भी उस दीवार पर देखा जा सकता है।

ओम् की महिमा कौन नहीं जानता। चारों वेद, समस्त उपनिषद् एवं अठारह पुराण जिसकी महिमा वर्णन करते नहीं थकते, उस ओंकार के विषय में माण्डूक्योपनिषद् कहता है-

ओमित्येतदक्षरमिदं सर्व तस्योपव्याख्यानम् भूतं भवद्भविष्यदिति सर्वमोङ्कार एव ।
यच्चान्यत्त्रिकालातीतं, तदप्योङ्कार एव ॥

अर्थात् ओम् वह अक्षर है जिसका यह सब (सम्पूर्ण सृष्टि) फैलाव है। भूत, वर्तमान और भविष्य; यह सब ओंकार ही है और जो इसके सिवा तीन काल से बाहर है वह भी ओंकार ही है।

जो मनुष्य ओंकार का रहस्य समझ लेता है वह स्वयं के रहस्य से भी परिचित हो जाता है। बापू गुरदास राम जी ने न केवल अपनी पुत्री व शिष्या रविकान्ता को अपितु समस्त भक्तों को यह दिव्य सन्देश एवम् आशीर्वाद दिया है कि स्वयं को पहचानो और जिस उद्देश्य के निमित्त इस मनुष्य शरीर को धारण करना हुआ है उस उद्देश्य की पूर्ति में जुट जाओ।

बापू गुरदास राम जी ने स्वधामगमन के पश्चात् भी अपने भक्तों का पूरा ख्याल रखा और उनके जीवन की कठिनतम परिस्थितियों को भी परिवर्तित कर उनका हर प्रकार से ध्यान रखा। एक बार पटियाला निवासी असीम वर्मा जो कि बापू गुरदास राम जी की तृतीय पुत्री रमा वर्मा के सुपुत्र हैं, का सन् 2002 में बैंगलोर में ऐक्सीडेंट हो गया। उस समय असीम मोटर साईकिल पर था। तत्काल ही उसके आस-पास के लड़कों ने उसे उठाया और अस्पताल ले गए। ईश्वर की ऐसी कृपा थी कि वे लड़के मेडिकल के ही विद्यार्थी थे इसलिये वे बड़ी सावधानी से असीम को उठा कर अस्पताल ले गए थे।

उस दुर्घटना में असीम की एक टाँग घुटने के नीचे से टूट कर बिलकुल लटक रही थी। डाक्टरों की पूरी टीम ने चैक कर के बताया कि पैर के निचले हिस्से में कोई रक्त प्रवाह नहीं है, किसी भी नाड़ी में कोई स्पन्दन नहीं है, इसलिये उस टाँग का वह हिस्सा काटना पड़ेगा। डॉक्टरों ने असीम को भी मानसिक तौर पर तैयार कर लिया था कि अब उस की टाँग अलग करने के अलावा और कोई चारा नहीं है।

असीम के माता-पिता भी बैंगलोर पहुँच गए थे और प्रति पल बापू जी से प्रार्थना कर रहे थे कि बापू जी यह अनर्थ होने से बचा लीजिए। असीम के ऐक्सीडेंट से कुछ ही दिन पूर्व उसके बड़े भाई नितिन का भी ऐक्सीडेंट हुआ था और उसकी आँख का आपरेशन भी

हुआ था। कुछ ही दिनों के अन्तराल में अपने दूसरे पुत्र को भी दुर्घटनाग्रस्त देखना बच्चों के माता-पिता रमा और नरेन्द्र वर्मा के लिए बहुत ही कठिन था।

ऐसे में वे दोनों निरन्तर बापू जी से अरदास करते रहे। जिस समय असीम को आपरेशन थियेटर में ले जाया जाना था तभी एक वरिष्ठ डाक्टर ने कहा कि जी० ई० की एक मशीन से भी चैक कर लेते हैं कि कहीं टाँग के किसी हिस्से की नस में स्पन्दन हो तो आपरेशन टल सकता है। जब वह मशीन लाई गई और चैक किया गया तो पता चला कि टाँग की एक नाड़ी में हल्का सा स्पन्दन हो रहा था। सारे डॉक्टरों को आश्चर्यमिश्रित हर्ष हुआ क्योंकि आपरेशन से पहले जब सब कुछ चैक किया गया था तब डॉक्टरों ने किसी भी प्रकार के स्पन्दन को नहीं देखा था। फिर तो डॉक्टरों की टीम ने यह फैसला लिया कि अब टाँग काटने की बिलकुल आवश्यकता नहीं है और अब केवल टाँग में रोड डाल कर ही उसका उपचार कर दिया जायेगा। बापू गुरदास राम जी की चमत्कारिक कृपा से असीम बिलकुल स्वस्थ हो गया और आज कल वह दुबई में सफलतापूर्वक कार्यरत है।

बापू गुरदास राम जी एक पूर्ण संत थे और जैसा कि तुलसीदास जी ने ऐसे महान् संतों के लक्षण बताते हुए लिखा है-

चौ० षट बिकार जित अनघ अकामा। अचल अकिंचन सुचि सुखधामा ।।

अमितबोध अनीह मितभोगी। सत्यसार कबि कोबिद जोगी ।।

सावधान मानद मदहीना। धीर धर्म गति परम प्रवीना ।।

दो०- गुनागार संसार दुख रहित बिगत संदेह। तजि मम चरन सरोज प्रिय तिन्ह कहुँ देह न गेह ॥

भगवान् श्रीराम संतों के लक्षण बताते हुए कहते हैं कि संतों के जिन गुणों के कारण मैं उनके वश में रहता हूँ, वह गुण सुनो - वे संत छः विकारो को जीते हुए, पापरहित, कामनारहित, निश्चल, अकिञ्चन (सर्वत्यागी), बाहर-भीतर से पवित्र, सुख के धाम, असीम ज्ञानवान्, इच्छारहित, मिताहरी, सत्यनिष्ठ, कवि, विद्वान्, योगी, सावधान, दूसरों को मान देने वाले, अभिमानरहित, धैर्यवान्, धर्म और ज्ञान के आचरण में अत्यन्त निपुण, गुणों के घर संसार के दुःखों से रहित और सन्देहों से सर्वथा छूटे हुए होते हैं। मेरे चरणकमलों को छोड़ कर उनको न देह प्रिय होती है, न घर ही।

बापू गुरदास राम जी ऐसे ही एक पूर्ण संत थे जिनके हृदय-कमल में परमात्मा का नित्य वास था। एक प्राचीन कथा से उनकी महानता का मर्म समझा जा सकता है। कहा जाता है कि पृथ्वी बहुत बड़ी है और उस से भी बड़ा है समुद्र और समुद्र से बड़ा आकाश है

परन्तु भगवान् वामन रूप धारी विष्णु ने एक ही पग से पृथ्वी, आकाश, पताल-त्रिभुवन पर अधिकार कर लिया था और उन भगवान् विष्णु के चरण-कमल संती के हृदय में है और इसलिए संतों के हृदय से बड़ा और कुछ नहीं।

ऐसे ही अद्भुत और महान् संत बापू गुरदास राम जी का स्तुति वाचन करते हुए हम उन्हें नमन करते हैं और अगले अध्याय में अनन्त कोटि भानु सदृश तपस्वी बापू भानुदत्त जी महाराज जी की पावन कथा का विवेचन करने हेतु उद्यत होते हैं।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

अथ बापू श्री भानुदत्त

- प्रशस्ति वचनम्

ॐ

अथ बापू श्री भानुदत्त

- प्रशस्ति वचनम्

ॐ

अथ बापू श्री भानुदत्त-प्रशस्ति वचनम्

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥

भगवान् कृष्ण ज्ञान की महिमा के विषय में बताते हुए कहते हैं कि इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला निः सन्देह कुछ भी नहीं है। उस ज्ञान को कितने ही काल से कर्मयोग के द्वारा शुद्धान्तः करण प्राप्त कर लेता है।

बापू ओम जी की कृपा से नन्दाचौर दरबार को प्रखर अग्नि सदृश तेजस्वी और प्रचण्ड ज्ञान सूर्य तुल्य एक ऐसे महाज्ञानी संत प्राप्त हुए जिन्होंने अपनी अविरल ज्ञान-गंगा से समस्त भक्तों के पाप-समूह को भस्मीभूत कर उन्हें आध्यात्मिक पथ पर आरूढ़ किया। ऐसी महान् विभूति जिनके नाम से ही मनुष्य का अज्ञानता जनित अन्धकार दूर हो जाता है, जिनके दर्शनों से मनुष्य के विकारों की हृदय-ग्रन्थियां तत्क्षण खुलने लगती हैं, जिनकी कृपा से मानव एक दैवीय ऊर्जा से परिपूरित हो अपने जीवन के वास्तविक लक्ष्य की ओर अग्रसर होने लगता है,

जिनके प्रेम की सुधा का पान कर भक्तजनों के हृदय में आनन्द का समुद्र हिलोरें लेने लगता है, ऐसे अद्वितीय जानी का नाम है बापू भानुदत्त शर्मा जी महाराज। बापू भानुदत्त जी का जन्म 24 नवम्बर 1917 को कांगड़ा जिले के बड़े ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री हरिश्चन्द्र शर्मा और माता का नाम श्रीमती कुम्भी देवी था। भानुदत्त जी की दो बहिनें भी थी जिनसे उनका अतिशय स्नेह था। भान्दत्त जी अपने पिता से बहुत प्यार करते थे और उन्हें अपना आदर्श समझते थे। हरिश्चन्द्र शर्मा जी अमृतसर में एक मन्दिर में पुजारी थे और वेद, पुराण और शास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वान् थे। वह सात दिनों की भागवत् कथा भी किया करते थे और बहुत बड़े वैदिक कर्म-काण्डी थे।

भानुदत्त जी की जीवन शैली पर अपने पिता के प्रदत्त संस्कारों की छाप थी। उनकी आरम्भिक शिक्षा प्रागपुर में हुई। आठवीं कक्षा तक वह प्रागपुर के एक विद्यालय में पढ़े और आगे की शिक्षा के लिए अमृतसर अपने पिता के पास चले गए। भानुदत्त जी अति मेधावी छात्र थे। उनका अंग्रेज़ी, उर्दू, संस्कृत, हिन्दी और पंजाबी भाषाओं पर असाधारण अधिकार था। बचपन से ही भानुदत्त जी का ध्यान ईश्वर की आराधना और साधना में था। प्रति दिन सुबह चार बजे उठ कर, पहाड़ी पर स्थित एक बावड़ी के पास जा कर, वहाँ स्थित सुन्दर वृक्षों के झुरमुट तले योग करते। तत्पश्चात् बावड़ी में स्नान कर पास ही स्थित एक शिव मन्दिर में भगवान् शिव का विधिवत् पूजन करते। लगभग

दो-तीन घण्टे वहाँ बिता कर घर वापिस आ कर शालिग्राम का पूजन किया करते। उनकी दिनचर्या का प्रत्येक पल वैदिक संस्कृति की भावधारा से अनुप्राणित था। जीवन के लौकिक और आध्यात्मिक पहलू में पवित्रता और मर्यादा के प्रति उनका तीव्र आग्रह आरम्भ से अन्त तक प्रतिभासित रहा है। बाल्यावस्था से ही भानुदत्त जी भोजन से पूर्व बलिवेश करते थे और मन्त्रोच्चारण के साथ गाय को भोजन दिया करते थे।

युवावस्था आने पर उनका विवाह सन् 1935 में श्रीमती रामेश्वरी देवी के साथ हुआ। विवाह के समय भानुदत्त जी शिमला में एक फर्म में एकाउंटेन्ट की हैसियत से कार्य करते थे। उनके पिता यह चाहते थे कि भानुदत्त जी अपने गाँव के समीप ही कहीं कार्य कर लें। यह सोच कर उन्होंने ढलियारा गाँव में अपना काम शुरु कर लिया। कुछ समय ढलियारा गाँव में कार्य करने के उपरान्त उन्होंने देहरा जिला में कपड़े का कारोबार करना शुरु किया। सुबह दस बजे साईकिल से वह काम पर जाते थे और रात को आठ बजे के करीब आते थे। विवाह के बीस वर्ष उपरान्त उन्हें दो पुत्रों और एक पुत्री की प्राप्ति हुई।

अपने सभी बच्चों को उन्होंने बहुत अच्छे संस्कार दिए। समय अपनी गति से चलता गया और 1958 में ज्येष्ठ महीने में उनके पिता का स्वर्गवास हो गया। पिता की मृत्यु से उन्हें गहरा शोक हुआ। वह बावड़ी

पर जा कर, अपने पिता को याद कर, शोकाकूल हो वहाँ घण्टों बैठे रहते थे। इसी मध्य वह राममूर्ति जी के सम्पर्क में आए। राममूर्ति जी भानुदत्त जी के आढती थे। जब भी भानुदत्त जी राममूर्ति जी के पास जाते थे तो उनकी दुकान में बापू श्रद्धाराम जी की तस्वीर देख कर कहते थे कि यह महापुरुष मुझे बहुत आकर्षित करते हैं। मैं बापू श्रद्धाराम जी के तेजोमण्डल से अतिशय प्रभावित हूँ। मैं इनके दर्शन करना चाहता हूँ। कुछ समय पश्चात् भानुदत्त जी ने बापू जी के दर्शनों के लिए नन्दाचौर जाने का निर्णय लिया।

उन्होंने वहाँ जाने से पहले राममूर्ति जी से एक पत्र लिया और नन्दाचौर के लिए चल पड़े। वह रास्ते में सोचते जा रहे थे कि यदि बापू श्रद्धाराम जी अकेले में उनसे बात करें तो ही वह मानेंगे कि वह पूर्ण गुरु हैं। नन्दाचौर पहुँचने पर जब भानुदत्त जी बापू जी के दर्शनों के लिए ऊपर चौबारे पर गए तो देखा कि वहाँ भक्तों की बहुत भीड़ थी। उनके वहाँ जाते ही बापू श्रद्धाराम जी ने सभी भक्तों को नीचे भेज दिया और अन्दर से दरवाज़ा बंद कर भानुदत्त जी से कहा, "कहो, क्या कहना है?" यह सुन कर भानुदत्त जी ने कहा कि अब कुछ कहना-सुनना नहीं है और यह कह कर वह बापू जी के चरणों में नत-मस्तक हो गए। बापू श्रद्धाराम जी ने अगली सुबह उन्हें हवन पर बिठाया और दीक्षित कर दिया। जब भानुदत्त जी वापिस अमृतसर गए और राममूर्ति जी से मिले तो राममूर्ति जी को यह जान कर बहुत अचरज हुआ कि बापू जी ने

भानुदत्त जी को पहली बार मिलने पर भी नाम दे दिया और वह तीन-चार वर्षों से वापू जी से नाम-दान की प्रार्थना कर रहे हैं और उन्हें अभी तक नाम नहीं मिला। राममूर्ति जी ने नन्दाचौर जा कर बापू जी से शिकायत भरे स्वर में कहा कि बापू जी, मैं कब से आप से नाम-दान की प्रार्थना कर रहा हूँ और आप ने अभी तक मुझ पर कृपा नहीं की और भानुदत्त जी को प्रथम बार निवेदन करने पर ही नाम दे दिया। राममूर्ति जी की यह शिकायत सुन कर बापू श्रद्धाराम जी ने कहा, "जाग तो कड़े हुए दूध को ही लगाया जाता है। भानुदत्त तो पहले ही कड़े हुए हैं और तुम्हें कड़ना अभी बाकी है।"

बापू श्रद्धाराम जी का अभिप्राय यह था कि दीक्षा उसी को प्रदान की जाती है जो विषय-वासनाओं से ऊपर हो, आध्यात्मिक जीवन के लक्ष्य को पाने हेतु बिलकुल तैयार हो और उस परिप्रेक्ष्य से भानुदत्त जी के उद्देश्य को समझ कर ही बापू जी ने उन्हें दीक्षित किया था। बाद में बापू जी ने राममूर्ति जी को भी नाम-दान दिया। बापू जी से दीक्षा प्राप्त कर भानुदत्त जी ने तीव्र गति से अपना आत्मिक उत्थान किया, जिन वेद-शास्त्रों का उन्होंने अध्ययन किया था, उन्हीं शास्त्रों के ज्ञान को गुरु कृपा से प्रत्यक्ष अनुभूत भी किया। परमात्म-तत्त्व क्या है? इस रहस्य को भानुदत्त जी ने बापू श्रद्धाराम की कृपा से अति शीघ्र समझ लिया था। ऐतरेयोपनिषद् में इस विषय पर कहा गया है-

अणोरणीयान् महतो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः । तमक्रतुः पश्यति वीतशोको धातुः प्रसादन्महिमानमीशम् ॥

अर्थात् वह ब्रह्म अणु से भी सूक्ष्म और महान् (बड़े) से भी महान् अणु (बड़ा) है। वह परमात्मा इस जीव की हृदयरूपी गुफा में छिपा हुआ है। उस कर्मरहित महान् परमेश्वर्यवान् स्वामी को शोकरहित पुरुष, उस सर्वधारक परमात्मा की कृपा से ही साक्षात् करता है।

भानुदत्त जी ने बापू श्रद्धाराम जी की कृपा से आत्म-साक्षात्कार किया और जीवन के चरम उत्कर्ष की प्राप्ति की। ईश्वर तत्त्व को जानने के उपरान्त भी भानुदत्त जी ने अपना कर्म नहीं छोड़ा। भानुदत्त जी प्रत्येक संक्रांति और कभी-कभी पूर्णिमा को नन्दाचौर जाया करते थे। निष्काम भाव से कर्म करते हुए अपने पारिवारिक और सामाजिक उत्तरदायित्वों की पूर्ति करते हुए भी भानुदत्त जी की वृत्ति सदैव ईश्वराभिमुख रही। इस प्रकार समय बीतता गया और बापू श्रद्धाराम जी के बाद बापू गुरदास राम जी भी ब्रह्मलीन हो गए। बापू गुरदास राम जी के जाने के बाद गद्दी लगभग सवा साल खाली रही। पूरी संगत शोकाकुल थी। फिर एक दिन बापू दयाकिशन जी के हुक्म से दिल्ली

निवासी कृष्ण लाल नागपाल और अमृतसर से सेठ राममूर्ति 5 जून 1983 का भानुदत्त जी के घर गए। उस समय शाम हो गई थी और भानुदत्त जी घर पर नहीं थे। वह बावड़ी से जल भर कर ला रहे थे।

यह सूचना मिलने पर कि नन्दाचौर से संगत आई है, वह घर आ गए। भानुदत्त जी ने उनका अतिथि सत्कार किया और वे दोनों उस रात भानुदत्त जी के पास रुके।

सुबह होने पर नागपाल जी और राममूर्ति जी ने भानुदत्त जी से कहा कि हम आप को लेने आए हैं। आपने हमारे साथ नन्दाचौर चलना है। वास्तव में अमृतसर गद्दीनशीन संत सत्य प्रकाश जी को इस सम्बन्ध में बापू श्रद्धाराम जी का दैवी हुक्म हुआ था कि भानुदत्त जी को नन्दाचौर गद्दी पर आसीन किया जाए। तत्पश्चात् जून यज्ञ के अवसर पर बापू दयाकिशन जी के आदेश से संत सत्य प्रकाश जी भानुदत्त जी के लिए पगड़ी ले कर आए थे। भानुदत्त जी ने सारी बात सुन कर कहा कि आपने यह बात मुझसे कल क्यों नहीं की? क्या यह मज़ाक है? फिर उन्होंने राममूर्ति जी और नागपाल जी को कहा कि कल मुझे बापू श्रद्धाराम जी स्वयं यह हुक्म लगा गए थे कि तुमने कल सुबह नन्दाचौर जाना है और दरबार की सेवा करनी है। यह देखिए, मैंने अपना सामान पहले ही बाँध रखा है।

अगली सुबह भानुदत्त जी संगत के साथ नन्दाचौर पहुँचे। वहाँ

सहारनपुर गद्दी के बापू दयाकिशन जी महाराज जी ने भानुदत्त जी को गद्दीनशीन किया। इस घटना से कुछ दिन पहले जब भानुदत्त जी अपने घर पर बैठे थे तब एक साधु वहाँ आया और बातों बातों में भानुदत्त जी का हाथ देख कर बोला कि आपको तो अति शीघ्र कोई राजगद्दी मिलनी है। उस साधु की यह बात सुन कर भानुदत्त जी ने हँस कर कहा कि हमें भला कौन सी राजगद्दी मिल सकती है। परन्तु कुछ ही दिनों में वह भविष्यकथन भी सत्य सिद्ध हुआ और भानुदत्त जी को वास्तव में ही शेरों के शेर, शहंशाहों के शहंशाह बापू ओम नारायण दत्त जी की आध्यात्मिक विरासत को सम्भालने का मौका मिला।

गद्दीनशीनी से पूर्व भानुदत्त जी ने यह स्पष्ट कर दिया था कि अभी उनके परिवार वाले पूरी तरह व्यवस्थित नहीं हैं, अतः वह कभी-कभी अपने गाँव जा कर उनकी देखरेख की व्यवस्था देखा करेंगे। यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि भानुदत्त जी एक समबुद्धि युक्त महापुरुष थे। भगवान् राम की तरह उन्होंने भी परिस्थितियों के अनुसार अति शीघ्र तालमेल बिठा लिया था। एक दिन पहले

वह अपने परिवार के प्रति अपने उत्तरदायित्व निभा रहे थे और दूसरे ही दिन उन्होंने बापू ओम नारायण जी के बृहद परिवार का उत्तरदायित्व बड़े सहज भाव और समर्पण के साथ स्वीकार किया था।

बहुत जल्दी ही भानुदत्त जी ने अपने प्रेम से सारी संगत को अपने

साथ जोड़ लिया। अपने पहले प्रवचन में उन्होंने अति विनीत भाव से कहा कि शतरंज का खेल चल रहा था, खेल में एक गोटी गुम हो गई और उसके स्थान पर जला हुआ कोयला रख दिया गया ताकि बापू जी का खेल चलता रहे। इन वचनों से बापू भानुदत्त जी की अहशून्यता और अपने गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण और प्रेम-भाव का पता चलता है। इसके बाद बापू भानुदत्त जी ने बहुत हा सुन्दर प्रवचन किया। बापू जी ने 'गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु...' और 'अज्ञानतिमिरन्धस्य...' आदि सुन्दर श्लोकों से अति प्रभावशाली प्रवचन किया।

उनके पहले ही प्रवचन से यह स्पष्ट हो गया कि बापू भानुदत्त जी महाराज ज्ञान की साक्षात् मूर्ति हैं। बापू जी को भगवद्गीता कण्ठस्थ थी और वह भगवान् की इस पवित्र वाणी के प्रति बहुत श्रद्धा रखते थे। वैदिक वाङ्गमय के प्रति उनका सम्मान और मन्त्रों के उच्चारण में अतिशय शुद्धता यह प्रदर्शित करती थी कि वह सनातन ज्ञान की शुद्धता को अक्षुण्ण रखने में कितने कृत संकल्प थे। बापू जी का मानना था कि मन्त्रों के उच्चारण में असावधानी बरतना ठीक वैसा ही है जैसे किसी का अंग भंग कर देना। इसलिये वह सदैव इस बात का ध्यान रखते थे और भक्तों को भी शुद्ध उच्चारण के लिए प्रोत्साहित किया करते थे।

बापू भानुदत्त जी एक निर्भीक एवं स्पष्टवादी संत थे। मर्यादाओं के शुद्ध पालन का तीव्र आग्रह रखने वाले बापू भानुदत्त जी का तेज ऐसा

था कि सामने आने वाले की समस्त अशुद्धियां स्वतः ही भस्मीभूत हो जाती थी। किसी भी भक्त का उनके समक्ष गलत कार्य करने का तो क्या, सोचने का भी साहस नहीं होता था और होता भी कैसे।

साक्षात् सूर्य की तेजोमयी किरणों का स्पर्श पाते ही भक्तों के विकार जनित दोषों का नष्ट होना तो स्वाभाविक ही था।

बापू भानुदत्त जी ने बापू ओम जी प्यारी सन्तानों को बहुत स्नेह दिया, उन्हें आधि-व्याधि से बचाया और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्हें मार्गदर्शन दिया। बापू भानुदत्त जी इतने भक्त वत्सल थे कि कई बार भक्तों को आने वाले खतरों की पूर्व चेतावनी भी दे दिया करते थे। बापू जी त्रिकालदर्शी थे। भूत, भविष्य वर्तमान कुछ भी उनसे छुपा नहीं था, ऐसे में यथासम्भव उनका यह प्रयत्न होता था कि उनके भक्तों पर आने वाले कष्टों का वेग तिल मात्र ही रह जाये। प्रायः भक्त जन उनके द्वारा उच्चारित कथन का रहस्य तुरन्त समझ नहीं पाते थे और जब समझते थे तब आश्चर्यचकित हो, यह सोचने पर विवश हो जाते थे कि बापू जी को तो उनके जीवन में पल-पल घटने वाली सभी बातों का पूर्व ज्ञान है।

ऐसी ही एक घटना है भक्त नन्द लाल जी की छोटी बेटी नीलम की। जालन्धर निवासी नीलम एक बार बापू जी के पास गई। बापू जी ने उसे देख कर कहा कि तुम अपना परीक्षण करवाओ, कहीं तुम्हें टी०बी० तो नहीं है। नीलम ने इस बात की ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया

क्योंकि वह स्वयं को स्वस्थ महसूस करती थी। उसने अपना कोई परीक्षण नहीं करवाया। इस प्रकार एक वर्ष बीत गया। एक वर्ष बाद उसे हल्का बुखार रहने लगा और कमर में निरन्तर दर्द रहने लगा। जब उसने डाक्टर के कहने पर एम० आर० आई० करवाई तो उसे हड्डियों की टी० बी० निकली। जब तक उसे इस बीमारी का पता चला था तब तक उसकी रीढ़ की हड्डी के तीन मनके गल चुके थे। इसके बाद डाक्टर ने कहा कि उसे बिस्तर पर सीधा ही लेटना है, शौचादि भी वहीं करना है और पासा भी नहीं पलटना है। नीलम को इस प्रकार कई दिन बीत गए। वह बहुत रोती थी और बापू जी से प्रार्थना करती थी कि बापू जी ! कृपा करो और मुझे वापिस अपने पैरों पर खड़ा करो।

बापू भानुदत्त जी ने उसकी हालत देख कर कहा कि घबराने की कोई बात नहीं है। छः महीने बाद तुम चलने लगोगी। फिर बापू जी ने उसकी बड़ी बहिन सुदेश को कहा कि जब नीलम के सन्तान हो तो हमें बता देना। सुदेश ने सोचा कि अभी तो नीलम बिस्तर पर पड़ी दर्द से चीखती रहती है और महाराज जी

बच्चे की बात कर रहे हैं। इस घटना के कुछ समय बाद ही बापू जी ब्रह्मलीन हो गए। छः महीने बीतने ही वाले थे। एक दिन नीलम दुःखी हो कर सोचने लगी कि बापू जी ने तो कहा था कि मैं छः महीने में चलने लगूंगी लेकिन अभी तक मैं बिस्तर पर हा हूँ और बहुत खराब हालत में हूँ। जब छः महीने बीतने में एक दिन रह गया तब नीलम के घर वाले उसे स्ट्रेचर पर ही डॉक्टर के पास

ले गए। उस दिन डॉक्टर ने नीलम का परीक्षण किया और कहा कि आश्चर्यजनक रूप से नीलम की हालत में बहुत सुधार है। इसके बाद उसने नीलम को उठा दिया और कहा कि अब तुम चल सकती हो। बापू भानुदत्त जी ने जो छः माह का समय दिया था, उन छः महीनों में मानो नीलम के भयंकर कष्टों को कम से कम कर उसे भयानक रोग से मुक्ति दिलाई गई। बापू जी ने तो एक वर्ष पहले ही नीलम को बता दिया था कि टी०बी० का चैक आप करवा लो परन्तु नीलम को समझने में थोडा समय लग गया।

जहाँ तक बच्चे का प्रश्न है वह वायदा बापू भानुदत्त जी ने बापू हरभगवान जी के रूप में पूरा किया। बापू हरभगवान जी ने नीलम को पुत्र-प्राप्ति का आशीर्वाद दिया और समय आने पर उसे एक सुन्दर पुत्र की प्राप्ति हुई। बापू भानुदत्त जी ने नीलम की बड़ी बहिन सुदेश की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या का निराकरण भी अपनी करुण दृष्टि से किया था। जालन्धर निवासी सुदेश के गर्भाशय के मुख पर जख्म हो गया था। डॉक्टर का कहना था कि इस समस्या को और आगे बढ़ने से रोकने के लिए आपरेशन करना पड़ेगा। सुदेश जी अपने पति श्री सतीश अरोड़ा जी के साथ बापू भानुदत्त जी के पास गई और अपना कष्ट बताया। यह सुन कर बापू जी जमीन पर लेट गए और एक योगासन बताने लगे। तत्पश्चात् उन्होंने सुदेश को कहा कि तुम यह आसन करो और कुछ दिनों बाद किसी बड़े डाक्टर को दिखा लेना। सुदेश जी ने

वैसा ही किया। कुछ दिन पश्चात् जब उन्होंने जालन्धर की एक बहुत प्रतिष्ठित डॉक्टर सुषमा चावला को दिखाया तो उसने कहा कि आप को तो कुछ भी नहीं है। आप एकदम ठीक हो। इसके बाद उसने कुछ

ताकत की दवाईयाँ लिख कर दी और उन्हें घर भेज दिया। बापू भानुदत्त जी का स्नेहिल हृदय अपने भक्तों के कल्याण के लिए सदैव तत्पर रहता था। सुदेश जी की वह बीमारी जो भविष्य में कोई भी रूप ले सकती थी, उस बीमारी को बापू जी ने खेल-खेल में ही समाप्त कर दिया।

बापू जी ने अपने भक्तों पर आने वाले किसी भी कष्ट को अधिक समय तक चलने नहीं दिया। एक बार सन् 1997 में दिल्ली निवासी राजीव गुम्बर के पुत्र राघव का तीन वर्ष की आयु में हर्निया का आपरेशन होना था। राजीव जी इस बात से बहुत घबरा रहे थे कि इतने छोटे बच्चे की सर्जरी किस प्रकार होगी। बहुत सोच विचार के बाद राघव के दादाजी चौधरी अविनाश चन्द्र ने दिल्ली के कलावती अस्पताल में सर्जरी करवाने का निर्णय किया। उन्हीं दिनों बापू भानुदत्त जी दिल्ली पधारे। सर्जरी से एक दिन पहले राजीव जी राघव को लेकर ढक्का मन्दिर बापू भानुदत्त जी से आशीर्वाद लेने हेतु गए। वहाँ जाने पर पता चला कि बापू जी तो गाज़ियाबाद चले गए हैं । राजीव जी यह सोच कर घबराए कि बापू जी का आशीर्वाद तो मिल नहीं पाया, पता नहीं अब क्या होगा? अगले दिन जब वह राघव को लेकर अस्पताल गए तो

डॉक्टर ने राघव की सर्जरी करने से मना कर दिया क्योंकि राघव को जुकाम था। डॉक्टर ने सर्जरी के लिए नई तिथि दे दी।

जब बापू जी गाज़ियाबाद से वापिस आए तब राजीव अपने पुत्र को लेकर बापू जी से आशीर्वाद लेने फिर से ढक्का मन्दिर गए। बापू जी ने राघव के हर्निया वाले स्थान पर हाथ फेरा और कहा कि जाओ, आपरेशन हो गया, कल डॉक्टर से आपरेशन करवा लेना, बापू जी कृपा करेंगे। अगले दिन बापू जी का रक्षा का धागा और पवित्र झंडा साहिब का वस्त्र राघव की बाँह पर बाँध कर उसे सर्जरी के लिए ले जाया गया। बापू जी की कृपा से आपरेशन ठीक हो गया। जब शाम को राघव को होश आया तब उसने अपने पिता जी को बताया कि जब उसे आपरेशन थियेटर में ले जाया गया तब उसने देखा कि सभी डॉक्टर साथ वाले कमरे में बैठ कर चाय पी रहे थे।

इतनी देर में बापू भानुदत्त जी वहाँ आए और उन्होंने डॉक्टर का हरा कोट पहन लिया और फिर उसे चाकू लगाया, उसके बाद वह बेहोश हो गया और फिर उसे कुछ याद नहीं रहा। अपरेशन के बाद राघव एक दम ठीक हो गया और उसे फिर कभी हर्निया की समस्या नहीं हुई। राघव का यह दृष्टान्त बिलकुल सत्य है। तीन वर्ष का बच्चा न तो असत्य बोल सकता है और न ही कल्पनाएं गढ़ सकता है। राजीव जी के अनुसार राघव ने उस समय बोलना सीखा ही था और बहुत

अधिक नहीं बोल सकता था, ऐसे में उसने जो वृत्तान्त वबताया वह स्पष्ट संकेत करता है कि स्वयं बापू जी ने ही वह सर्जरी की थी और अपने प्यारे बच्चे को रोग-मुक्त किया था।

बापू जी की अन्तदृष्टि की सीमा का अनुमान कोई नहीं लगा सकता था। बापू जी को सभी भक्तों के कार्य-कारण श्रृंखला का पूर्वज्ञान था। वह जानते थे कि कर्म की गति अकाट्य है, महान् है। कर्म यदि सकाम हों तो उनका फल भोग भी अवश्य ही करना पड़ता है। एक ऐसा मनुष्य जो इस कार्य-कारण श्रृंखला के रहस्य को नहीं जानता, कई बार, कई जन्मों के बाद भी इस दुरुह चक्र में फंस सकता है परन्तु यदि गुरु कृपा हो तो उन दुष्कर्मों का भोग थोड़ा कष्ट दे कर समाप्त हो जाता है। बापू भानुदत्त जी से सम्बन्धित अनेक दृष्टान्तों में हम यह देखेंगे कि किस प्रकार बापू जी ने अपने भक्तों का कर्म-फल पर्वताकार से कण मात्र बना कर उन्हें उस संकट से निकाल लिया।

प्रस्तुत कुछ दृष्टान्त एक ऐसी भक्त के बारे में हैं जिन्हें बापू जी का वरद्-हस्त प्राप्त था। दिल्ली निवासी रेखा और उनके पति श्री अनिल कुमार चुघ पर बापू भानुदत्त जी की विशेष कृपा थी। रेखा जी की बापू जी से दीक्षित होने की बहुत इच्छा थी। वह प्रायः अपने पति से कहा करती कि हमें बापू जी से नाम-दान के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। एक बार बापू जी ढक्का आए हुए थे। रेखा और अनिल जी

उनके दर्शनार्थ ढक्का स्थित मन्दिर गए। रेखा ने अनिल जी को कहा कि आज तो आप को बापू जी से दीक्षा के लिए कहना ही पड़ेगा। इतनी देर में ही संगत की भारी भीड़ में भी पीछे बैठे रेखा व अनिल जी को बापू जी ने आगे बुला लिया।

बापू जी ने स्वयं ही अनिल जी से पूछा, "रेखा क्या कह रही है?" फिर स्वयं ही अपने प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा, "नाम के लिए कह रही है? कोई बात नहीं, हम तुम्हें कल ही नाम देंगे।" अगले दिन बृहस्पति था। एक भक्त महिला वहाँ खड़ी थी। उसने कहा, “बापू जी, आप तो वीरवार को धागा भी नहीं देते, फिर आप इन्हें नाम कैसे दे सकते हैं?" बापू जी ने कहा, "इनके लिए कोई शुभ, अशुभ का विचार नहीं है। इनके लिए सब शुभ ही शुभ है।" इसके बाद अगले दिन ब्रह्म-मुहूर्त में बापू जी ने रेखा और अनिल जी को नाम दान दिया।

दीक्षा के उपरान्त दोनों को बहुत से अनुभव हुए जो अविस्मरणीय रूप से यह बताते हैं कि बापू जी ने उनका समस्त भार किस प्रकार अपने पर ले लिया था और कैसे पग-पग पर उनकी रक्षा की। एक बार बापू जी दिल्ली ढक्का मन्दिर आए हुए थे। रेखा जी भी बापू जी के दर्शनार्थ वहाँ गई। अचानक बापू जी ने रेखा को बुला कर कहा, "पण्डितों के पास जाती है।" रेखा ने उत्तर दिया, "नहीं महाराज जी। मैं कभी पण्डित के पास नहीं गई।"

बापू जी ने कहा, "नहीं जाती तो चली जाएगी।" रेखा ने फिर कहा, "नहीं महाराज जी, मैं ऐसे कभी नहीं करूँगी।" बापू जी ने हँस कर कहा, "अच्छा, अगर किसी पण्डित के पास गई तो स्वयं चले जाना परन्तु मेरे बेटे (अनिल) को मत ले जाना।"

इस वार्तालाप के बाद रेखा घर आ गई और उसकी सामान्य दिनचर्या आरम्भ हो गई। कुछ दिनों बाद रेखा की किसी सहेली के घर चोरी हो गई। वह सहेली रेखा को ले कर एक पण्डित के पास चली गई। पण्डित ने अपनी गणना कर यह बता दिया कि चोरी किसने की है। उसने बताया कि इस चोरी में किसी घरवाले का ही हाथ है। कुछ समय पश्चात् जब चोरी करने वाले का पता चला तब यह ज्ञात हुआ कि वास्तव में ही किसी परिवार के सदस्य ने ही चोरी की थी। इस घटना के कुछ महीनों के भीतर रेखा जी

के पति को कारोबार में कुछ घाटा हो गया। रेखा जी के मन में तुरन्त उस पण्डित का ख्याल आया और उन्होंने अपने पति को यह विश्वास दिला कर कि उक्त पण्डित बहुत विद्वान है, उन्हें वहाँ ले गई।

तब तक रेखा जी के मन में एक बार भी बापू जी की चेतावनी की याद नहीं आई जो बापू जी ने उन्हें दी थी। उस पण्डित ने उन की समस्या को दूर करने का जो भी तरीका बताया उससे अनिल जी को लाभ होने की बजाय बहुत ज़्यादा हानि हुई।

फिर रेखा जी को बापू जी की दी पूर्व चेतावनी का स्मरण हो आया। उन्हें अपनी भूल का एहसास हुआ और उन्होंने बापू जी से मिल कर उनसे क्षमा-प्रार्थना की। बापू जी ने रेखा जी को समझाते हुए कहा, "मैने इसीलिये तुम्हें समझाया था कि पण्डितों के पास मत जाना। अब चिन्ता त्याग दो। बापू जी फिर से सब बना देंगे।"

बापू भानुदत्त जी की कृपा से रेखा जी का जीवन फिर से व्यवस्थित होने लगा और आज बापू की कृपा से उनके दोनों पुत्र सौरभऔर साहिल चुग अपने-अपने कार्य क्षेत्र में पूर्णतया सफल हैं। रेखा जी स्वभाव से भोली और दिल की बहुत नेक हैं। एक बार बापू भानुदत्त जी रेखा के घर गए। रेखा प्रसन्न मन से बापू जी के लिए भोजन की व्यवस्था कर रही थीं। उनकी एक सहेली रसोई में पूरियां तल रही थी। बापू जी घर में चहलकदमी करते हुए रसोई में चले गए और रेखा से पूछने लगे कि यह कौन है? रेखा जी ने बताया कि यह उनकी सहेली है। बापू जी ने कहा, " सहेली लगती तो नहीं है।" जब बापू जी यह बात कर रहे थे तब उनके स्वर मे हंसी-मजाक का पुट था। उन्होंने फिर थोड़ी देर बाद कहा, "यह तुम्हें धोखा देगी।"

इसके बाद बापू जी तो चले गये लेकिन उनके कहे शब्दों का अर्थ रेखा जी को बाद में समझ आया। थोड़े महीनों में रेखा को पता चला कि जो बुटीक वह चलाती थी, उनकी वही सहेली उन्हीं के

बुटीक से कपड़ा चुरा कर और उन्हीं के कारीगर से काम करवा कर स्वयं धन कमा रही थी और रेखा जी को धोखा दे रही थी।

बापू भानुदत्त जी ने पहले ही यह जान लिया था कि उनकी सहेली के इरादे ठीक नहीं हैं और वह रेखा को हानि पहुँचा सकती है। उन्होंने रेखा को पहले ही चेतावनी दे दी थी। रेखा जी बापू जी से बहुत स्नेह करती थीं, और बापू जी के निर्देशानुसार जीवन बिताने का प्रयास करती थी। एक बार किसी पड़ोसन ने रेखा जी को किसी सत्संग में जाने के लिए कहा। रेखा उसके साथ चली गई और सत्संग में जा कर भगवान् के नाम में मस्त हो गई। उस सत्संग में भक्तों ने अपने गुरु की तस्वीर लगाई हुई थी। वह सत्संग प्रति सप्ताह हुआ करता था। रेखा जी कई बार वहाँ गई और जाने से पहले यह सोचा करती थी कि ईश्वर का नाम तो एक ही है। इससे क्या अन्तर पड़ता है कि कहाँ जाया जा रहा है। ऐसा सोच कर वह वहाँ चली जाती थी और आँखे बन्द कर भाव विभोर हो बापू जी का नाम लिया करती।

एक दिन जब वह सत्संग में बापू जी के ध्यान में मग्न थी तब उन्हें ऐसा लगा कि सामने रखी भक्तों के गुरु की तस्वीर में से निकल कर बापू भानुदत्त जी महाराज भीड़ को चीरते हुए आए और बोले, "अपना पियो अपना ही हुँदा ए।" यह घटना 1986 की है। इस अनुभव के बाद रेखा जी को यह अहसास हुआ कि जिन गुरुओं ने

अपने शिष्यों का भार ग्रहण किया है वे गुरु अपने शिष्यों की प्रत्येक मनोवृत्ति और आचरण को ले कर कितने सतर्क रहते हैं और समय रहते ही उन्हें आगाह कर देते हैं। इस घटना के दो महीने बाद बापू भानुदत्त जी दिल्ली आए और एक प्रवचन में किसी प्रसंग में अपनी आपबीती सुनाई। बापू जी एक बार दक्षिण भारत में किसी बहुत बड़े संत के प्रवचन सुनने गए। पंडाल के बाहर कुछ पुस्तकें रखी थीं और बापू जी पंडाल के अन्दर न जा कर बाहर ही रुक गए और एक पुस्तक उठा कर ज्यों ही उसे खोला त्यों ही उसके पृष्ठ पर बड़े-बड़े अक्षरों में उभर आया, "अपना बाप अपना ही होता है।" ऐसा पढ़ते ही बापू जी ने पुस्तक बन्द कर दी और पंडाल में न जा कर वापिस अपने घर लौट आये। जिस समय की यह घटना है उस समय बापू जी की गद्दीनशीनी नहीं हुई थी।

उस समय रेखा जी भी वहीं बैठी थीं। उन्हें तुरन्त स्मरण हो आया कि दो महीने पहले बापू भानुदत्त जी ने यही शब्द उन्हें भी कहे थे।

वास्तव में बापू जी के कहने का तात्पर्य यह नहीं था कि हमें दूसरे संतों के प्रति श्रद्धाभाव नहीं रखना चाहिए और उनके प्रति कट्टरपन प्रदर्शित कर कटुता और अनादर की भावना से भर जाना चाहिए। ईश्वर ने सभी प्राणियों की सर्वांगीण उन्नति के लिए जिन महान् गुरुओं की नियुक्ति की है वे गुरु प्रत्येक मनुष्य के स्वभाव दुर्बलताओं, सफलताओं और वृत्ति को देख कर ही उन्हें उस रास्ते पर चलायमान करते हैं, जिसमें

शिष्य का कल्याण निहित होता है। प्रारम्भिक अवस्था में शिष्य इतना विकसित नहीं होता कि वह विभिन्न गुरुओं के उच्च भाव को समान रूप से ग्रहण कर सके।

ऐसी अविकसित अवस्था में यदि वह अलग-अलग स्थानों पर जा कर सभी से थोड़ा-थोड़ा ग्रहण कर अपने जीवन को दिशा देने का प्रयत्न करता है तो उसका परिणाम भ्रामक ही होता है। अनिश्चय की स्थिति में रहने से उसका विश्वास और एकाग्रता एक स्थान पर स्थिर नहीं रह सकती। गुरु जब शिष्य का भार ग्रहण करते हैं, तब शिष्य को भी उनके प्रति पूर्ण रूपेण समर्पित रहना होता है। जिस प्रकार एक छोटा बच्चा अपने माता-पिता पर पूर्णतया निर्भर रह उनके स्नेह, कृपा और मार्गदर्शन का पात्र बना रह कर अपना जीवन व्यतीत करता है और कभी यह प्रश्न नहीं करता कि यही मेरे माता-पिता क्यों है? वह ईश्वर प्रदत्त अपने माता-पिता पर गर्व ही करता है। ठीक उसी प्रकार दयालु परमात्मा जिस महान् आत्मा को हमारी आध्यात्मिक उन्नति के लिए नियुक्त करते हैं, शिष्य को भी उन पर पूर्ण विश्वास और गर्व करते हुए अपना जीवन उनकी छत्र-छाया में बिताना चाहिए।

मनुष्य को यह याद रखना चाहिए कि विश्व में जितनी भी ईश्वरतुल्य आत्माएं हैं उन सभी के प्रति श्रद्धा और आदर भाव रखे परन्तु अपने गुरु को साक्षात् परमेश्वर जान कर उनके प्रति यथेष्ट भक्ति

भाव रखे। भगवान् शिव ने गुरु महिमा के विषय में कहा है-

भवारण्यप्रविष्टस्य दिड्.मोहभ्रान्तचेतसः । येन सन्दर्शितः पन्थाः तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

अर्थात् संसार रुपी अरण्य में प्रवेश करने के बाद दिग्मूढ़ की स्थिति में जब कोई मार्ग दिखाई नहीं देता है, चित्त भ्रमित हो जाता है, उस समय मार्ग दिखाने वाले श्री गुरुदेव को नमस्कार है।

बापू भानुदत्त जी ने अपने भक्तों को सदैव ही सही मार्ग दिखाया है और उनके चित्त की इधर-उधर के व्यर्थ के भटकावों से भी रक्षा की है। जब कभी भी किसी भक्त का मन किसी कारणवश व्यथित होता था, बापू जी उस का हौसला बढ़ा कर उसे आशीर्वाद दे उस की समस्या का समाधान किया करते थे। एक बार फगवाड़ा निवासी प्रोफैसर अनिल शर्मा ने हरगोबिन्द नगर में एक मकान किराए पर ले कर उस में एक स्कूल शुरु किया। वह स्कूल बापू गुरदास राम जी के नाम पर था। स्कूल में दाखिले के लिए जो लोग रजिस्ट्रेशन के लिए अपने बच्चों का नाम लिखवा कर गए, उनमें से किसी ने भी अपने बच्चों को उस स्कूल में नहीं भेजा। यह सब देख कर प्रो० शर्मा बहुत चिन्तित हो गए और सोचने लगे कि इस प्रकार तो उनका स्कूल चलाने का स्वप्न केवल स्वप्न ही बन कर रह जाएगा। परेशानी की अवस्था में उन्होंने बापू जी

से बात की। बापू जी ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा, "शर्मा जी, आप घबराये नहीं, यह तो बापू जी का अपना स्कूल है। बापू जी स्वयं ही एडमिशन करवायेंगे।"

इधर बापू भानुदत्त जी ने यह अरदास की और उधर स्कूल में प्रवेश पाने के लिए लोगों का तांता लग गया। अब की बार जो लोग आये थे वे सब के सब ऐसे थे जिन्होंने पहले फार्म भर कर रजिस्टेशन नहीं करवाया हुआ था। वे सीधे ही अपने बच्चों की एडमिशन करवाने के लिए आ गये थे। देखते ही देखते स्कूल में विद्यार्थियों की संख्या उम्मीद से भी बहुत अधिक हो गई। विद्यार्थियों की संख्या इतनी बढ़ गई

कि प्रो० शर्मा को जी॰टी॰ रोड पर कोई स्थान देख कर वहाँ स्कूल शुरु करना पड़ा। सन् 1992 से लेकर 2003 तक स्कूल उस किराये की जगह पर चलता रहा। इसी बीच एक बार बापू भानुदत्त जी महाराज ने प्रो० शर्मा को कहा कि जी॰टी॰ रोड के स्थान पर आप होशियारपुर रोड पर कोई स्थान देखो और वहाँ अपना स्कूल खोलो। आते जाते हम भी वहाँ चक्कर लगा लिया करेंगे।

इसके अतिरिक्त बापू भानुदत्त जी की हार्दिक इच्छा यह भी थी कि वैदिक संस्कृति की शिक्षा के लिए भी उस स्कूल में समुचित व्यवस्था की जाए। बापू जी ने जब यह बात कही थी उस समय प्रो० शर्मा के मन में दूर-दूर तक होशियारपुर रोड पर स्कूल खोलने का कोई

इरादा नहीं था। समय ने कुछ ऐसी करवट ली कि 17 जुलाई 2003 को जीटी रोड पर स्थित स्कूल को कुछ शरारती तत्त्वों ने खाली करवा लिया और स्कूल की सम्पत्ति को भी नुकसान पहुँचाया।

उस समय स्कूल को फगवाड़ा स्थित स्वामी नरहरिदास जी महाराज जी के स्थानीय स्कूल में कुछ कमरों में स्थानांतारित करना पड़ा। तत्पश्चात् प्रो० शर्मा को बापू भानुदत्त जी का कथन याद आया जो उन्होंने सरसरी तौर पर ही कहा था कि होशियारपुर रोड पर स्कूल बना लो। प्रो० शर्मा ने उस क्षेत्र में जमीन खोजनी आरम्भ की और स्कूल निर्माण के लिए उपयुक्त स्थान मिलते ही वहाँ स्कूल बना लिया, हालाँकि बापू भानुदत्त जी उस समय तक महाप्रयाण कर चुके थे परन्तु स्कूल वहीं बना जिसका भविष्य कथन उन्होंने पहले ही कर दिया था। आज जी०डी० आर० कान्वेंट सी.सै. स्कूल के नाम से यह स्कूल ग्रामीण बच्चों की शिक्षा के लिए दिन-रात प्रयासरत है। बापू जी के महान् आशीर्वाद से इस स्कूल की एफिलिएशन सी०बी० एस०ई० से हुई है और यह स्कूल बापू भानुदत्त जी के आशीर्वाद का मूर्त रूप है और फगवाड़ा के प्रतिष्ठित विद्यालयों में इसका अग्रणी स्थान है।

बापू भानुदत्त जी की प्रो० शर्मा के पुत्र अमित शर्मा पर भी विशेष कृपा थी। एक बार 1997 में अमित शर्मा 'पंजाब केसरी' जो कि उत्त भारत का एक लोकप्रिय समाचार-पत्र है, के लिए शिक्षा पर एक

494 सप्लीमेंट निकाल रहे थे। उस के लिए अमित शर्मा ने सम्पादक को यह कहा था कि वह इस सप्लीमेंट के लिए डेढ लाख के इश्तहार इकट्ठे कर देंगे। सप्लीमेंट छपने के एक दिन पहले तक लिखित सामग्री की औपचारिकताएं तो पूरी हो गई थी परन्तु इश्तहार डेढ लाख के स्थान पर एक लाख से भी कम ही इकट्ठे हो पाये थे। अमिट जी इस बात से बहुत परेशान थे। उन्होंने तुरन्त बापू भानुदत्त जी को फोन किया और अपनी परेशानी बताई। बापू जी ने फोन पर जो कहा वह अमिट रूप से अमित के मानस-पटल पर अंकित हो गया। बापू जी ने कहा, "बस इतनी सी बात के लिए परेशान है। तेरे लिए तो जान भी हाज़िर है। तू जान भी माँगे तो दे देंगे। अब सोचना छोड़ और बैठ कर ओम-ओम कर।"

अमित एक स्थान पर बैठ गए और ओम-ओम करने लगे। इस प्रकार आधा घण्टा बीत गया। कुछ समय पश्चात् एक व्यक्ति अमित के पास आया और बोला कि आप चल कर अपना सप्लीमेंट चैक कर लीजिए, आपके इश्तहार तो साढे चार लाख से भी ऊपर हो गए हैं। यह सुन कर सहसा अमित को विश्वास नहीं हुआ और उनकी आँखों में खुशी के मारे आँसू आ गए कि आधे घण्टे में ही सप्लीमेंट के लिए साढ़े चार लाख रुपये के इश्तहार आ गये हैं। जब अमित इश्तहार विभाग गए तो पता चला कि वहाँ अज्ञात व्यक्तियों ने स्वयं ही आ कर पूछा कि सुना है आप शिक्षा के ऊपर एक सप्लीमेंट देना चाहते हैं। हमारा इश्तहार भी इसमें दे दीजिए, इस प्रकार कह कर उस सप्लीमैंट के लिए इश्तहार

दिए। जो व्यक्ति स्वयं ही इश्तहार देने आये थे उन व्यक्तियों से अमित कभी मिले भी नहीं थे। उस समय का यह सप्लीमेंट पंजाब केसरी का तब तक का सबसे बड़ा सप्लीमेंट था। उसे छापने के लिए पंजाब केसरी वालों को दो पेज अतिरिक्त भी लगाने पड़े थे। इस प्रकार बापू भानुदत्त जी की असाधारण कृपा से अमित का कार्य बहुत ही सुन्दर तरीके से सम्पन्न हुआ। बापू भानुदत्त सदृश महापुरुष अपनी इच्छा शक्ति से किसी के भी मन में कोई भी संकल्प उपजा सकते हैं और सृष्टि में किसी भी मानव मन को सन्देश भेज कर भी कार्य के लिए प्रेरित कर सकते हैं।

बापू जी की दिव्य दृष्टि असीम थी। उनके भक्तों को उनकी इस शक्ति के बारे में तब ज्ञात होता था जब थोड़े समय बाद उनके कथनानुसार सारा घटनाक्रम घटित होता था। रुद्रपुर निवासी श्री चरण दास छाबड़ा बापू जी के अनन्य भक्त हैं। वह धान का काम करते थे। उनका कार्य हरियाणा में पुण्डरी नामक स्थल पर स्थित निर्यातकों के साथ चलता था। इस कार्य के लिए धन का जो भी भुगतान करना

पड़ता था वह सारा नकद में ही करना पड़ता था। पहले रुद्रपुर उत्तर प्रदेश में था और वहाँ के नियमों के हिसाब से धान को राज्य से बाहर ले जाने की अनुमति नहीं थी, फिर भी काम के चलते चरण दास छाबड़ा जी को यह खतरा उठाना ही पड़ता था। एक बार बापू भानुदत्त जी उनके घर आए हुए थे।

श्री नारायण चरितामृत

बातों-बातों में बापू जी ने चरण दास जी से उनके कार्य के सम्बन्ध में पूछा तो उन्होंने बताया कि बापू जी, हमारा व्यापार तो अच्छा चलता है परन्तु सरकारी नीतियों के चलते इस कार्य में खतरा है परन्तु हमारे पास और कोई विकल्प भी नहीं है। चरण दास की यह बात सुन कर बापू जी ने कहा कि अगर ऐसी बात है तो ऐसा काम बन्द हो जायेगा और कुछ ऐसा हो जाएगा कि कोई खतरा ही नहीं रहेगा। बापू जी की बात सुन कर चरण दास जी ने सोचा कि बापू जी ने पता नहीं ऐसा क्यों कहा कि काम बन्द हो जायेगा।

490

बापू जी के इस कथन का मर्म वह समझ नहीं सके। बापू जी के उस कथन का राज़ उनकी समझ में तब आया जब एक वर्ष के अन्दर ही खुशी राम बिहारी लाल निर्यातकों की कम्पनी ने उत्तर प्रदेश के गाज़ियाबाद के पास दादरी में मिल लगाने का कार्य शुरु कर दिया। इस मिल के लगने के बाद पैसा ड्राफ्ट द्वारा आने लगा और उनका काम कई गुना बढ़ गया। इससे उनके काम में किसी भी प्रकार का कोई खतरा नहीं रहा। बापू भानुदत्त सरीखे महान् संत अपनी करुण दृष्टि से असम्भव को भी सम्भव कर सकते हैं। अपनी प्रिय सन्तानों के लिए इस प्रकार के घटनाक्रम को जन्म देना उन के लिए तनिक भी कठिन नहीं है। अपने बच्चों पर आने वाली विपदाओं को ताड़ कर वह पहले ही उसका निराकरण कर देते हैं।

श्री नारायण चरितामृत

497

एक बार बापू भानुदत्त जी के सुपुत्र सत्यवीर शर्मा शाम के समय अपने कार्य स्थल से वापिस बड़ूं गाँव (हिमाचल प्रदेश) आ रहे थे।

वह स्कूटर पर थे तभी अचानक किसी ने उन्हें रोका और चाय पीने के लिए दो रुपये माँगे। सत्यवीर जी ने अपनी जेब टटोली और उसे दो रुपये दे दिये। इसके पश्चात् जैसे ही वह स्कूटर फिर से चला कर घर जाने लगे वह रास्ता भूल गए। न जाने किस अदृश्य शक्ति से सम्मोहित हो कर वह एक अलग-थलग से सुनसान रास्ते पर स्कूटर के ऊपर आगे बढ़ते रहे। तभी उन्हें महसूस हुआ कि उन्हें नींद आ रही है।

वह स्कूटर रोक कर एक तरफ बैठे और वहीं सो गए। रात के ग्यारह बज गए और सत्यवीर वैसे ही सर्दी में सोते रहे। उधर घर में सभी पारिवारिक सदस्य उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उस दिन बापू भानुदत्त जी भी अपने परिवार से मिलने वहाँ गए हुए थे। सभी को चिन्ता होने लगी कि आखिर सत्यवीर कहाँ चले गए। इतनी देर में वहाँ पहाड़ी के पास सो रहे सत्यवीर को ऐसा लगा कि किसी ने बहुत गरजती हुई आवाज में उन्हें नींद से जगाते हुए कहा है "उठ"। जब सत्यवीर ने हड़बड़ा कर अपनी आँखे खोली तब उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ मानो वह उनके पिता बापू भानुदत्त जी की आवाज़ थी। वह तुरन्त उठ खड़े हुए और उन्हें बहुत सर्दी महसूस होने लगी। उन्होंने खड़े हो कर आगे देखा तो उनकी रूह काँप उठी। आगे तीन-चार कदम की दूरी पर एक गहरी खाई थी जिसमें गिरने पर बचने की कोई सम्भावना नहीं थी।

श्री नारायण चरितामृत

सत्यवीर को तब ज्ञात हुआ कि स्वयं बापू भानुदत्त जी ने ही अचानक उन्हें नींद में ला कर स्कूटर रुकवा दिया अन्यथा उनका उस खाई में गिरना निश्चित था। बाद में जब वह घर लौटे और बापू जी को सारा वृत्तान्त सुनाया तब बापू जी ने कहा कि कोई बात नहीं, ऐसा कभी-कभी हो जाया करता है।

वास्तव में हिमाचल प्रदेश देव-भूमि है। वहाँ सिद्धों, फकीरों जैसी सात्विक शक्तियों के साथ-साथ तामसी शक्तियों का भी वास है। ऐसी ही किसी तामसी वृत्ति वाली शक्ति ने सत्यवीर से उन दो रुपयों के साथ ही मानो उनकी जीवन उर्जा को ही छीन लेना चाहा था इसलिये सत्यवीर एक अनजाने पहाड़ी रास्ते पर सरपट स्कूटर दौड़ा रहे थे, परन्तु बापू जी के रहते यह किस प्रकार सम्भव था कि कोई उनकी सन्तान को हाथ भी लगा दे, इसलिये सत्यवीर को ठीक उसी समय नींद आई, जब खाई तक पहुँचने में दो-तीन कदम ही शेष थे। साक्षात् ईश्वर तुल्य योगी के आगे कोई तामसी शक्ति कुछ नहीं कर सकती। असम्भव और अकल्पनीय जैसा कोई भी शब्द उनके शब्द कोष में नहीं होता है।

एक बार बापू जी दिल्ली में किसी शादी में गये हुए थे। वहाँ रुद्रपुर के पास स्थित एक शहर किच्छा निवासी श्री ओम तनेजा भी आए हुए थे। उनकी तीन बेटियां थी और तीनों आपरेशन से पैदा हुई

थी। ओम और उनकी पत्नी पूनम यह चाहते थे कि उन्हें पुत्र प्राप्ति भी हो परन्तु डाक्टर ने उन्हें और सन्तान पैदा करने के लिए मना किया था। ओम तनेजा के मामा श्री हरभगवान जी (वर्तमान गद्दीनशीन नन्दाचौर) ने ओम तनेजा के लिए बापू भानुदत्त जी से प्रार्थना करते हुए कहा कि महाराज जी, इस पर दया कीजिए। यह सुन कर बापू जी ने कहा, "चिन्ता मत करो, इनके दो पुत्र होंगे।" उस समय ओम तनेजा ने सोचा कि डॉक्टर तो एक सन्तान के लिए ही मना कर रहे हैं, क्या ऐसा सम्भव हो सकता है? ओम तनेजा को बहुत शीघ्र ही अपने इस प्रश्न का उत्तर मिल गया। समय आने पर उन्हें एक नहीं अपितु दो जुड़वाँ पुत्रों की प्राप्ति हुई।

बापू जी ने कुछ ऐसी ही कृपा जालन्धर निवासी कश्मीर लाल अरोड़ा और उनकी पत्नी रेनू पर की थी। कश्मीर लाल के कोई सन्तान नहीं थी। उनकी माता जमुना देवी उन्हें बापू भानुदत्त जी के पास ले कर गई और बापू जी से कृपा करने की प्रार्थना की। बापू जी ने आशीर्वाद देते हुए कहा कि चिन्ता बिलकुल नहीं करनी। अभी तो बच्चों की लाईन लगनी है। बापू जी का यह वचन बहुत शीघ्र फलीभूत हुआ। रेनू ने अगले नौ महीनों में एक पुत्र को जन्म दिया। इसके बाद उन्हें एक पुत्री हुई। वह पुत्री अभी एक वर्ष की भी नहीं थी कि उन्हें दो जुड़वाँ पुत्रों की प्राप्ति हुई। जुमना देवी के दूसरे पुत्र जगदीश लाल और उनकी पत्नी सुनीता के भी सन्तान नहीं हो रही थी। जमुना देवी उन्हें भी बापू

500 जी के पास ले कर गई और बापू जी के आशीर्वाद देने के नौ महीने बाद ही उन्हें पुत्री की प्राप्ति हुई। इसके बाद जब सुनीता दोबारा गर्भवती हुई तो जगदीश लाल उन्हें ले कर बापू जी के पास आए और पुत्र प्राप्ति की इच्छा प्रकट करते हुए उनसे पुत्र होने की दवाई माँगी। महाराज जी बोले, "दवाई का समय तो निकल चुका है, परन्तु तुम चिन्ता न करो। हम बापू जी से दुआ करेंगे। दुआ दवा से अधिक शक्तिशाली होती है। जब तुम्हारा पुत्र उत्पन्न होगा तब तुम अखण्ड पाठ रखवा देना।"

बापू जी ने जैसा कहा था वैसा ही हुआ। जगदीश लाल के घर बेटा हुआ और उनके जन्म पर अखण्ड पाठ भी रखवाया गया। जमुना देवी की सभी सन्तानों पर ही बापू जी की कृपा रही है। एक बार बापू

भानुदत्त जी महतपुर गए हुए थे और नन्दाचौर वापिस आने के समय जमुना देवी के पुत्र गुरुबख्श लाल अरोड़ा भी बापू जी के साथ जा रहे थे। रास्ते में बापू जी ने गुरुबख्श लाल से कहा कि तुम्हारे जिस चौबारे में बापू श्रद्धाराम जी आ कर ठहरा करते थे उस पूरे स्थान को तुम संगत को बापू जी के मन्दिर के लिये दे दो। गुरुबख्श लाल यह सुन कर सोचने लगे कि इस स्थान पर तो एक साधारण सा चौबारा है। यहाँ भव्य मन्दिर का निर्माण कौन, कब और कैसे करेगा? बापू भानुदत्त जी तो यह कह कर कुछ ही महीनों में ज्योति जोत समा गये। तत्पश्चात् सन् 2001 में बापू हरभगवान जी की कृपा से उस स्थान पर संगत ने भव्य मन्दिर का निर्माण करवाया।

जमुना देवी की छोटी पुत्री सविता का जीवन भी बापू भानुदत्त जी के आशीर्वाद से सुखमय बना। जब सविता का विवाह हुआ तब उसके ससुराल वालों पर कुछ आर्थिक संकट था। एक बार सविता के भाई गुरुबख्श लाल ने दुःखी हो कर प्रार्थना की, "बापू जी, आप मेरी बहिन का जीवन सुखमय कीजिए।" बापू जी ने सुनते ही कहा, "घबराता क्यों है? सब ठीक हो जायेगा।" बापू जी के मुख-कमल से यह शब्द निकलने की देर थी कि सविता के घर वालों के सारे आर्थिक संकट दूर होते चले गए। आज की तारीख में उनके दो बड़े शोरूम हैं और वे खुशहाल जीवन जी रहे हैं। जमुना देवी की सभी सन्तानें बापू जी की कृपा से दरबार के सेवा कार्यों में पूर्ण श्रद्धा और लगन से कार्य करती हैं और उनके सम्पूर्ण परिवार पर बापू जी की अपार कृपा है।

नन्दाचौर दरबार की एक विशेषता यह भी है कि जब बापू जी के दर्शनों के बाद दरबार में हाजिरी लगवा कर संगत वापिस जाती है तब

बापू जी से आशीर्वाद ले कर ही अपने-अपने घरों को प्रस्थान करती है। बापू जी के आशीर्वाद का दिव्य कवच पहन कर जब संगत के लोग वापिस जाते हैं तो उनके मनों में यह धारणा दृढ़ होती है कि वह बिल्कुल सही सलामत अपने निवास स्थान पहुँच जाएंगे, इसलिए बापू जी से छुट्टी लिए बिना संगत प्रस्थान नहीं करती। एक बार 1995 में जून के यज्ञ में रामराज (उत्तर प्रदेश), से संगत की एक बस आई थी। उस बस में कई भक्त थे जिनमें रामराज से विजय अरोड़ा, मीता ढींगरा और

502 हस्तिनापुर से भक्त जगदीश भी थे। विजय और मीता भाई-बहिन थे और जून के यज्ञ में सम्मिलित होने आये थे। यज्ञ की पूर्णाहुति के बाद दूर-दूर से आये भक्तों ने बापू जी से आज्ञा ले कर अपने घरों की ओर प्रस्थान किया। रामराज से आई बस के मालिक को ऐसा लग रहा था कि मानो बहुत देर हो रही हो। उसने कुछ देर बापू जी से आज्ञा लेने हेतु प्रतीक्षा की और जब उसे ऐसा लगा कि रात हो गई है और आज्ञा लेने में समय भी लग सकता है तो वह बिना आज्ञा लिए ही बस को ले कर निकल पड़ा।

संगत के कुछ व्यक्तियों ने इस बात पर आपत्ति भी की परन्तु वह फिर भी बस को ले कर चला गया। कुछ दूर जाने पर ड्राईवर रास्ता भटक गया और बस को एक सुनसान रास्ते पर ले गया जो एक जंगल की ओर जाता था। यह देख कर संगत घबराने लगी और सोचने लगी कि यह सब बिना आज्ञा लिए चलने का ही परिणाम है। सभी भक्तों ने बापू भानुदत्त जी से मन ही मन क्षमा माँगनी और प्रार्थना करनी शुरू कर दी। इतनी देर में रास्ते में उन्हें एक वृद्ध नज़र आया। उसकी आयु 75-80 वर्ष की थी। उसके पास एक लालटेन भी थी। वह एक लाठी के सहारे चल रहा था और उसे चलने में बहुत कष्ट भी हो रहा था। उसे देख कर ड्राईवर ने बस रोक कर पूछा कि बाबा जी, क्या आप हमें जी॰ टी॰ रोड पर जाने का मार्ग बता सकते हैं? ड्राईवर की बात सुन कर उस वृद्ध ने 'हाँ' में सिर हिलाया और बहुत फुर्ती से बस के आगे-आगे

भागने लगा। लोगों को यह देख कर बहुत आश्चर्य हुआ कि जो वृद्ध लाठी के सहारे भी बहुत कठिनाई से चल पा रहा था वह एक दम इतना चुस्ती से बस के आगे-आगे कैसे भाग रहा है? कुछ ही समय में उस वृद्ध ने बस को जी॰टी॰ रोड पर पहुँचा दिया गया। तब ड्राईवर ने उस का धन्यवाद करने के लिए बस को रोका। उस वृद्ध ने बस वालों से कहा, "लगता है, आप सब किसी सत्संग से वापिस आ रहें हैं।" लोगों के हाँ कहने पर उसने पूछा, "फिर तो आप के पास लंगर का प्रसाद भी होगा। आप उसमें से थोड़ा सा प्रसाद मुझे दे दें।"

भक्तों के पास लंगर का प्रसाद तो था ही। उन्होंने कुछ रोटियां और दाल उस वृद्ध को दी और उसका हार्दिक धन्यवाद करते हुए बस में बैठ गए। बस स्टार्ट करते ही कुछ लोगों ने जब पीछे मुड़ कर देखा तो

वहाँ कोई वृद्ध नहीं था। दूर-दूर तक खाली सड़क के सिवाय कुछ भी नहीं था। लोग समझ गए कि यह तो बापू जी स्वयं ही उनका मार्गदर्शन करने आये थे। इस घटना से भक्तों का यह विश्वास और भी दृढ़ हो गया कि नन्दाचौर से जाने से पहले बापू जी से आज्ञा ले कर जाना नितान्त आवश्यक है। इस घटना के कुछ दिनों के बाद रामराज से कुछ भक्त जो उस दिन बस में सवार थे, नन्दाचौर बापू भानुदत्त जी के दर्शन हेतु आए। उन्हें देख कर बापू जी ने कहा, "तुमने हमारे पैर झाड़ियों में छिलवा दिए। पता नहीं कहाँ-कहाँ से होते हुए हमने तुम्हें सुरक्षित सड़क तक पहुँचाया।" बापू जी की यह बात सुन कर उक्त भक्त बहुत

हैरान हुए क्योंकि अभी तो उन्होंने यह बात बापू जी से करनी थी कि उस दिन उनकी कृपा से ही वे सब लोग सुरक्षित अपने घरों तक पहुंचे थे और बापू जी ने तो उनके कुछ कहने से पहले ही सारा रहस्य प्रकट कर दिया था कि उस दिन स्वयं उन्होंने ही सभी भक्तों को सही मार्ग पर पहुँचाया था।

बापू जी तो इतने दयालु थे कि बिना कहे ही अपने भक्तों का सारा हाल जानते थे। सिरसा निवासी मुकेश रानी बापू जो की भक्त थी। विवाहोपरान्त उन पर दुःखों का पहाड़ टूट पड़ा। एक वर्ष के भीतर ही उन्हें अपनी पुत्री के साथ वापिस मायके आना पड़ा। आत्मनिर्भर होने के लिए उन्होंने एक विद्यालय में अध्यापन कार्य शुरु किया। इसके कुछ समय पश्चात् उनकी पुत्री को पोलियो हो गया। मुकेश जी की आय बहुत कम थी। सारा धन बेटी के इलाज में ही चला जाता था। उनकी आर्थिक स्थिति बहुत कमज़ोर हो गई थी, फिर भी वह बापू जी के प्रति पूर्ण आस्था रखते हुए अपना कर्त्तव्य निभा रहीं थी। सच्चे भक्तों की यही निशानी है कि दुर्दिन आने पर भी उनका विश्वास ईश्वर पर से रत्ती भर भी कम नहीं होता।

सच्चे भक्त यह जानते हैं कि सुख और दुःख इस शरीर के ही कर्म-भोग हैं जो भोगने ही पड़ते हैं। ईश्वर सदृश गुरु की कृपा से प्रारब्ध कर्मों का ज़ोर कम हो जाता है। मुकेश जी यह सब भली-भांति

जानती थी इसलिए वह जीवन के रण-क्षेत्र में दृढ़ता से जमीं हुई थी। कुछ वर्ष बीत जाने पर विद्यालय में सरकारी पद मिलने का मौका आया। एक ही पद के लिए दो उम्मीदवार थे, एक मुकेश और दूसरी एक अन्य अध्यापिका, जो अनुभव में मुकेश से वरिष्ठ थी। बापू जी की कुछ ऐसी कृपा हुई कि वह सरकारी पद मुकेश जी को ही मिला। उस अध्यापिका से यह सहन नहीं हुआ और उसने विद्यालय के प्रबंधक और मुकेश जी को धमकियां देनी शुरु कर दी।

मुकेश जी बापू जी से मन ही मन प्रार्थना करती रहीं और इस प्रकार तीन महीने बीत गए। विद्यालय प्रबंधक ने निर्णय लिया कि कोर्ट केस से बचने के लिए और विद्यालय की शांति बनाए रखने के लिए सरकारी पद उस अध्यापिका को दे दिया जाए। जिस दिन प्रबंधक ने मुकेश जी को ऐसा करने के लिए कहा, उनका मन हताशा और निराशा से भर गया। घर आने के पश्चात् वह फूट-फूट कर रोने लगीं और रोते-रोते ही उन्होंने बापू भानुदत्त जी को पत्र लिखना शुरु किया। उनका पत्र आँसुओं से पूरी तरह भीग गया था और कोई भी अक्षर स्पष्ट या पढ़ने लायक नहीं था। परन्तु अन्तर्यामी बापू जी तो सभी के मन की बात पढ़ने में समर्थ हैं। मुकेश जी ने वही आँसुओं से भीगा पत्र भरी दोपहर में पैदल चल कर एक किलोमीटर दूर स्थित मुख्य डाकघर में पोस्ट कर दिया। दो दिन बाद विद्यालय प्रबंधक ने मुकेश जी को कहा कि तुम्हें यह पद छोड़ने की आवश्यकता नहीं है, वह अध्यापिका यदि

506 कोर्ट केस करती है तो करने दो। यह सुन कर मुकेश जी प्रसन्न हो गई और बापू जी का मन ही मन धन्यवाद करने लगीं। जब वह दोपहर दो बजे विद्यालय से वापिस आई तो परम पूज्य बापू जी का जवाबी पत्र मिला। जब मुकेश जी ने उस पत्र को खोल कर पड़ा तो वह आश्चर्यचकित रह गई और वह अन्दर तक रोमांचित हो गई। बापू जी ने पत्र में जो शब्द लिखे थे, वे अक्षरश: वही शब्द थे जो उसी दिन सुबह दस बजे विद्यालय प्रबंधक ने कहे थे।

बापू जी की ऐसी लीला थी कि उन्होंने दूर बैठे ही उस प्रबंधक के हृदय-पटल पर वही शब्द अंकित कर दिए, जिनसे मुकेश जी का कार्य बिना किसी बाधा के सम्पादित होना था। इसके पश्चात् उस अध्यापिका ने भी धमकियां देनी बंद कर दी। बापू भानुदत्त जी के आशीर्वाद से मुकेश जी की नौकरी पर आया संकट टल गया। बापू जी ने उनकी पुत्री पर भी बहुत कृपा की और आज बापू जी के आशीर्वाद से उनकी पुत्री उच्च शिक्षा प्राप्त कर एक महाविद्यालय में कार्यरत हैं।

बापू भानुदत्त जी ने दरबार की सोलह साल प्राणपन्न से सेवा की। उन्होंने नन्दाचौर दरबार के ऊपरी हाल का निर्माण करवाया। नन्दाचौर और उसके आस-पास के क्षेत्रों की जनता के लिए अस्पताल खुलवाया। बापू जी ने थड़ा साहिब में बापू हरनाम जी की मूर्ति स्थापना करवाई और समाधि साहिब में बापू गुरदास राम जी के समाधि स्थल

का निर्माण किया।

इस प्रकार संगत की सेवा करते हुए सोलह साल बीत गए। अब उनके महाप्रयाण का समय आ चुका था। अपने महाप्रयाण से दो वर्ष पूर्व उन्होंने अपने परिवार वालों को सरसरी तौर पर बता दिया था कि वैसे तो मेरा जीवन काल समाप्त हो चुका है परन्तु बापू जी की यह इच्छा है कि मैं कुछ समय और संगत की सेवा करूँ। बापू भानुदत्त जी ने अपने स्नेह और अपनी करुणा से अपनी भक्त सन्तानों को ऐसा सिंचित किया कि आज तक सभी भक्तों को ऐसा प्रतीत होता है मानो बापू जी उन्हें ही सबसे ज़्यादा प्रेम करते थे।

इस प्रकार धीरे-धीरे वह समय आ ही पहुँचा जब बापू जी ने अपनी लीलाओं का संवरण करना था। ब्रह्मलीन होने से पहले बापू जी अपने गाँव बड़ूं गए और परिवार वालों से मिल कर उन्हें बहुत स्नेह दिया। चलते हुए उन्होंने अपनी पत्नी से पूछा कि क्या वह उनके साथ रुद्रपुर जाना चाहेंगी। इस पर उनकी पत्नी ने कहा कि उनकी टाँग में समस्या होने के कारण वह अभी वहाँ नहीं जा सकती। वह नहीं चाहती थी कि उनके कारण किसी को कोई भी असुविधा हो। बापू भानुदत्त जी वहाँ से चल पड़े और नन्दाचौर होते हुए सहारनपुर और फिर मुज्जफरनगर, दिल्ली आदि स्थानों पर रुकते हुए रुद्रपुर पहुँचे। जब वह किसी भी स्थान पर कुछ समय के लिए रुकते थे तब अपने परिवार

वालों को फोन कर के उनका हाल चाल अवश्य पूछते थे।

मुज्जफरनगर पहुंचने पर बापू जी ने अपने एक अनन्य भक्त पण्डित अश्विनी कुमार शर्मा को उनके बैंक में फोन किया और बताया कि वह मुज्जफरनगर पहुँच गए हैं और विशेष तौर पर उनसे मिलने आए हैं।

अश्विनी कुमार जी ने अगले दिन अपने मकान की रजिस्टरी से सम्बन्धित कार्य के लिये अपने परिवार के साथ बाहर जाना था, इसलिये वह कब से मन ही मन प्रार्थना कर रहे थे कि बापू जो, अब आप के दर्शन किस प्रकार हो सकेंगे। बापू जी अपने भक्त की इच्छा की अनदेखी किस प्रकार कर सकते थे। अश्विनी जी की इच्छा का मान रखते हुए बापू जी एक दिन पहले ही वहाँ पहुँच गए और बड़े प्रेम से उनसे मिले। बापू जी ने अश्विनी जी से कहा कि अगले वर्ष हम नहीं आ पाएंगे, इसलिए आप जिस-जिस भक्त के घर हमें ले जाना चाहते हैं वहाँ ले जाइए। अश्विनी जी उन शब्दों का रहस्य तब नहीं समझ सके और बापू जी को ले कर भक्तों के घर चले गए। उन सभी भक्तों को अनुगृहीत कर बापू जी दिल्ली की ओर गए और वहाँ की संगत को अपने दर्शनों से निहाल किया। दिल्ली से बापू जी रुद्रपुर गये और श्री चरण दास छाबड़ा के घर ठहरे। बापू श्रद्धाराम जी के समय से ही सभी संत उन्हीं के घर ठहरा करते थे। वहाँ पर रात के समय भक्तों से बातें करते समय बापू जी ने कहा कि जो कार्य अधूरे थे वो करने आये हैं। सारी संगत से मिलने आये हैं। फिर थोड़ी देर बाद बापू जी कहने लगे

कि हिमाचल प्रदेश में जब किसी की मृत्यु होती है तब उसके अन्तिम संस्कार के लिए जो लोग जाते हैं, वे अपने साथ एक-एक लकड़ी भी ले कर जाते हैं और उन्हीं लकड़ियों की चिता से ही व्यक्ति का अन्तिम संस्कार किया जाता है। फिर बापू जी कहने लगे कि पहले मैं सोचता था कि मृत्यु के बाद मेरा शरीर जल में प्रवाहित कर दिया जाये परन्तु अब मैं चाहता हूँ कि मेरा अन्तिम संस्कार ही कर दिया जाये। जब बापू जी यह सब कह रहे थे तब कोई नहीं जानता था कि बापू जी तो अगले ही दिन महाप्रयाण का निश्चय कर चुके हैं।

अगले दिन 27 फरवरी 1999 को बापू जी ने एक भक्त ओम प्रकाश गुलाटी जी के घर हवन करने बरेली जाना था। बापू जी के साथ और भी कई भक्त वहाँ जा रहे थे जिनमें से दिल्ली से खरैती लाल और शिवनाथ कक्कड़ जी, रुद्रपुर से चरण दास छाबड़ा और गाज़ियाबाद से जोगिन्द्र मिगलानी जी

सम्मिलित थे। दिल्ली के ही सुरेन्द्र खरबन्दा भी बापू जी के साथ जाना चाहते थे। ये सारे भक्त कार में बैठे और कार चल पड़ी। कुछ ही देर में बस अड्डा आया और बापू जी ने सुरेन्द्र खरबन्दा को बस अड्डे पर उतार दिया और कहा, "तुम अभी जाओ, तुम्हारे छोटे बच्चे हैं।" सुरेन्द्र जी चुपचाप उतर गए परन्तु बापू जी के कहे शब्दों का अर्थ वह कतई नहीं समझ पाये।

सुरेन्द्र जी के उतरने के बाद एक अन्य भक्त महिला जिनका नाम

शांति देवी था वह कार में बैठ गई। कार अभी रुद्रपुर से 18 किलोमीटर दूर किच्छा से 5-6 किलोमीटर आगे बहेडी तक पहुँची थी कि सामने से आते हुए ट्रक से उस की टक्कर हो गई। उस भयानक हादसे में चापू भानुदत्त जी ने देह का त्याग कर दिया। शांति देवी की भी घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई। बापू जी के साथ बैठे लोगों को चोटें तो आई परन्तु उनकी प्राण रक्षा हो गई। चरण दास छाबड़ा जी ने बताया कि दुर्घटना होने से पूर्व बापू जी शांत चित्त हो कर आँखे बन्द कर समाधि में बैठे थे। चरण दास जी के मतानुसार ट्रक के साथ भिड़न्त होने से पहले ही बापू जी ने यौगिक क्रिया द्वारा देह त्याग दी थी। बापू जी की देह पर एक खरोंच भी नहीं आई थी।

जब संगत को इस दुर्घटना के विषय में ज्ञात हुआ तो मानो सभी पर वज्रपात हो गया। बापू जी की देह को नन्दाचौर लाया गया। भक्तों का रो-रो कर बुरा हाल था। अब सभी को बापू जी के कहे शब्द याद आ रहे थे जिनमें बार-बार बापू जी ने अपने निजधामगमन के संकेत दिए थे। बापू जी की इच्छानुसार उनका अन्तिम संस्कार किया गया। बापू भानुदत्त जी भले ही महाप्रयाण कर गये हों उन्होंने अपनी संगत का साथ नहीं छोड़ा। उनके इस पार्थिव शरीर के त्याग के उपरान्त भी उनके प्रिय भक्तों को भाव-विभोर कर देने वाले अनुभव हुए हैं जिनमें से कुछ दृष्टान्त यहाँ दिए जा रहे हैं।

एक बार दिल्ली निवासी परम खरबन्दा की तबीयत काफी खराब हो गई। पाठकगण परम के विषय में बापू श्रद्धाराम जी के अध्याय में भी पढ़ चुके हैं। तबीयत खराब होने पर परम अपने पिता श्री सुरेन्द्र खरबन्दा के साथ डॉक्टर के पास गया। डॉक्टर ने उसे बहुत सी दवाईयां लिख कर दी। परम का मन

इतनी दवाईयां देख कर घबरा गया और उसने घर आ कर अपने पिता के कहने के बावजूद कोई भी दवा नहीं खाई और अपने कमरे में जा कर बिस्तर पर लेट गया। रात के ढाई बजे के करीब जब उसकी आँख खुली तो उसने देखा कि साक्षात् बापू भानुदत्त जी महाराज उस के बिस्तर पर बैठे हुए हैं। पहले तो परम थोड़ा डरा परन्तु फिर उसने सोचा कि यह तो मेरे भगवान हैं भला भगवान से भी कोई डरता है। यह सोच कर परम बिस्तर से नीचे उतरा और बापू जी के चरण स्पर्श किए। बापू जी ने पूछा, " क्या हुआ", परम ने कहा, "कुछ नहीं, थोड़ी सी तबीयत खराब है।" फिर बापू जी ने परम से कहा कि जा मेरे लिए खाना ले कर आ।

परम रसोई में गया और दो रोटियाँ, थोड़ी सब्जी और दही ले कर आ गया। इसके बाद बापू जी ने स्वयं अपने हाथों से परम को बहुत प्यार से खाना खिलाया। परम की आँखों में यह सोच कर आँसू आ गये कि बापू जी उस पर कितनी कृपा कर रहे हैं। उसे खाना खिलाने के बाद बापू जी उसे आशीर्वाद दे कर अलोप हो गए। अगले दिन जब परम डॉक्टर के पास गया तो वह बिलकुल ठीक था। डॉक्टर ने कहा कि

अपने चालीस साल के कैरियर में उसने ऐसा कभी नहीं देखा कि कोई व्यक्ति एक ही रात में चमत्कारिक तरीके से ठीक हो जाये।

बापू भानुदत्त जी का परम के समक्ष प्रकट होना और इतना प्रेम और आत्मीयता प्रदर्शित करना, यह इंगित करता है कि बापू जी अपने प्रिय भक्तों के लिए शारीरिक देह का त्याग करने के बावजूद भी उनकी सहायता करने हेतु प्रकट होने में संकोच नहीं करते थे। असीम, अनन्त ईश्वर में चिर लय होने के बाद भी अपने भक्तों के कल्याण का भाव उन्हें उनके पास आने हेतु विवश कर ही देता है। ऐसे ईश्वर कोटि महान् संत केवल अपनी मुक्ति प्राप्त कर ही सन्तुष्ट नहीं रहते अपितु वह तब तक कार्यरत रहते हैं, जब तक उनके भक्त भी अपने आप को पहचान कर अपने स्वरूप में स्थिति प्राप्त न कर लें। जब तक भक्त उस महान् स्थिति की उपलब्धि नहीं करता तब तक उसकी सांसारिक यात्रा की भी समस्त छोटी-बड़ी समस्याओं का समाधान भी महान् गुरु ही करते हैं।

बापू भानुदत्त जी की इस दैवीय कृपा के सुपात्र रुद्रपुर निवासी राकेश तनेजा और उनकी पत्नी रुचि भी बने हैं। सितम्बर 2001 में राकेश अपनी पत्नी रुचि, दो छोटे बच्चों और एक भक्त विक्की के साथ दिल्ली ढक्का मन्दिर में यज्ञ पर जा रहे थे। अचानक ही कार्यक्रम बनने के कारण रेलगाड़ी में उनका आरक्षण नहीं हो पाया था। प्रतीक्षा सूची में भी उनका 260 वां स्थान था। राकेश टिकट ले कर गाड़ी में चढ़ तो गए

परन्तु उन्हें कहीं भी सीट नहीं मिली। उन्होंने मन ही मन बापू जी से अरदास की और टी. टी. से भी सहायता के लिए निवेदन किया। राकेश जी एक कोच से दूसरे कोच तक घूम आए परन्तु उन्हें कहीं भी सीट नहीं मिली। गाड़ी चले भी 15-20 मिनट हो गए थे और वे सभी गाड़ी में खड़े थे। इतनी देर में एक सज्जन आये। उन्होंने चश्मा लगाया हुआ था। बड़े प्रेम से उन्होंने पूछा, "क्यों परेशान हो?" राकेश जी ने अपनी परेशानी का कारण बता दिया।

राकेश जी की बात सुन कर वह व्यक्ति बोला कि मेरे पास तीन टिकटे हैं एक महिला और दो पुरुषों के लिए। ये आप रख लीजिए। फिर वह सज्जन बोले कि इन टिकटों पर लिखे नम्बरों के हिसाब से आप अपनी सीट ढूँढ कर आराम से बैठ जाइए। यह कह कर उक्त सज्जन ने राकेश जी को टिकटें थमाई और तेजी से भीड़ में गुम हो गए। राकेश जी ने देखा कि वे तीनों टिकटें टी. टी. से चैक करवाई हुई थीं। राकेश जी को उनका धन्यवाद तक करने का अवसर नहीं मिला। इसके बाद राकेश ने अपनी पत्नी, बच्चों और भाई को सीटों पर बिठाया और गाड़ी में उस सज्जन व्यक्ति को ढूँढने निकल पड़े ताकि उसे टिकटों के पैसे दे कर उसका अच्छी तरह धन्यवाद भी किया जा सके। राकेश जी ने सारी गाड़ी का कोना कोना छान मारा परन्तु वह सज्जन उन्हें कहीं नहीं मिले। इस बीच गाड़ी न तो कहीं रुकी थी और न ही उसकी गति कम हुई थी। राकेश जी और उनका परिवार अति आश्चर्यचकित थे कि

वह सज्जन आखिर थे कौन, जिन्होंने सही समय पर आ कर उनकी सहायता की। बाद में दिल्ली पहुँच कर जब राकेश जी ने बापू हरभगवान जी महाराज जी को यह सारी घटना सुनाई तब बापू जी ने बताया

कि वह तो स्वयं बापू भानुदत्त जी थे जो अपने भक्तों को तिल मात्र भी कष्ट में नहीं देख सके और स्वयं ही उन्हें टिकटें देने आ गये और वह भी ठीक उतनी जितनी उन्हें उस समय आवश्यक थी।

राकेश और रुचि यह रहस्य जान कर अति भावुक हो उठे कि स्वयं उनके प्रिय गुरुदेव देह धारण कर उनके पास उनकी सहायता के लिए आए। क्या कोई लेखनी इस अनूठे प्रेम को परिभाषित कर करती है? क्या कोई तर्क इस अद्भुत प्रेम का कारण बता सकता है? सच तो यह है कि शिष्य के लिए गुरु के प्रेम की कोई सीमा ही नहीं होती, अगर होती तो देह त्याग के उपरान्त सीमाओं की मर्यादा रक्षा में बद्ध वह अपने बच्चों की सहायतार्थ कैसे पहुँचते ?

राकेश तनेजा ने केवल एक बार नहीं अपितु कई बार बापू जी की कृपा और प्रेम का रसास्वादन किया है। एक बार जुलाई 2011 में राकेश जी बहुत बीमार हो गए। उन्हें एक समस्या थी जिसके कारण वह कोई भी अंग्रेज़ी दवाई नहीं ले सकते थे। बहुत वर्षों से उन्होंने कोई भी अंग्रेज़ी दवा नहीं ली थी और आवश्यकता पड़ने पर वह कभी-कभी होम्योपैथी की मीठी दवाई ही लिया करते थे। एक बार उन्होंने बीमारी

की हालत में होम्योपैथी की दवाई ले ली और उस दवाई का उल्टा असर हो गया। राकेश के रक्त में लाल रक्त कणिकायें तेजी से कम होने लगीं। जिन कणिकाओं की संख्या डेढ लाख से चार लाख तक होनी चाहिए, वे केवल 60,000 तक ही रह गई।

उनका हीमोग्लोबिन भी पाँच ही रह गया था। चार दिन अस्पताल में रहने के बावजूद भी उनकी हालत में कोई सुधार नहीं आया। चार यूनिट रक्त चढ़ाने के बाद भी उनके स्वास्थ्य में कोई सुधार दृष्टिगोचर नहीं हुआ। डॉक्टर ने राकेश जी की हालत देख कर उन्हें दिल्ली ले जाने के लिए कह दिया। डॉक्टर के ऐसा कहने पर परिवार के सदस्य घबरा गए। रुचि ने रोते हुए बापू हरभगवान जी को फोन किया और सारी बात बताई। बापू जी ने रुचि को हौसला दिया और राकेश को दिल्ली ले जाने के लिए कहा। बापू जी के कहने पर राकेश को दिल्ली ले जाया गया।

दिल्ली में गंगाराम अस्पताल में दिखाने पर डॉक्टर ने कहा कि राकेश का केस तो बहुत कठिन है। इनका बोनमैरो टेस्ट करना पड़ेगा। डॉक्टर का निर्णय सुन कर परिवार वालों ने कहा कि हमें सोचने का समय चाहिए। हम आपको कल बता देंगे कि हमने यह टेस्ट करवाना है अथवा नहीं। रुचि ने फिर से बापू जी को फोन किया और सारी बात बताई। बापू जी ने रुचि और राकेश से बात की और उन्हें कहा कि वे

एक-दो डॉक्टरों का परामर्श और ले लें। फिर बापू जी ने राकेश को कहा, "तू तो बापू भानुदत्त जी का चेला है। वह स्वयं तेरा ईलाज करेंगे।" इसके बाद बापू जी ऊपर दरबार में राकेश के लिए प्रार्थना करने चले गए। प्रार्थना के लिए जाने से पूर्व बापू जी ने राकेश को कहा कि आज एक बार और टेस्ट करवा लो।

अगली सुबह राकेश और रुचि ने अपोलो अस्पताल जाना था। उनके पास टेस्ट करवाने के लिए उसी दिन की शाम का समय था। राकेश जी सुरेन्द्र जी के साथ टेस्ट करवाने गए और रुचि घर पर बैठ कर पाठ करती रही। उधर बापू जी ने आदरामान में राकेश के नाम की अखण्ड जोत जलवाई और दौरांगला में भी राकेश के अच्छे स्वास्थ्य के लिए अरदास करवाई। एक घंटे बाद जब सुरेन्द्र जी रिपोर्ट ले कर आये तो वह जयकारा लगाते रुदन कर रहे थे। उनकी खुशी छिपाए नहीं छिप रही थी। उन्होंने रुचि से कहा कि आप इस रिपोर्ट को पढ़ने से पूर्व इसे अन्दर मन्दिर में रख कर जयकारा लगाओ और फिर रिपोर्ट पढ़ कर बताओ।

रुचि ने वह रिपोर्ट ले कर मन्दिर में रखी और बापू जी का जयकारा लगाया। तत्पश्चात् जब उसने रिपोर्ट खोली तो देखा जो रक्त कणिकायें 60,000 रह गई थीं वे अब डेढ लाख से भी ऊपर हो गई और एच. बी. पाँच से 10.5 हो गया। टी. एल. सी. की रिपोर्ट भी

एकदम सामान्य थी। यह रिपोर्ट देख कर रुचि समझ गई कि बापू भानुदत्त जी महाराज जी ने ही राकेश का इलाज कर उन्हें एक दम स्वस्थ किया है। इस अद्भुत अनुभव से रुचि और राकेश एक अलग ही

विश्वास से भर उठे। वे समझ चुके थे कि अब उनकी बागडोर साक्षात् परमेश्वर के हाथों में है। उन्हें भय करने की कोई आवश्यकता नहीं है। भगवान् शिव ने भी इस विषय में कहा है-

मुनिभिः पन्नगैर्वापि सुरैर्वा शापितो यदि । कालमृत्युभयाद्वापि गुरु : संत्राति पार्वति ।।

अर्थात् हे पार्वती ! मुनियों, पन्नगों और देवताओं के शाप से तथा यथा काल आए हुए मृत्यु के भय से भी शिष्य को गुरुदेव बचा सकते हैं।

बापू भानुदत्त जी भी ऐसे ही पूर्ण गुरु हैं जिन्होंने अपने शिष्यों को अभय का वरदान दिया है। उनकी आज्ञा के बिना काल भी उनकी सन्तानों का स्पर्श नहीं कर सकता। बापू भानुदत्त जी आज भी भक्तों के बीच हैं, उनके साथ हैं, अपने भक्तों की प्रत्येक पीड़ा और कष्ट में वह सदैव उनके पास रह उनका कष्ट दूर करते हैं। तुलसीदास जी ने भी 'श्रीरामचरितमानस' में लिखा है-

मुनि सुनु साधुन्ह के गुन जेते।

कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते ।।

तुलसीदास जी कहते हैं कि संतों के जितने गुण हैं उनको सरस्वती और वेद भी नहीं कह सकते। बापू भानुदत्त जी का सम्पूर्ण दर्शन उनके जीवन के अवलोकन से ज्ञात होता है। वैसे तो कोई मानवीय बुद्धि इतनी धृष्टता नहीं कर सकती कि महान् आत्माओं के पवित्र जीवन का अवलोकन कर उसे समझ सके परन्तु फिर भी महान् आत्माएं अपने जीवन के प्रत्येक क्षण में साधारण दिखाई देने वाले लौकिक व्यवहार में भी कोई दिव्य सन्देश देने का प्रयत्न करती हैं। उनके प्रत्येक कार्य के पीछे सदैव ही किसी कल्याण का भाव निहित होता है। ऐसी आत्माएं अपने भक्तों के कष्टों का हरण ही नहीं अपितु वरण भी कर लेती हैं।

बापू ओम जी से ले कर बापू भानुदत्त जी तक सभी महापुरुषों ने जिस मुख्य भाव से आवेष्टित हो कर जनकल्याण किया है वह है-दया का भाव। जो मनुष्य दया के मर्म को समझ लेता है वह साधारण

शारीरिक संवदेनाओं को तल से ऊपर उठ कर विचार और बुद्धि के भी तल का अतिक्रमण कर परम आनन्द के तल का स्पर्श कर और फिर उसमें विलीन हो कर परम तत्त्व को ही प्राप्त कर लेता है।

संसार रूपी दूर्वानल में जलने वाले भक्त जब-जब अपने गुरु, अपने इष्ट, अपने ईश्वर को पुकारते हैं तब-तब उनके प्रभु उनका

कल्याण करने हेतु अवश्य प्रकट होते हैं। जब भक्त यह कातर प्रार्थना करते हैं-

दुर्वारसंसारदवाग्नितप्तं दोधूयमानं दुरष्टत्वातैः । भीतं प्रपन्नं परिपाहि मृत्योः शरण्यमन्यद्यदहं न जाने ।

भक्त कहता है कि प्रभु, मैं संसार रूपी जंगल की अग्नि में झुलस रहा हूँ। इस अग्नि को कोई मनुष्य नहीं बुझा सकता। पूर्व कृत बुरे कर्म तेज तूफानों के समान मुझे इधर-उधर ढकेल रहे हैं। मैं भयभीत हूँ, मैने आप की शरण ली है। मुझे मृत्यु से बचाओ। मैं कोई और आश्रय नहीं जानता। जब भक्त इस प्रकार की भावपूर्ण प्रार्थना करते हैं तो ईश्वर को उनकी रक्षा हेतु आना ही पड़ता है।

बापू पानप देव जी से ले कर बापू भानुदत्त जी तक सभी महान् गुरुओं ने सदैव ही अपने भक्तों का कल्याण किया है। भले ही वे महापुरुष देह में हों अथवा देह-त्याग कर चुके हों, वे सदा-सदा अपने प्रिय भक्तों के लिए विद्यमान हैं। नन्दाचौर में ही नहीं, विश्व के प्रत्येक स्थान पर जहाँ भी बापू जी के भक्त हैं, उन्होंने बापू ओम जी, बापू हरनाम जी, बापू श्रद्धाराम जी, बापू गुरदास राम जी और बापू भानुदत्त महाराज जी की उपस्थिति को सदैव अनुभव किया है। वे भक्त यह जानते हैं कि उनके पूज्य व प्रिय गुरुदेव कहीं गए नहीं है। वे तो सदा-सदा मौजूद हैं। अपनी सन्तानों का पूर्ण भार उन्होंने ग्रहण किया है।

आज भी जब कोई भक्त सच्चे मन से उन का स्मरण करता है तो वे तत्काल प्रकट हो कर, उसे दर्शन दे कर उसका कल्याण करते है। इस ग्रन्थ के द्वितीय चरण 'ओम वाटिका के महकते कुमुद' में इन महान् गुरुओं के महान् शिष्यों का वर्णन किया जाएगा, जिन्होंने अपने गुरुओं से ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त कर विश्व का उद्धार किया।

।। हरि ॐ ।।

बापू श्री भानुदत्त जी महाराज का पावन खूँटा

ओम वाटिका

के

महकते कुमुद

ॐ

संत श्री ठाकुर दास जी महाराज

524. श्री नारायण चरितामृत

ॐ

संत श्री ठाकुर दास जी महाराज

विजानन्ति महावाक्यं गुरोश्चरणसेवया। ते वै संन्यासिनः प्रोक्ता इतने वेषधारिणः ।।

भगवान् शिव कहते हैं कि गुरुदेव के श्री चरणों की सेवा करके महावाक्य (तत्त्वमसि) के अर्थ को जो समझते हैं, वे ही सच्चे संन्यासी हैं, अन्य तो मात्र वेशधारी हैं।

श्री गुरुदेव की सेवा के फल से उनके द्वारा दिए गए ज्ञान को वही आत्मसात् कर सकता है जिसे अपने गुरु में पूर्ण श्रद्धा और विश्वास होता है, जो यह मानता है कि-

अत्रिनेत्रः शिवः साक्षात् द्विबाहुश्च हरिः स्मृतः । योऽचतुर्वदनो ब्रह्मा श्रीगुरुः कथितः प्रिये ।।

सच्चे शिष्य मानते हैं कि गुरु ही त्रिनेत्र रहित (दो नेत्र वाले) साक्षात् शिव हैं। दो हाथ वाले भगवान् विष्णु हैं और एक मुख वाले ब्रह्मा जी

हैं। इसका अर्थ है कि देह-बुद्धि से अतीत होकर जो शिष्य देह में विराजमान गुरु में साक्षात् ईश्वर को पहचान लेता है, वह उसे अपनी श्रद्धा और भक्ति से प्राप्त भी कर लेता है।

बापू ओम जी के एक ऐसे ही महान् शिष्य हुए जिन्होंने अपनी भक्ति और प्रेम से बापू ओम जी को प्राप्त किया। उस महान् शिष्य का नाम है- संत ठाकुर दास। बापू ओम जी ने जो ज्ञान अपने गुरुदेव से प्राप्त किया उसे विश्व के कल्याणार्थ योग्य शिष्यों को भी प्रदान किया। कहते हैं जब फूल खिलता है तब भंवरों को उसकी सुगन्धि अपनी ओर खींच ही लेती है। संवत् 1924 वि० में ज्येष्ठ मास की नवीं तारीख को होशियारपुर के लाम्बड़ा गाँव में संत ठाकुर दास का जन्म हुआ। इनके पिता का नाम घसीटा राम और माता का नाम सुलखनी था। इनके पिता लुहार का काम करते थे। ठाकुर दास चार भाईयों में सबसे छोटे थे। उनका सारा परिवार धर्म-परायण और गुरु-मुख था।

ठाकुर दास जी के जन्म पर ज्योतिषियों ने यह भविष्यवाणी की कि वैसे तो यह बालक बचेगा नहीं और यदि बच गया तो बहुत बड़ा राजा या योगी होगा। ठाकुर दास जी के पिता ने बहुत यज्ञ और दान आदि

करवाये। ईश्वर कृपा से ठाकुर जी की जान बच गई और छोटी आयु में ही वह विद्वान हो गये। शिक्षा के साथ-साथ उन्होंने अपना पुश्तैनी कार्य भी सीखा और पिता के कार्य में पूर्ण सहयोग दिया। माता-

पिता से प्राप्त संस्कारों और अपनी संत वृत्ति के चलते ठाकुर दास जी साधु-संतों की खूब मन लगा कर सेवा करते।

एक दिन उनकी भेंट एक संत से हो गई। ठाकुर दास जी ने तन, मन, धन से उनकी सेवा की। उस संत ने उनकी सेवा से प्रसन्न हो कर सुरती, सुमिरन और योग साधना का ज्ञान दिया और ओम का जाप करने के लिए कहा। ठाकुर दास जी अति श्रद्धा के साथ उस मार्ग का अवलम्बन करने लगे। दिन-रात ध्यानमग्न रह कर उन्होंने सच्ची लगन से प्रभु स्मरण करना प्रारम्भ कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि अणिमा, लघिमा और गरिमा इत्यादि ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ उन्हें सहज ही प्राप्त हो गई। तत्पश्चात् वह लोह लंगर गाँव के एक संत के पास गए। उनसे धर्म चर्चा चली तो वे ठाकुर जी के ज्ञान को देख कर चकित रह गए और कहने लगे कि जितना तुम जानते हो उससे अधिक ज्ञान तो मेरे पास भी नहीं है। तुम किसी अन्य सिद्ध-पुरुष की सेवा में जाओ तो तुम्हारी मनोकामना पूरी हो सकती है।

भले ही ठाकुर दास जी कई प्रकार की सिद्धियों के मालिक थे परन्तु उन्हें अभी तक उस आत्म-ज्योति का दर्शन प्राप्त नहीं हुआ था जो उन्हें जीवन-मरण के त्रास से मुक्ति दिला सके। अलग-अलग व्यक्तियों ने उन्हें अपने-अपने मतानुसार मार्ग चुनने के लिए प्रेरित किया परन्तु उन्हें ऐसा एक भी संत नहीं मिला जो उनका ईश्वर से

परिचय करवा सके। दिन-प्रतिदिन भगवद् प्राप्ति की इच्छा बलवती होती रही और एक दिन नियति स्वयं उन्हें 'नन्दाचौर' ले आई। एक दिन माता-पिता की आज्ञा से ठाकुर दास जी घर का कुछ सौदा खरीदने के लिए नन्दाचौर आए। उन्हें यह ज्ञात नहीं था कि उस दिन वास्तव में ही वह 'सच्चा सौदा'

करने वाले थे। उनके पास तीन रुपए थे। उन्होंने दुकानदार से कहा कि दो रुपये का आटा और एक रुपये के चने तोल दो। दुकानदार ने सामान तोलना प्रारम्भ किया ही था कि ओम जी वहाँ आ गये। उन्होंने आते ही ठाकुर दास जी से प्रश्न किया, "तुम्हारा निवास कहाँ है, तुम यहाँ क्यों आए हो?"

ठाकुर दास जी ने उनके दर्शन किए तो अवाक् रह गए। इतना भव्य स्वरूप उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था। उन्होंने बताया कि मैं लाम्बड़ा ग्राम का रहने वाला हूँ। मेरा नाम ठाकुर दास है और मैं घर का सौदा लेने आया हूँ। इतना कह कर ठाकुर दास जी ने जब ओम जी के नेत्रों में देखा तो वह मोहित हो गए। न जाने किस अदृश्य चुम्बकीय आकर्षण शक्ति से ठाकुर दास जी का चित्त ओम जी की ओर खिंच गया और उन्होंने अति श्रद्धा से उनके श्रीचरणों में माथा टेका। ठाकुर दास जी ने कहा, "आपके दर्शनों से मुझे अपार शान्ति एवं आनन्द की प्राप्ति हुई है। मैं धन्य हो गया। मैं आपकी क्या सेवा करूँ?" ओम जी ने कहा, "जो तुम्हारे पास है उसमें से मुझे एक रुपया दे दो।" ठाकुर दास उनके चरणों में नत मस्तक हुए और प्रसन्नता से एक रुपया भेंट

कर दिया। ओम जी रुपया ले कर चले गए और थोड़ी देर बाद फिर लौट आये और कहा, "हमें एक रुपया और दे दो।" ठाकुर दास जी ने तुरन्त दूसरा रुपया भी दे दिया। ओम जी ने पूछा, "अब तुम सामान कैसे खरीदोगे? तुम्हारे माता-पिता नाराज हो जाएंगे। यह तो अच्छी बात नहीं होगी। यदि डर लग रहा हो तो अपने रुपये वापिस ले लो।"

यह सुन कर ठाकुर दास जी ने कहा, "महाराज जी, मेरे घर वाले तो यह सुन कर बहुत खुश होंगे कि मैने संत-सेवा कर के सच्चा सौदा खरीदा है। मैं कल घर से और पैसा लेकर बाज़ार से सौदा ले जाऊँगा।" ओम जी यह उत्तर सुन कर प्रसन्न हुए और उन्हें एक तेजस्वी, विद्वान् और भक्त पुत्र होने का वरदान दिया। ठाकुर जी के स्थान पर कोई अन्य साधारण व्यक्ति होता तो वह यह आशीर्वाद प्राप्त कर बहुत प्रसन्न होता परन्तु ठाकुर जी ने जो कहा वह अविस्मरणीय है। पहली मुलाकात में ही ठाकुर जी को यह भान हो गया था कि ओम जी कोई असाधारण विभूति हैं जो उन्हें आत्म-ज्योति का दर्शन करवा सकते हैं। इसलिए ओम जी के आशीर्वाद देने के बाद ठाकुर जी ने हाथ जोड़ कर कहा, "महाराज जी, मुझे पुत्र और धन-सम्पत्ति की आवश्यकता नहीं है। आप मुझे वह अमूल्य निधि बखशिए जिसके प्राप्त होने के बाद कुछ और पाने की इच्छा न रहे।" यह सुनने के बाद ओम जी ने ठाकुर जी को

आशीर्वाद दे कर वापिस लाम्बड़ा भेज दिया। तदुपरान्त कभी-कभी बापू ओम जी स्वयं ठाकुर जी से मिलने लाम्बड़ा जाने लगे। ठाकुर जी

के साथ-साथ उनका परिवार और आस-पास के अन्य लोग भी ओम जी की सेवा में आते और उनके सत्संग का लाभ उठाते। ठाकुर जी अक्सर ओम जी से अध्यात्म-तत्त्व की चर्चा किया करते थे। एक दिन उन्होंने ओम जी से प्रार्थना की, "महाराज जी, मैं कहीं भी प्रकट और अदृश्य होने की शक्ति रखता हूँ, दूसरों के मन का हाल भी जान सकता हूँ परन्तु इन सब से मेरा मन तृप्त नहीं होता। मैं उस दिव्य ज्योति का दर्शन करना चाहता हूँ जिसकी महिमा का गुणगान करते भक्तों की वाणी कभी नहीं थकती।" यह सुन कर बापू ओम जी ने बहुत ही खूबसूरत अलफाज़ों में ठाकुर जी को अध्यात्म का रहस्य समझाया। उन्होंने कहा-

अगर है शौक मिलने का तो सिर को हाथ पर धरले। आईना साफ कर दिल का, नजर को नाक परकर ले।

दबा कर मन को मुट्ठी में, कलाम आकदश को दिल में रख।

गुजर जा कुचाए वाहदत्त से मुर्शिद ताक पर कर ले।

बजा ला फर्ज को अपने, कोई दिन मर्द बन कर तूं।

मगर ना भूल जाना मन को, नुकता पाक पर कर ले।

खुदा को हर जगह जानो, वो है मौजूद है हर शै में। मगर मिलता फकीरों से, यकीन इस बात पर कर ले। उठाओ चशम उपर को, गर हफतम फलक पर चढ़ना। फरिश्ते पर न मारेगें, सफर खाह रात भर कर ले।

पकड़ कर कीमीयां हाथों में, सोना कर दे जिस्म को।

मगर यह याद रखना फिर, नजर ना कांच पर कर ले।

पकड़ कर कदम मुर्शिद के, समुन्द्र तैर जा मन का।

लहर में भूल न जाना, बिछौना खाट पर कर ले।

ना खटका है किसी का फिर, ना रहजन लूट सकते है।

श्री ठाकुर नारायण जी, करम जब दास पर कर ले।

इसके बाद ठाकुर जी ने तत्त्व-ज्ञान सम्बन्धी और भी प्रश्न पूछे जिनके उत्तर बापू ओम जी ने बड़े प्रेम से दिए। श्री ठाकुर दास जी के सुपुत्र श्री सन्त राम जी ने अपने ग्रंथ में इन प्रश्नों और बापू ओम जी प्रदत्त उत्तरों को कविता रूप में लिखा है, जिन्हें पाठकों के हितार्थ यहाँ दिया जा रहा है। उस चरम और अन्तिम सत्य तक पहुँचने के लिए इन उत्तरों में वर्णित अमृत-ज्ञान मुमुक्षुजनों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकता है। ये प्रश्नोत्तर इस प्रकार हैं-

बैंत-चेतन आत्मा सत सरूप कहिए, अधिष्टान अधार अकाल प्यारे। गुनातीत प्रतीत कर जान तिस नू, जिस नू जानियां होवे निहाल प्यारे। आया दूर कर नूर कर संगता नू, गुरु कृपा ते मिले गोपाल प्यारे। दास मिले तां मौत न मूल आवे, दुख दूर होवे जन्म जाल प्यारे।

प्रश्न श्री ठाकुर जी-

बैंत चेतन आत्मा गुरु किस तौर कहिए, दसो इस दा खोल ब्यान मैनूं । सत सुख प्रमाण दे कहो स्वामी, हाल खोल सारा छान-छान मैनूं ।

अधिष्टान आधार अकाल आत्म, होवे जिस तरहां ऐसा ज्ञान मैनूं। कहो दास अधीन हो पुछ दा हां, किदां होई सरूप दी हान मैनूं।

उत्तर श्री ओम जी

बैंत-गुरु कहे सुन शिष्य ध्यान धरके, कहां सारा संसार विचार तैनूं। सत चित्त में वेद प्रमाण भारी, जिस उत्ते है पूरा इतवार तैनू ।

महा वाक सुन ब्रह्म दा ज्ञान होवे, जे कर होवे ओह शिष्य अधिकार तैनू । कहे दास अज्ञान कर दीन होया, होया विषय दे संग प्यार तैनू।

तैनू चाह ने मार के चूर कीता, कीता वासना ने बुरा हाल तेरा।

आशा अग्ग बाले, तृष्णा तेल पावे, अंग अंग दोनों रहियां जाल तेरा।

गृहस्त जाल अंदर मोह मार पैंदी, दुःखी होए रोंदा बाल-बाल तेरा।

कहे दास अज्ञान ने अंध कीता, विसर गया तैनू आत्म लाल तेरा।

प्रश्न श्री ठाकुर जी महाराज-

बैत-बोले अपने गुरां दे बचन सुन के, कहो गुरु जी विषय विकार जिहड़े।

केहड़े पुरुष दसो विषय संग डुबे, छड्ड़ विषये नू होऐ ने पार केहड़े।

केहड़े पुरुष नूं ब्रह्म दा ज्ञान होवे, इस ज्ञान दे दसो अधिकार केहड़े।

कहे दास है जित्या जन्म किन्ही, गऐ जन्म अमोलक नूँ हार केहड़े।

उत्तर श्री ओम जी महाराज-

विषये शब्द आदिक पंज जान बीबा, कारण ईहना दा अपनी भुल प्यारे। आप जानिया ते होन दूर सबो, दुख सुख संसार दे मूल प्यारे।

श्रद्धा वेद और गुरु ते ठीक करनी, ऐही जान विज्ञान दा मूल प्यारे। तरने डुबने दी जुगती कहां अग्गे, कहे गुरु सुन दास अनुकूल प्यारे।

देह आत्मा मन्नयां जिन्हां ने है, सोई डुब्बे यकीन कर जान बीबा।

काम, क्रोध, मोह, लोभ, हंकार, मन्दा, वाशना करन विरान बीबा।

वेद वाक सुन साधां दी करन संगत, जिते सोई, हारे बाकी मान बीबा।

दास विषये जहर खांदे गुआर मूर्ख, सजन, सुघड़ करदे अमृतपान बीबा।

प्रश्न श्री ठाकुर जी महाराज-

बैंत- कैहंदे बहुत अधीन हो गुरां तांई, कहो गुरु जी की है स्वरूप मेरा। कित्थों आया हाँ मै केहड़ी वल जाना, कौन माता-पिता कौन भूप मेरा।

कौन वर्ण आश्रम कुल जात मेरी, हाल कहो जी खोलके खूब मेरा।

दास आखदा है हत्थ जोड़ दोंवे, पिता हरो छेती संशय कूप मेरा।

उत्तर श्री नारायण दत्त महाराज

बैंत - गुरु दया कर आखदे शिष्य तांई, बीबा बात सुन लै सावधान होके ।

उत्तर पुत्तर मैं दियांगा ठीक तैनूं, जिहड़े प्रश्न कीते तू हैरान होके।

चेतन रूप तेरा भुल गया तैनू, देह नाल मिलिया इक जान होके।

दास कहे तद आत्म शरीर तेरा, आत्म फेर भासे न ब्रह्म दा ज्ञान होके । सुख रूप ते अपना आप ही है, होर किते वी सुख ना पावीऐ जी।

विच विषय दे सुख जो भासदा है, सो न सुख, सवार्थ सो गावीऐ जी।

धन स्त्री पुत्र सुख रूप जाने, देह दुखी होवे छढ जावीऐ जी।

दास सबनां ते अपना आप चंगा, इसी वास्ते कर्म कमावीऐ जी।

सत्त रूप है अपना आप तेरा, जिसदी सता ते सत जहान लगे।

तेरी सता ते देह मन करे क्रिया, तेरी सता ते चलन प्राण लगे।

तेरी सता ते विषये प्रतीत हुदें, तेरी सता ते वृती दा ध्यान लगे।

दास आत्मा सत ने सत कीते, देश काल आधिक औन जान लगे।

श्री नारायण चरितामृत

नाम रूप प्रपन्च नू जान झूठा, अस्ती, भान्ति, प्रिय, प्रीतम रूप तेरा। ओन जान तेरा तेरी कल्पना है, नाही बाप ते नाहीं कोई भूप तेरा।

नाही वर्ण आश्रम कुल जात तेरो, हाल खोल के कहां अनूप तेरा। दास कहे ब्रह्म नेष्टी गुरु कोलों, पूरा होवे बीबा संशे कूप तेरा।

न तू जमिया मरन न मूल तैनू, नहीं बहिन भाई, माई बाप तेरा।

क्रिया क्रम नाही धर्म कर्म कोई, अचल अकरे रूप अथाप तेरा। अजर अमर अंडौल अबोल है तू, विष्णु बह्म शिव कर हैं जाप तेरा।

कहे दास सबनूँ सत्ता देन वाला, अधिष्टान है अपना आप तेरा। चारे वेद तेरा यश गावंदे है, छः शास्त्र अठारह पुरान शिष्या।

साधू महात्मा सब करन उस्तत, ऋषी मुनी ते तपी ज्ञान वान शिष्या चारे वर्ण आश्रम भी करन सेवा, योगी जती लांऊदे ध्यान तेरा शिष्या।

दास सुते प्रकाश स्वरूप तेरा, रहा अपने आप नू जान शिष्या। शब्द, स्पर्श ते रूप रस गन्ध पंजे, जेहड़ा एना दे स्वाद नू जानदां है। सो ही आत्मा जान यकीन करके, भले बुरे तांई जो पहचान दा है। जेहड़ा देख दा सारे व्यवहार तांई, जाने फुरने नू आसरा ध्यान दा है। दास कहे अलख स्वरूप तेरा, आधिष्टान साखी जो जहान दा है। शुद्ध आत्मा आसरे विषय जिसदे, भाव रुप अनाद अज्ञान है जी। इक ब्रह्म दे दो विभाग कीते, जीव ईश जो कलिपत जहान है जी। स्तो अधिक ते ईश सर्वज्ञ होया, रजो, तमो ते जीव अन्जान है जी। दास आत्मा विखे अध्यास माया, जैसे रजू में सर्पदा भान है जी।

एको हँ बहो श्यामी संकलप करके, नारी पुरुष बनाया करतार आपे। जीव ईश माया संग मलीन होया, चरा चर बन गया संसार आपे।

कारण सूक्षम अस्थूल परपंच सारा, स्वपन वांग रच लिया संसार आपे।

दास कहे आपे करता डुबदा है, अते सागरों होंवदा पार आपे।

कृपा ईश दी गुरु दयाल होवे, बाहों पकड़ के पार लगाया ऐ।

जीवो है हंकार नू दूर करके, नित सो हैं दा जाप जपाया ऐ। रात दिन अन्दर आपे जाप होवे, मेरा सारा अंधेर उठाया ऐ।

दास कहे बाप जी दया तेरी, मैंने आपने आप नू पाया ऐ।

इक स्त्री भी कारण जगत दा है, जनया जगत जिस ने फाइयां तानियां जी। धीयां पुत्र बन बहुत वधन्त होया, नजर आन एह काल निशानियां जी।

चरम कुंड से जिन्हा प्रीत लाई, भुल गया सो गलां पुरानियां जी। दास जोरू तन रूप दा खस लेंदी, करे स्त्री बहुत विरानियां जी।

इक स्त्री भी कारण जगत दा है, जनया जगत जिस ने फाइयां तानियां जी।

अन्तःश करण दे कर्म चुराये के जी, बनया चोर चेतन गिरफतार होया।

मन वाणी शरीर दे कर्म सारे, मन अपने बहुत खवार होया।

कर्म जेल विच पाऊन सजा लगा, जदों शिष्यां दे नाल प्यार होया। कहे दास छढ अपने आप तांई, फिरदा लोकां दे मगर लाचार होया।

मरना जमना धर्म शरीर दा है, भुख प्यास है धर्म पराण शिष्या।

हर्ष शोक और ध्यान ज्ञान करना, राग द्वेश मन दा धर्म जान शिष्या।

तू न मन, न प्रान, न देह इन्दरे, न्यारा एना ते साखी जान शिष्या।

कल्पित माया दा सम्बंध कल्पित, कल्पित कार्ज ते तेरी ही हान शिष्या।

चाहिए गुरु ज्ञानी ज्ञान कारण, शिष्य साधना सहत बैराज़ चाहिए।

गुरु ईश दी दयाते ज्ञान होवे, सवयं श्रद्धा पूर्व चंगे भाग चाहिए।

होर किसे तदबीर न ज्ञान हुदां, कारण ज्ञान सतसंग में राग चाहिए।

कहे दास अज्ञान अन्धेर कोठा, दूर करन नू ज्ञान चिराग चाहिए। चाहिए छढने विष्ये विकार सारे, सत शास्त्र दे नाल प्यार चाहिए।

कहनी रहनी बहिनी कर्म सोध करके, युक्त चेष्टा से अहार विहार

चाहिए।

किसे गुरु विवेकी दे पास जाके, सत असत्य दा करना विचार चाहिए। दास कहे अस्तय नू छढ दईऐ, ग्रहण करना इको सतसार चाहिए।

श्री नारायण चरितामृत

चाहिए मन नूं मार के वस करना, नाम दान गुरु सेव स्नान चाहिए।

विषय वासना छढ उदास होना, सुते सिद्ध ते करनी गुजरान चाहिए।

अते वाद विवाद नु त्याग करके, महावाक अमृत करना पान चाहिए।

दास आनके ऐस जहान अन्दर, करना अपने आप दा ज्ञान चाहिए।

वेद गुरु कारण ज्ञान मोक्ष दा है, ऐ पर शिष्य नू मोक्ष मुराद चाहिए।

535

दीर्घ दुख संसार है भुल अपनी, जड़ों इस नू पुटना आप चाहिए।

आद खोजने नू चाहिए गुरु ज्ञानी, ऐवें जन्म न करना बरबाद चाहिए।

दास कहे हाजर नाजर रूप तेरा, न ऐ भुलदां न इस दी याद चाहिए।

इस देही दा मालिक ब्रह्म जानो, भांवे मशकरी भांवे ज्ञान है जी।

आप अपने आप नू जानदां है, एहो इस दे विच परमाण है जी।

ऊर खुर ते चुंझ बिन हंस प्यारे, विषय रूप से परे लाशान है जी।

कहे दास प्यारा रहे सब ते न्यारा, सब दे विच वसदा बे निशान है जी।

मुड़ के देख लै अपने आप नु तू, तेरे जिहा न जगत विच होर कोई।

काहनू मुर्खा जंगलां विच फिरदा, जिस नू टोलदा है तू तां है सोई।

जिन्हा आत्मा नाल प्रीत लाई, सोई बैठे जहान ते ला लोई।

दास कहे माशूक दा रूप होवे, जदों मेहर माशूक दी आन होई।

सारे दुख ऐस चेतन दे गल पैन्दे, जदों अपने आप तों भुलदा है।

झूठी माया दे नाल प्रीत पाई, महल माड़ियां देख के फुलदा है।

चंगा खावने नू चंगा पहनने नू, चंगी स्त्री नू चित चांहदा है।

दास कहे जानो इस जगत अन्दर, दुख इन्द्री दा अते बलदा है।

हर दम आस तैनू माया जोड़ने दी, रस्ता रब दा लगदा जहिर बन्दे ।

कर के पाप पाले तन रन मुंडे, सिर ते झल के रब दा कैहर बन्दे ।

चाला पकड़ियां है तू मुर्खा दीयां, किते दोस्ती ते किते वैर बन्दे ।

दास कहे इक आत्मा देख सारे, होवे जगत दे दुख तों खैर बन्दे।

चेतन आत्म स्वरूप नू छढ के जी, देह अभिमान करना तीनो ताप जानो।

चारे वेद छः शास्त्र पुरान अठारह, आत्म बोध बिन विर्धा विरलाप जानो। नाम रूप विकार नू दूर करके, हस्ती भांति प्रिय अपना आप जानो। दास कहे चौरासी दी पई फांसी कटे "सो हूँ" सतगुरु दा जाप जानो।

प्रश्न श्री ठाकुर जी महाराज

लगी आस मैनू तेरे देखने दी, कदों देखांगा तेरा जमाल भगवन । तूही-तूही पुकारदा दिने राती, तेरा नाम रचया बाल-बाल भगवन । जैसा कैसा मैं आपदी शरण आया, आशा दर्श दी होई कुमाल भगवन। दास कहे जी मेहर दी नजर करके, दयो दर्श तां करो निहाल भगवन ।

गुरु उवाच

सत चित आनन्द स्वरूप तेरा, जगत कल्पना ना जिस दे विच प्यारे। माया आद सकंल्प मन चाओ कीता, रूप अपना गया तां भुल प्यारे। स्वपन वांग संसार सब आप होया, जैसा बीज हो या फूल फल प्यारे। दास लख चौरासी दी पई फांसी, जीवो हंग सीने लगा सूल प्यारे। कोई आत्मा आखदा सुन्न है जी, कादे वास्ते कर्म कमाविये जी। कोई आखदा शरीर आत्मा है, चंगा खाविये ते चंगा पहनिये जी। कोई आखदा प्राण ही आत्मा है, जिस दे आसरेआविये जाविये जी। दास कहे कर्मी कर्म आखदे हैं, जैसा कर्म करिये तैसा पाविये जी।

कोई आखदा आत्मा इन्द्रे है, जेहड़े देखदे सुनदे बिहार है जी।

कोई आखदा बुद्धी विलास है जी, रचया अन्दर ते भासदा बाहर है जी। कोई आखदा आत्मा भूत पंजे, जदों मिलन ते धारन आकार है जी। दास कहे है सचदानन्द आत्म, न्यारा सर्व ते सर्व आधार है जी।

प्रश्न श्री ठाकुर जी महाराज

मैं तां जानया याद कर रिहा तैनू, सही जावे जुदाई न मूल प्यारे। तेरे बिछड़ने ते वृक्ष या नास हुंदरा, पानी बाज सुक जावे फुल प्यारे। बगदी प्रेम वाली पवन तन उत्ते, डांवां डोल होके रहा झुल प्यारे। दास कहे हाये मेरी जिन्दगी नू, प्रेम बाप लगा तेरा मूल प्यारे। हाये हाये हैरान हो रिहा हां मैं, दसो पिया दा केहड़ा है दर बापू । केहड़े वतन ओह वसदा पियो मेरा, जेहड़ा पति मेरा सोहना वर बापू । बाज उसदे जीवन न होये मेरा, मेरे मन नू लै गया हर बापू । दास कहे मैं औधरे जा ढूंढां, जिथे दसो महबूब दा घर बापू ।

उत्तर श्री ओम नारायण दत्त जी

सम सन्तोष विचार सतसंग प्यारे, मोह द्वार है पाल द्वार शिष्या। इक इक वी जिसदे पास होवे, होवे जग दे विच निहाल शिष्या। सर्व दुखां नू दूर कर सुख दिरे, दिदे दूर कर काल जरूर शिष्या। दास मोक्ष मार्ग होवे मौकाला तां, जदों गुरु जी होन दयाल शिष्या। पहिले करी विवेक विराग पिछों, शम दम साधन आदि साध बीबा। मोक्ष इच्छा, पर इच्छा त्याग करनी, करना संग असंग नू बाद बीबा। सत गुरु ते पूरा यकीन करना, करना गुरां दे वाक नू याद बीबा। दास कड़े कर के याद आप देखो, खोजो आद नू मिले अनाद बीबा। महा वाक श्रवन कर के मनन करना, फिर करो निध्यासन निर्धार बीवा। जिस तों संशय विप्रजय ना मूल होवन, सो ही श्रवन कर के होवे पार

बीबा।

मनन संशय नू दूर कर डारया है, जैसे मोक्ष दी इच्छा व्यवहार बीवा। कहे दास विप्रीत जो भावना है, करे चूर निध्यासन विचार बीबा।

तत्त्व मसी सुन के महा वाक गुरु ते, अहं ब्रह्म असमी तू उचार शिष्या। बार बार उचार निर्धार होवे, होवे एकता सर्व दा सार शिष्या।

जैसी भावना कामना मिले तैसी, तां ते सदा "सो हं" नू धार शिष्या। दास कहे जो अपना हो जावे, जिस नाल चा करिये प्यार शिष्या।

साखी कहे है पुरुष प्रकृत दोनो, पुरुष अकरे किरत प्रकृत है जी। भोग मोक्ष दी प्राप्ती पुरुष तांई, करे सर्वत्र प्रकृती एह किरत है जी। पुरुष शुद्ध असंग न संग कोई, देख रिहा प्रकृत दी निरत है जी। दास पुरुष प्रकृती बन्दक करना, एहो मोक्ष प्रकृत आश्रत है जी। न्यायक कहे प्रमाणु आरम्भ होके, बनया जगत सारा नाना कार है जी। जड़ आत्मा विच गुण ज्ञान रहन्दा, बिघर कुण्ड न्याय विचार है जी। जदों मन गुण आत्मा विच होवे, तदों देखदा सुनदा विहार है जी। दास दुःख हानी तांवें मोक्ष जानी, जड़ आत्म सशोप्ती सार है जी। नास्तिक आखदा आत्मा सुन्न है जी, पैदा सुन्न ते अन्त नु सुन्न होवे। नदी वांग प्रवाह परपंच सारा, आसो आस मासो मास जून होवे।

जेकर आत्मा जुदा शरीर ते है, तदों मरने दे बाद मालूम होवे।

दास खाना पीना भोग मोक्ष जानी, आया अन्त गंधा संत न ऊन होवे। ब्रह्म रूप पुकारदा ब्रह्म ज्ञानी, जैसे मृतका ही घटा कार है जी। नाम रूप प्रपंच नूँ जान झूठा, जैसे रस्सी में सर्प अकार है जी। इक चीज दे ही दोनों नाम रखे, इक ब्रह्म ते दूजा संसार है जी दास जगत ना होआ ना होन हारा, सच्चदानन्द आत्म निर्विकार है जी। धर्म सोई जिस धर्म ते परम पावे, कर्म सोई जो करे अकर्म शिष्या। ध्यान सोई जिस ध्यान ते ज्ञान होवे, ज्ञान सोई जिस ते जावे भरम शिष्या। योग सोई जिस योग ते रोग जावे, रोग सो जो बुद्धि है चरम शिष्या। दास लखो सोई जो अलख होवे, अलख स्वयं सरूप है परम शिष्या।

विधा सोई करे दूर जो अविधा नू, विदित होवे जो अपना आप शिष्या।

संग सो जो संग असंग करे, असंग सोई जो नासे त्रे ताप शिष्या।

साध सो जो जाने असाध तांई है, असाध सोई जो करे अपाप शिष्या।

दास तप सोई जो तपत मेठे, जप सोई जो करे अजाप शिष्या।

निश्चय ज्ञान मुख भगती वैराग वरतन, जिस दे हैन तिने भागवान सोई।

महा वाक सुन के गुरु मुख द्वारा, रहत संशय विप्रजय ते ज्ञान सोई।

मिठा बोलना देखना ईक तारे, भेदाभाव करना भगती जान सोई।

दास कहे वैराग ब्रह्म लोक तांई, काग विष्ट जान गिलान सोई।

प्रथम सत असत विवेक करना, फिर असत ते करना वैराग प्यारे ।

भोग वासना लोक अलोक दी जो, ऐसे तजे जैसे विष्टा काग प्यारे।

श्रम-दम सामग्री साध सारी, मोक्ष इच्छा करनी ज्यूं सिर आग प्यारे।

दास कहे साधन जिसदे पास चारे, जानो सो अधिकारी बड़े भाग प्यारे।

अखां बाझ देखे कनां बाझ सुनदा, वाणी बाझ बोल वाचे वेद चारे।

ध्यान बाझ सुगंध दुर्गधं लैंदा, बाझ रसना ते लैंदा सुवाद सारे।

त्वचा बाझ शरीर स्पर्श करदा, मन बाझ संकल्प विकल्प धारे।

कहे अतीत इन्द्र आत्मा है, न्यारा सर्व ते करे प्रकाश प्यारे।

हथां बाझ करदा क्रिया कर्म सारे, चरणां बाझ चले सुन्दर चाल है जी।

लिंग बाझ करदा भोग स्त्री से, गुदा बाझ मल तजे विसाल प्यारे।

प्राणां बाझ करदा प्राण चेष्टा नू, बुद्धि बाझ जो करे ख्याल है जी।

दास बिना सामग्री आत्मा ऐह, सुपन वांग रचदा जगत जाल है जी।

ज्ञानवान दी गत ज्ञानवान जाने, होर कोई न तिसे पछान दा है।

गोबर हारा की लाल दी पर्ख जाने, पर्ख ओस दी जौहरी जान दा है।

ज्ञानी अपने आप विच मस्त होआ, चढ़या रंग गूढ़ा गुरु ज्ञान दा है।

दास कहे निर संदेह जिवें खुशी वरते, झानवान ते रूप भगवान दा है।

अंग तंग न तुल व्यवहार दे है, फर्क निश्चय दे विच पछान भाई।

अंग पुरूष दे निश्चय शरीर सच्चा, निश्चय तंग दे झूठा संसार भाई।

अंग अगन जहान दे विच जलदा, तंग तरे भवसागर अज्ञान भाई।

दास अंग अज्ञानी स्वरूप हानी, तंग रिहा स्वरूप नू जान भाई।

ज्ञानी पुरूष दे शीश न दंड कोई, चाहे करे न करे कोई कर्म शिष्या।

चाहे नगर वसे चाहे शहर वसे, नहीं अपने आप विच भरम शिष्या।

चाहे बोले चाहे ओह मौन धारे, चाहे रहे विचारदा परम शिष्या।

दास कहे रोवे चाहे हसे कोई, जाने न ज्ञानी दा कर्म शिष्या। चाहे राज बैठे चाहे भीख मंगे, चाहे ज्ञानी करे ज्ञान ध्यान है जी।

चाहे तीर्थां ते करे वास साधु, चाहे विच जा वसे मसान है जी।

चाहे करे हा-हाकार फिरे भौंदा, चाहे गावे वजावे सुर ताल है जी।

दास कहे निर्लेप स्वयं आत्मा है, होवे ओसदी कदी न हान है जी।

ज्ञानवान दे कर्म अकर्म जानो, जिस कर्म ते मोक्ष ना भोग है जी।

ज्ञान अगन दे विच सब जगत जलया, जले जगत तां हर्ख न शोक होवे। सारा जग ज्ञानी अपना रूप जाने, तिस नू कोई ना योग वियोग होवे।

दास कहै ना रहया कर्तव्य कोई, किया कर्म सो जो करने योग होवे।

ज्ञानी करे ज्ञान पदार्थां तों, चाहे भोग भोगे करे राज है जी।

चाहे चतुर चंचल नारां विच विचरे, चाहे करे ना कोई काज है जी। चाहे भस्म लगाये के फिरे नंगा, तिसे अपनी ना कोई लाज है जी।

दास कहे चाहे चाह मार बैठे, चाहे रचे बैठा सारे साज है जी।

सत चित अखण्ड आनन्द आत्म, नाम रूप दा करे प्रकाश है जी। जगत सुपन सिशोपती विच वसे, जैसे घड़े अन्दर घटा काश है जी।

देह इन्द्रे प्राण मन नास होवे, आत्म नित अखण्ड अनास है जी।

दास कहे असत शरीर अन्दर, सत आत्मा दा होवे वास है जी।

ज्ञानवान शरीर नु तुच्छ जाने, अज्ञानी जाने शरीर नू सत है जी। क्रिया कर्म शरीर दा धर्म है जो, जाने अपने आप विच तत है जी।

ज्ञानी देह तज ब्रह्म दा रूप होवे, मूर्ख जग अन्दर आवे वत है जी।

सन्त दास ज्ञानी गर्भ छड देवे, गर्भ अन्दर मूर्ख होये हत है जी।

करे कर्म निष्कर्म नारायण अर्पण, मैल दूर होये अन्तः कर्ण दी जी।

फेर करे उपासना दृढ़ होके, नसे चंचलता जो चित्त चरण दी जी ।

महावाक गुरु मुख सुन ज्ञान होवे, परदा दूर हो जावे आवरण दा जी।

दास कहे त्रैकाण्ड जो वेद सारा, साधन ठीक है जगत दे तरन दा जी।

जिचर जाने न अपने आप तांई, तिचर जम दा दूत सतांवदा ई।

जान आप न बख्श जो जान सारे, दुख जीव पूने विच पांवदा ई।

जम साधना दंड सब खंड होवे, रब अपना आप सदांवदा ई।

दास लख चौरासी दी तोड़ फांसी, ज्ञानी आंवदा ना किते जांवदा ई।

बार-बार बलिहार उस मरद तो मैं, जिस ने जानया अपना आप है जी।

आप जानिया मनया वेद ब्रह्मा, नष्ट होय तनदे तीनो ताप है जी।

है समर्थ ज्ञानी करन योग सब कुछ, देवे वर या किसे सराप है जी।

दास कहे ब्रह्म जान के आप तांई, फेर करे कहो किस दा जाप है जी।

महा वाक् सुनदा गुरु मुख गुनदा, इस दा अर्थ चुनदा चेला जान सोई।

चरणी चित्त लावे सेवा वी कमावे, गुरु ज्ञान गावे ज्ञानवान सोई।

आज्ञाकारी होवे श्रद्धाधारी होवे, ते अधिकारी होवे करे पान सोई।

कहे दास करदा जो अभ्यास हर दा, सारे दुःख तरदा ज्ञानवान सोई।

ब्रह्माकार वृति जदों उदय होवे, जीवकार वृति होवे नास तांहीं।

मरने जमने दी गण्ड खुल जावे, मानों टुट चली जम फांस तांहीं।

कर्ता भोगता भरम सब दूर होवे, होवे जगत तों झट उदास तांही।

दास कहे अकहे पर मस्त होवे, अपने आप दा होवे प्रकाश तांही।

ब्रह्म करे षट कर्म ते ब्रह्म जाने, ब्रह्म ओस नू जानो प्रधान है जी।

क्षत्री करे तिन कर्म ते राज भोगे, पाले प्रजा धर्म नू जान है जी।

वैश्य करे खेती सामी वन्ज आदी, यथा शक्ति करे पुण्र दान है जी।

दास कहे शूद्र सब दी करे सेवा, प्राप्त सेवा ते करे गुजरान है जी।

प्रथम करे ब्रह्मचर्य गुरु पास वसे, पढ़े विद्या जो चारे वेद है जी।

पढ़ के विद्या गृहस्थ दे भोग भोगे, पुत्र प्राप्ती करे निरवैर है जी।

वान प्रस्थ होके विचरे तीर्था ते, नारी पुत्र छड़े जान लै खेद है जी।

दास कहे फिर भजन नू करे आखिर, शिष्या सूत्र त्यागे तजे भेद है जी।

चेतन शुद्ध माया इस जीव कीता, भेद जड़ चेतन प्रपंच है जी।

जीव जीव में भेद अनाद दो ही, अन्त ज्ञान तों होवन्दे पंज है जी।

चेतन आत्मा नित अनाद कहिए, तां विन और प्रपंच सब कच है जी।

दास कहे पंज ज्ञान ते दग्ध हुन्दे, छेंवे आत्मा लगे ना ऊंच है जी।

शुद्ध सते प्रकाश स्वरूप तेरा, किसे वस्त दी करें ना आस प्यारे।

मन वाणी दा विषा न हो सके, नाम रूप दा करे प्रकाश प्यारे।

इन्द्र प्राण मन चेष्टा करे तेते, तेरा सर्व दे विच है वास प्यारे।

दास कहे अलख स्वरूप तेरा, लखे कौन तैनू दूजा नास प्यारे।

प्रश्न- श्री ठाकुर जी महाराज

हे दीना नाथ जी मैंनू आपदे वचन सुन के अति आनन्द होआ है

पर मरने जमने वाली गल मेरे चित चों नहीं गई।

उत्तर श्री ओम नारायण दत्त जी

मरना जमना धर्म न मूल तेरा, ऐह तां धर्म शरीर दा जान बीबा।

हर्ष शोक ते काम क्रोध मन का, खान पान आदि धर्म प्राण बीबा।

सुनदा देखदा बोलदा तू नाहीं, ऐह तां धर्म वाणी आंख कान बीबा। दास कहे अकरे शुद्ध रूप तेरा, सत्ता सत दा करे जो ज्ञान बीबा।

राग द्वेष निवृत हो गए जिसदे, उसनू जगत नाहीं बंधन पांवदा ई।

मोह नार दा नास हो गया तिस दा, मरे मेर तेर सारी तर जांवदा ई।

श्री नारायण चरितामृत

धन पुत्र संताप न करे कोई, हर्ष शोक ते राहत सदावन्दा ई। दास सुखी सो अपने आप अन्दर, अठों पहर आनन्द गुण गांवदा ई। ज्ञानवान नू नहीं करतब कोई, चाहे करे न करे सो कर्म भाई। पुण पाप ते रहे निर्लेप ज्ञानी, जाने आत्मा अपना धर्म भाई। कर्ता कर्म क्रिया दृष्टा दर्श दर्शन, नहीं आत्मा दे विच भरम भाई। दास कहे सो आप नू आप जाने, दूजा कोई न जानदा मर्म भाई। श्रवन करे शिष्य गुरां दे वाक सच्चे, जिसदे सुने ते होए कल्याण बन्दे। होवे दूर अहंकार संसार सारा, पूर्ण आत्मा दा होवे ज्ञान बन्दे। जीव ईश दा भेद बी भस्म होवे, दुई दूर होवे दुख हान बन्दे। दास कहे महा वाक सुन गुरुं कोलों, अपने आप विच होवे मस्तान बन्दे।

543

प्रश्न- श्री ठाकुर जी महाराज

दोहा- जग जन्नु सब भास दे, करदे कर्म अकर्म। नरक स्वर्ग को जांवन्दे, कैसे उपजे भरम ॥ कई शिष्य गुरु कई है, कई ज्ञानी होए। अज्ञानी किवं वरतदे, कैसे भान होए ॥ कृपा कर के गुरु जी संसा देओ मिटाय। दास शरण हां आप दी, नरो नूर हो जाए ॥

उतर-गुरु वाच

बैंत - तेरा ख्याल ही तैनू खराब करदा, तेरा ख्याल ही तैनू संवारदा ओए। तेरे ख्याल अन्दर पुण पाप होवे, तेरा ख्याल ही डोबदा तारदा ओए। तेरा ख्याल ही नरक ते स्वर्ग भोगे, तेरा ख्याल ही जन्म नू धारदा ओए।

544

श्री नारायण चरितामृत

दास कहे ख्याल दी खेल सारी, तेरा ख्याल ही बीज संसार दा ओए।

तेरा ख्याल ही बादशाह करे तैनू, तेरा ख्याल ही फेर कंगाल होवे।

तेरा ख्याल ही ऊँच ते नीच करदा, जैसा ख्याल तेरा तैसा हाल होवे।

तेरे ख्याल ही सुघढ़ बनाय तैंनू, जदों ख्याल तेरा वाक पाल होवे।

कहे दास ख्याल दा जाल सारा, छड ख्याल नू निश जंजाल होवे।

तेरे ख्याल अन्दर जीव ईश होआ, तेरे ख्याल दे विच नर नार भाई।

तेरे ख्याल अन्दर गुरु शिष्य होवे, तेरे ख्याल अन्दर चतुर गंवार भाई।

तेरे ख्याल अन्दर वेद वाद ब्रह्मा, तेरे ख्याल दे अन्दर विचार भाई।

दास होरे है सब ख्याल अन्दर, नही ख्याल अन्दर परवरदिगार भाई।

तेरे ख्याल अन्दर करतब सारा, कर्म काण्ड उपासना ज्ञान प्यारे।

तेरे ख्याल आश्रम वर्ण वन्धन, तेरे ख्याल अन्दर नाम दान प्यारे।

तेरा ख्याल ही कर्ता ते भोगता है, दुख सुख जो विच जहान प्यारे।

दास कहे तू आप ख्याल नाहीं, तू तां रिहा ख्याल नू जान प्यारे।

इक रूप अनूप सरूप तेरा, भव सिंध दा करे एह नास भाई।

दवन्दातीत प्रतीत कर जान तिस नू, जिस नू जानया रहे ना फांस भाई। हर्ष-शोक ते सुन आजून आत्मा, निराकार निर्भय चिदाकाश भाई।

दास कहे अलख सरूप तेरा, जिस दे विच ना कोई बी आस भाई। पहिलां अपने आप नू सोच बीबा, किदां छुप्या शरीर मकान अन्दर।

कैसे अपने आप नू भूलया हैं, बात कहीं न जाए जबान अन्दर।

प्रत्यक्ष आद प्रमाण सब सिद्ध करदा, आप आवे न वृति दे ज्ञान अन्दर।

दास कहे साखी तेरा आत्मा है, दुख सुख नू रिहया जो जान अन्दर । अस्ति भान्ति ते प्रिय है इक आत्मा हैं, नाम रूप संसार विकार बीबा।

नाम रूप असत नवनीतता है, आदिष्टान इक सतसार बीबा।

रजु सर्प दी तरह प्रपंच झूठा, रजू वांग सता आत्म धार बीबा। दास थम में चोर प्रपंच जैसे, थम वांग आत्म निर्विकार बीबा।

श्री नारायण चरितामृत

सत आत्मा बिच प्रपंच झूठा, जिवें रजत दे भूषण दा नाम हैगा। जैसे मृतका दे घरे मृतका है, तैसे जगत वो आत्मा राम हैगा। पानी विच तरंग जल रूप जैसे, तैसे चेतन में चित विश्राम हैगा। दास कारज कारण नू इक जानो, नहीं बनया बनाया कोई काम हैगा।

प्रश्न श्री ठाकुर जी-

दोहा- जीव वस्त की गुरु जी, ईश्वर दा की हाल। पैदा होया जगत किंव, कैसे होसी काल ॥ साधू अच्छे जगत में, अते गृहिस्थी लोग। निर्णय करके कहो जी, हरो जियां के शोक ॥

उतर श्री ओम नारायण दत जी

बैंत- इको वस्त दे ही दोनों नाम रखे, इक ब्रह्म ते दूजा संसार बेली। चाहे जगत आखो चाहे ब्रह्म आखो, इक रूप चेतन निर्विकार बेली। जीव ईश दी कल्पना जान झूठी, अध्यारोप गुरू शिष्य विहार बेली। दास कहे ना होआ ना होन हारा, शुद्ध आत्मा ते जगत आकार बेली। कर्म काण्ड, उपासना, ज्ञान तिन्ने, लिखे वेद दे विच प्रमाण शिष्या। कर्म करे है कर्म अधिकारी जिस नू, नित अनित निमित्त नू जान शिष्या। शीश होए उपासना करे कोई, होए रूप उपास दा भान शिष्या। दास कर्म उपासना जान साधन, फल ऐना दा आत्म-ज्ञान शिष्या। ज्ञान बिना जो कर्म उपासना है, सो तू जान शरीर ते भार भाई। चारे वेद उचारदा कण्ठ सेती, तोते वांग जानों बे विचार भाई। तीर्थ प्रत अनेक कर थकत होआ, नहीं अपने आप दी सार भाई। दास कहे ज्ञान बिन फिरे भुला, किंवे होवे संसार ते पार भाई।

कल्पित माया दे विचों हंकार होआ, उस हंकार दे विचों आकाश भाई। शब्द गुन आकाश तों पवन होई, पैदा पवन ते अग्न प्रकाश भाई।

अग्गों नीर होआ, नीरो पृथ्वी जे, बीच पृथ्वी अन्न ते घास भाई।

दास कहे अन्नो आदम देह बनया, ऐस देह विच हरी दा वास भाई।

पंज तत ते होआ शरीर पैदा, पंज तत दे विच समांवदा जी।

अंत:करण ते इन्द्र प्राण आदी, पंज तत दा ठाठ सुहावन्दा जी।

पंज तत ही भोग ते भोगदा है, तत ततु नू सता पहुंचावन्दे जी।

दास पंज ही तत ते जगत सारा न्यारा आत्मा नज़र न आंवदा जी।

निर्गुण आत्मा देही ते रूप नाहीं, न्यारा देह ते साखी नू जान दासा। देह दुःख असत जड़ रूप जानों, आत्म नित आनन्द स्वयं ज्ञान दासा।

देह खेह खराब पेशाब दी है, जेहड़ी होंवन्दी है सुन्दर भान दासा। दास कहे तू शुद्ध असंग आत्म, निराकार निरवैर निर्वाण दासा।

जिसने जानया अपने आप तांई, उसनू रहिया न कोई करतब काका।

पुण पाप दा भार उतारया ई, दित्ता दुई नू दूर कर जब काका।

इक रूप अनूप स्वरूप देखे, नाहीं नजर आवे झूठा जग काका।

दास कहे फिर अपना आप जाने, नहीं रहिया जहान दा लब काका।

प्रश्न श्री ठाकुर जी-

दोहा-

कोरड़ा छन्द-

देखे बिन नहीं मनदा, कहा पिता दा पूत ।

जो बिन देखे मन लवे, जानो उसको ऊत ॥

बिना देखे आंवदा नहीं यकीन जी, गल एहो आप तांई कहन्दा दीन जी।

गलां नाल बाहर दा भर्म चुकिया, अन्दर दा पर्दा अजे नहीं टुटिया ।

श्री नारायण चरितामृत

जोत मैं तां देखनी है करतार दी, भगतां दी वाणी जिन्हू है पुकार दी। सन्त दासा दसो जानदे या नहीं, बिना देखे आंवदा नहीं यकीन जी।

उतर श्री ओम जी महाराज-

दोहा-

जिन्हां देखी जोत ओहो, सोई करन पुकार। जीभ कहन न जानदी, की मैं कहां ऊचार ।।

चौपाई-

देख आत्मा तेज अपारा। और खेल कई तांही मजारा ॥ कोट भान सम जोत प्रकाशी। तांही स्थान बैकुंठ निवासी ।। तहां निरंजन अंजन खोले। कर्म धर्म सब ताहिं भरोले ॥ बिना विप्र ते अति विसाला। होवे देव धुन अधिक रसाला ॥ बिना बीन नारद मुनि नाचे। गावें ताल बजावे साचे ॥ जिस को कहे निरंजन देवा। ऋषि मुनि जांकी करदे सेवा ॥ बिना रूप और रंग समाना। तहां विराजे दास लजाना ।।

दोहा- ऐसी लीला देख के, होए बहुत आनन्द । आनन्द कन्द जी मिल पए क्यों न होए आनन्द ।

प्रश्न श्री ठाकुर जी महाराज-

दोहा-

अन्तर मुझ को हर मिले, मन में मिले मुरार। सो विध मुझ को कहो जी, सतगुरु कृपा धार ॥

उतर श्री ओम जी महाराज-

दोहा-

बड़े खुशी हो ओम जी, वचन कहे मुस्कुराऐ। सुनो समाधि योग अब, तुम को कहूं सुनाऐ ॥

चौपाई-

बाहर ते बन्दो दस द्वारे। अन्तर ओर लगावो सारे ॥

नैन झरोखे उल्टा देखो। खेल रचाया अलख अलेखो ॥

पावो सहज सहज गिरधारी। देख खेल एह कही विचारी ॥

शब्द अनाहद घण्टा बाजे। मधुर-मधुर धुन अनहद बाजे ॥

नैनन को सम कर दिखलाया। जो बाहर सो अन्तर पाया ॥

बाती प्रीत ध्यान लै धूप। ज्ञान स्वरूप जगाओ दीप ॥ जहां कुछ नहीं तहां कुछ देखो। अन्तर मांही हरि इंहूं पेखो॥

शनैः २ अभ्यास कमावो। कहे दास हंसा बन जावो ।

बापू जी से ब्रह्म-ज्ञान प्राप्त कर के ठाकुर जी अति आनन्दित हुए और उनके बताये मार्ग पर चल कर साधना, योग, जप आदि करने लगे। उनकी आत्मिक प्रगति अति द्रुत गति से हुई। षट-चक्र का भेदन करके

उनकी चेतना अनन्त आनन्द की राशि में व्याप्त हो गई। ठाकुर जी ने बापू ओम जी से प्राप्त ज्ञान को अपने ग्रन्थों 'दुःख-नाशनी,' 'सरब मती' और 'ओम गलजार' में अति सुगम कर के लिखा। इन ग्रन्थों को लिखने के उपरान्त ठाकुर दास जी नन्दाचौर आये और अपने गुरु के चरणों में सभी ग्रन्थ समर्पित कर दिए। जब बापू जी ने उन ग्रंथों का श्रवण किया तब ठाकुर दास जी से कहा कि आपने नग्न तलवार म्यान से निकाल कर सभी को दिखा दी है। यह सुन कर ठाकुर दास जी ने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया कि इस तलवार को चलाने के लिए किसी योद्धा का होना परम आवश्यक है। योद्धा के अभाव में खाली तलवार कुछ नहीं कर सकती। ठाकुर दास जी के कहने का यह भाव था कि जब तक कोई भौतिक विश्व के माया आदि बन्धनों को त्याग कर अध्यात्म पथ पर अग्रसर नहीं होगा तब तक वह उस तलवार रूपी ज्ञान को उठाने का भी अधिकारी नहीं हो सकता।

ठाकुर दास जी पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर वापिस लाम्बड़ा आ कर रहने लगे। दिन में अपना काम करते और रात को ओम जी के पास आ कर उनकी सेवा करते। बापू ओम जी ठाकुर दास जी से बेहद प्रेम करते थे। एक रात जब ठाकुर दास जी ध्यानमग्न थे तब एक आकाशवाणी हुई कि तुम्हारे पिता कल सुबह देह त्याग देंगे। तुम शोक मत करना और परम पिता परमात्मा के चरण कमलों में प्रीति रखना। ठाकुर जी ने चारों तरफ देखा परन्तु कोई नजर न आया। तीन बार वह आकाशवाणी

हुई लेकिन ठाकुर जी किसी को प्रत्यक्ष नहीं देख सके। ठाकुर जी प्रातः काल अपना नित्य-नियम कर के अपने कार्य में लीन हो गए। उधर उनके पिता के मन में आया कि आज क्यों न नदी के तट पर जा कर स्नान किया जाए। स्नान करने के उपरान्त जब उन्होंने अंजलि में जल लेकर सूर्य को अर्ध्य अर्पण करने हेतु हाथ ऊपर किए उसी क्षण उनके श्वास पूरे हो गए। बिना किसी तकलीफ़ और पीड़ा के उस महान् आत्मा ने देह त्याग दिया। ठाकुर दास जी को जब यह मर्मान्तक समाचार मिला तब वह भाग कर नदी तट पर गये और पिता की देह को ले आये। तत्पश्चात् उनका अन्तिम संस्कार विधि-विधान पूर्वक कर दिया गया। अब ठाकुर जी इस रहस्य को समझ गये कि पिछली रात जो आकाशवाणी उन्होंने सुनी

थी वह बापू ओम जी ने इसलिए की थी ताकि इस पीड़ादायक घटना से पहले ही ठाकुर जी मानसिक तौर पर तैयार हो सकें। ठाकुर दास पिता की मृत्यु के बाद शान्त चित्त बने रहे और साधना-उपासना में लीन रहे।

पिता की मृत्यु के उपरान्त ठाकुर दास जी ने ओम जी से अपना पुश्तैनी कार्य छोड़ने की अनुमति मांगी परन्तु ओम जी ने कहा कि अभी तक आपका कर्म-क्षय नहीं हुआ है। इसलिए जब तक आपके समस्त कर्म-बन्धन कट नहीं जाते तब तक आप अपना लौकिक कार्य भी करते जाइए। इसके साथ-साथ आप संतों की सेवा और प्रभु का ध्यान भी कीजिए। बापू ओम जी का आदेश प्राप्त कर ठाकुर जी अपना

दैनिक कार्य करने लगे और उसके साथ ही अधिक से अधिक समय ध्यान में लगाने लगे। इस प्रकार पाँच महीने बीतने के बाद बापू ओम जी की कृपा से उन्हें उस अखण्ड, चिरन्तन और शाश्वत दिव्य ज्योति का निरंतर दर्शन प्राप्त होने लगा जिसकी इच्छा समस्त ऋषि, मुनि और योगी जन करते हैं। वह दिन-रात समाधि की अवस्था में रहने लगे। उनका मन लौकिक भावभूमि से हट कर उस उच्चतम भावभूमि पर आसीन हो गया जिसके उपरान्त किसी भी प्रकार का लौकिक कार्य करना उनके लिए असम्भव हो गया। काम करते हुए उस लौकिक कार्य में एकाग्रता के अभाव में उनके हाथों में बार-बार चोट लगने लगी।

ऐसी स्थिति में वह बापू ओम जी के पास आये और प्रार्थना की, "बापू जी, अब मुझसे यह कार्य होना सम्भव नहीं है। आप कृपा करके यह कार्य छोड़ने की आज्ञा दे दीजिए।" यह सुन कर बापू ओम जी ने कहा कि जब तक सच्ची वस्तु अर्थात् परम तत्त्व की प्राप्ति नहीं हो जाती तब तक सांसारिक कार्यों को करते रहना चाहिए, नहीं तो कई बार ईश्वर प्राप्ति के मार्ग में कोई त्रुटि रह जाने पर न तो ईश्वर प्राप्ति ही हो पाती है और न ही सांसारिक उद्देश्यों की पूर्ति ही सम्भव हो पाती है। अब समय आ गया है जब तुम अपने सांसारिक कर्त्तव्यों को विराम दे सकते हो। तुम पंचवटी में आसन लगा कर हरि भजन करो। धीरे-धीरे प्रभु की कृपा का ऐसा रंग बरसेगा कि बाद में कई भव्य मन्दिरों का निर्माण होगा। बापू ओम जी के वचनामृत सुन कर ठाकुर दास जी ने

एक कुटिया बनाई और उसके पास एक कच्ची खुई निकलवा कर वहाँ वास करने लगे। बाद में बापू ओम जी की कृपा से वहाँ मन्दिर का निर्माण भी हुआ।

बापू ओम जी की कृपा से ठाकुर दास जी को एक अद्वितीय पुत्र की प्राप्ति हुई थी। वह पुत्र संत राम जी थे जो पिछले 16 जन्मों के ऋषि थे। बापू ओम जी प्रायः लाम्बड़ा ग्राम जाया करते थे। उनका ठाकुर जी से जो प्रेम था वह अगाध और अनन्त था। एक दिन बापू ओम जी ने ठाकुर जी से कहा कि एक गाड़ी मंगाओ, आज हम लाम्बड़ा गांव जायेंगे। उनके गाँव पहुँचने पर लोगों ने दोनों गुरुओं का भव्य स्वागत किया। दूर-दूर से सेवक आते और यथायोग्य भेंट चढ़ा कर श्रद्धा-पुष्प अर्पित करते। ठाकुर दास जी स्वयं भूमि पर आसन लगा कर बैठते और पलंग पर बापू ओम जी को बिठा कर उनकी सेवा करते।

ठाकुर दास जी ने अपने प्रिय गुरु की इतने मन-प्राण से सेवा की कि देखने वाले द्रवीभूत हो उठे। स्वयं अपने हाथों से बापू ओम जी को भोजन खिला कर ठाकुर दास जी महातृप्ति का अनुभव करते। लगभग दो महीने तक ओम जी ने लाम्बड़ा ग्राम में निवास किया और दो महीने तक ठाकुर दास जी ने निद्रा त्याग कर बापू जी की अनथक सेवा की। बापू जी के वापिस नन्दाचौर जाने पर भी ठाकुर दास जी नित्य उनके दर्शन करने नन्दाचौर जाते और वापिस लाम्बड़ा आते समय अपनी पीठ

श्री नारायण चरितामृत

नन्दाचौर की तरफ न करके विपरीत दिशा में करते हुए लाम्बड़ा वापिस जाते। कभी-कभी ठाकुर दास जी बापू ओम जी के लिए खीर बना कर लाते और पूरे रास्ते अपने सिर पर गर्म खीर का बर्तन और उसके नीचे जलती हुई अँगीठी रख कर लाते ताकि खीर भली-भांति रिझती रहे। ऐसी गुरु-भक्ति न किसी ने देखी, न सुनी। धन्य हैं संत ठाकुर दास जी और धन्य है उनका गुरु-प्रेम। गुरु-शिष्य के इस दिव्य प्रेम का वर्णन करना साक्षात् वाग्देवी सरस्वती के सामर्थ्य से भी बाहर है।

धीरे-धीरे संत ठाकुर दास जी के ब्रह्मलीन होने का समय आ गया। बापू ओम जी के देह-त्याग के उपरान्त ठाकुर जी से अपने प्रिय गुरुदेव का विरह सहन नहीं हुआ। बापू ओम जी के तिरोधान के

लगभग छः महीने बाद ही ठाकुर जी ने इस अनित्य संसार को त्याग कर अपने प्रिय गुरुदेव के श्रीचरणों में जाने का संकल्प ले लिया। मार्गशीर्ष महीने के 23 दिन व्यतीत होने पर ठाकुर जी ने वचन किया कि परसों को इस नगर में बहुत भारी मेला लगेगा और हमारी सवारी निकलेगी। 25 मार्गशीर्ष को उनके पेट में कुछ पीड़ा हुई।

भाई राम सिंह जी उनके पास आए और नब्ज देख कर कहने लगे कि महाराज जी, आराम आ जायेगा, चिन्ता की कोई बात नहीं यह सुन कर ठाकुर जी ने कहा कि हमें पता है। आधी रात के कुछ समय बाद ठाकुर जी पलंग पर पद्म आसन में बैठ गए और रजाई की बुकल मार

कर श्वास को हवाई की तरह खींच लिया। श्वास अन्दर ही गुम हो गया, लौट के नहीं आया। उस समय श्री देव गिरधारी जी के भाई चिरंजी लाल और भाई राम सिंह एवं ऊधोराम भी पास ही खड़े थे। सभी ने रोना शुरू कर दिया। ठाकुर जी की भविष्यवाणी के अनुसार ही उनकी सवारी निकली। श्री ठाकुर जी की समाधि से पूर्व दो चार दिन पहले श्री देव गिरधारी जी को जब पता लगा कि ठाकुर जी को पीड़ा हो रही है तो उन्होंने अपने भाई चिरंजी लाल के हाथ बादाम रोगन आदि भेज कर कहा कि आप ठाकुर जी की सेवा करो। हम भी बाद में आ जायेंगे।

श्री ठाकुर जी के शरीर छोड़ने से एक दिन पहले श्री देव गिरधारी जी को पता चल गया कि आज रात ठाकुर जी ने देह-त्याग करनी है। एक दिन पहले आ कर उन्होंने जिस चौबारे में ठाकुर जी रहते थे उसे ऊपर से ले कर नीचे तक गोबर और मिट्टी का पौचा लगा कर पवित्र किया हालांकि पूरा फर्श पक्का था। फिर पलंग उठा कर नीचे ही आसन लगाया। पचास जोतों की आरती बना कर बहुत सारी संगत को पास बिठा कर दिन के बारह बजे से आरती करनी आरम्भ की। तत्पश्चात् देव गिरधारी जी वापिस खानपुर आ गई।

जब रात्रि के समय ठाकुर जी ने शरीर त्यागा तब खानपुर में एक दिव्य ज्योति के रूप में ठाकुर जी श्री देव गिरधारी जी के समक्ष प्रकट

हो गए और कहने लगे कि "लो बनवारी जी, आज हम झूठा शरीर त्याग कर आप के पास आ गए हैं।" यह कह कर मार्ग में प्रकाश करते हुए श्री ठाकुर जी श्री देव गिरधारी जी के स्वरूप में समा गए। जब तीसरे पहर श्री गिरधारी जी' आसां दी वार' पढ़ने लगीं तो आकाशवाणी हुई कि 'बस'। श्री देव गिरधारी जी बस कर समाधि में लीन हो गई और ध्यान में देखने लगीं कि बापू ठाकुर जी की देह आसन पर विराजमान है और चिरंजी लाल हाथ जोड़ कर आगे खड़े हैं।

श्री देव गिरधारी जी उसी समय समाधि से उठी और अपनी भाभी इन्दर कौर को साथ ले कर अपनी माता जी से कहने लगीं कि बापू जी ने तो देह त्याग कर दिया है और हम लाम्बड़ा जा रहे हैं। उनकी माता ने कहा कि मार्गशीर्ष का महीना है, आधी रात का समय है और रास्ते में ठण्डे जल के गहरे नाले में से हो कर जाना बहुत कठिन हैं। आगे आपकी जो इच्छा सो करें। हम आपको रोक नहीं सकते। श्री देव गिरधारी जी तुरन्त लाम्बड़ा के लिए चल पड़ीं और सूरज चढ़ने से पहले ही लाम्बड़े पहुँच कर अपने प्रिय गुरुदेव की देह को नमस्कार कर के सारी नाड़ियाँ देखी कि कहीं श्वास न चढ़े हों।

जब कहीं भी श्वास नज़र नहीं आए तब ठाकुर जी का अंतिम संस्कार कर दिया गया। तत्पश्चात् श्री देव गिरधारी जी ने बहुत भारी यज्ञ किया और ब्रह्म-बाग में महाराज जी का आसन बना दिया। श्री

ठाकुर जी के तिरोधान के पश्चात् श्री देव गिरधारी जी ने ठाकुर दास जी के पुत्र संत राम जी को गद्दीनशीन कर दिया। ठाकुर दास जी का नाम बापू ओम जी के शिष्य के रूप में अमर है और उन साधकों के लिए एक प्रेरणा स्रोत है जो प्रभु-प्राप्ति के मार्ग में अग्रसर हैं।

बापू ठाकुर दास जी महाराज के परमशिष्य बापू मंगल दास जी ने अत्याधिक तप करके उच्चा बहानी (जिला जालन्धर) नामक स्थान पर जा कर संगत की सेवा आरम्भ की और संत मंगल दास जी के उपरान्त बापू राम दास जी ने उसी स्थान पर संगत सेवा का कार्य भार संभाला। आजकल उच्चा बहानी, दरबार में बापू हरचरण दास जी महाराज सच्चखंड उच्चा दरबार की सेवा कर रहे हैं। दसूहा से

12 किलोमीटर दूर रश्पालवां नामक स्थान प्र एक अन्य सेवक संत जोगिन्द्र दास संगत उनक सेवा करते रहे है। जिनके पश्चात् इस कार्य को आगे बढ़ाने का कार्य संत सोहन दास जी, संत आत्मा दास जी, संत भक्त राम दास जी बहुत ही सुचारु ढंग से किया आजकल इस स्थान पर संगत सेवा और गद्दी की व्यवस्था संत प्रेम दास जी देख रहे है। अन्य महापुरुषों की भान्ति संत प्रेम दास जी भी बहुत ही दयालु और कृपालु है।

श्री नारायण चरितामृत

557

श्री ठाकुर जी महाराज विरचित सद्गुरु बापू ओम नारायण दत्त जी की स्तुति

शेरन के शेर हैं, शेरों के राजे, नन्दाचौर में सद्गुरु बिराजे। लम्बा दाढ़ा कि गोबिन्द रूप तेरा, बेगमपुरा देश में सद्गुरु का डेरा।

बांकी पगड़ी कि माथे में जोत जगती, अनुभव रूप है नैनों में ज्योति। वहाँ मुकता कन्ना बिन्दुल न लगती, कि अपने आप में आत्म की शक्ति ।

वहाँ का हाल कहने में ना आवे, वही जाने जो वहां पहुँच जावे। सुनों लोको पूरे गुरु की कमाई, फूलों वाली वाशना भौंरों को आई।

दास गरीब दी सुन लई पुकार, गले से चुक लगा लया मूर्ख गंवार। चरण संग जोड़ के सुरति कमाई, धन नर देह में बजती बधाई।

सुनो लोको पूरे गुरु की निशानी, चरखी स्वांस की सीने में चलती। सभी जन चाढ़ लए ओढ़क दी बेड़ी, बेगमपुर जा लथी सन्तां दी डेरी।

ठाकुर दास जो गुरु सेव कमावे, नेड़े काल ना हर जन के आवे।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

संत श्री देव गिरधारी जी महाराज

560

श्री नारायण चरितामृत

बापू औमजी शिष्य श्री शुकुर जी शिष्य

ॐ

संत श्री देव गिरधारी जी महाराज

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरुपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।। या देवी सर्वभूतेषु मातृरुपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।।

जो देवी सभी प्राणियों में शक्ति रूप में स्थित है, उसे बारम्बार नमस्कार है। जो देवी सभी प्राणियों में मातृ रूप में स्थित है, उसे बारम्बार नमस्कार है।

बापू ओम जी की फुलवारी में एक और महकता कुमुद खिला जिसकी तपस्या और भक्ति की सुगन्ध दसों दिशाओं में फैल गई।

कमल के समान इस संसार रूपी कीच से अलिप्त उस सुन्दर पुष्प का नाम है- श्री देव गिरधारी जी महाराज। बापू ओम जी के शिष्य श्री ठाकुर जी की प्रमुख शिष्या श्री देव गिरधारी साक्षात् आदि शक्ति जगदम्बा ही थी जिनका जन्म ही जीवों के उद्धार के लिए हुआ था।

ईश्वर का अवतरण प्रत्येक युग, काल और समय की आवश्यकता

अनुसार होता रहा है। संत राम जी ने 'गुरु महिमा' में लिखा है कि जब पृथ्वी पर विषय-विकारों से ग्रस्त मानव गऊ, ब्राह्मण और साधुओं की अवज्ञा कर उन्हें कष्ट देने लगा, जब कुकर्मों की अन्तहीन श्रृंखला से पृथ्वी घबरा उठी तब पृथ्वी सहित सभी देवी-देवताओं ने भगवान की स्तुति की और उनसे माया से त्रस्त मनुष्यों पर कृपा दृष्टि करने की प्रार्थना की। भगवान् ने कहा कि आप सब चिन्ता न करें। मैं शीघ्र ही आदि शक्ति के अंश से स्त्री रूप में प्रकट होऊँगा। अतीत में हमने क्षत्रिय कुल में राम और कृष्ण रूप में राजसी अवतार धारण किए थे। कालांतर में गुरु नानक देव के रूप में हमने सात्विक अवतार धारण किया परन्तु उस अवतार में शादी होने का विघ्न पड़ा था। पुरुषों की देह में अवतरण होने पर मायाजनित स्थितियों के अनुसार ही कार्य करना पड़ता है। इसलिए इस बार हमने शक्ति रूपा हो कर पृथ्वी पर जाने का निर्णय लिया है क्योंकि स्वयं शक्ति पर माया का कोई प्रभाव नही पड़ सकता । यह कह कर ईश्वर शक्ति रूप में प्रकट होने हेतु तैयार हो गए और उचित समय आने पर पंजाब के खानपुर में श्री जवाहर मल और श्रीमती राधे रानी के घर एक अति सुन्दर कन्या के रूप में जन्म लिया।

करोड़ो सूर्यों की प्रभा के समान अतुलनीय रूप वाली उस कन्या के जन्म पर उसके पिता श्री जवाहर मल ने अत्यन्त हर्षित हो दीप माला

की और बहुत दानादि किए। उस कन्या का नाम देव गिरधारी रखा गया। सात वर्ष की अवस्था तक आते-आते देव गिरधारी जी को अपने

स्वरूप का भान होने लगा। अपनी माता के सो जाने पर वह उठ बैठती और समाधि लगा कर ध्यानस्थ हो जाती। जब उनकी माता के जागने का समय होता, उस समय वह सोने की तैयारी करती। आठ वर्ष की अवस्था में उनकी शिक्षा प्रारम्भ हुई। अपनी प्रखर मेधा से उन्होंने कुछ ही समय में विद्या लाभ कर लिया। छोटी अवस्था में ही वह लोगों को अचल, अच्युत, अनन्त ब्रह्म के विषय में उपदेश करने लगीं थी। उन्होंने गुरु ग्रन्थ साहिब के ग्यारह पाठ करने के उपरान्त अश्वमेध यज्ञ के समान ग्यारह हवन भी

किए। उनका विवाह दीनानगर में हुआ था परन्तु दैवयोग से उनके पति का निधन हो गया और उसके बाद वह खानपुर आ गई।

खानपुर में वह दिन-रात भगवान् के चिन्तन में लीन रहने लगीं। ब्रह्म-चिन्तन में चौबीसों घंटे निमग्न रहते हुए उनके नेत्रों से दिन-रात आँसू बहा करते। ज्ञान का सागर तो वह थीं ही। उन्हें भली-भांति ज्ञात था कि देहधारी गुरु के बिना अध्यात्म-पथ के शिखर को छूना असम्भव है। उनके घर पर बहुत साधु-जन आया जाया करते थे, परन्तु उनमें से कोई भी ब्रह्मवेता नहीं था। देव गिरधारी जी के मन में गुरु मिलन की तड़प बढ़ती ही जा रही थी। उनके मन की जो अवस्था थी उसका अनुमान लगाना भी किसी के लिए सम्भव नहीं है।

ऐसी ही मनोदशा के मध्य उन्हें भगवान विष्णु के दर्शन हुए,

श्री नारायण चरितामृत

563

जिनका मनोरम श्रीविग्रह चक्र, गदा, पद्म के साथ अत्यन्त शोभायमान हो रहा था। भगवान का यह शुभ दर्शन खाली नहीं गया। इस दिव्य दर्शन के उपरान्त उनकी गुरु प्राप्ति की पिपासा और भी तीव्र हो उठी। मन में प्रबल वैराग्य छा गया, रातें रो रो कर कटने लगी। एक दिन जब मन में गुरु-गुरु की गूँज प्रत्येक प्रकार की सीमा का अतिक्रमण कर गई तब संत ठाकुर दास जी गिरधारी जी के समक्ष प्रकट हो गए। कण्ठ में फूलों की माला, कानों में कुण्डल, हाथों में शंख और चक्र, गदा एवं पद्म धारण कर पीतांबरधारी भगवान् जिनके हाथों में मुरली शोभायमान हो रही थी, ने गिरधारी जी को कहा कि आप तो स्वयं ही सद्गुरु हैं, आप को सद्गुरु ढूँढने जाने की कोई आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे गुरु ठाकुर जी हैं और तुम में और ठाकुर जी में कोई भेद नहीं है।

जब वह दिव्य दर्शन की रात व्यतीत हो गई तब लाम्बड़ा से एक भक्त देव गिरधारी जी से मिलने आया। उसने उन्हें ठाकुर जी के विषय में बताया और कहा कि वह पूर्ण संत हैं और परम तत्त्व की प्राप्ति करवा सकते हैं। देव गिरधारी जी के माता पिता भी यह बात सुन रहे थे। वे अपनी पुत्री को नारायण कहा करते थे। उन्होंने कहा कि वह नारायण के बिना वहाँ नहीं जाएंगे। तत्पश्चात् वे देव गिरधारी जी को लेकर लाम्बड़ा आये और ठाकुर जी के दर्शन किए। देव गिरधारी जी ने जैसे ही ठाकुर

जी को देखा तो उनके नेत्रों का जबरदस्त तेज देख कर सब कुछ समझ गईं। वह जान गई कि वह ही उनके गुरु हैं। उनके नेत्रों से

श्री नारायण चरितामृत

आनन्दाश्रु बहने लगे। उन्होंने अत्यन्त श्रद्धा से गुरु चरणों में मस्तक निवाया और कहा कि हमारे पास कुछ नहीं है। जो आपका है वह आपको सौंप कर आपके श्री चरणों में सब समर्पित करते हैं। ठाकुर जी ने यह सुन कर देव गिरधारी जी को मन्त्र दीक्षा दी। गिरधारी जी ने दीक्षा प्राप्त कर ठाकुर जी के बताए मार्ग पर चल कर अपना अभीष्ट सिद्ध किया। एक दिन बहुत प्रसन्न हो कर ठाकुर जी ने जैसा विराट रूप श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दिखाया था वैसा ही कृष्ण रूप धारण कर देव गिरधारी जी को दिखाया। उस विराट कृष्ण रूप का दर्शन प्राप्त कर देव गिरधारी जी ने तृप्त हो कर कहा, "बस जी बस"। यह सुन कर ठाकुर जी ने अपनी लीला समेट ली।

564

इसके पश्चात् देव गिरधारी जी ने पारिवारिक एवं सामाजिक रीतियों की परवाह किए बिना अपना सर्वस्व ईश्वर प्राप्ति के निमित्त गुरु चरणों में भेंट कर दिया। अन्न-जल का त्याग कर अखण्ड तपस्या की और कई वर्षों तक योगाभ्यास किया। इन सब के फलस्वरूप श्री देव गिरधारी जी, जो चिदानन्दमयी ईश्वरीय सत्ता के साथ एकरूप हो गई। तदोपरान्त ईश्वरीय प्रेरणा से श्री देव गिरधारी जी दीना नगर पधारीं और असंख्य लोगों का कल्याण किया। जब बापू ठाकुर जी के दर्शन को दो-चार दिन बीत जाते तब श्री देव गिरधारी जी लाम्बड़ा गाँव आतीं। उनके साथ बहुत संगत भी ठाकुर जी के दर्शनों के लिए आती।

श्री नारायण चरितामृत

565

बहुत सी गोपियों के मध्य जैसी शोभा भगवान् कृष्ण की होती है वैसी ही शोभा भक्त स्त्रियों के मध्य श्री देव गिरधारी जी की होती थी।

रास्ते भर वह संगत प्रभु नाम का कीर्तन करती आती। दरबार पहुँच कर श्री देव गिरधारी श्री ठाकुर जी को दण्डवत प्रणाम करतीं। अपने हाथों से तरह-तरह के पकवान बना कर अपने प्रिय गुरुदेव के लिए लाया करतीं। फिर श्री ठाकुर जी की स्तुति कर के उन्हें सादर भेंट समर्पित किया करतीं थीं। एक दिन जब इसी प्रकार श्री देव गिरधारी जी ने श्री ठाकुर जी की स्तुति-गान किया तब श्री ठाकुर जी ने कहा, "आपका स्वरूप तो अखण्ड है। आप स्वयं पूर्ण पुरुष हैं, परमात्मा हैं। हमें आपका स्त्रीनुमा नाम पसन्द नहीं है। हम आपको क्या कह कर बुलाएं। हे गिरधारी। आप तो स्वयं बनवारी हैं। आपको माया कभी नहीं छल सकती। यह उस आदि शक्ति की माया ही है जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश सहित योगियों, तपस्वियों एवं नारद मुनि सरीखे महान् संतों को भी पल भर में भरमा सकती है। इस सृष्टि में जड़-चेतन आदि सभी प्राणी माया के वशीभूत हो कार्य करते हैं। इसी माया की प्रेरणा से ब्रह्मा ने अण्डज, जेरज, स्वेदज आदि विपुल सृष्टि रचना की है।"

फिर ठाकुर जी ने कहा, "हे प्रभु! यह अखिल ब्रह्माण्ड आप ही से विस्तार को प्राप्त हुआ है। जितने भी रूप इस जगत में दृष्टिगोचर होते हैं उन सभी रूपों में आप ही का वास है। हमने तो मर्द जान कर आपके कन्धों पर हाथ रखा है। आप इस सम्पूर्ण सृष्टि का उद्धार करें।

प्राणियों के दुःख दूर कर उनके बेड़े पार लगाएं। पापियों का सर्वविध कल्याण करें।"

श्री ठाकुर जी के वचन सुन कर देव गिरधारी जी ने वैसा ही किया। भक्तों का सब प्रकार से कल्याण करते-करते उनके दिन व्यतीत होते गये। कुछ समय पश्चात् देव गिरधारी जी ने संगत को कहा कि लाम्बड़ा दरबार की ऊपर वाली मंजिल का निर्माण करना है। खर्च की चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। आप तुरन्त कार्य आरम्भकीजिये। देव गिरधारी जी के माता-पिता ने भी उनसे कहा कि नारायण जी, मन्दिर की सेवा के लिए जो कुछ भी चाहिए वह आप ले कर प्रयोग करें। यह सभी कुछ आप का ही है।

शीघ्र ही निर्माण-कार्य आरम्भ हो गया। श्री देव गिरधारी जी समस्त संगत और मजदूरों के लिए अन्न तैयार करती थीं। गिरधारी जी रात्रि में दो बजे उठ कर स्नान कर के समाधि-मग्न हो जाया करती थीं।

अगली सुबह दस बजे जब ठाकुर जी महाराज चाय पीते तब वह श्री देव गिरधारी जी को भी चाय पिलाते थे। बारह बजे श्री देव गिरधारी जी लंगर तैयार करते और श्री ठाकुर जी को भोग लगा कर जो सीत प्रसाद बापू जी के थाल में से बचता, वह उसी को ग्रहण किया करती थीं। इसके पश्चात् वह फिर कोई और खाद्य वस्तु या मिठाई आदि ग्रहण नहीं करती थीं। फिर संगत के झूठे बर्तन साफ कर के बूटी सुदी का सेर

भर का एक गिलास पी कर बापू ठाकुर जी के साथ बौड़ के वृक्ष के नीचे जा कर समाधि-मग्न हो जाती थीं। जब श्री देव गिरधारी जी ध्यानस्थ होती थीं तब उनके मन में मन्दिर की जैसी-जैसी छवि उतरती थी ठीक वैसी ही छवि कारीगरों को रात्रि को स्वप्न में नज़र आ जाती थीं। मन्दिर की खिड़कियां, दरवाजे आदि भी ठीक उसी प्रकार निर्मित हुए और अष्ट कमल का स्वरूप भी ध्यान में प्रकट हुई छवि के अनुसार ही बनाया गया। इस प्रकार श्री देव गिरधारी जी ने लाम्बड़ा मन्दिर की ऊपर वाली मंजिल का निर्माण किया। मन्दिर निर्माण के पश्चात् श्री देव गिरधीर जी अपने घर खानपुर में रह कर भजन करती रहीं। चार वर्ष तक लगातार प्रति दिन चार सेर दूध, मिठाई, पकौड़े, भल्ले आदि अपने हाथों से तैयार कर वह लाम्बड़ा भेजती रहीं।

एक दिन ठाकुर जी महाराज खानपुर गए। उस समय उनकी जो सेवा श्री देव गिरधारी जी ने की वह वर्णनातीत है। उन्होंने कई भजन और कवित्त गा कर ठाकुर जी की आरती उतारी। ठाकुर जी प्रसन्न हो कर कहने लगे, "बनवारी जी, वाणी तो आपने अमृत रूप ही रची है परन्तु आप का स्वरूप तो मन, वाणी से परे है, इसलिए आप वाणी की रचना न करें।" इसका कारण यह है कि वाणी की रचना करने वाले का ध्यान समाधि में भी भटक सकता है और जहाँ तक योग का प्रश्न है उसका मार्ग तो अक्षर, शब्द आदि से परे हो कर ही आरम्भ हो सकता है। जिस समय ठाकुर जी ने यह बात की उस समय श्री देव गिरधारी जी

किसी भक्त स्त्री को पत्र लिख रही थीं। ठाकुर जी के मना करने के कारण उन्होंने पत्र लिखना बन्द करके उसे रख दिया। ठाकुर जी वापिस चले गये। रात्रि के समय कलम और दवात दोनों ही टूट गए। उसी समय आकाशवाणी हुई कि आप के स्वरूप में द्वैत भाव नहीं होगा। इसलिये ईश्वर की इच्छा से ही दवात टूट गई है। श्री ठाकुर जी श्री देव गिरधारी जी की सेवा और प्रेम देख कर बहुत ही प्रसन्न थे ।। (एक एक दिन श्री ठाकुर जी ने श्री देव गिरधारी जी की परीक्षा लेने हेतु एक लीला रची। श्री ठाकुर जी ने उल्टी कर के कहा कि अमृत का सरोवर चल रहा है, यदि किसी के भाग्य में है तो अमृत का पान ले। उस समय कई दूसरे भक्त भी वहाँ खड़े थे। ठाकुर जी की बात सुन कर सभी संकोचवश इधर-उधर देखते हुए वहाँ खड़े रहे।

श्री देव गिरधारी जी भी वहाँ उपस्थित थी। अपने गुरु की बात सुनते ही उन्होंने तुरन्त अपना हाथ ठाकुर जी के मुख के नीचे रखा और पीती ही चली गई। परीक्षा में सफल होने पर ठाकुर जी ने एक अन्य भक्त बह्म दास को आदेश दिया कि शरदाई रगड़ों। ब्रह्म दास ने एक मुठ्ठी बूटी ले कर रगड़ना आरम्भ किया। पहले कुछ शरदाई ठाकुर जी ने पी और शेष में से तीन चुल्ली भर कर श्री देव गिरधारी जी को पिलाई। जब ठाकुर जी चौथी बार भी उन्हें देने लगे तो श्री देव गिरधारी जी ने कहा कि ब्रह्म दास पर भी कृपा करो।

श्री नारायण चरितामृत

तब ठाकुर जी ने एक चुल्ली ब्रह्म दास जी को पिला दी। उसके परिणामस्वरूप मस्ती में आ कर ब्रह्म दास कहने लगे कि यहाँ ब्रह्म पुरी है, वहाँ इन्द्रपुरी है। इसके बाद उन्होंने लोगों के खेतों को हानि पहुँचाना और घर वालों को अपशब्द कहना शुरु कर दिया। एक बार नन्दाचौर से बापू ओम जी महाराज वहाँ आये हुए थे। ब्रह्म दास भी वहाँ आ गये और सभी दिव्य लोकों का नाम ले कर कहने लगे कि हमें सभी दिव्य लोक नज़र आते हैं। यह देख कर बापू ओम जी ने ठाकुर जी से नाराज हो कर कहा, "बिना सोने के पात्र के शेरनी का दूध नहीं पिलाना चाहिए।" इस पर ठाकुर जी ने तरस खा कर ब्रह्म दास जी को बोलने से मना कर दिया। कुछ दिनों पश्चात् ब्रह्म दास जी ने श्री ठाकुर जी के आसन से एक रुमाल उठा कर और एक छतरी कंधे पर धर कर, ठाकुर जी की चरण पादुकाएं पहन कर कहना आरम्भ कर दिया, “आ तो सही, तू कौन सा ठाकुर है। हम स्वयं ही ठाकुर हैं।" ठाकुर जी ने यह सुन कर ब्रह्म दास के हाथों से रुमाल ले कर उनके नेत्रों पर मार कर कहा, "जा तू भी बुल्ले शाह की तरह खाली हो जा। उसने तो नाच कर पीर को प्रसन्न किया और करामाती शक्तियां हासिल की परन्तु तेरे अन्दर यह

ताकत नहीं। तू उस वस्तु का मालिक नहीं है। परन्तु तुझे रोटी-बोटी बहुत मिलेगी" ठाकुर जी का वचन तुरन्त सत्य हो गया।

ठाकुर जी ने जो तीन चुल्ले श्री देव गिरधारी जी को दिए थे उनमें बापू जी ने उन्हें तीन लोक बख्श दिये थे। ब्रह्म दास को चौथी चुल्ली

देने के बाद भी ठाकुर जी ने देव गिरधारी जी को चौथी चुल्ली दी और कहा, " लो देवी जी, बापू जी सारे ही आप के हुए। हमने तो मर्द के कंधे पर हाथ रखा है। अब आपने ही बेड़े भर के पार करने हैं। मर्द को माया ग्रस्त कर लेती है परन्तु स्त्री के मन में ईश्वर या पुरुष का फुरना होता है। इसलिए माया का कोई भी कर्म उसे नहीं रोक सकता है। अतः आपके रास्ते में कोई रुकावट नहीं। शक्ति ही माया का रूप धारण कर के योगियों का मार्ग रोकती है। मर्द वही है जो ज्ञान योग को पूर्ण करे। समस्त सृष्टि माया, मोह में मग्न हो कर सो रही है। सभी नेत्रवान हो कर भी अन्धे बने हैं। आप ने सभी के नेत्रों में वास कर सब पर कृपा करनी है। जब बापू जी प्रकट होंगे तब सभी के नेत्र खुले होंगे और फिर सभी को निराकार बापू जी के दर्शन होंगे। इस बार पापियों का उद्धार करो। अब आप में और बापू जी में कोई भेद नहीं।"

इस प्रकार वचन कर श्री ठाकुर जी ने श्री देव गिरधारी जी को एक बार फिर से भगवान् कृष्ण की तरह विराट रूप दिखाया। इन दिव्य अनुभूतियों के बाद श्री देव गिरधारी जी ने खानपुर में रह कर योग करना आरम्भ कर दिया। एक दिन योग साधना करते हुए उन्हें एक अनोखा अनुभव हुआ कि समाधि अवस्था में वह अपने सूक्ष्म शरीर से दीनानगर पहुँच गई हैं। उन्होंने देखा कि श्री ठाकुर जी महाराज जी ने निराकार रूप धारण किया हुआ है। सफेद वस्त्र पहने हुए एक ऐसे तख्त पर विराजमान हैं जो प्रकाश रूपी लाल मोतियों और मणियों के प्रकाश से

जड़ा हुआ है। उस दिव्य तख्त पर श्री ठाकुर जी एक प्रकाश पॅज के रूप में विराजमान नज़र आ रहे हैं। जिस प्रकार अग्नि की प्रचण्ड ज्वाला जो देखी तो जा सकती है परन्तु उसे पकड़ना किसी के वश में नहीं होता, उसे पकड़ने की युक्ति तो सद्गुरु के पास ही हो सकती है। जिस प्रकार माचिस की सभी तीलियों के भीतर विद्यमान अग्नि का रूप एक ही है उसी प्रकार इस दृश्य संसार में अनके रूप हैं और सच्चिदानन्द आत्मा अनेक तीलियों में अग्नि के समान सब के बीच में विराजमान है। कुण्डलिनी जागृत होने पर जो कमल सीधा होता है उस से ही वह रूप खुलता है। माचिस की तीलियों को चाहे कैसे भी हाथों में पकड़े रहो उससे कभी भी अग्नि उत्पन्न नहीं हो सकती। उसी प्रकार शरीर रूपी (गुरस) अर्थात् माचिस की डिब्बी में कर्म एवं धर्म रूपी माचिस की डिब्बियों में श्वास रूपी तीलियों को जलाए बिना प्रकाश उत्पन्न नहीं हो सकता। तीली पर लगे शब्द रूपी मसाले के जलने पर कई लकड़ी रूपी पाप नष्ट हो जाते है। तीली को जलाने वाला शब्द रूपी मसाला तो सद्गुरुओं के पास ही होता है।

जिस समय श्री देव गिरधारी जी ने अपने स्वरूप में श्री ठाकुर जी को देखा तो यह पाया कि चारों तरफ माया विभिन्न रूपों में विराज रही है। ऋषि-मुनि भी माया खचित सीमा रेखा को लांघ पाने में असमर्थ हैं। आध्यात्मिक शिखर को छूने में व्यग्र साधकों को माया स्त्री रूप धारण कर के तुरन्त भरमा देती है। माया किसी को भी उस

निराकार प्रकाश रूप में समाने नहीं देती। ब्रह्मानन्द को प्राप्त करने की राह में जितने भी योगी, सिद्ध आदि बढ़ते हैं उन्हें बीच रास्ते में ही रिद्धियां, सिद्धियां दे कर माया उन्हें पराधीन बना देती है। उन्हीं सिद्धियों को ब्रह्मानन्द मान कर गोरख आदि सिद्ध अपनी अपनी पुरियां रच के विराजमान हो रहे हैं। फिर श्री देव गिरधारी जी ने धर्मराज और चित्रगुप्त को देखा। चित्रगुप्त अपने बहीखाते में सूर्य, चन्द्रमा, पवन, वरुण ऋषि-मुनि, देव, दैत्य, मनुष्य आदि सभी के कर्मों का लेखा जोखा लिख रहे थे। सभी प्राणी अपने-अपने कर्मों के अधीन हुए अपने अपने आसन पर ही कष्ट पा रहे थे। उसी समय आवाज़ आई "हमें छुड़ाओ, आप समर्थ हो।"

यह सुन कर श्री देव गिरधारी जी ने भगवान से प्रार्थना की कि हे ईश्वर ! रास्ता दीजिए। फिर आवाज़ आई कि माया के ताले लगे हों या खुले हों। श्री देव गिरधारी जी ने कहा कि खुले हों? एक बार फिर आवाज़ आई कि यह माया रूपी जितना भी संसार है वह शक्ति का ही अंश है। तत्पश्चात् श्री ठाकुर जी

ने उन्हें निर्देश दिया कि वह ज्ञान की गुलेल से प्रहार कर के आगे का रास्ता लें। श्री देव गिरधारी जी ने वैसा ही किया। जैसे ही उन्होंने रास्ता लिया वैसे ही माया ने अपना रूप धारण कर के दिखाया। श्री देव गिरधारी जी ने देखा कि माया की विराट देह की चोटी आकाश को छू रही है और पैर पाताल में जा रहे हैं। जिस-जिस स्वरूप के साथ माया ऋषियों-मुनियों को छलती आई है

वह सब धारण कर श्री देव गिरधारी जी को दिखाए। परन्तु जिस आदि शक्ति के अंश से माया बनी थी उन्हें वह किस प्रकार छल सकती थी। इसके बाद निराकार भगवान ने उन्हें एक छोटी सी करद दी और निर्देश दिया कि आप का वास्तविक स्वरूप जो शक्ति है वह यह है। पहले आपने श्री रामचन्द्र आदि कई स्वरूप धारण कर के पापियों का नाश किया परन्तु माया के अधीन रहे। इस ज्ञान रूपी करद को तलवार बना कर अपने स्वरूप रूपी म्यान में रखो और जिस प्रकार बापू जी का आदेश हो उसी प्रकार करो।

ईश्वर की यह दिव्य वाणी सुन कर श्री देव गिरधारी जी समाधि में से खड़ी हो गई। आँखे खोलने पर देखा कि उनके हाथ में प्रत्यक्ष करद है। इसी बीच ठाकुर जी उनकी भाभी का रूप धारण कर आ खड़े हुए और कहने लगे, "चलो नारायण जी, स्नान करने चलें।" जब श्री देव गिरधारी जी उनके साथ स्नान करने हेतु सरोवर पर गई तो देखा कि वहाँ तो सरोवर के स्थान पर हरिद्वार के गऊ घाट जैसा सुन्दर घाट बना है। उस सरोवर में गंगा बह रही है। भाभी रूपी ठाकुर जी ने कहा कि आप स्नान करिए और इस करद को रेत में दबा दीजिए। श्री देव गिरधारी जी ने वैसा ही किया। इसके बाद जब देव गिरधारी जी दातुन आदि करके स्नान करने लगीं तो देखा कि जिस स्थान पर करद दबाई थी उस स्थान पर एक कमल का फूल उत्पन्न हो गया है और उस फूल के बीच में करद के ही स्वरूप का एक अमृत फल पैदा हो गया है। उस

फल का रूप मणियों के सदृश चमकता था। ठाकुर जी ने कहा कि यह फल आप तोड़ कर खा लें। उस फल को खाने के उपरान्त जब गाती लगा कर जल में डुबकी लगाई तो ठाकुर जी ने कहा कि गाती

उतार कर बाहर रख दो और फिर डुबकी लगाओ। जब श्री देव गिरधारी जी ने दूसरी डुबकी लगाई तो बाल कृष्ण हाथों में बाँसुरी पकड़े प्रकाश रूप में नज़र आए। तत्काल वहाँ वृन्दावन की रचना हो गई। पास ही एक तरफ जहाँ सैंकड़ों हाथी झूलते-घूमते दिखाई देने लगे वहीं दूसरी ओर गऊएं घास चरती हुई दृष्टिगोचर होने लगीं। गोपियां भी पास ही में नृत्य कर रही थीं और श्रीकृष्ण उनके मध्य बाँसुरी बजा रहे थे।

इस प्रकार के अद्भुत कौतुक देख कर जब श्री देव गिरधारी बाहर निकलीं तो दृश्य पूर्ववत हो गया। जो गीली चादर सूखने के लिए डाली हुई थी वह सूख गई थी। जब चादर ऊपर ले कर वे दोनों घर की ओर चले तो भाभी रूप धारी ठाकुर जी ने कहा कि पानी की गड़वी भर लो और जल छिड़कते चलो। जब वे शहर के पास पहुँचे तो उन्हें चार पुरुष मिले जिन्होंने बताया कि वे चार पीपे घी के ले कर श्री ठाकुर जी के पास चले जा रहें हैं। आगे जाने पर श्री देव गिरधारी जी को बड़े-बड़े हाथी और कई भयानक जीव खड़े नजर आए। वह सब देख कर उन्हें कुछ भय प्रतीत हुआ। ठाकुर जी यह देख कहने लगे कि हम इसी कारण ही आपकी भाभी का रूप बना कर आपके साथ आये हैं। आप जल का छींटा देती चलो। इस प्रकार ठाकुर जी की आज्ञा का पालन

करते हुए वह बाज़ार में से हो कर निकलने लगे। बाज़ार बहुत ही खूबसूरत और रौनक वाला था। प्रत्येक प्रकार की वस्तू उसके मध्य नज़र आई। वे सब को देख रहे थे परन्तु उन दोनों को कोई नहीं देख पा रहा था। तत्पश्चात् श्री देव गिरधारी जी अपने घर के चौबारे ऊपर जा चढ़ीं। आगे गुरु ग्रन्थ साहिब का प्रकाश किया हुआ था और एक लैम्प भी जल रहा था। वहाँ बैठ कर वह तुरन्त समाधिमग्न हो गई। ध्यान में बैठते ही सारी रिद्धियाँ अपना-अपना रूप धारण करके आई और अपने-अपने गुण और सुख बताने लगीं। श्री देव गिरधारी जी सभी को छोड़ती गई। तब एक रिद्धि मूर्तिमान हो कर बोली, "मेरे पास एक शीशा है। जो उस शीशे को देखेगा उसका प्रकाश कभी भी नष्ट नहीं होगा।"

तभी एक दूसरी रिद्धि ने कहा, "मेरे पास एक सुरमा है जो उस सुरमे को अपनी आँखों में डालेगा उस के दिव्य नेत्र खुल जाएंगे।" यह सुन कर श्री देव गिरधारी जी ने वह सुरमा ले कर आँखों मे डाल लिया और उस शीशे को ले कर उससे देखने लगीं। उस शीशे में देखते ही वह शीशा नेत्रों के रास्ते प्रकाश करता

हुआ अन्त:करण में चला गया। जब उस प्रकाश से दिव्य नेत्र खुल गए तो सारी सृष्टि नज़र आने लगी। श्री देव गिरधारी जी ने देखा कि चारों तरफ रोने की आवाजें आ रही हैं।

बाल ही जल है। प्रलय हो रही है। नर, नारी, बच्चे, मुनिजन, पशु, पक्षी, वृक्ष सभी उस जल में डूबते जा रहे हैं। सभी अपने-अपने अपराधों का

फल भोगते हुए हाहाकार कर रहे हैं। जब श्री देव गिरधारी जी ने सब तरफ दृष्टि घुमाई तो पृथ्वी आबाद हो गई, सभी जीव शांत पड़ गए, देवता फूलों की वर्षा करने लगे और चारों ओर से गाने बजाने की आवाजें आने लगी। घर-घर खुशियां मनाई जानें लगी और सत्संग होने लगे। सभी देवताओं ने श्री देव गिरधारी जी की आरती उतारी।

यह सब देख कर उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। वह विचार करने लगीं कि पहले तो सब दु:खी हो कर रो रहे थे और अब सभी लोग खुशियां मना रहे हैं। उनके ऐसा सोचते ही आकाशवाणी हुई कि आप आदि शक्ति हो और सभी का उद्धार करने आई हो। आप ने पापों के कारण डूबती हुई पृथ्वी को बचा लिया है। जब आपने सारी पृथ्वी का भार उठाया तो यह फिर आबाद हो गई। आप के दिव्य नेत्र खुलने से सभी देवता, नर, मुनिजन आप का धन्यवाद करते हुए खुशियां मना रहे हैं कि अब सभी का उद्धार होगा।

इन दिव्य अनुभवों के उपरान्त जब श्री देव गिरधारी जी का मन थोड़ी निम्न भाव-भूमि पर उतरा तो उन्हें अपनी भाभी इन्द्र कौर की आवाज सुनाई दी कि आओ स्नान करने चलें, दो बज गए हैं। श्री देव गिरधारी जी तुरन्त उठ कर चली पड़ी और अपनी भाभी को अपने दिव्य दशनों के विषय में कुछ भी नहीं बताया। जिस सरोवर पर वह स्नान करने हेतु पहुँची वहाँ पहले का देखा हुआ कुछ भी नजर नहीं आया।

यह अद्भुत प्रसंग तो श्री देव गिरधारी जी की एक रात्रि की समाधि अवस्था का विवरण हैं, उनके सम्पूर्ण जीवन की तपस्या और अनुभवों का हाल कौन बता सकता है? श्री देव गिरधारी जी सदृश सेवा और भजन न किसी ने किया और न ही कोई कर सकता है।

कहा जाता है कि यदि सृष्टि में कोई सर्वाधिक दुष्कार कार्य है तो वह है मन को जीतना। जिस ने मन को जीत लिया उसने सारी सृष्टि जीत ली। श्री देव गिरधारी जी की साधना जब अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई तब उन्होंने पूरे बारह वर्ष तक पवन रोक के सारे देवताओं को जीत लिया। इस से सृष्टि का संतुलन बिगड़ने लगा और त्रिदेवों सहित समस्त देवता बापू ओम जी के पास जा कर प्रार्थना करने लगे कि आप ही कृपा करके पवन छुड़ाएं। यह सुन कर बापू ओम नारायण दत्त जी ने बापू हरनाम जी को लाम्बड़ा भेजा और हरनाम जी ने श्री देव गिरधारी जी का एक दाँत तोड़ कर पवन निकाली और इस प्रकार सृष्टि-संतुलन को बिगड़ने से बचाया।

तदुपरान्त श्री देव गिरधारी जी ने जल-तत्त्व को जीता। वह प्रतिदिन कुएं में से पाँच सौ बाल्टी जल निकालतीं और उस जल को गिरा देतीं। जब वह ऐसा कर रही थीं तभी वहाँ एक बहुत ही सुन्दर दृश्य नजर आया। कई दिव्य रूप धारी नर-नारी प्रकट हुए, उस जल का पान किया और विलुप्त हो गए। उस जल की विशिष्टता यह थी कि

जो भी उस जल का पान करता था उसे अपने स्वरूप का ज्ञान हो जाता था। जिन आत्माओं को मुक्ति नहीं मिलती थी वह ही विभिन्न रूपों को धारण कर वहाँ आती थीं और मुक्त हो जाती थीं। देव गिरधारी जी जल भरने के साथ-साथ मुख से मन्त्रोच्चारण भी करती थीं और इस प्रकार करते-करते उन्होंने जल-तत्त्व को जीत लिया। तत्पश्चात् श्री देव गिरधारी जी ने पृथ्वी, अग्नि और आकाश-तत्त्व को भी जीत लिया और पंच-तत्त्वों पर विजय प्राप्त कर अपनी तपस्या पूर्ण की।

श्री देव गिरधारी जी ने दीनानगर, खानपुर और आस-पास क्षेत्रों की संगत को अपने प्रेम और आशीर्वाद से कृतार्थ किया। श्री देव गिरधारी जी ने बापू ठाकुर जी के पुत्र श्री संत राम जी को नाम-दीक्षा दे कर अपना शिष्य बनाया और उन्हें ब्रह्म-ज्ञान करवाया। संवत् 2003 में मार्गशीर्ष के महीने में श्री देव गिरधारी जी ने स्वधामगमन का निश्चय किया। उससे पूर्व जब वह नूरशाह में यज्ञ में हाजिरी लगवा वापिस आई तो कहने लगीं कि बहुत ही खराब समय आ रहा है। चण्डी ने सवारी की है इसलिए बहुत

ही रक्तपात होगा। मातायें अपने बच्चे नही सम्भाल सकेंगी। लोग सड़को पर दर-दर भटकेंगे। प्रलय जैसा समय होगा परन्तु यह समय देखने के लिए हम नहीं रहेंगे।

संवत् 2003 में जब मार्गशीर्ष का माह आरम्भ हुआ तब चार दिन बाद ही उन्हें बुखार आने लगा। श्री देव गिरधारी जी ने संगत से पूछा कि

महीने के कितने दिन बोते हैं। संगत ने बताया कि चार दिन बीते हैं। तथ उन्होंने कहा कि अभी हमारा सात दिन का समय पहले जैसा ही है। वह रोटी और शरदाई खाते पीते रहे। जब सातवां दिन आया तो उन्होंने प्रति दिन की तरह स्नान किया और शरदाई पी। सांय काल जब भोजन का समय आया तब उन्होंने आलू और चावल का थोड़ा सा भोग लगा कर बाकी थाली को नमस्कार कर दिया। श्री देव गिरधारी जी ने बुखार होने पर कोई भी दवाई नहीं खाई। सात दिन पहले ही उन्होंने बता दिया था कि यहाँ मेला लगेगा, बापू जी की सवारी निकलेगी और बाजे बजेंगे।

मार्गशीर्ष की 11 तारीख को रात को 10 बजे श्री देवगिरधारी जी ने अपने श्वास को अन्दर खींचा और चिर-समाधि में लीन हो गई। उसी रात वहाँ स्थित एक शिवालय में रहने वाले साधु और उस की शिष्या विशन देवी ने आकाश की ओर एक बहुत बड़े प्रकाश को जाते हुए देखा। इस से उन्हें पता लग गया कि किसी महान् आत्मा ने अपनी देह त्यागी है। दूसरे दिन उन्होंने यह बात लोगों को बताई। श्री देव गिरधारी जी के शिष्य एकत्र हो गए और विलाप करने लगे।

फिर उन शिष्यों ने एक विमान बना कर उसे खूब सजाया और श्री देव गिरधारी जी को उस विमान में बिठा कर सवारी निकाली। आगे-आगे बाजे बज रहे थे और स्थान-स्थान पर उन की सवारी के ऊपर फूलों की वर्षा हो रही थी। जब संस्कार करके लोग घरों में

वापिस जाने लगे तब आपस में बातें करते हुए कहने लगे कि देवता भी श्री देव गिरधारी जी महाराज की सवारी के साथ आए थे और संस्कार के पश्चात् चले गए।

श्री देव गिरधारी जी का स्थान दीनानगर में है जहाँ उन्होंने अपने गुरु बापू ठाकुर दास जी के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् तपस्या की और भक्तों का उद्धार किया। श्री देव गिरधारी सदृश दिव्य शक्ति का इस धरा पर अवतरण सभी प्राणियों के कल्याण के लिए ही था। उन्होंने अपने गुरु से प्राप्त ज्ञान को श्री संत राम जी को जन-कल्याण के लिए सौंप दिया। हम ऐसी महान् दिव्यात्मा को कोटि-कोटि नमन करते हैं और सदा-सदा के लिए उनके श्रीचरणों में नतमस्तक होते हैं।

।। हरि ॐ ।।

दरबार श्री देव गिरधारी जी, दीना नगर

चरण पादुका संत श्री देव गिरधारी जी महाराज

ॐ

संत श्री सन्त राम जी महाराज

ॐ

संत श्री सन्त राम जी महाराज

महान् आत्माओं को जन्म लेने के लिए एक सात्त्विक आधार की आवश्यकता होती है। इस कार्य की पूर्ति के लिए ऐसे महागुरु, जिनका उद्देश्य लक्ष-लक्ष आत्माओं का उद्धार करना होता है, उन साधकों की सहायता करते हैं जो पूर्ण होने के लिए सात्त्विक आधार वाले मनुष्यों के घर जन्म की प्रतीक्षा कर रहे होते हैं।

बापू ओम जी ने एक ऐसी ही पवित्र आत्मा को एक अति पवित्र दम्पत्ति संत ठाकुर दास और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती भोली के घर भेजा। संत ठाकुर दास जी को एक ऐसी महान् आत्मा पुत्र रूप में प्राप्त हुई जो पिछले सोलह जन्मों से ऋषि थे। उस महान् आत्मा का नाम था-संत श्री सन्त राम जी।

उनका जन्म 14 आषाढ़, वि० सं० 1955 को हुआ था। उनकी माता का नाम भोली था जो बापू जी की परम भक्त थीं। बापू ओम जी सन्त राम जी से बहुत स्नेह करते थे। सन्त राम जी ने अपने ग्रन्थ 'गुरु महिमा' में एक घटना का उल्लेख किया है जिससे पता चलता है कि

उन पर बापू ओम जी की कितनी कृपा थी। जिन दिनों बापू ओम जी की सेवा करने हेतु सन्त राम जी की माता भोली जी नन्दाचौर में निवास करती थी, बालक सन्त राम जी तब बुल्लोवाल के स्कूल में पढ़ा करते थे। स्कूल के बाद वह नन्दाचौर आ जाया करते थे और बालकों के साथ खेला करते थे।

एक दिन बहुत देर तक खेलने के कारण माता भोली नाराज़ हो गई और क्रोध में आ कर उन्हें रस्सी से बांधने को उद्यत हो गई। वह चाहती थी कि सन्त राम जी अपना समय खेल में न लगा कर बापू ओम जी की सेवा में लगाएं। माता जी एक रस्सी ले कर सन्त राम जी को बाँधने का प्रयास करने लगीं। यह देख कर बापू ओम जी ने कहा कि आप इन्हें नहीं बाँध पाएंगी। रस्सी छोटी पड़ जायेगी।

वह रस्सी जिससे माता भोली सन्त राम जी को बाँधने का प्रयास कर रही थीं, लगभग 25 हाथ लम्बी थी परन्तु फिर भी माता जी उस रस्सी से सन्त राम जी को बाँधने में असफल रहीं। यह देख कर माता भोली आश्चर्यचकित हो उठी। उन्हें तुरन्त इस सत्य का भान हो गया कि जो बात सद्गुरुओं को नहीं भाती उसका घटित होना असम्भव है। अत: अपने मन में क्षमा-प्रार्थना करती हुई माता भोली बापू जी के चरणों में गिर गई और मुख से स्तुति-वाचन करने लगी।

बापू ओम जी सन्त राम जी पर भी अति प्रसन्न रहा करते थे। एक बार जब बापू जी लाम्बड़ा ग्राम गए हुए थे, तब सन्त राम जी हरियाणा ग्राम में शिक्षा प्राप्त करने हेतु जाया करते थे। एक दिन विद्यालय से वापिस आने पर बापू जी सन्त राम जी की पुस्तकें देखने लगे। उनमें से एक पुस्तक बापू जी ने पढ़ने के लिए ले ली।

अगले दिन जब सन्त राम जी विद्यालय जाने से पूर्व बापू जी को प्रणाम करने गये तब देखा कि बापू जी पूर्ण तन्मयता से वही पुस्तक पढ़ रहे हैं। अतः उनकी एकाग्रता भंग न करते हुए सन्त राम जी उन्हें नमन करते हुए वहाँ से चले गये। विद्यालय पहुँचने पर उन्हें ध्यान आया कि जो मौलवी उन्हें पढ़ाते हैं वह तो बड़े ही सख्त मिज़ाज के हैं। उक्त मौलवी की कक्षा की घंटी जब बजी तब वह मौलवी आ कर कहने लगे कि जिनके पास पुस्तक नहीं है वह खड़े हो जाएं। तत्पश्चात् उस अध्यापक ने सन्त राम जी को कहा कि वे खड़े हो कर उन विद्यार्थियों -को दो-दो थप्पड़ लगाएं जो बिना पुस्तक के आए है। यह सुन कर सन्त राम जी उस अध्यापक की आज्ञा पालन करने हेतु खड़े तो हो गए परन्तु मन में सोचने लगे कि पुस्तक तो आज मेरे पास भी नहीं है।

उधर बापू ओम जी जो हर क्षण अपने भक्तों के अंग संग रहते हैं, ने लाम्बड़ा गाँव के एक नम्बरदार निहाल सिंह को बुलाया और उसे सन्त राम जी के पास वह पुस्तक पहुँचाने का आदेश दिया। निहाल सिंह

तुरन्त घोड़े पर सवार हो कर आया और सन्त राम जी तक वह पुस्तक पहुँचा दी। सन्त राम जी ने बापू जी का मन ही मन धन्यवाद किया और सजा पाने से बच गए। बाद में घर पहुँच कर उन्होंने ओम जी को शीश नवाया और आश्चर्य की बात तो यह थी कि बापू जी ने स्वयं उस दिन सन्त राम जी के साथ जो कुछ भी बीता उसका वर्णन ज्यों का त्यों कर दिया। सन्त राम जी उनका अक्षरशः वर्णन सुन कर बहुत हैरान हुए और प्रसन्न भी हुए।

सन्त राम जी ने श्री देव गिरधारी जी से दीक्षा ली और कठिन तपस्या की। सन्त राम जी को उनके पिता सन्त ठाकुर दास जी के ब्रह्मलीन होने के बाद लाम्बड़ा दरबार में गद्दीनशीन किया गया। उन्होंने अपने पिता के पद-चिन्हों पर चलते हुए संगत की बहुत सेवा की। सन्त राम जी बहुत विद्वान थे और उन्होंने पंजाबी भाषा में रामायण की रचना कर समाज को एक अनुपम उपहार दिया है। उनका विवाह श्रीमती शांतिस्वरूप जी से हुआ। उनकी दो पुत्रियां थीं।

यहाँ यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि सन्त राम जी विवाह करवाने के इच्छुक नहीं थे। उनकी माता भोली जी यह चाहती थीं कि वह अपनी पुत्र-वधू का मुख देखें। अपनी माता को यह बता दिया था कि यदि वह विवाह करेंगे तो उनकी आयु कम रह जाएगी परन्तु माता भोली जी इस बात को नहीं समझ सकीं। सन्त राम जी ने

अपनी माता की इच्छा-पूर्ति के लिए विवाह कर लिया। विवाह करने के बाद सन्त राम जी बहुत थोड़े समय रहे और केवल छत्तीस वर्ष की अल्पायु में ही देह-त्याग कर दिया। सन्त राम जी के बाद उनकी पत्नी माता शांतिस्वरूप जी ने मन्दिर की कार्य-व्यवस्था को कुशलतापूर्वक सम्भाला और उनके पश्चात् उनके दामाद सन्त करनैल सिंह जी और उनकी धर्म-पत्नी माता राम कौर जी दरबार का संचालन कर रहे हैं। उनकी देख-रेख में मन्दिर में सन्त ठाकुर दास जी और संत श्री सन्त राम जी के पवित्र यज्ञ बड़ी धूमधाम से मनाए जाते हैं।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

संत गोस्वामी श्री राम लाल जी महाराज

ॐ

संत गोस्वामी रामलाल जी महाराज

बापू ओम जी के तीसरे प्रमुख शिष्य गोस्वामी रामलाल जी एक उच्च कोटि के महान् सन्त हुए हैं जिन्होंने बापू ओम जी की कृपा से अखण्ड, शाश्वत चैतन्य-सुधा का पान कर, ब्रह्म-तत्त्व प्राप्त किया। गोस्वामी रामलाल का जन्म अमृतसर के सुप्रसिद्ध 'सूहे बाणे वाले महात्मा' नामक गोस्वामी परिवार में चैत्र शुक्ल अष्टमी बुधवार को विक्रमी संवत् 1935 में हुआ था। उनके पिता का नाम गोस्वामी देवी दास था। देवी दास जी के पूर्वजों गोस्वामी श्री नीलकण्ठ, गो० श्री सुखराम और गो० श्री ईश्वरदास जी

महान् ईश्वर भक्त और ज्योतिषाचार्य हुए थे। देवी दास जी भी अपने गौरवशाली परिवार की परम्परा का निर्वाह अति सुन्दर ढंग से कर रहे थे। देवी दास जी के दो पुत्र थे। बड़े पुत्र का नाम गो० दुर्गादास था और छोटे पुत्र रामलाल जी थे।

देवी दास जी रामलाल जी से बहुत स्नेह करते थे। देवी दास जी का वात्सल्य अपनी इस सन्तान में इतना अधिक था कि वह सोते-जागते, खाते-पीते, उठते-बैठते सदैव रामलाल जी को अपने साथ रखा करते थे। सात-आठ वर्ष की आयु तक भी उन्होंने राम लाल जी को

विद्यालय नहीं भेजा। पिता देवी दास के इस निर्णय का रामलाल जी को लाभ ही हुआ। अपने देव-तुल्य पिता के निरन्तर संग रहने के कारण राम लाल जी में शुद्ध आचरण, भगवद् भक्ति, धैर्य, क्षमा और ईश्वर की पवित्र कथाओं में प्रेम आदि सद्गुणों का समुचित विकास हुआ। जब देवी दास जी अपने गृह-मन्दिर में स्थित ठाकुर जी को भोग लगाते तो रामलाल जी भी वैसा करने की इच्छा प्रकट करते, इस पर देवी दास जी उन्हें समझाते कि उपनयन संस्कार के पश्चात् यज्ञोपवीत धारण करने के उपरान्त ही उन्हें ठाकुर जी की सेवा करने का अधिकार प्राप्त होगा।

देवी दास जी जब कभी भी रामलाल जी की जन्म कुंडली देखते तो अपनी पत्नी को उनके चमत्कारी होने की बात कहा करते। दोनों माता-पिता अपने सुपुत्र का उज्ज्वल भविष्य देख कर अति आनन्दित हो जाया करते। कुछ समय पश्चात् काल के विधान से देवी दास और उनकी पत्नी कालकवलित हो गए। स्नेहमयी माता और पिता का देहान्त बालक राम लाल के लिए वज्रपात के समान था। उनके बड़े प्राता दुर्गा दास ने उन्हें सम्भाला और पिता द्वारा निर्दिष्ट उपनयन संस्कार के दिन उन्हें यज्ञोपवीत धारण करवा दिया। मृत्यु से पूर्व उनके पिता ने जो भक्ति का दृढ़ अंकुर उनके मन-मस्तिष्क में रोपा था, वह अन्ततः पल्लवित होने लगा और आगे चल कर ईश्वर प्राप्ति में सहायक बना। रामलाल जी अपना अधिकाँश समय ठाकुर जी की पूजा और गायत्री जाप में व्यतीत करने लगे। उनके परिवार वालों ने उनका

ध्यान विद्यालय की पढ़ाई और घर के काम-काज में लगाने का प्रयत्न किया परन्तु उनके भगवद् प्रेम में यह सब उन्हें बाधक प्रतीत होता था। धीरे-धीरे यह बाधा इतनी असहनीय हो गई कि वह गृह त्याग कर चल पड़े और भ्रमण करते-करते कलकत्ता पहुँच गए। जिस समय उन्होंने अपना घर छोड़ा उस समय उनकी आयु केवल 12 वर्ष की थी। 12 वर्ष की अल्प आयु में ईश्वर के प्रेम के लिए गृह त्याग देना यह स्पष्ट इंगित करता था कि रामलाल जी को प्रारम्भ से ही यह अनुभूति थी कि उनका जीवन सांसारिक कार्यों के लिए न होकर ईश्वर प्राप्ति के महान् लक्ष्य के लिए ही है। महान् भक्त ध्रुव और प्रह्लाद के समान ही ईश्वरानुरागी और दृढ़-निश्चयी रामलाल जी के जीवन का गृह-त्याग के साथ ही एक नया अध्याय आरम्भ हुआ।

कलकत्ता में उनका कोई सगा-सम्बन्धी नहीं था। जीवन-यापन के लिए रामलाल जी ने एक सेठ की दुकान पर कार्य करना शुरु कर दिया। दुकान के कार्य से निवृत्त होकर वह अपना समय भगवान् की आराधना और 'योग वसिष्ठ' के पाठ में व्यतीत करते थे। बालक रामलाल को बाल्यावस्था में ही उस तथ्य की स्पष्ट अनुभूति थी जिसे प्राप्त होने में एक साधक को कई वर्ष भी लग जाते हैं। आदि शंकराचार्य का वह प्रसिद्ध कथन कि ब्रह्म सत्य है और जगत मिथ्या है, रामलाल जी के मन में उदित विवेक के लिए बिलकुल सटीक जान पड़ता है। आदि शंकराचार्य ने 'विवेकचूड़ामणि' में कहा है-

ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्येत्येवंरुपो विनिश्चयः । सोऽयं नित्यानित्यवस्तुविवेकः समुदाहृतः ।।

अर्थात् यह दृढ़ निश्चय कि ब्रह्म सत्य और जगत मिथ्या है, इस ज्ञान से नित्य और अनित्य सत्ता का भेद ज्ञान ही विवेक है।

रामलाल जी के जागृत विवेक का प्रभाव इतना सशक्त था कि उनके सान्निध्य से उस सेठ की दुकान पर कार्य करने वाला रसोईया भी रामलाल जी की भक्ति को देख कर वैरागी हो गया। उस रसोईए ने रामलाल जी के समक्ष तीर्थाटन का प्रस्ताव रखा और रामलाल जी के मान जाने पर दोनों सेठ से अपना-अपना हिसाब चुकता कर तीर्थ-यात्रा के लिए चल पड़े। सर्वप्रथम वे श्री जगन्नाथ जी पहुँचे। श्री जगन्नाथ में आठ दिन रह कर साक्षीगोपाल मन्दिर के दर्शन कर कटक चले गए। कटक में रामलाल जी

शहर की सुरम्यता, चाँदी के जेवर तथा बर्तनों पर जाली की कटाई का कार्य देख कर विशेष रूप से प्रभावित हुए और वहाँ कुछ दिन रह कर शिल्प कला सीखी। शिल्प कला की सहायता से ही रामलाल जी ने अपनी आगे की तीर्थ-यात्रा की। जब कभी भी उनके पास धन समाप्त होने लगता तब वह कोई न कोई वस्तु बनाते और उनका साथी रसोईया उस वस्तु को बेच कर धन ले आता।

कटक से रामलाल जी वैतरणी होते हुए जिव्हा नगरी पहुँचे। उस

नगरी से उन्होंने सोमांचल की यात्रा आरम्भ की। यात्रा के मध्य उन्हें तीन कानपुर के जौहरी भी मिल गए जिन्हें साथ ले कर रामलाल जी आगे चल पड़े। सोमांचल की यात्रा बहुत रोमांचित कर देने वाली यात्रा थी। उस यात्रा में भीलों ने उनकी बहुत सहायता की। कई प्रकार के दुर्गम वनों, घाटियों और पर्वतों की अन्धेरी गुफाओं में से होते हुए उन भीलों के साथ रामलाल जी आगे बढ़ते चले गए। एक महीने बीस दिन की इस अद्भुत यात्रा के बाद जब रामलाल जी और उनके साथियों ने अमूल्य रत्नों से जड़ी, मन्दिरों की चोटियां एक बहुत ऊँचे पर्वत पर देखी, तब सारे भक्त अपनी थकान भूल, अति उत्साहित हो, जयकारा लगाते-लगाते आगे बढ़ने लगे।

लगभग 2000 सीढ़ियां चढ़ कर भक्तजन मन्दिर में पहुँचे और भगवान् नृसिंह के दर्शन कर सनाथ हुए। सोमांचल के पश्चात् रामलाल जी कुम्भकोणम, रामेश्वर, मदुरै, हैदराबाद, बम्बई, बीकानेर, अजमेर, मारवाड़ और वृन्दावन गए। वृन्दावन में रामलाल जी के मामा का पुत्र उन्हें ढूँढता हुआ वहाँ आ पहुँचा और बड़े आग्रह से उन्हें वापिस अमृतसर ले गया। रामलाल जी के सकुशल लौटने पर उनके सम्बन्धियों को अपार हर्ष हुआ। उनके बड़े भाई दुर्गादास को विशेष तौर पर बहुत प्रसन्नता हुई कि उनका छोटा भाई अपने कुल की परम्परा को अक्षुण्ण रखते हुए तीर्थाटन कर वापिस आ गया है और भगवद्भक्ति में लीन है।

अब घर पर उनके भजन कीर्तन में कोई बाधा नहीं डालता था, फिर भी कभी-कभी उन्हें एकान्त नहीं मिल पाता था। कुछ समय बाद रामलाल जी ने एक बार फिर कलकत्ता जाने का निश्चय किया। अब

की बार उन्होंने एक गुणग्राही भगवान् के भक्त एक सेठ के पास आठ वर्ष बड़े प्रेम से बिताये। अधिकांश समय तो रामलाल जी पूजनादि करते और शेष समय दुकान का कार्य करते।

आठ वर्ष पश्चात् वह अमृतसर आये और दिन भर मंदिर में साधना में लीन रहते। सांयकाल वह नहर पर घूमने जाते थे। एक दिन नहर के किनारे घूमते हुए उनकी भेंट एक योगीराज से हो गई। उस योगी ने उनके पूर्व जीवन की कई बातें बताई। रामलाल जी अगले दिन दुर्गा दास को ले कर फिर उस योगी के पास गए। दोनों भाई उस योगी से प्रभावित हो गए और एक दिन रामलाल जी ने उनसे दीक्षा देने हेतु प्रार्थना की। उस योगी ने कहा, "मैं आपका गुरु नहीं हूँ। आपको दो वर्ष उपरान्त गुरु मिलेंगे।" योगी ने एक भविष्यकथन भी किया कि इस वर्ष में उनके घर एक मृत्यु होने वाली है। मृत्यु की बात सुन कर दोनों भाईयों ने सब कुछ ईश्वर पर छोड़ दिया और वापिस आ गए।

एक दिन दुर्गादास एक ज्योतिषी के पास रामलाल जी की जन्म-पत्री ले कर गये ताकि उनका कहीं विवाह करवाया जा सके। उस ज्योतिषी ने जन्मपत्री देखते ही कह दिया कि उस पत्रिका में विवाह योग

नही; प्रत्युत्त दो वर्ष पश्चात् इस लग्न कुंडली वाले पुरुष को एक परमसिद्ध संत मिलेंगे, जिनसे दीक्षा ग्रहण कर अपने कुल में एक रत्न हो कर यह चमकने लगेंगे। दुर्गादास जी को यह बात समझ में आ रही थी कि रामलाल जी का जीवन का पथ संसारिक न हो कर आध्यात्मिक होने वाला है।

कुछ दिनों बाद रामलाल जी को कलकत्ता जाना पड़ा और उसी सेठ के कहने पर मुनीम बन कर वह कलकत्ता चले गए। रामलाल जी के जाने के छ: माह पश्चात् ही संवत् 1960 के ज्येष्ठ मास में दुर्गादास का अमृतसर में निधन हो गया। यह दु:खद समाचार प्राप्त करते ही रामलाल जी अमृतसर आ गये और दुर्गादास के बच्चों की देखभाल के लिए वहीं रुक गये। अपने पुश्तैनी मन्दिर में रहते हुए रामलाल जी ने ज्योतिष का कार्य शुरू किया।

कलकत्ता में रहते हुए रामलाल जी ने बंग्ला ग्रंथों से ज्योतिष शास्त्र का अच्छा अभ्यास किया हुआ था। एक दिन उनके पिता के मित्र पण्डित रामकृष्ण जी उनसे मिलने आये और रामलाल जी से शास्त्र ज्ञान

के विषय में पूछा। रामलाल जी ने बताया कि वह बंग्ला ग्रन्थों के अध्ययन से काम चला लेते हैं। यह जान कर पण्डित रामकृष्ण जी ने उन्हें प्रेमपूर्वक संस्कृत शास्त्रों का भी सम्यक् ज्ञान प्राप्त करने के लिए कहा और फिर स्वयं ही उन्हें संस्कृत, ज्योतिष और आयुर्वेद की शिक्षा

देनी प्रारम्भ कर दी। रामलाल जी ने अपनी प्रखर बुद्धि से कुछ ही समय में सभी विषयों पर अधिकार प्राप्त कर लिया। । एक दिन उन्हें बहुत उग्र ज्वर हो गया। जिससे मुक्त होने में और पूरी शक्ति प्राप्त करने में उन्हें लगभग एक वर्ष लग गया। एक दिन रामलाल जी चिन्तन करने लगे कि उस योगी की एक भविष्यवाणी तो सत्य सिद्ध हुई और दूसरी पता नहीं कब सत्य होगी?

अभी वह यह सोच ही रहे थे कि उनका एक पुराना मित्र पं० मिल्खीराम उनके पास आया और उन्हें सांझे में एक टोपियों की दुकान खोलने का आग्रह करने लगा। रामलाल जी को धन का कोई लोभ नहीं था परन्तु उनके मन में साधु-संतों की ब्रह्म-भोज देने और अभ्यागतों (मेहमान) की सेवा की इच्छा सदैव बनी रहती थी और धन के बिना ऐसा होना सम्भव नहीं था, इसलिए रामलाल जी ने मिल्खीराम का वह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। वह दुकान अच्छी चलने लगी। रामलाल जी अधिकांश समय साधना में रहते और दुकान पर बहुत कम बैठते थे। इसी मध्य गुरु प्राप्ति की उनकी इच्छा तीव्र होती गई। एक रात्रि को उन्हें स्वप्न में आदेश हुआ कि आप के भावी गुरु होशियारपुर जिले के शामचौरासी नगर से कुछ ही दूर नन्दाचौर ग्राम में विराजमान हैं।

इस स्वप्न के बाद रामलाल जी ने देर नहीं की और दो दिन में ही जालन्धर से शामचौरासी और वहाँ से नन्दाचौर जा पहुँचे। वहाँ पहुँच

कर रामलाल जी ने लोगों से महात्मा जी का पता पूछा तो किसी ने बताया कि सामने चौबारे में एक संत रहते हैं। यह सुनते ही रामलाल जी उस चौबारे में गए और वहाँ बापू ओम जी को देख कर उनके

चरणों पर गिर गए। रामलाल जी ने कातर स्वर में बापू ओम जी से प्रार्थना की कि वह उन्हें शिष्य रूप में स्वीकार करें। बापू ओम जी ने पहले तो उन्हें टालने का प्रयत्न किया परन्तु रामलाल जी ने रुदन करते बापू ओम जी से उन्हें स्वीकार करने की प्रार्थना की। उन्हें रुदन करता देख कर बापू जी ने उन्हें उठा कर आशीर्वाद देते हुए प्रेममयी वाणी में कहा, "बेटे जाओ, दुकान छोड़ कर केवल भजन में लग जाओ, इसी से तुम्हें सभी सिद्धियाँ प्राप्त होंगी और तुम्हारी मनोकामनायें पूर्ण होंगी। अब तुम पाँच महीने दस दिन बाद आना।"

बापू जी से आशीर्वाद प्राप्त कर श्री रामलाल जी अमृतसर आ गये और मिल्खी राम को कह दिया कि वह अब दुकान में किसी प्रकार की सांझेदारी न रख कर केवल भजन-साधना में ही लीन रहना चाहते हैं। रामलाल जी ने कठोर तपस्या आरम्भ कर दी और लगभग भोजन का त्याग भी कर दिया।

बापू ओम जी द्वारा निर्दिष्ट अवधि पूरी होने पर रामलाल जी पुनः उनके चरणों में उपस्थित हुए। बापू जी ने देखा कि भोजन त्याग देने के कारण रामलाल जी का शरीर कमज़ोर हो गया है। यह देख कर बापू जी

ने उन्हें बड़े प्रेम से समझाया कि इतनी घोर तपस्या की आवश्यकता नहीं है। केवल भजन और जप ही यथेष्ट होगा। तत्पश्चात् बापू जी ने उन्हें वर दे कर सान्तवना दी कि तुम्हारी सभी मनोकामनायें सिद्ध होंगी और सभी चिंताओं का अन्त हो जायेगा। बापू जी की कृपा प्राप्त कर रामलाल जी वापिस आये और एक दिन जब वह मन्दिर में बैठे थे तब उन्हें भगवान् ने चतुर्भुज रूप में दर्शन दिए। भगवान् के दर्शन प्राप्त कर श्री रामलाल जी का जीवन सफल हो गया। इन दर्शनों के बाद वह अपने प्रिय गुरुदेव से मिलने नन्दाचौर गए और कुछ दिन उनकी स्नेहिल सुधा का पान कर वापिस लौट आए।

श्री रामलाल जी की साधना चलती रही और बापू ओम जी कृपा से वह पूर्ण हो गए। एक दिन उन्हें समाचार मिला कि बापू ओम जी ब्रह्मलीन हो गए हैं। यह जान कर उन्हें दुःख तो हुआ परन्तु साथ ही यह विचार भी उत्पन्न हुआ कि गुरुदेव तो सदैव ही जीवित हैं इसलिए खेद करना व्यर्थ है। बापू ओम जी के देह त्याग के पश्चात् श्री रामलाल जी ने अपना सारा समय भजन तथा परोपकार में लगा दिया।

उनका तेज बढ़ता ही गया। धीरे-धीरे लोगों को उनकी शक्ति का एहसास होता गया। बापू ओम जी की कृपा से वह त्रिकालदर्शी हो गए और सृष्टि के समस्त रहस्य उन्हें ज्ञात हो गए। बड़े-बड़े विद्वान् उनसे योग और वेदान्त की चर्चा करने आने लगे। नाड़ी ज्ञान में तो वह इतने पारंगत हो गए कि कलाई पर हाथ रखते ही वर्षों पुराना रोग भी कहने लगते थे।

बापू जी की कृपा से गो० रामलाल जी ने हतोत्साह तथा निराश रोगियों को जीवनदान दे कर खड़ा करना आरम्भ कर दिया। अनेक निः सन्तान व्यक्तियों को अपने उपचार और आशीर्वाद से सन्तान प्रदान की।

पूरे अमृतसर और उसके आस-पास के क्षेत्रों में गो० रामलाल जी का यश फैलने लगा। उन दिनों अमृतसर के प्रसिद्ध दुर्गाणा मन्दिर में सरोवर का निर्माण हुआ था। उस सरोवर के जल के साथ एक समस्या यह थी कि उसमें बहुत शीघ्र काई आदि जम जाया करती थी और तरह-तरह के खरपतवार और ऊँची-ऊँची झाड़ियां स्वतः ही उत्पन्न हो जाती थी। इन सब कारणों से उस सरोवर के जल से बहुत दुर्गन्ध आती थी। दुर्गाणा मन्दिर के ट्रस्ट के सदस्यों ने इस समस्या के निदान के लिए कई उपाय किए परन्तु उनका हर प्रयास विफल रहा।

ऐसे में किसी ने उन सदस्यों को गो० रामलाल जी के पास भेजा और श्री रामलाल जी ने कहा कि वहाँ तो स्वयं श्री नारायण और लक्ष्मी जी विराजमान हैं, वहाँ ऐसी कोई समस्या किस प्रकार आ सकती है? तत्पश्चात् गो० रामलाल जी कुछ समय ध्यान मग्न रहे और फिर उन सदस्यों को कहा कि वह होली के बाद एक यज्ञ करेंगे और यज्ञ के कुम्भ का पवित्र जल उस सरोवर में डालेंगे जिससे उनकी समस्या का समाधान हो जायेगा। तत्पश्चात् ट्रस्ट वालों ने जाकर उस सरोवर को खाली करवाया और उसे दोबारा जल से भरवा दिया। इसके बाद गो०

रामलाल जी ने यज्ञ किया और यज्ञ के पवित्र कुम्भ का जल उस सरोवर में डाल दिया। जल डालने के साथ ही गो० रामलाल जी ने तीन वरदान भी दिए। उन्होंने कहा कि अब यह यज्ञ प्रतिवर्ष होगा और हर बार उसका पावन जल सरोवर में डाला जाएगा। जो भी मनुष्य उस यज्ञ में आहुति डालेगा, उसकी सभी मनोकामनाएं पूर्ण होंगी। फिर उन्होंने कहा कि अब इस सरोवर का जल कभी खराब नहीं होगा। इसके साथ ही तीसरा वरदान देते हुए उन्होंने कहा कि जो मनुष्य प्रत्येक 12 वर्ष के बाद आने वाले कुम्भ में स्नानार्थ नहीं जा सकता, यदि वह इस सरोवर के जल से स्नान कर लेगा तब भी उसे उसी पुण्य की प्राप्ति होगी जो कुम्भ में जा कर स्नान करने की होती है।

गो० रामलाल जी के वह तीनों वरदान आज भी फलीभूत हो रहे हैं। भक्त-जन यज्ञ में आहुति डाल कर मनोवांछित फल प्राप्त करते हैं और उस सरोवर का जल आज बिलकुल स्वच्छ है। भक्त-जन उस पवित्र सरोवर के जल को भर कर अपने घरों में ले जा कर स्नान करते हैं और कुम्भ के स्नान का ही फल प्राप्त करते हैं।

गो० रामलाल जी को बापू ओम जी ने अपना ही स्वरूप प्रदान किया था। गोस्वामी जी ने अपने असंख्य शिष्यों का उद्धार किया और मृत्यु तक की विभीषिका से बचाया। एक बार गो॰ रामलाल जी के एक प्रिय शिष्य लाला छन्नूमल जी सन् 1913 में मरणासन्न हो गए। घबरा

कर उन्होंने अपने घरवालों से कहा कि कृपा करके उन्हें रामलाल जी महाराज जी के दर्शन करवा दिए जाएं। घरवालों ने महाराज रामलाल जी को सूचना दी और महाराज जी ने छन्नूमल जी के घर जा कर उन्हें दर्शन दे कर उन्हें बचा लेने का वचन दिया। तदोपरान्त रामलाल जी मन्दिर में चले गए। थोड़ी देर बाद छन्नूमल जी मूर्छित हो गए और उनके पिता मन्दिर में रामलाल जी को उलाहना देने चले गए। रामलाल जी ने कोमल स्वर में छन्नू मल जी के पिता जी को कहा, "आप चिन्ता न करें, मैने वचन दे दिया है। अब हम जानें या आपका पुत्र छन्नूमल।"

रामलाल जी की बात सुन कर छन्नूमल जी के पिता घर लौट आए और डॉक्टर रामरखा मल को रात भर की फीस दे कर घर में बिठा लिया। रात के बारह बजे छन्नूमल जी में कुछ चैतन्यता वापिस आई

और उन्होंने देखा कि रामलाल महाराज जी अत्यन्त सूक्ष्म शरीर में उनके पास आये हैं। कुछ ही क्षणों में छन्नूमल का भी सूक्ष्म शरीर निकाल कर और हाथ पर गुरु मंत्र लिख कर उन्हें अपने साथ एक ऐसे विचित्र स्थान पर ले गए जहाँ सूर्य, चन्द्रमा तथा किसी अन्य साधन के बिना ही अत्यन्त प्रकाश हो रहा था। वहाँ अनेक विचित्र व्यक्ति घूम रहे थे। इतनी देर में वे दोनों एक बड़े न्यायालय जैसे स्थान पर पहुँच गए। सामने धर्मराज सिंहासन पर आसीन थे। धर्मराज ने रामलाल जी को कहा कि इस प्राणी का समय पूरा हो चुका है, अतः इसे छोड़ कर आप चले जाइए। रामलाल जी ने धर्मराज जी से बहुत बातें की परन्तु उन

हाथी के उत्तर में धर्मराज का एक ही जवाब था कि छन्नूमल का समय समाप्त हो चुका है। तत्पश्चात् महाराज जी ने भगवान् की आराधना की. उसी क्षण जैसे थियेटर में परदा बदलता है, एक पटाखे का शब्द हुआ और साक्षात् भगवान् विष्णु की चतुर्भुज मूर्ति सामने आ गई। साथ ही वहाँ कई महात्मा भी आ पहुँचे जिनमें श्री 108 बापू ओम नारायण दत्त महाराज जी भी थे। बापू ओम जी आते ही रामलाल जी के पास खड़े हो गए। उसी समय उनके हाथों में अकस्मात् आरती की ज्योति से सजा थाल आ गया और वहाँ उपस्थित अन्य महात्माओं के हाथों में भी घंटियां आदि आ गई। छन्नूमल जी के हाथ में भी एक तासी पड़ गई। तत्पश्चात् वहाँ बहुत आनन्द से आरती होने लगी।

आरती के बाद भगवान को पताशों के शर्बत का भोग लगाया गया। इसके बाद बापू ओम जी ने रामलाल जी और छन्नूमल जी को आगे कर के भगवान् विष्णु से छन्नूमल के लिए प्राण दान की याचना को। भगवान् ने अत्यन्त कृपा से बापू ओम जी की प्रार्थना स्वीकृत कर लो। उसके बाद भगवान् विष्णु व अन्य महात्मा गण वहाँ से अन्तध्यान हो गए।

उधर पृथ्वी पर छन्नुमल जी के शरीर में थोड़ी-थोड़ी चैतन्यता चापिस आने लगी थी। जब वह अपनी आँखें खोलते तो अपनी माता जी और बहिन को देखते और जब आँखें बन्द करते तो ऊपर के उसी दिव्य

लोक का दृश्य दिखाई पड़ता। इसके बाद रामलाल जी ने बापू ओम जी से विदा ली और छन्नूमल जी के सूक्ष्म शरीर को वापिस उनके शरीर में डाल कर मन्दिर चले गए। थोड़ी देर में ही छन्नूमल जी को अपने निकट अनेक बंदरों के से मुख वाले मनुष्य दिखाई दिए। उन मनुष्यों ने हृदय-स्थल के नीचे सुईयों के चुभोने का प्रयोग किया और एक मनुष्य ने शीशा लगा कर देखा और कहा कि अब सब ठीक है। इसके बाद वे वानर की आकृति वाले मनुष्य विलुप्त हो गए।

उनके जाने के पश्चात् छन्नूमल जी बिलकुल स्वस्थ हो गए। उन्होंने आँखें खोलीं और शौचादि जाने की इच्छा प्रकट की। रामरखा मल ने अपने यंत्रादि लगा कर देखा कि छन्नूमल जी के शरीर में रोग का कोई चिन्ह मात्र भी नहीं था। इसके उपरान्त प्रातः चार बजे रामलाल जी महाराज उनके घर पधारे और तब उनकी आज्ञा से छन्नूमल जी ने अपना अनुभव अपने परिवार वालों को बताया। सभी उपस्थित व्यक्ति यह वृत्तान्त जान कर आश्चर्यचकित भी हुए और आनन्दित भी हुए। इस घटना के बाद सभी का गो० रामलाल जी में दृढ़ विश्वास प्रतिष्ठित हो गया।

गो० रामलाल जी ने अपने भक्तों को केवल मृत्यु की विभीषिका से बचने के लिए ही नहीं अपितु आध्यात्मिक पथ पर चलने के लिए भी भगवान् के दर्शन करवाये। एक बार गो० रामलाल जी के भक्त लाला

हरगोपालमल अमृतसर में अपने घर कूचा नैनसुख में प्रगाढ़ निद्रा में निमग्न थे। अचानक उनके कानों में बड़े उच्च स्वर से 'ऊँ' शब्द का गुंजन हुआ। उसी क्षण उनकी निद्रा भंग हो गई। उस समय तीन बजे थे। लाला जी को ऐसा अनुभव हुआ मानो स्वयं महाराज जी उन्हें बुला रहे हैं। कुछ ही क्षणों में वह गो० रामलाल जी के दरबार में उपस्थित हो गए। वहाँ पहुँच कर उन्होंने देखा कि लाला छन्नूमल जी और उनकी माता जी भी वहाँ उपस्थित हैं। लाला हरगोपाल मल जी के वहाँ पहुँचने पर गो० रामलाल जी ने बहुत प्रेम से उन्हें बिठाया और फिर भगवान् के चतुर्भुज रूप में दर्शन करवा कर जन्म-जन्मान्तरों के पापों से सदैव के लिए मुक्त कर दिया।

गो० रामलाल जी की तपस्या की अपार शक्ति के विषय में सम्पूर्ण भक्त-जनों को पता था। रामलाल जी ने अपनी शक्ति का सदुपयोग सदैव मानवता के कल्याण के लिए किया और अपने पास आने वाले भक्तों एवं संत-महात्माओं को भी ऐसा ही करने की प्रेरणा दी। एक बार लाला छन्नू मल कहीं जा रहे थे। अचानक उन्होंने देखा कि सामने से एक मुसलमान फकीर जुलाई के महीने में भरी दोपहर में अपने हाथ में जलती हुई लालटेन ले कर आ रहा है। छन्नूमल जी उत्सुकतावश उसके पीछे-पीछे चल पड़े और देखा कि वह बंबे वाले खूह की ओर जा रहा है। जैसे ही वह फकीर गो० रामलाल जी के मन्दिर के पास पहुँचा तो स्वतः ही उसके पाँव वहाँ रुक गए। वहाँ रुक कर वह

कहने लगा " अच्छा, आप मुझे आगे नहीं आने देते, परन्तु इससे पीछे मैं भी हटने वाला नहीं हूँ।"

यह कह कर वह फकीर पास ही एक स्कूल के बाहर बने स्थान पर बैठ गया। उस गली में कुछ मुस्लिम परिवार भी रहते थे। उनमें से कुछ लोगों ने उस फकीर को कहा, "आप हमारे घर आ कर विश्राम कीजिए।" यह सुन फकीर ने कहा, "नहीं, मैं तुम्हारे घर जाने के लिए अपने कदम पीछे नहीं उठाऊँगा। मैं आगे जा नहीं सकता तो कोई बात नही, मैं सामने वाले घर में चला जाऊँगा।" जिस घर की ओर वह फकीर इशारा कर रहा था, वह घर एक हिन्दू का था। उसने उस फकीर को अपने घर आने से इन्कार कर दिया। यह देख कर उस फकीर का क्रोध भड़क उठा और वह कहने लगा कि तुमने मेरा अपमान किया है, इस अपराध के लिए मैं तुम्हें भस्म कर दूँगा।

इतनी देर में गो० रामलाल जी, जो उस समय मन्दिर में ही विराजमान थे, ने अपने पास बैठे भक्तों से कहा कि चलो बाहर चलते हैं, हमारी वहाँ ज़रूरत पड़ गई है। बाहर पहुँच कर उन्होंने उस फकीर को देखा जो बाहर खड़ा क्रोधित हो रहा था। सारा मामला जान कर गो० रामलाल जी ने उस हिन्दू सज्जन को कहा कि वह उनके पीछे आ कर खड़ा हो जाए। इसके बाद उन्होंने उस फकीर को समझाते हुए कहा कि आपको तो मुझसे समस्या है, फिर इस व्यक्ति ने आपका क्या बिगाड़ा

है? इस पर फकीर ने उत्तर दिया कि इस व्यक्ति ने मेरा अपमान किया है। मैं इसे नहीं छोड़ूंगा। रामलाल जी ने उसे प्यार से समझाते हुए कहा कि मैं जानता हूँ कि आप में इस व्यक्ति को भस्म करने की शक्ति है, परन्तु आप को अपनी शक्तियों का उपयोग केवल सद्कार्यों के लिए ही करना चाहिए न कि किसी को हानि पहुँचाने के लिए।

जब बहुत समझाने पर भी वह फकीर नहीं माना तब महाराज जी ने एक सेवक को जल लाने के लिए कहा। तत्पश्चात् महाराज जी ने तीन बार जल का छींटा उस फकीर पर दिया। महाराज जी के ऐसा करते ही वह फकीर शक्तिहीन हो गया। शक्ति रहित होने पर उसने महाराज जी से कहा, "मैं अहंकारवश आपकी परीक्षा लेने आया था। मैने आपकी तपस्या के विषय में बहुत सुना था। आज मैने देख लिया कि मेरी कमाई से आपकी कमाई बहुत अधिक है। आज मैने अज्ञानता वश अपनी सारी तपस्या व्यर्थ कर दी।"

फकीर की बात सुन कर रामलाल महाराज जी ने उसे कहा कि हम आपको यही समझाने का प्रयत्न कर रहे थे कि तप की शक्ति को क्रोध के आवेश में आ कर गंवाना हानिकारक होता है। इन शक्तियों का प्रयोग सदैव जन-कल्याण के लिए ही होना चाहिए।

गो० रामलाल जी समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर करने हेतु भी

प्रयासरत रहते थे। जन-कल्याण के लिए उन्हें जो कुछ भी उचित जान पड़ता था वह किया करते थे। अमृतसर में कुछ व्यक्तियों का समूह मटके (जुआ) के खेल में लिप्त था। वे लोग एक से सौ तक के अंकों की पर्चियाँ बना कर गरीब लोगों को जुआ खेलने के लिए उकसाया करते थे। एक बार रामलाल जी उन व्यक्तियों के पास गए और उन्हें वह खेल बन्द करने के लिए कहा। उन जुआरियों ने महाराज जी को अपशब्द बोलते हुए कहा, आप को जो करना हो, कर लीजिए। हम यह खेल बंद नहीं करेंगे।" इस पर महाराज जी ने शान्त भाव से कहा, "ठीक है, हमें जो अच्छा लगेगा हम कर लेंगे।"

इसके बाद अगले दिन महाराज जी ने एक गत्ते पर 64 लिख कर एक रस्सी के सहारे बाजार के एक छोर से दूसरे छोर तक बाँध दिया। वहाँ से गुज़रने वाले एक गरीब व्यक्ति ने 64 लिखा देखा और उसके मन में पता नहीं क्या भाव आया कि उसने जुआरियों के पास जा कर उसी अंक पर सट्टा लगाया और जीत गया। अगले दिन वह व्यक्ति फिर से उसी गली से हो कर निकला और तब की बार उसने गत्ते पर

36 लिखा हुआ देखा। उसने फिर 36 के अंक पर ही सट्टा लगाया और जीत गया। ऐसा कई दिनों तक होता रहा। धीरे-धीरे दूसरे सटोरियों को भी यह बात पता चल गई और सभी उस गत्ते पर लिखे अंकों को पढ़ कर धन जीतने लगे। शनैः शनैः जुआरियों का वह गिरोह कंगाल होने लगा। उनकी समझ में यह बात आ गई थी कि यह सब लीला महाराज

जी ने उन्हें सबक सिखाने के लिए ही की है। तत्पश्चात् वे सब महाराज जी के पास क्षमा-प्रार्थना करने गए। महाराज जी ने उन्हें क्षमा करते हुए कहा कि व्यक्ति को कभी भी ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिए जिससे समाज को किसी भी प्रकार की हानि पहुँचे।

बापू ओम जी प्रदत्त ज्ञान की ज्योति को भक्तों में प्रज्जवलित करते हुए गो० रामलाल जी ने अपने गुरुदेव की गौरवशाली परम्परा को अक्षुण्ण रखा और संत देसराज जी जैसे त्यागी और अद्भुत शिष्य तैयार किए, जिन्होंने उनके पश्चात् गद्दी का कार्यभार सम्भाला। भारत विभाजन से पूर्व सन् 1946 में गो० रामलाल जी ने अपना लीला संवरण कर लिया। उनका भक्तिमय जीवन सभी भक्तों के लिए एक आदर्श उदाहरण बन गया। गो० रामलाल जी ने जिस प्रकार अपना दिव्य ज्ञान अपने शिष्य संत देसराज जी में संप्रेक्षित किया, उसका वर्णन हम अगले अध्याय में करेंगे।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

संत श्री देसराज जी महाराज

ॐ

संत श्री देसराज जी महाराज

श्रोत्रियोऽवृजिनोऽकामहतो यो ब्रह्मवित्तमः । ब्रह्मण्युपरतः शान्तो निरिन्धन इवानलः । अहेतुकदया सिन्धुर्बन्धुरानमतां सताम् ।।

आदि शंकरचार्य सद्गुरु के लक्षण बताते हुए कहते हैं कि गुरु वह है जिसे श्रुतियों का ज्ञान है, जो पवित्र है, कामनाओं से रहित है, ब्रह्मज्ञानी है, जो ब्रह्म में प्रतिष्ठित है, जो शान्त है, जो अहैतुकी दया का सागर है और जो शरणागतों का अन्तरंग मित्र है।

एक सद्गुरु के उपर्युक्त सभी लक्षण गो० रामलाल जी के शिष्यों की मणिमाला की अमूल्य मणि संत देसराज महाराज जी पर चरितार्थ होते हैं। संतों की जीवन लीलाओं का रहस्य ही स्वयं में एक अप्रतिहत आकर्षण है। संतों की महान् जीवन-गाथाओं के लिए किसी भूमिका की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि संतो का जीवन स्वयं में ही एक ऐसा विलक्षण आकर्षण होता है, जिसकी चुम्बकीय शक्ति एक भावपूर्ण भक्त के हृदय को अपनी ओर खींच ही लेती है। संत देसराज जी भी गो० रामलाल जी की महान् आध्यात्मिक उर्जा से ऐसे आकर्षित

हुए कि उनका जीवन पूर्णतया ब्रह्ममय हो गया।

पंजाब के जिला गुरदासपुर, तहसील बटाला के गाँव शाहपुर में भादर सुदी 13 सन् 1911 में पिता श्री ज्ञानचन्द के गृह माता उत्तमदेई के गर्भ से उनका प्राकट्य हुआ। बाल्यकाल से ही उनकी प्रवृत्ति शान्त, सरल एवं मृदुल थी। मात्र 6 वर्ष की आयु में वह अपने माता-पिता के संग अमृतसर आ बसे। 13 अप्रैल 1919 को जलियांवाला बाग में उनके पिता श्री ज्ञानचन्द जी उस समय वीरगति को प्राप्त हो गए, जब जनरल डायर असहाय भारतीयों पर गोलियां चलवा रहे थे। पूज्य पिता जी की वीरगति का उन पर सशक्त प्रभाव पड़ा जिसने उनके हृदय में भारतीय संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन के प्रति विशेष अनुराग पैदा कर दिया जो आजीवन उनके विचार एवं कर्म से अंकुरित होता रहा। देसराज जी सदैव राष्ट्र-भक्ति से ओत-प्रोत रहे। इनका यह राष्ट्र स्तवन आज भी सेवकों के हृदय में गूंजता है, **जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।** अर्थात जननी एवं जन्मभूमि स्वर्ग से भी श्रेयस्कर है।

देसराज जी बचपन से ही संगीत प्रेमी थे। उन्होंने उस्ताद परमानन्द जी से शास्त्रीय संगीत का ज्ञान लेना आरम्भ किया। प्रथम तो उन्होंने तबले की शिक्षा ली, परन्तु शीघ्र ही उन्होंने गायन की शिक्षा लेना प्रारम्भ किया। गो रामलाल जी महाराज उस्ताद जी से विशेष स्नेह

रखते थे। गो० रामलाल महाराज जी भी संगीत के अति प्रेमी थे। देसराज जी अपने उस्ताद जी के साथ प्रायः संगीत गायन हेतु मन्दिर आते रहते थे। जब उन्होंने मन्दिर आना आरम्भ किया तब उनकी आयु मात्र 12 वर्ष थी। वह इतना मधुर एवं सुरीला गाते थे कि गो० जी से इनको विशेष स्नेह मिलने लगा। इनकी विनम्रता, सरलता एवं सेवा ने गो॰ महाराज जी के हृदय पर इतनी गहरी छाप छोड़ी कि शीघ्र ही वह उनके कृपा पात्र बन गए और महाराज जी के मन्दिर में ही रहने लगे। महाराज जी ने कृपा कर इनको अपना शिष्य बना लिया। महाराज जी की सेवा, मन्दिर की सेवा, आरती एवं अन्य कार्यों को देसराज जी तन-मन से करने लगे और महाराज जी के अंग संग रहने लगे। देसराज जी का मानना था-

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च। मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ।।

भगवान् कहते हैं कि मैं न तो वैकुण्ठ में रहता हूँ, न योगियों के हृदय में। मैं तो वहीं स्थिर रहता हूँ, जहाँ भक्त मेरा गुणगान करते हैं।

इसीलिए देसराज जी प्रायः यह कहा करते थे कि परमात्मा को पाने के दो रास्ते हैं- संगीत और योग। वह ध्रुपद शैली का गायन करते थे। वे महाराज जी के साथ कई संगीत सभाओं में भी जाते थे। उन्होंने मन्दिर की यात्रा तो संगीत के लिए की थी परन्तु उसका परिणाम इतना

 कल्याणकारी हुआ कि इनको गो महाराज जी के रूप में एक पूर्ण संत, योगी, सर्वज्ञ एवं परम गुरु की प्राप्ति हुई। उन्हें गृहस्थ में कोई रुचि नहीं थी। उन्होंने विवाह के लिए स्पष्ट इन्कार कर दिया था परन्तु गो जी के कहने पर वह विवाह हेतु सहमत हो गए। उनका विवाह 22 वर्ष की आयु में लाजवन्ती नामक कन्या से हुआ। इनके एक पुत्र (जो उसी समय काल-ग्रसित हो गया) एवं एक कन्या उत्पन्न

हुई। वे सनातन धर्म महावीर दल के स्वयं सेवक भी रहे। वह गतका, लाठी और तलवार चलाने में भी माहिर थे।

वे अष्टांग योग भी करते रहे परन्तु गो० महाराज जी के कहने पर इन्होंने यह बन्द कर दिया। उन्हें गुरु कृपा से सभी योग क्रियाएँ स्वयं ही सिद्ध हो गई। सन् 1946 में गो जी के ब्रह्मलीन होने के उपरान्त इनको गो० जी का उत्तराधिकारी मान सर्वसम्मति से गो जी को गद्दी पर विराजमान कर दिया गया। उस समय इनकी आयु मात्र 35 वर्ष थी। वे कई मास गो० जी की विरह वेदना से संतप्त रहे। कई वर्षों तक वे गो० जी की गद्दी पर नहीं बैठ पाये। वे गद्दी के नीचे जमीन पर सभी सेवकों के साथ बैठते रहे। बहुत आग्रह करने पर इन्होंने अपने लिए एक आसन रखने का प्रस्ताव मान लिया।

गद्दी पर आसीन होने के छः मास पश्चात् एक दिन मन्दिर में वे सन्ध्या पर बैठे थे तो उन्हें आभास हुआ कि गो० महाराज जी की

प्रकाशाकृति उनमें समा गई है। इस घटना के पश्चात् कई सेवकों को आप में गो० महाराज जी के दर्शन भी हुए।

सन् 1950 में इन्होंने मन्दिर नवनिर्माण का कार्य आरम्भ किया। सभी सेवकों ने उनको बिना कुछ मांगे तन-मन-धन से सहयोग दिया। आज वह मन्दिर (मन्दिर 108 गोस्वामी श्री राम लाल जी महाराज खूह बम्बे वाला अमृतसर) का भवन है। यह इनकी सेवा, तपश्चर्या एवं लगन का परिणाम है। वे स्वभाव से धन-परिग्रह, यश, सम्मान एवं शिष्यों की बृहद भीड़ बनाने के इच्छुक नहीं थे। अतः जब मन्दिर के पड़ोस में स्थित मन्दिर अनन्त राम सट्टी वाले ठाकुरद्वारा के प्रबन्धकों ने जब ठाकुरद्वारे का संस्थान एवं उसका कार्य भार इनको सौंपने का प्रस्ताव रखा तो इन्होंने उसके अधिग्रहण को यह कह कर अस्वीकृत कर दिया कि इनके जीवन का उद्देश्य तत्त्वज्ञान को प्राप्त कर अन्तर्मुखी हो परमात्मा को उपलब्ध होना है ना कि व्यर्थ के झंझटों में पड़ कर सम्पत्ति के अर्जन एवं उसकी सुरक्षा में जीवन खो देना।

उन्होंने कहा कि जीवन का सार भौतिक सम्पदा का संग्रह न हो कर आत्म-बोध की स्थिति है। इन्होंने कहा कि वे गद्दी पर महाराज जी की सेवा के लिए बैठे हैं न कि धन अथवा पद की इच्छा से। वे सदैव अपनी निजता में रहे। वह भौतिक सुख-सुविधाओं से सदा दूर रहे। इन्होंने सत्य, धर्म, अहिंसा एवं सदाचार का जो जीवन जिया, वह

अतुलनीय है। इतनी बड़ी प्रतिभा के स्वामी हो कर भी इन में लेश-मात्र अहम् नहीं था। इनसे जब भी कोई सेवक मिलने आता वे सदैव उसकी सेवा के लिए तत्पर रहते। इनको आयुर्वेद का अच्छा ज्ञान था। मन्दिर 24 घण्टे सेवकों के लिए खुला रहता। यदि कोई रोगी मध्य रात्रि भी मन्दिर आता तो वे उसका औषधि से उपचार कर, रोग निवारण करते। वे बच्चों से बच्चे, युवाओं से युवा एवं विद्वानों से विद्वान होकर मिलते। वे कठिन से कठिन समस्या का समाधान बड़े सरल ढंग से कर देते। ज्ञान-योग, भक्ति-योग अथवा वेदान्त, हर विषय पर इनकी गहरी पकड़ थी। उन्होंने अपनी आंतरिक शक्ति को सदैव गुप्त रखा।

एक बार नन्द नन्दनानन्द जी महाराज मध्य-प्रदेश से महाराज देसराज जी के पास पधारे। नन्द नन्दनानन्द जी को भगवान् की प्रथम गोपी कहा जाता था। एक बार उन्होंने सात दिन तक मन्दिर में भागवद् कथा की और देसराज जी को बताया कि मैं कभी झूठ नहीं बोलता लेकिन मुझे मन्दिर में पाँच वर्ष के बालक नृत्य करते हुए नज़र आए। नन्द नन्दनानन्द जी का ऐसा कहना यह स्पष्ट संकेत करता है कि उस मन्दिर में साक्षात् भगवान् श्रीकृष्ण का वास है। गोस्वामी रामलाल जी से लेकर जितने भी संत इस गद्दी पर विराजमान हुए हैं, वे सभी अनन्य कृष्ण भक्त हुए हैं और उस मन्दिर में आने वाले भक्तों को प्रायः भगवान् के वहाँ होने का स्पष्ट आभास हुआ है।

एक दिन एक साधु ने मन्दिर आकर जब शीत से बचने के लिए उनसे किसी कम्बल की मांग की तो उन्होंने अपने तन से लोई उतार कर उसे दे दी। जब साधु ने कहा कि आप क्या लेगें? उन्होंने यह कह कर कि सब का योग-क्षेम भगवान वहन करते हैं, साधु को विदा किया। वह साधु 'साधु-वाद, साधु-वाद' करता हुआ वहाँ से निकल गया। देसराज जी का त्याग अनुपम था।

सन् 1978 में गोस्वामी 108 श्री राम लाल जी महाराज के 100 वें जन्मदिवस के उपलक्ष्य में स्वर्णजयन्ती समारोह का आयोजन कर उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि वे सर्वसमर्थ एवं सर्वगुण सम्पन्न हैं। आज भी उस अद्वितीय समारोह का, जिसमें भारतवर्ष के शीर्षस्थ संत-महापुरुष एवं प्रवक्ता सम्मिलित हुए थे, सेवकों के हृदय पर अमिट छाप लिए हुए हैं। उस यज्ञ में जगद्गुरु शंकराचार्य श्री निरंजन देव तीर्थ जी महाराज और उनके गुरु श्री करपात्री जी महाराज भी सम्मिलित हुए थे। उस यज्ञ का आयोजन गोलबाग में हुआ था और यज्ञ का कार्य करवाने के लिए बनारस और वृन्दावन से ब्राह्मण आए थे।

देसराज जी ने गो० महाराज जी की स्मृति में 2 यज्ञों पौष सुदी द्वादशी (गो० महाराज जी का निर्वाण दिवस) एवं चैत्र सुदी अष्टमी (गो० महाराज जी का प्राकट्य दिवस) का शुभारम्भ भी किया जो आज भी मन्दिर में अन्य यज्ञों एवं पर्वों सहित सर्वोपरि उत्सवों के रूप में

मनाये जाते हैं। उन्होंने अपनी पैतृक सम्पति का विशद भाग मन्दिर ट्रस्ट को दे, अपने आचरण से यह सिद्ध किया कि सच्चा सन्यास चित्त की वह निरासक्त अवस्था है जिसमें स्थित होकर अनाश्रितः कर्मफलः अर्थात् निष्काम कर्मयोग का वहन किया जाता है।

देसराज जी ने भारत के प्रमुख तीर्थ स्थलों का भी भ्रमण किया। विशेषतः हरिद्वार एवं वृन्दावन से उनका हार्दिक लगाव रहा, जहाँ वह प्रायः जाते रहते थे। सेवकों के अनुरोध एवं श्रद्धा का ध्यान रख वह उनके सादर निमन्त्रण पर कई बार अमृतसर से बाहर विभिन्न शहरों में भी गए। वे जहां भी जाते उनके ज्ञानोपदेश की वर्षा से जनमानस के हृदय प्रेम भक्ति के पुष्प से खिल उठते। जीवन के प्रति उदास तथा उकताए व्यक्ति इनके सान्निधय में हर्षोत्साह एवं उल्लासमयी निष्काम जीवन की धारा में प्रवाहित हो परमानन्द की उपलब्धि को प्राप्त होते थे। देसराज जी महाराज अपने भक्तों के अंग-संग रहते हुए सदैव उनकी रक्षा करते थे।

सविता सेठ, पत्नी श्री ओम प्रकाश सेठ, जब दसवीं श्रेणी में पढ़ती थी तो उसे टाईफाइड हो गया। उसका बहुत इलाज करवाया गया परन्तु उसके मन में महाराज की लगन थी और वह केवल महाराज

जी से ही औषधि लेना चाहती थी। उसकी तबीयत दिन प्रतिदिन बिगड़ती जा रही थी। महाराज जी उसके घर पर उसे देखने गए थे और जाते

समय उसके पिता श्री सतपाल जी को कह गए थे, "आज रात बहुत भारी है, बेटी का ध्यान रखना।"

सविता रात्रि को निढाल सी हो कर सो गई। रात्रि को उसने स्वप्न में देखा कि घर के बिल्कुल सामने जो कुंआँ है, उस पर महाराज जी लाठी लेकर बैठे हुए हैं। वह कुंआँ उसके बिस्तर के दरवाजे के बिल्कुल सामने था। महाराज जी सारी रात स्वप्न में उसे दिखाई देते रहे और सामने से उसकी रक्षा करते रहे। अगले दिन सुबह सविता के पिता सतपाल जी जब महाराज देसराज जी को सविता का हाल बताने के लिए गए तो उन्होंने देखा कि महाराज जी मन्दिर के नीचे बाज़ार में उन्हीं कपड़ों में (जैसा कि स्वप्न में देखा गया था) बिना पगड़ी, हाथ में लाठी पकड़कर कुंएँ पर बैठे थे। जैसे ही महाराज जी ने सतपाल जी को देखा तो स्वयं ही उन्हें कह दिया, "बेटी ठीक है ना।" इतना कह कर वह ऊपर मन्दिर (दरबार) में चले गए। बाद में धीरे-धीरे महाराज जी के आशीर्वाद से सविता बिल्कुल ठीक हो गई। इस प्रकार महाराज जी ने उस बच्ची की काल से रक्षा की और उसे पूर्णतया स्वस्थ कर दिया।

इस प्रकार देसराज जी अपने भक्तों का उद्धार करते रहे और दरबार की सेवा करते रहे। मन्दिर में भी प्रायः उनकी सन्निधि में शास्त्रीय संगीत, भजन, संकीर्तन, कथा-प्रवचन एवं ब्रह्मभोज की गंगा बहती रहती। अमृतसर की पावन धरा को अपने ज्ञान-विज्ञान, कौशल

एवं प्रभाव के आलोक से प्रकाशित कर 16 दिसम्बर सन् 1982 को पार्थिव शरीर त्याग कर वे ब्रह्मलीन हो गए। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि उनकी कोई समाधि न बनाई जाए और न ही उनका कोई

चित्र मन्दिर दरबार में लगाया जाए, परन्तु सेवकों की अपार श्रद्धा का ध्यान रख मन्दिर के दरबार में उनका एक चित्र स्थापित कर दिया गया, जो आज भी सेवकों को संत देसराज जी के वहाँ विद्यमान होने का आभास कराता है।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

संत श्री सत्य प्रकाश जी महाराज

622

श्री नारायण चरितामृत

ॐ

संत श्री सत्य प्रकाश जी महाराज

महाराज श्री सत्य प्रकाश जी का जन्म 2 अगस्त सन् 1927 में हुआ। वे मन्दिर श्री 108 गोस्वामी राम लाल महाराज जी खूह बम्बे वाला, गली कंदा वाली में रहते थे। पहले श्री सत्य प्रकाश जी सत्तपाल के नाम से जाने जाते थे। बचपन से ही उनमें प्रभु-भक्ति और प्रभु-प्राप्ति की अपार इच्छा थी। उन्होंने अपने जीवन यापन के लिए कई जगह नौकरी की और मुनीमी का काम भी किया। सत्य प्रकाश जी मध्यमवर्गीय ब्राह्मण परिवार से सम्बन्धित थे।

सत्य प्रकाश जी ने गुरु दीक्षा गोस्वामी राम लाल जी से प्राप्त की।

प्रभु-भक्ति व गुरु-सेवा की इनमें अपार लगन थी। अपना सांसारिक कार्य करते हुए भी गुरु महाराज गोस्वामी राम लाल महाराज जी की कृपा से आध्यात्मिकता के उच्चतम शिखर पर पहुँचे। महाराज श्री 108 देसराज महाराज जी के गद्दी नशीन होने के बाद वह गुरु-सेवा में पूर्ण सहयोग देते थे। सन् 1983 में महाराज श्री देसराज जी ने आपको सभी शिष्यों में सुयोग्य पाकर आप को गुरु गद्दी सौंपी। सन्

1978 में महाराज श्री राम लाल जी के जन्म शताब्दी समारोह में उन्हें गुरु गद्दी की सेवा के लिए मनोनीत किया गया और उनका नाम सत्तपाल जी से महाराज सत्य

श्री नारायण चरितामृत

623

प्रकाश जी कर दिया गया।

गुरु गद्दी पर बैठने से पहले ही उन्होंने अपना सारा समय भगवद् प्रेम, भजन और महाराज श्री देसराज जी की सेवा में लगा दिया और अपनी सांसारिक नौकरी का त्याग कर किया। वह अपने सेवकों एवं सभी भक्तों को सदा प्रभु-भक्ति तथा सत्य वचन की शिक्षा देते थे। वह कहा करते थे, "एक सच का दामन पकड़ लो, सच बोलना शुरु कर दो तो प्रभु की प्राप्ति की ओर चल पड़ोगे।"

सत्य प्रकाश जी अपने सेवकों को प्रभु-भक्ति के लिए निरन्तर उत्साहित किया करते थे और नाम-स्मरण पर विशेष ज़ोर देते थे। रात को 8 बजे से 9 बजे तक महामंत्र "हरे राम, हरे राम, राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्णा कृष्णा हरे हरे" का जाप मन्दिर में सेवकों सहित किया करते थे। वे संगीत के प्रख्यात ज्ञाता थे। उन्होंने संगीत की शिक्षा गायनाचार्य सुप्रसिद्ध पण्डित परमानन्द जी से प्राप्त की थी। उनके सान्निध्य में एक सेवक श्री तुलसी राम जी ने उनकी कृपा से मोक्ष भी प्राप्त किया था।

वे एक पूर्ण संत थे। वे सेवकों की घट-घट की बात जानते थे। वे त्रिकालदर्शी थे। वे भक्तों के कष्ट का निवारण उनके बताने से पहले ही कर दिया करते थे। वह कहा करते थे-

गुरु निरमोही चाहि, शिष्य ना छोड़े नेह।

624

श्री नारायण चरितामृत

दोनों मिल ऐसे रहे, एक प्राण एक देह ॥

उनकी अपने दो शिष्यों, श्री हीरा लाल जी सपुत्र श्री मेला राम तथा कृष्णा बहन जी पर विशेष कृपा थी। उनकी कृपा से अनेक भक्तों का उद्धार हुआ। उनके सेवक श्री विजय धवन जी को अनेकों यत्न करने पर भी पुत्र की प्राप्ति नहीं हुई, परन्तु महाराज जी की शरण में आने के बाद उनके आशीर्वाद से उन्हें पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई।

वह सनातन धर्म के अनुसार मन्दिर में अपने सेवकों, श्री विजय मेहरा, श्री सुदर्शन मेहरा, श्री ओम प्रकाश सेठ, श्री राजेश बहल (राजा), श्री सुरेन्द्र अग्रवाल, श्री दीपक अग्रवाल, श्री रमेश मेहरा, (सी.ए.) श्री मेहरा (काका) श्री राजीव चौपड़ा, श्री अनिल धवन, श्री खरैती लाल शर्मा, श्री प्यारा लाल शर्मा एवं अन्य सेवकों एवं भगवद् प्रेमियों के साथ निरन्तर मिलकर यज्ञ, हवन-अनुष्ठान व भण्डारा किया करते थे। यह प्रथा महाराज 108 गोस्वामी श्री रामलाल जी के समय से आज तक चल रही है।

गुरु सत्य प्रकाश महाराज जी ने श्री राजेश बहल के जीवन में कई चमत्कार किए हैं। श्री राजेश बहल जब 16 वर्ष के थे तब वह बुरी संगत में पड़ कर घर से भाग गए। उस समय उनका महाराज जी से कोई संपक नहीं था। उनकी बड़ी बहन के ससुराल वाले महाराज जी में श्रद्धा रखते थे। घर से भागने पर उनके माता-पिता भाई-बहन सब

परेशान थे। उनकी बहन ने महाराज जी से अपनी चिन्ता व्यक्त की। उन्होंने कहा कि घबराने की कोई बात नहीं है, तुम्हारा भाई दो दिनों में घर आ जाएगा। पूरे दो दिन के बाद, महाराज जी ने राजेश जी की बुद्धि पलटी, उन पर कृपा की और वह दो दिन में वापिस आ गए। तब से राजेश जी का महाराज जी और मन्दिर के प्रति लगाव बढ़ता गया। धीरे-धीरे उनमें बुरी आदतें जैसे जुआ खेलना, लड़ाई-झगड़ा करना खत्म हो गया। उन्हें अब पल-पल महाराज जी का ही ध्यान रहने लगा। वे महाराज जी के साथ तीर्थों पर जाने लगे। एक बार वह जगन्नाथ पुरी में थे तो उन्होंने महाराज से गुरु नाम की प्रार्थना की।

महाराज जी मुस्कुराए और उनकी एक बार प्रार्थना करने पर ही को अमृतसर लौटते ही 11 जुलाई 1987 को बम्बे वाले खुह मन्दिर में उन्हें दीक्षा दे दी। तब राजेश जी को महाराज जी ने बताया कि राजेश जी का मन्दिर से पुराना सम्बन्ध है और राजेश का नाम महाराज जी ने राजू से राजा रख दिया

और सचमुच का राजा बना दिया। पाँच साल बाद 1991 में राजेश की सगाई हुई। 1992 में उसका विवाह निश्चित हुआ। 19 फरवरी को राजेश का शगुन था। किसी ने मन्दिर में महाराज जी से कह दिया कि अब तो महाराज जी के बेटे की शादी है, इसलिए अब महाराज जी होटल में जाएंगें। यह बात महाराज जी को अच्छी न लगी क्योंकि होटल में जाना उन्हें बिल्कुल पसन्द नहीं था। राजेश के बार-बार हठ करने पर उन्होंने राजेश को कहा कि वह दोपहर 2 बजे उसे आशीर्वाद

देने होटल में आएंगें। शादी में आयोजन स्थल पर पहुँचने में किसी कारण वश राजेश को देरी हो गई, उसके परिवार वाले उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे परन्तु राजेश जी की माता को वहाँ महाराज जी के साक्षात दर्शन हुए और उनमें वातीलाप भी हुआ। आश्चर्य की बात तो यह थी कि एक ही समय में महाराज जी दूसरे भक्तों के साथ मन्दिर में भी उपस्थित थे और उनसे वार्तालाप कर रहे थे। एक ही समय में महाराज जी दो स्थानों पर उपस्थित थे।

एक बार महाराज जी ने राजेश को मौत के मुँह से भी निकाला। वह एक बार अमृतसर से दिल्ली जा रहे थे आधी रात को ट्रेन कहीं खड़ी हुई और राजेश ट्रेन से नीचे उतर गए। अचानक ट्रेन चल पड़ी और राजेश चलती ट्रेन में चढ़ तो गए परन्तु जिस डिब्बे में वह चढ़े वह अन्दर से बन्द था। वह कितनी देर बाहर दरवाजे पर लटके रहे और ट्रेन तेजी से भागती गई। राजेश चिल्लाते रहे परन्तु कोई दरवाजा नहीं खोल रहा था, उसने जोर से महाराज जी को पुकारा। दूसरे ही क्षण अन्दर से दरवाजा खुला। दरवाजा खोलने वाली एक करीब 80 वर्षीय बूढ़ी महिला थी। दरवाजा खोलकर बिना कुछ कहे वह जाकर अपनी सीट पर सो गई। उसके बाद वह महिला तो दिखाई नहीं दी परन्तु राजेश जानता था कि यह कृपा सद्गुरु महाराज जी की ही थी।

फाइनल की परीक्षा के समय कास्ट अकाउंटिंग के पेपर से ठीक एक रात पहले अचानक कैलकुलेटर खराब हो जाने से चिन्तित हो गए। रात के समय कोई दुकान भी न खुली थी जिससे कि नया कैलकुलेटर खरीदा जा सके या ठीक करवाया जा सके। उनका मन बहुत परेशान था क्योंकि कैलकुलेटर के बिना इस पेपर को हल करना उसे असम्भव लग रहा था। हमेशा की तरह अगले दिन सुबह पेपर देने से पहले वह माथा टेकने दरबार में गए। अपनी आदत अनुसार उन्होंने अपना पैन, पैसिंल और खराब कैलकुलेटर महाराज जी के चरणों में रख कर अभी प्रार्थना शुरु ही की थी कि महाराज जी ने खुद ही पूछा कि यह तेरे हाथ में क्या है?

दीपक ने कहा यह कैलकुलेटर है, और बताने से पहले ही कि यह खराब हो गया है, महाराज जी कहने लगे, "दिखा मुझे, मैं भी देखूं यह कैसे चलता है।" महाराज जी ने कैलकुलेटर पकड़ कर उसे चलाना शुरु किया और कैलकुलेटर बिल्कुल ठीक हो गया और पहले की तरह चलने लगा और दीपक हैरान रह गए। वह कुछ नहीं बोला और महाराज जी से आशीर्वाद प्राप्त कर पेपर देने चला गए। महाराज जी की कृपा से कैलकुलेटर ठीक हो गया और उसका पेपर भी अच्छा हो गया। आज भी उन्होंने उस कैलकुलेटर को संभाल कर रखा हुआ है।

628

श्री नारायण चरितामृत

दीपक अग्रवाल की बहन की शादी लुधियाना में तय हुई। लड़के वालों ने 600-700 की बरात लाने की बात कही। उसी के अनुसार प्रबन्ध किया गया। शादी के कुछ दिन पहले लड़के वालों ने कहा कि बाराती कम से कम 1300-1400 होंगे। पूरा परिवार घबरा गया। दीपक के पिता जी ने महाराज जी से बात की तो महाराज ने हौंसला देते हुए कुछ चावल दाने दिए और कहा जो कुछ भी समान बनवाओ उसमें यह दाने डाल देना और कहा कि आप की शोभा ही होगी। शादी के दिन सारा परिवार बारात देखकर हैरान हो गया क्योंकि बरात 1900-2000 लोगों की थी। महाराज जी की कृपा से अग्रवाल परिवार ने वैसा ही किया जैसा महाराज ने बताया था। हैरानी की बात यह थी कि किसी भी चीज की कोई कमी नहीं आई। खाना बहुत बढ़िया था और सुबह के चार बजे तक चलता रहा। महाराज जी की कृपा से पूरे परिवार को शोभा प्राप्त हुई और इस प्रकार श्री महाराज जी ने दीपक की बहन की शादी में पूरे परिवार की लाज रखी।

सत्य प्रकाश जी ने अपने भक्तों की रक्षा की और उन्हें आने वाले संकट से बचाया। सन् 1984 की बात है, सेठ देवराज जी लुधियाना इम्प्रूवमैंट ट्रस्ट में कार्यरत थे। उनकी ट्रासंफर अमृतसर में हो गई। अपनी नौकरी के अन्तिम दिन उन्हें लुधियाना जाना था और वेतन भी लेना था। सुबह जाने से पहले मन्दिर माथा टेकने गए तो महाराज जी ने सेठ जी को लुधियाना जाने से मना कर दिया और कहा, "आज

लुधियाना मत जाओ, वेतन की भी चिन्ता मत करो, वो अपने आप यहाँ पर ही आपको मिल जाएगा।" सद्गुरु आने वाली मुसीबत को पहले से जान चुके थे। परन्तु सेठ जी स्वार्थवश लुधियाना चले गये। वापसी के समय जब वह लुधियाना स्टेशन पर पहुँचे तो खाने के लिए उन्होंने रबड़ी ली। रबड़ी खाते समय उनका एक कमजोर दाँत टूट कर गले के अन्दर चला गया और गले में फंस कर अत्याधिक कष्ट देने लगा। धीरे धीरे उनका श्वास रुकने लगा और शरीर लाल होना शुरु हो गया।

अब वह महाराज जी को याद करने लगे। स्टेशन पर जो लोग थे उन्होंने सेठ जी को सी.एम.सी. अस्पताल लुधियाना में भर्ती करवा दिया। डाक्टरों ने तत्काल ऑपरेशन करने को कहा परन्तु अस्पताल के कागजों पर हस्ताक्षर करने के लिए उनके परिवार का कोई सदस्य वहाँ नहीं था। किसी तरीके घर पर फोन से संपर्क हुआ, और पूरा परिवार घबरा कर महाराज जी के पास मन्दिर चला गया, वहाँ जाते ही महाराज जी से बात की तो महाराज जी ने कहा कि हमने तो मना किया था कि मत जाओ, परन्तु दयालु सद्गुरु जी ने सांत्वना देते हुए कहा कि घबराओ नहीं, सेठ जी बिल्कुल ठीक हो जाएँगे।

महाराज की कृपा से, अचानक एक बूढ़ी महिला ने कहा कि ऑपरेशन की सारी जिम्मेदारी मेरी होगी क्योंकि सेठ जी मेरे भाई समान हैं। डॉक्टरों को उसने आपरेशन करने के लिए कहा और कागज़ों पर

हस्ताक्षर कर दिए। देर रात तक आपरेशन चला और उधर महाराज जी पूरी रात ध्यान लगा कर प्रार्थना करने लगे। अगले दिन सुबह महाराज जी ने कहा कि सब ठीक है, ऑपरेशन भी ठीक हुआ है, अब परिवार उनके पास पहुँच जाये। इस प्रकार महाराज जी की असीम कृपा से सेठ जी बिल्कुल स्वस्थ हो गए और दस दिन बाद उन्हें छुट्टी मिल गई।

महाराज सत्य प्रकाश जी की लीलाएं अलौकिक थीं। 1992 की बात है एक बार उनके एक भक्त ओम प्रकाश सेठ जी समस्त परिवार सहित शिमला घूमने गए। वापसी के समय उनकी गाड़ी खराब हो गई। उन्होंने चण्डीगढ़ आ कर गाड़ी ठीक करवाई और देर रात को वहाँ से अमृतसर की ओर रवाना हुए। इधर उनके पिता जी (सेठ देवराज) रात को मन्दिर महाराज जी की सेवा में बैठे हुए थे। अचानक महाराज जी ने उनसे कहा कि सेठ जी, चलो महाराज जी से प्रार्थना करो कि पप्पू (ओम प्रकाश सेठ) परिवार सहित बिल्कुल ठीक अमृतसर पहुँच जाए। महाराज कहने लगे कि आप भी प्रार्थना करो और मैं भी प्रार्थना करता हूँ। सेठ देवराज हैरान थे कि महाराज जी ने ऐसे एकदम क्यों कहा। परन्तु वह महाराज जी के साथ प्रभु चरणों में प्रार्थना करने लगा। सेठ ओम प्रकाश देर रात को बिलकुल ठीक ठाक घर पहुँच गए।

प्रात:काल सेठ देवराज महाराज जी के पास पहुँचे तो उन्हें महाराज जी ने कहा, "पप्पू ठीक पहुँच गया है ना? चलो ठीक है, शुक्र

है महाराज जी का।" सेठ जी फिर भी नही समझे। जब सेठ ओम प्रकाश जी दोपहर को मिस्त्री के पास गाड़ी चैक करवाने के लिए गये, तो हैरान रह गए। मिस्त्री बोला कि सेठ जी क्या आप दान पुण्य ज़्यादा करते हो या आप पर प्रभु की कुछ ज़्यादा ही कृपा है। मुझे समझ नहीं आ रहा कि यह गाड़ी यहाँ तक कैसे पहुँची। गाड़ी के सभी पहियों के पैच खुले पड़े थे। कुछ ढीले हो कर लटके हुए थे और कुछ उतर कर गिर चुके थे। कोई भी पहिया चलने की स्थिति में नहीं था।

यह सुन कर सेठ जी के होश उड़ गये। उन्होंने मिस्त्री से कहा गाड़ी तो 100-125 की स्पीड से आई है। घर जाकर उन्होंने अपने पिता जी से सारी बात बताई तो उनके पिता जी को पिछली रात महाराज

जी से हुई वार्तालाप याद आई। वह भावुक होकर उसी समय अपने पुत्र को साथ लेकर महाराज जी का धन्यवाद करने मन्दिर में पहुँच गए। इस प्रकार महाराज जी अपने भक्तों की हर पल रक्षा की।

श्री महाराज ने जब मन्दिर में चाँदी का काम करवाया तो उस समय कुछ मजदूर भी कार्य कर रहे थे उनमें से एक मज़दूर, जिसकी तीन बेटियां थी परन्तु पुत्र न होने के कारण, परेशान था, महाराज जी की महिमा को देखते हुए उसने भी महाराज जी से पुत्र के लिए प्रार्थना की। महाराज जी ने उसे मज़दूरी देते समय साथ में एक रुपये का सिक्का अलग से दिया और कहा कि पुत्र होने पर उसकी झोली में इस सिक्के

को डाल देगा। महाराज जी की कृपा से ठीक एक साल बाद उस मजदूर को पुत्र राम प्राप्त हुआ और वह महाराज जी का धन्यवाद करने के लिए दरबार में माथा टेकने आया।

इससे भी अधिक अनेक भक्तों और सेवकों पर महाराज जी की अपार कृपा रही है और आज भी है, स्थान अभाव के कारण सभी का वर्णन नहीं किया जा सकता। महाराज सत्य प्रकाश जी प्रभु-स्वरूप सद्गुरु परमेश्वर आज भी सभी भक्तों के दिलों में विराजमान हैं और सदैव सब की मनोकामनाएँ पूर्ण करते हैं। लोक कल्याण करते हुए 19 जनवरी 1987 को इस नश्वर संसार को त्याग कर महाराज श्री सत्य प्रकाश जी ब्रह्मलीन हो गए।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

संत श्री बनवारी लाल जी महाराज

ॐ

संत श्री बनवारी लाल जी महाराज

त्याग, तपस्या, भक्ति, वैराग्य और प्रेम की साकार मूर्त संत श्री बनवारी लाल जी का जन्म 20 मार्च, 1926 को पक्का शहर चमियारो जिला अजनाला (अमृतसर) में हुआ। इनके माता-पिता का नाम

केसरा देवी और कर्मचंद पण्डित था। वर्तमान गद्दीनशीन अमृतसर संत श्री बनवारी लाल जी का सम्पूर्ण जीवन गुरु-सेवा और त्याग में बीता है।

बचपन से ही ये सरल स्वभाव एवं कोमल हृदय के मालिक हैं। बनवारी लाल जी अखण्ड ब्रह्मचारी हैं। इन्हें महाराज श्री 108 गोस्वामी राम लाल जी, श्री 108 देसराज जी महाराज और श्री 108 सत्य प्रकाश जी महाराज जी का सान्निध्य प्राप्त था। इन्होंने महाराज श्री देसराज जी तथा श्री सत्य प्रकाश जी महाराज की सेवा में अधिकाँश समय बिताया। गुरु-सेवा, त्याग और सरल स्वभाव इनकी पहचान है। इन्होंने गुरु दीक्षा महाराज श्री देसराज जी से प्राप्त की। उन्हीं का जन्म शताब्दी समारोह वर्ष 2010 में 13 सितम्बर से 22 सितम्बर तक बनवारी लाल जी के सान्निध्य में बड़ी धूमधाम से मनाया गया। उस समारोह की शोभा वर्णनातीत थी।

श्री नारायण चरितामृत

635

इन्होंने अपना जीवन यापन करने के लिए एम. इ. एस. हवाई अड्डा, आदमपुर (जालन्धर) में 1952 में नौकरी शुरु की तथा पूर्णतया निष्ठावान होकर ताउम्र कार्य किया। इन्होंने सन् 1986 में सेवा-निवृत्ति प्राप्त की।

बनवारी लाल जी के सभी ऑफिसर इनकी कार्य शैली से बहुत प्रभावित रहे। सन् 1997 की हाड़ सुदी दूज को यह गद्दी पर आसीन हुए। इन्होंने सरल स्वभाव के कारण शीघ्र ही अपने सेवकों तथा ट्रस्टियों का मन जीत लिया। अपने भक्तों को अनुशासित होने का संदेश देते हुए यह अक्सर कहते हैं-

सुबह सवेरे उठकर प्राणी शीतल वायु खाया कर। मंगलमय जीवन की खातिर श्री राधा माधव गाया कर।

बनवारी लाल जी इस समय 86 वर्ष की आयु में भी सभी कार्य स्वयं ही करते हैं, तथा अपने सेवकों को भी आत्मनिर्भर होने का उपदेश देते हैं, आज इनके अनथक प्रयत्नों के कारण मन्दिर का कार्य सुयोग्यता से चल रहा है। बनवारी लाल जी संतों के दोहों और उनकी वाणी के माध्यम से भक्तों को

यह संदेश देते हैं कि उन्हें अपना जीवन प्रभु-भक्ति में किस प्रकार बिताना चाहिए। यहाँ उनके द्वारा उच्चारित कुछ दोहे दिए जा रहे हैं जो वह प्राय: बोला करते हैं-

बनवारी लाल जी स्वयं सद्गुरु का ध्यान करते हुए सभी को निरन्तर गुरु के दर्शन की दिव्यता की अनुभूति करवाते हैं। वे गुरु और शिष्य का अटूट सम्बन्ध बताते हुए समझाते हैं कि हमारे मन के ऊपर कई जन्मों से जो मैल जम गई है, गुरु हम पर कृपा करके उस मैल को नाम के साबुन से धो देते हैं-

गुरु धोबी, शिष्य कपड़ा, साबुन सिरजनहार। सूरत सिला पर तोईयें, निखरत रंग अपार ।।

उन्होंने उपरोक्त दोहों के अनुसार अपने दो शिष्यों श्री पीयूष धवन सपुत्र श्री अनिल धवन तथा श्री समीर चोपड़ा सपुत्र श्री राजीव चोपड़ा को प्रभु चरणों की तरफ प्रेरित कर, उन पर अपनी अपार कृपा की है। श्री महाराज जी के दरबार में लोग आते हैं और उनकी कृपा से सभी भक्त, सेवक मन मांगी मुरादें पाते हैं। वह हर कार्य का श्रेय श्री महाराज जी और ठाकुर जी को ही देते हैं और कहते हैं-

न कुछ किया न कर सकूँ न कुछ करने हार। जो कुछ किया मेरे सतगुरु किया सतगुरु के आधार ॥

श्री महाराज जी के मुख से निकला कोई भी वचन व्यर्थ नही जाता।

सब धरती कागद करूँ, लेखनी सब बनराय। सात समन्द की मसि करूँ गुरु गुण लिख्या न जाए ।।

महाराज जी कहते हैं कि-

हंसी हमारा जीवन, संतोष हमारा धन ।।

तुलसी जे विध समझ के, मग्न रहो मन मन माहि ।।

श्री महाराज जी की अपने शिष्यों पर अपार कृपा है। एक बार जब पीयूष धवन सुपुत्र श्री अनिल धवन ने जब नया घर लिया और घर का सारा सामान नए घर में ले जा रहे थे तो अचानक घर में 'मग' पहली मंजिल पर खुला पड़ा था, जो कि वह ऊपर से नीचे सामान उतारने में प्रयोग कर रहे थे। अचानक पीयूष का पैर सामान उतारते समय नीचे खिसक गया और वह बीस फुट की उँचाई से उल्टा मुँह के बल गिर पड़े। उनके मुँह से एक ही आवाज़ निकली, "महाराज जी, मैं नीचे जमीन पर गिर गया हूँ" महाराज जी की पीयूष पर इतनी कृपा थी कि उसके शरीर पर एक भी खरोंच नहीं आई। कुछ अंदरूनी चोट अवश्य आई थी जिससे शरीर में दर्द उठ रहा था। लेकिन महाराज जी की कृपा से धीरे-धीरे सब ठीक हो गया जब स्वयं महाराज जी उन्हें लेकर अस्पताल पहुँचे। डॉक्टर का कहना था कि आज इस लड़के का नया जन्म हुआ है। वास्तव में यह महाराज जी की कृपा ही थी। कुछ समय

बाद अंदरूनी चोट के कारण उसका मुँह का कुछ हिस्सा टेढ़ा होने लगा और दाईं तरफ की आँख पर भी उसका असर दिखाई देने लगा, जिसे देखकर सब घबरा गए, परन्तु महाराज जी ने कहा आप ठाकुर जी के आगे प्रार्थना कीजिए, सब ठीक हो जाएगा। इस प्रकार महाराज जी की कृपा से वास्तव में सभी कुछ ठीक हो गया और सद्गुरु की अपार कृपा से अब वह बिल्कुल कुशल पूर्वक है।

संत बनवारी लाल जी सारी संगत पर अपने आशीर्वाद की वर्षा करते हुए उन्हें ईश्वर-प्राप्ति की ओर उन्मुख कर रहे हैं। जो कोई भी उनके सम्पर्क में आता है वह उनके तेजोमण्डल से प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। ऐसे महान् सद्गुरु को हमारा कोटि-कोटि प्रणाम।

।। हरि ॐ ।।

दरबार श्री गोस्वामी रामलाल जी महाराज, अमृतसर

चरण पादुका गोस्वामी श्री रामलाल जी महाराज

ॐ

संत पंडित श्री हेमराज जी महाराज

640। श्री नारायण चरितामृत

ॐ

संत पंडित श्री हेमराज जी महाराज

धन्य हैं ऐसी महान् विलक्षण एवम् अद्वितीय विभूतियां जिनके प्राकट्य से ही तीनों लोकों का कल्याण हो जाता है। उनका सामीप्य तत्काल अन्त:करण की शुद्धि कर देता है। ऐसी दिव्य आत्माओं की सेवा का सुअवसर प्राप्त करने वाले भक्त भी धन्य हैं। कई जन्मों के पुण्य फलों का संचय जब जोर पकड़ता है, तब कहीं जा कर ईश्वरतुल्य महान् आत्माओं का दर्शन, साहचर्य और सेवा प्राप्त होती है। ऐसी सेवा का फल भी अमिट ही होता है। बापू ओम नारायण दत्त जी की सुगन्धित वाटिका के दो और ईश सदृश सुरभित पुष्प हुए जिनका नाम है पण्डित हेमराज। उनका जन्म बापू ओम नारायण दत्त जी के आशीर्वाद से हुआ था।

पण्डित हेमराज, पं० कल्याण दास और श्रीमती प्रेम देवी के पुत्र थे। उनका जन्म 1955 वि० सं० में कस्बा तलुम्बा (पाकिस्तान) में हुआ था। पं० कल्याण दास जी पहले एक पुत्री के पिता थे जिसका नाम ठाकुर देवी था। परिवार द्वारा प्रेरित किये जाने पर पं० कल्याण दास पुत्र प्राप्ति की इच्छा से नन्दाचौर बापू ओम जी के पास आए। जब पं० कल्याण

दास ने पुत्र के लिए विनती की तो ओम जी ने कहा, "आपके भाग्य में पुत्र नहीं है। हाँ, एक आत्मा ऐसी है जो निर्द्वन्द्व और स्वछन्द है। किसी अवधूत महापुरुष की वह आत्मा अपने किसी कर्म-भोग के कारण अन्तिम चौला धारण कर रही है। वह तुम्हें पुत्र रूप में मिल सकती है परन्तु 35 वर्ष की अवस्था

के पश्चात् वह शरीर आपके काम नहीं आयेगा। वह स्वतन्त्र अवधूत रूप में विचरण करेगा। उसका नाम हेमराज होगा।"

पं० कल्याण दास यह आशीर्वाद प्राप्त कर घर आ गये और सारा वृत्तान्त परिवार को सुना दिया। समय आने पर उनके यहाँ पुत्र का जन्म हुआ। उसका नाम 'हेमराज' रखा गया। बापू ओम जी ने जैसा बताया था ठीक वैसा ही उनके जीवन में घटित हुआ। उनका पालन पोषण और शिक्षा नूरशाह (मिन्टगुमरी) में हुई। एफ० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण कर के पं हेमराज जी ने अपने परिवार का कारोबार सम्भाला और अपना दायित्व निभाया।

उचित समय पर उनका विवाह पार्वती देवी के साथ सम्पन्न हुआ। श्रीमती पार्वती देवी से उन्हें तीन पुत्रियों और एक पुत्र दया किशन की प्राप्ति हुई। 35 वर्ष की अवस्था होते होते पं० हेमराज अवधूत की भान्ति रहने लगे। उनका सारा वक्त मस्ती के आलम में व्यतीत होता था। अपने खाने, पहनने का उन्हें कुछ भी ध्यान नहीं था।

वे सम्यक् दर्शन के पक्षपाती थे। उनमें अपने पराये का कोई भेद नहीं था। वे सभी को समभाव से देखते और समान व्यवहार करते थे। उनकी आध्यात्मिक शक्ति बहुत बढ़ गई थी। उन्हें वाक्-सिद्धि भी प्राप्त हो गई थी। जो लोग अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए उनके पास आते, वे उनकी डाँट-फटकार सुन कर लौट जाते थे। इसके विपरीत जरूरतमन्द लोगों की वह सदैव सहायता किया करते थे।

पं० हेमराज ने अपनी अवधूत अवस्था में भी कई चमत्कार दिखाए थे जिनका उल्लेख 'अथ बापू श्री ज्वाला सिंह-कथामृतम्' में किया जा चुका है। वह त्रिकालज्ञ थे। पाकिस्तान बनने के डेढ वर्ष पूर्व उन्होंने भविष्यवाणी की थी कि यहाँ (पंजाब में) पाकिस्तान बनेगा। भारत विभाजन के पश्चात् पं० हेमराज अपने परिवार और ग्रामवासियों को ले कर सुरक्षित भारत आ गये और पंजाब के 'खन्ना' नामक शहर में मेला राम स्वर्णकार बगली वालों के परिवार के साथ रहे।

1950 ई० में वह सपरिवार सहारनपुर (उत्तर प्रदेश) आ गये। उन्होंने कुछ ही समय में भूमि खरीद कर संत बापू ज्वाला सिंह की स्मृति में ज्वाला नगर बसाया और उसमें 'मन्दिर बापू ज्वाला सिंह' का निर्माण करवाया तथा निवास हेतु सुखद व्यवस्था की। सहारनपुर में भी पं० हेमराज जी की मस्ती पूर्ववत् ही बनी रही। उन्हें सम्पूर्ण गीता, गुरु ग्रन्थ साहिब, रामचरितमानस और उपनिषद् कण्ठस्थ थे। जब वह

मस्ती के आलम में होते थे तब अपनी मर्जी से ही उनकी कथाएं सुनाया करते थे। उन्होंने अपने जीवन में कई अनूठी लीलाएं की जिनमें से एक घटना का वर्णन यहाँ किया जा रहा है। सहारनपुर निवासी गुरबचन लाल की बेटियां थी परन्तु कोई बेटा नहीं था। गुरबचन लाल के पिता जवाहर सिंह ने बापू दया किशन जी से प्रार्थना की कि महाराज जी, आप कृपा करके अपने पिता पंडित हेमराज जी को हमारे घर लेकर आएं ताकि वह गुरबचन लाल को पुत्र-प्राप्ति का आशीर्वाद दें।

जब पं० हेमराज जी उनके घर गए तो उन्होंने कहा कि कॉपी निकालो। इतना कह कर उन्होंने उस कॉपी में एक प्रश्न लिखा कि क्या गुरबचन लाल के घर में लड़का पैदा होगा? जब वह प्रश्न लिख रहे थे तब ऐसा प्रतीत होता था मानो वह ईश्वर से बातें कर रहें हों। फिर हेमराज जी ने उस प्रश्न के उत्तर में लिखा कि गुरबचन लाल के घर फलां तारीख और फलां दिन एक पुत्र उत्पन्न होगा जिसका नाम संत राम रखा जाएगा। हेमराज जी ने जो तिथि लिखी थी उस हिसाब से केवल सात महीने बनते थे।

जब घरवालों ने हेमराज जी से कहा कि महाराज जी, आपने जो तारीख लिखी है उस हिसाब से तो केवल अब से सात महीनों में ही पुत्र का जन्म होना चाहिए तो हेमराज जी ने कहा कि तुम नन्दाचौर जा कर बापू श्रद्धाराम जी से सात के नौ करवा लो। तत्पश्चात् वह परिवार

नन्दाचौर गया और फिर बापू श्रद्धाराम जी के आशीर्वाद से ठीक नौ महीने बाद संत राम का जन्म हुआ।

पंडित हेमराज जी अपने जीवन के अन्तिम क्षणों तक अपनी मस्ती में रहे और अनेक भक्तों का उद्धार किया। 15 सितम्बर सन् 1962 ई० में वह परम ज्योति में लीन हो गए।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

संत पंडित श्री दया किशन जी महाराज

बिधिहरिहरकबि कोबिद बानी। कहत साधु महिमा सकुचानी ॥ सो मो सन कहि जात न कैसें। साक बनिक मनि गुन गन जैसें ॥

तुलसीदास जी कहते हैं कि ब्रह्मा, विष्णु, शिव, कवि और पण्डितों की वाणी भी संत-महिमा का वर्णन करने में सकुचाती है; वह मुझसे किसी प्रकार भी कही नहीं जाती, ठीक वैसे ही जैसे साग-तरकारी बेचने वाले से मणिओं के गुण समूह नहीं कहे जा सकते।

तुलसीदास जी का यह कहना अक्षरशः सत्य है क्योंकि संतों के चरित्र-चित्रण का आदि तो हो सकता है परन्तु अंत कभी नहीं हो सकता इसीलिये त्रिदेव भी संतो का गुणानुवाद करने में स्वयं को सक्षम नहीं पाते। जब ईश्वर भी संतों की महिमा को पूर्णतया वाणीबद्ध नहीं कर सकते तो एक साधारण मनुष्य उनका प्रशस्ति-वाचन किस प्रकार कर सकता है।

एक ऐसे ही महान् संत जिनके जीवन का प्रत्येक क्षण महान् प्रशस्ति-वाचन के योग्य है, जिनकी ओजस्विता ने भक्तों को नित-

निरन्तर आध्यात्मिक उत्कर्ष प्रदान किया है और जो साक्षात् दया का मूर्त रूप हैं और जिन्होंने अपने आविर्भाव से सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण ही कल्याण किया है, ऐसी दिव्य विभूति का नाम है-

संत पण्डित दया किशन जी महाराज। पं० दया किशन जी महाराज का जन्म संवत् 1978 वि० 17, ज्येष्ठ प्रविष्टा तदानुसार 31 मई सन् 1920 ई० को नूरशाह में एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में हुआ। महान् अवधूत संत पं० हेमराज और माता पार्वती देवी के सुपुत्र पं० दया किशन ने अपने पितामह संत पं० कल्याण दास की आध्यात्मिक विरासत को बहुत खूबसूरती से सम्भाला।

भारतवर्ष में ऐसे महान् भविष्यकथन करने वाली विभूतियों की कोई कमी नहीं है जो हजारों वर्ष बाद होने वाले घटनाक्रम के विषय में पहले ही भविष्यवाणी कर देते हैं। पं० दया किशन जी के आविर्भाव के विषय में महान् ऋषि और ज्योतिषाचार्य भृगु ने अपने महान् ग्रन्थ 'भृगु-संहिता' जिसमें उन्होंने सृष्टि के प्रत्येक प्राणी के अनेक जन्मों के विषय में भविष्यवाणियां की हैं, में पं० दया किशन जी के विषय में भी बहुत पहले ही भविष्यकथन कर दिया था। साधारणतया मनुष्य को किसी साधु-संत की महानता के विषय में तभी ज्ञात होता है जब वे स्वयं दया करके उसे अपने स्वरूप के विषय में ज्ञान करवाते हैं परन्तु पं० दया किशन जी के विषय में तो भृगु जी ने युगों पूर्व ही लिख दिया था कि वह एक तपस्वी और महान् आत्मा हैं। उनकी महनीयता के विषय में किसी को कोई प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है, उस विषय में तो साक्षात् ईश्वर

कोटि संत भृगु जी ने पहले ही पूर्व कथन कर दिया था। एक बार संत दया किशन जी ने अपनी जन्म कुंडली दिल्ली निवासी अपने जीजा जी श्री मदन लाल जी के हाथ होशियारपुर में स्थित भृगु ज्योतिष वालों के पास भेजी। जब मदन लाल जी वहाँ पहुँचे तो पण्डित जी घर पर नहीं थे। वह अपने पुत्र के पास एक नोट छोड़ गए थे कि आज मदन लाल नामक व्यक्ति दिल्ली से दया किशन जी की जन्म कुंडली का फलादेश लेने आएंगे परन्तु यह फलादेश उन्हें न देकर दया किशन जी को ही दिया जाएगा।

उस पण्डित ने यह भी लिखा था कि मदन लाल जी के दिल्ली में रेस्टोरेंट हैं। इसके कुछ दिनों के बाद संत दया किशन जी स्वयं वहाँ आए। उनके वहाँ पहुँचने पर उस पण्डित ने बहुत भव्यता से बैंड-बाजे के साथ उनका स्वागत-सत्कार किया। पण्डित ने बताया कि वह उन्हीं की प्रतीक्षा कर रहा था। उस पण्डित की पत्नी बहुत बीमार थी। पण्डित ने दया किशन जी से प्रार्थना की कि उसकी पत्नी बहुत बीमार है और उसका इलाज दया किशन जी के अंगूठे को धोने से प्राप्त पानी को पिलाने से ही हो

सकता है। दया किशन जी ने इसकी अनुमति दे दी और उस पानी को पीते ही पण्डित जी की पत्नी ठीक हो गई।

इसके बाद पण्डित जी ने उनकी कुंडली का फलादेश बताते हुए कहा कि पूर्व जन्म में वह एक तपस्वी थे जिन्होंने सरयू नदी के किनारे

649 तप किया था। ईश्वर ने उस जन्म में उन्हें लोक-कल्याण के लिए भेजा था और बाद में उन्हें मोक्ष प्राप्त हुआ था। मोक्ष प्राप्ति के बाद भी ईश्वर ने उन्हें अगले जन्म में फिर से जन-कल्याण हेतु संत दया किशन जी के रूप में भेजा। संत दया किशन जी का कार्य इस जन्म में भी बहुत ही महत्त्वपूर्ण था और इसीलिए उस विशेष कार्य के लिए उनका चुनाव स्वयं ईश्वर द्वारा किया गया था।

पं० दया किशन जी के माता-पिता बापू ओम जी के अनन्य भक्त थे। पं० दया किशन जी की तीन बहिनें भी थी। उनका पालन-पोषण अत्यधिक लाड प्यार से हुआ। दया किशन जी की रुचि सांसारिक विद्या ग्रहण करने में नहीं थी। उन्होंने अपनी बुआजी के पास तलुम्बा (मुलतान) ग्राम में आठवीं कक्षा तक पढ़ाई की। तत्पश्चात् वह वापिस आ गए और घर पर रह कर ही अपने पितामह पं० कल्याण दास और पिता पं० हेमराज से आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त किया।

पं० दया किशन जी ने अपने पिता और पितामह से जो कुछ भी सीखा और पढ़ा उसे अपने जीवन में प्रत्यक्ष कर के भी देखा। अपने पितामह के कहने पर उन्होंने बापू हरनाम जी से दीक्षा प्राप्त की। बापू हरनाम जी के बताए मार्ग पर चल कर उन्होंने अखण्ड तप और साधना की। उस तपस्या के परिणामस्वरूप उन्हें ज्ञान-चक्षु प्राप्त हुए जिनसे उन्हें ब्रह्म-तत्त्व का ज्ञान हो गया।

उनकी असाधारण योग्यता का अनुमान यहीं से लगाया जा सकता है कि मात्र पन्द्रह वर्ष की आयु में समस्त महापुरुषों और संगत की सर्वसम्मति से सं० 1993 वि० की मघर प्रविष्टा 25 को पं० दया

किशन जी को गद्दीनशीन किया गया। पं० दया किशन जी के पिता पं० हेमराज तो परमहंस अवधूत राज की गति में थे। उन्हें किसी मन्दिर की गद्दी की कोई आवश्यकता नहीं थी और पं० कल्याण दास वयोवृद्ध हो गए थे इसलिए पं० दया किशन जी के लिए मन्दिर की व्यवस्था सम्भालना आवश्यक भी हो गया था। पन्द्रह वर्ष की बाल्यावस्था में जिस प्रकार पं० दया किशन जी ने मन्दिर का कार्यभार अपने कँधों पर उठाया वह अति प्रशंसनीय है। इतने बड़े उत्तरदायित्व को ग्रहण करने के बाद ईश्वर ने भी उनकी पग-पग पर सहायता की। उन्हें ईश्वरीय शक्ति और मार्गदर्शन सदैव ही प्राप्त होता रहा।

जब पं० दया किशन जी 18 वर्ष के हुए तो उनका विवाह नूरशाह नगर की कुलीन ब्राह्मण वंशी सरस्वती देवी के साथ सम्पन्न हुआ। सरस्वती देवी भी अपने पति के समान ही भक्त, सुशील और सात्विक वृत्ति की थीं। उनके परिवार में दो पुत्रियों कैलाश रानी एवं उषा रानी और तीन पुत्रों रामदास शर्मा, भारत भूषण शर्मा और सुभाष शर्मा ने जन्म लिया। अपने परिवारिक उत्तरदायित्व को निभाने के साथ-साथ, पं० दया किशन जी ने दरबार की सेवा, विशाल भवन और सुन्दर मन्दिर का निर्माण और उसकी व्यवस्था आदि विभिन्न कार्य बड़े परिश्रम से पूरे

किए। इसके अतिरिक्त कृषि और भू-सम्पत्ति आदि सभी को सुन्दर ढंग से संभाला परन्तु दुर्भाग्यवश वह सारी सम्पत्ति भारत विभाजन के समय पाकिस्तान में ही छोड़नी पड़ी। सन् 1947 के बाद फं दया किशन भारत आये और कुछ समय अपने पिता पं० हेमराज के साथ खन्ना नगर में मेला राम स्वर्णकार के परिवार में ठहरे, फिर वह सपरिवार उत्तर प्रदेश की लण्ढौरा रियासत में आये और राजा बलवन्त सिंह के किले में ठहरे।

पं० दया किशन जी ने भारत विभाजन के बाद परमहंस ठाकुर जी, बापू ज्वाला सिंह जी और बापू ओम जी की संगत को जो इधर-उधर बिखर गई थी, ओम झंडे के तले इकठ्ठा किया। यह उनका अनथक परिश्रम ही था कि उन्होंने संगत को बिखरने नहीं दिया। उन्होंने संगत रूपी वृक्ष को अपने खून से सींचा जिसके फलस्वरूप आज बापू जी की सभी संतानें एकजुट हो कर जीवन के हर क्षेत्र में प्रगति कर रहीं हैं। पं० दया किशन जी की यह एक ऐसी महान् उपलब्धि थी जो कभी भुलाई नहीं जा सकती।

पं० दया किशन जी सन् 1950 में सहारनपुर आ गए। सहारनपुर में उन्होंने अपने अथक परिश्रम, सूझबूझ तथा तपोबल से आठ-दस वर्ष के अल्प-समय में संत बापू ज्वाला सिंह की याद में ज्वाला नगर बसाया। उसके विस्तृत क्षेत्र में उन्होंने बापू ज्वाला सिंह जी के भव्य

मन्दिर का निर्माण करवाया। आज उस मन्दिर में विभिन्न आयोजन होते रहते हैं। संगत के ठहरने के लिए सुखद एवं पर्याप्त व्यवस्था है। लंगर का कार्य भी सचारु रूप से किया जाता है। मन्दिर-प्रांगण में ही 'ज्वाला ज्योति' नाम से विद्यालय चलता है। प्रतिदिन असंख्य सेवक अपनी मुरादें पाते हैं। मन्दिर में वार्षिक स्मृति यज्ञ कार्तिक 21, 22, 23 को उत्साहपूर्वक मनाया जाता है।

बापू दया किशन जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन संगत की सेवा और बापू ज्वाला सिंह जी की शिष्य परम्परा में स्थापित दरबारों की सेवा में लगा दिया। बापू दया किशन जी ने बापू गुरदास राम जी, बापू भानुदत्त जी और वर्तमान गद्दीनशीन बापू हरभगवान महाराज जी को नन्दाचौर गद्दी पर विराजमान किया।

बापू जी ने संत कल्याण दास जी की स्मृति में एक मन्दिर गदरपुर, जिला नैनीताल में स्थापित किया और एक मन्दिर संत हेमराज जी की स्मृति में रामराज, जिला मेरठ में निर्मित करवाया। बापू दया किशन जी ने अपनी दया से असंख्य भक्तों के कष्ट दूर किए। उन्होंने कितने ही भक्तों को रोग मुक्त किया और कितने ही भक्तों को दीक्षित कर उन्हें ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग दिखाया। उनकी दया-गाथा का सम्पूर्ण वर्णन करना तो सम्भव नहीं है, फिर भी उन पर दया-वृष्टि के कुछ प्रसंग यहाँ दिए जा रहे हैं जिनसे पाठकों को यह ज्ञात होगा कि बापू दया

किशन जी कितने दयालु और कृपाल थे। हिसार निवासी सुभाष जसूजा की माता लाजवन्ती के दोनों गर्दों में पथरियों की शिकायत थी। उनके एक गुर्दे की पथरियों का आपरेशन हुआ परन्तु कुछ वर्षों बाद

उनके गुर्दे में दोबारा पथरियाँ हो गई। उनकी वृद्ध अवस्था थी इसलिए दोबारा आपरेशन कराए जाने के लिए सभी परिवार जन सहमत नहीं थे।

यह बात सन् 1992 की है। उनकी माता जी ने परमपूजनीय ओम बापू ज्वाला सिंह जी महाराज, जिनका स्थान सहारनपुर (उ०प्र०) के ज्वाला नगर क्षेत्र में सुविख्यात है, के दरबार में प्रार्थना की कि मुझे एक पोता दे दीजिए फिर मैं खुशी खुशी शरीर त्यागने को तैयार हूँ। पूज्य बापू जी ने माता जी की पुकार सुनी और 29 मार्च 1992 को पोते ने जन्म लिया। दीपावली के दिन अचानक उनकी माता जी का स्वास्थ्य अत्यधिक बिगड़ गया। तुरन्त ही उन्हें चिकित्सा हेतु अस्पताल में भर्ती करवाया गया। चिकित्सक ने जाँचोपरान्त कहा कि इनके गुर्दे की पथरियों को आपरेशन से ही निकाला जाना संभव हो सकता है। सुभाष जी तुरन्त ही सहारनपुर में बापू जी के दरबार गए और बापू जी के श्री चरणों में प्रार्थना कि मेरी माता जी को स्वस्थ कर दीजिए।

उन्हें उस समय अत्याधिक आश्चर्य हुआ जब दयाकिश्न बापू जी ने बताया कि आपकी माता जी ने तो स्वयं ही प्रार्थना की थी कि पोते के मिलने के बाद वह शरीर छोड़ने को तैयार है। उन्होंने मन ही मन

सोचा कि यह प्रार्थना तो माता जी ने घर में ही बैठकर बापू जी के चरणों में रखी थी। बापू जी तो अन्तर्यामी है, साक्षात ईश्वररूप हैं। उन्होंने बड़े ही करूण हृदय से अपनी माता जी के प्राणों की रक्षा हेतु बापू जी के चरणों में प्रार्थना की। तब बापू जी ने कहा कि भक्त, यह कार्य बहुत ही कठिन है। परन्तु हम आपको निराश नहीं करेंगे और आपकी झोली भरकर ही भेजेंगे।

सुभाष जी ने महाराज जी को दिल्ली के डॉक्टरों के नाम बताते हुए कहा कि जिस डॉक्टर के लिए आप कहेंगे उसी से वे माता जी का इलाज करवायेंगे। बापू जी ने कहा कि अमुक डॉक्टर से माता जी का इलाज करवा लो। अब जब दिल्ली जाकर माता जी के इलाज पर होने वाले व्यय के बारे जानकारी ली तो मालूम हुआ कि वह इलाज तो बहुत मँहगा है। यह सुनकर वह मानसिक रूप से परेशान हो गए चूंकि उनकी आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं थी कि यह व्यय सहन कर सकते।

उन्होंने दिल्ली से फोन पर ही सहारनपुर बापू जी को सारी बात बताई और बड़े ही करुण हृदय से प्रार्थना करते हुए कहा कि हे दयालु बापू जी, माता जी को जितनी ज़िन्दगी बिना इलाज से मिलती है, उतना जीवनदान आप इन्हें बिना किसी इलाज के ही देने की कृपा करें। महाराज जी सहारनपुर से सन् 1992 दिसम्बर में हिसार में पधारे तो उन्होंने फिर प्रार्थना की। बापू जी तो अन्तर्यामी थे। सुभाष जी के मन के

भाव को जान कर बतौर आशीर्वाद एक औषधि की कुछ मात्रा प्रतिदिन माता जी को सेवन करने के लिए दी और कहा कि अन्य किसी किस्म के उपचार की जरूरत नहीं है। बापू जी की उस औषधि के सेवन व आशीर्वाद से चमत्कारी ढंग से उनकी माता जी पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गई। डॉक्टरों ने जाँच करके बताया कि अब माताजी के गुर्दो में पथरी नहीं है। यह जान कर सुभाष जी इस अनोखे करिश्मे से भाव-विभोर हो उठे। वह समझ गए कि बापू जी सर्वशक्तिमान और परम दायलु हैं।

बापू जी की दया का एक अन्य उदाहरण दिल्ली ढक्का निवासी जगदीश लाल पाहवा के साथ संबंधित है। जगदीश लाल पाहवा निवासी ढक्का किंग्जवे कैम्प 40 वर्ष पूर्व गम्भीर रूप से बीमार हो गया। बड़े-बड़े डाक्टरों ने भी जवाब दे दिया था। बुखार के कारण उनकी तबीयत लगातार खराब होती चली गयी। डॉक्टर उनकी इस बीमारी को समझ नहीं पा रहे थे। अचानक दरबार सहारनपुर से उनके पूज्यपाद सद्गुरुदेव संत दया किशन जी महाराज का दिल्ली में आना हुआ। उनके परिवार वालों और एक भक्त ने संत बापू दया किशन जी महाराज से प्रार्थना की कि आप श्री जगदीश पाहवा जी के घर पर अपने श्री चरण डालें और उन पर कृपा करें।

महाराज जी तुरन्त वहाँ से उन्हें आशीर्वाद देने के लिए घर पर पहुँच गये। जगदीश जी ने संत बापू दया किशन जी महाराज से प्रार्थना

की, "मैं अपनी इस बीमारी से बहुत परेशान हो गया हूँ अब मुझे जीने की कोई तमन्ना नहीं है। लेकिन मुझे विश्वास है कि अगर आप मुझे आशीर्वाद दें तो मैं बच सकता हूँ।" महाराज जी ने उनके परिवार वालों को कहा कि आप अभी दरबार ढक्का साहिब चले जाओ और भक्तों के द्वारा बचे हुए लंगर की रोटी का टुकड़ा दरबार से ले आओ और इन्हें खिलाओ। इनके परिवार के लोग ढक्का दरबार में गये और वहाँ से रोटी का टुकड़ा ले आये।

महाराज श्री ने आदेश दिया कि बस इसको खा लो और फिर तुम्हारा सारा दुःख दूर हो जायेगा। उन्होंने भी रोटी का टुकड़ा बड़ी श्रद्धा से खा लिया और उनकी तबीयत ठीक होती चली गई। आज पूरे 40 वर्ष बीत गये है, बापू जी की कृपा से उन्हें आज तक ऐसा बुखार दोबारा नहीं हुआ। आज तक वह पूर्णतया स्वस्थ हैं और दरबार की सेवा कर रहे हैं।

बापू दया किशन जी ने अनगिनत भक्तों की झोलियां भरीं और उन्हें संतान सुख दिया। किच्छा निवासी श्रीमती शीला देवी, धर्मपत्नी श्री देसराज तनेजा जो पहले सहारनपुर में रहते थे, उनके कोई संतान नहीं थी। उनका बार-बार गर्भपात हो जाया करता था। वे बहुत परेशान रहते थे। एक दिन लाला जयचन्द तनेजा जो देसराज जी के भाई थे ने बापू दया किशन जी के चरण पकड़ कर कहा कि महाराज जी, कृपा

करके मेरे भाई के घर बेटा दीजिए। बापू जी ने उनके घर आ कर आशीर्वाद दिया और कहा कि अति शीघ्र आपके घर पुत्र उत्पन्न होगा, उसका नाम ओम प्रकाश होगा। बापू जी के आशीर्वाद से 1955 में उनके घर पुत्र हुआ और उसका नाम ओम प्रकाश ही रखा गया।

बापू दया किशन जी ने पानीपत निवासी अनिल गिरधर को भी पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद दिया था। अनिल जी का पहला पुत्र 1991 में हुआ था। बापू जी ने उन्हें जोड़ी का आशीर्वाद दिया। 1995 में उनका छोटा पुत्र ऋषभ हुआ। उसका जन्म आपरेशन से हुआ था। जन्म लेते ही उसकी तबीयत बहुत खराब हो गई। अनिल जी ने बापू जी से प्रार्थना करते हुए मन्नत माँगी कि बापू जी, मेरे पुत्र को ठीक कर दीजिए। मैं उसे मन्दिर माथा टिकाने अवश्य लेकर आऊंगा। इस प्रार्थना के उपरान्त ऋषभ ठीक हो

गया। इस बात को चार वर्ष बीत गए परन्तु अनिल जी उसे मन्दिर माथा टिकाने नहीं लाए। अनिल जी इस बात को बिल्कुल भूल गए थे कि उन्होंने कोई मन्नत भी मानी थी। ऋषभ चार वर्ष का हो गया था परन्तु कुछ भी नहीं बोलता था। एक दिन अचानक अनिल जी को ध्यान आया कि उन्होंने जो मन्नत मानी थी वह तो पूरी हुई ही नहीं है। इसके बाद वह ऋषभ को लेकर सहारनपुर दरबार आए। ऋषभअपने पिता के साथ कार में आया था। जैसे ही वह कार से उतरा वैसे ही वह तुरन्त दौड़ कर स्वयं ही दरबार के अन्दर चला गया और बापू दय किशन जी की गोद में जा कर बैठ कर चार साल में पहली बार बोला-

'पापा'। अनिल जी जब तक उसके पीछे आए, वह बापू जी की गोद में बैठ कर पापा-पापा बोल रहा था। यह देख कर अनिल जी ने बापू जी का जयकारा लगाया और उनके चरणों में नतमस्तक हो गए।

बापू दया किशन जी इतने भक्त-वत्सल थे कि अपने भक्तों पर आने वाली विपदाओं का निवारण तुरन्त कर दिया करते थे। एक बार पानीपत निवासी अश्विनी और उनकी दो बहिनें रीना और सीमा के मन में बापू जी के दर्शनों के लिए सहारनपुर दरबार जाने की इच्छा पैदा हो गई। यह घटना 25-30 वर्ष पुरानी है। उन दिनों अश्विनी कॉलेज में पढ़ते थे। उस दिन चार बजे तीनों भाई-बहिन सहारनपुर जाने के लिए जब बस में बैठे तो वह बस थोड़े समय बाद खराब हो गई। बहुत देर रास्ते में खड़े रहने के बाद एक बारात की बस के ड्राईवर ने उन्हें शामली तक पहुँचा दिया। वहाँ जाने पर उन्हें पता चला कि सहारनपुर जाने वाली आखिरी बस निकल चुकी है। उस समय रात के नौ बज गए थे और किसी बस के आने की कोई सम्भावना नहीं थी। तीनों भाई-बहिन घबरा कर बापू जी को याद करने लगे तभी सफेद वस्त्र पहने एक सरदार जी वहाँ आए। उनके हाथ में एक खूँटा था। सरदार जी ने उनसे पूछा, "क्या तुम्हें सहारनपुर जाना है?" अश्विनी जी के हाँ कहने पर सरदार जी ने कहा कि चलो, इस केलों के ट्रक पर चले जाते हैं। तीनों भाई-बहिन उन सरदार जी के साथ ट्रक पर बैठ गए और उस ट्रक ने रात के ढाई बजे उन्हें घंटाघर पर उतारा। तत्पश्चात् सरदार जी ने दो

रिक्शा बुलाए और तीनों भाई-बहिनों को सुरक्षित मन्दिर तक पहुँचा दिया। रिक्शा से उतर कर भाई-बहिनों ने जैसे ही पीछे मुड़ कर देखा वहाँ कोई सरदार जी नहीं थे। दूर-दूर तक उनका कोई पता नहीं था। उसी क्षण उन तीनों को यह एहसास हो गया कि स्वयं बापू दया किशन जी ही उन्हें सुरक्षित मन्दिर तक छोड़ गए हैं।

जैसे ही वे मन्दिर के अन्दर गए उन्होंने देखा कि रात के लगभग तीन बजे बापू दया किशन जी बाहर ही बैठे थे और उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्हें देखते ही वह बोले, "रात को अकेले मत आया करो। समय पर आ जाया करो। हमारी चिन्ता तुममें रमी रहती है।" अश्विनी जी को इस बात में कोई संशय नहीं था कि उस रात स्वयं बापू दया किशन जी ही उन्हें लेने आए थे।

बापू दया किश्न जी ने जैसा सुन्दर करुणा प्रधान जीवन जिआ है उसकी कोई उपमा देना सम्भव नहीं है। तुलसीदास जी ने ऐसे दिव्य संतों के विषय में कहा है-

जप तप ब्रत दम संजम नेमा। गुरु गोबिंद बिप्र पद प्रेमा ॥ श्रद्धा छमा मयत्री दाया। मुदिता मम पद प्रीति अमाया ॥

अर्थात संत जप, तप, व्रत, दम, संयम और नियम में रत रहते हैं और गुरु

गोविन्द तथा ब्राह्मणों के चरणों में प्रेम रखते हैं। उनमें श्रद्धा , क्षमा, मैत्री.

दया, मुदिता (प्रसन्नता) और भगवान् के चरणों में निष्कपट प्रेम होता है।

बापू दया किशन जी के सम्पूर्ण जीवन में ये सभी गुण मूर्त रूप में विद्यमान थे। प्राणपण से संगत की सेवा करते हुए बापू दया किशन जी ने 12 दिसम्बर सन् 2002 को महासमाधि ले ली। महासमाधि से पूर्व ही उन्होंने अपने पुत्र श्री सुभाष शर्मा को मन्दिर की व्यवस्था का कार्यभार सौंप दिया था। किस

प्रकार उन्होंने सुभाष जी को संगत की सेवा के लिए तैयार किया, इसका विवरण हम अगले अध्याय में करेंगे।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

संत श्री सुभाष जी महाराज

ॐ

संत श्री सुभाष जी महाराज

संत सुभाष बापू जी महाराज एक जीवित मानस मन्दिर है, जिनके दर्शन मात्र से मन में एक असीम शान्ति की अनुभूति होती है और मन की इच्छा अपने आप पूरी हो जाती है। महाराज जी की कृपा से अनेक पथभ्रष्ट लोगों का जीवन अंधकार से प्रकाश की ओर अग्रसर हुआ है। संत सुभाष बापू जी पूज्यपाद संत दया किशन महाराज जी के सुपुत्र थे और इन्होंने उन्हीं से नाम-दान दीक्षा ली।

संत सुभाष बापू जी का जन्म 10 फरवरी 1959 में जनपद सहारनपुर (उ.प्र.) में हुआ। बचपन से ही बापू जी धार्मिक वृत्ति के हैं। इन्होंने एम.ए की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त वेदान्त, रामचरितमानस, गीता गुरुबाणी तथा अन्य संतो की वाणियों का गहन अध्ययन किया, वे धार्मिक वक्ता हैं और संगतों को, जी॰टी॰वी॰, साधना चैनल, आस्था चैनल आदि के माध्यम से भी आध्यात्मिक ज्ञान दे रहे है और इससे अंसख्य लोग लाभान्वित हो रहे हैं।

विगत कई वर्षों से पूज्य बापू सुभाष जी परम् संत बापू ज्वाला सिंह के मन्दिर ओ३म् बापू शरणम् सहारनपुर के अतिरिक्त दरबार बापू

कल्याणदास जी महाराज गदरपुर, उधम सिंह नगर, दरबार रामराज मेरठ, दरबार खड़मासा (काशीपुर) की सेवा व्यवस्था कर रहें है।

महाराज जी की कृपा सभी भक्तों पर रहती है और वे सभी श्रद्धालुओं के कष्ट निवारण करते हैं। एक बार बापू जी के सेविका आँचल छाबड़ा अपने घर में खाना बना रही थी। अचानक उसके एक हाथ ने काम करना बन्द कर दिया और वह अनेक डॉक्टरों के पास इसका इलाज करवाने गई लेकिन उन्हें कहीं से भी आराम नहीं आया। अत्यन्त दुःखी रहने से वह परेशान होकर मन ही मन बापू जी से प्रार्थना करने लगी।

10 फरवरी को संत सुभाष बापू जी महाराज का जन्मदिन था। सभी भक्त जन मस्ती में झूम-नाच रहे थे और आँचल छाबड़ा से भी रहा न गया और वह उठ कर नाचने लगी। नाचते नाचते कुछ क्षण के लिए उसने आँखें बन्द की और बापू जी से प्रार्थना करने लगी। अचानक उसने जय बापू जी बोल कर दोनों हाथ ऊपर करने का प्रयास किया और उसकी खुशी का ठिकाना न रहा जब दोनों हाथ पूरी तरह से काम करने लगे और वह भी सभी की तरह मस्ती में नाचने लगी। यह सब बापू सुभाष जी महाराज का करिश्मा ही था।

संत बापू जी सुभाष जी अत्यन्त दयालु और कृपालु हैं। संगत की

सेवा ही प्रभु की सेवा जानकर, प्रत्येक व्यक्ति के दुखों को हर कर, उन्हें सुख पहुँचाना ही अपना ध्येय मानते हैं।

संत सुभाष जी सहारनपुर दरबार की व्यवस्था बहुत अच्छी तरह कर रहें हैं और अपने पूजनीय पिता के पद-चिन्हों पर चल कर संगत का कल्याण कर रहें हैं।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

संत श्री ऋषि ठाकुर जी महाराज

ॐ

संत श्री ऋषि ठाकुर दास जी महाराज

गुरोर्ध्यानेनैव नित्यं देही ब्रह्ममयो भवेत्। स्थितश्च यत्रकुत्रापि मुक्तोऽसौ नात्र संशयः ।।

भगवान् शिव कहते हैं कि सदैव गुरुदेव का ध्यान करने से ही जीव ब्रह्ममय हो जाता है। वह किसी भी स्थान में रहता हो, फिर भी मुक्त ही है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

बापू श्रद्धाराम जी के एक ऐसे ही अपूर्व शिष्य हुए जिनका पवित्र नाम जुबां पर आते ही शीश श्रद्धा से झुक जाता है, जिन्होंने अपनी गुरु-भक्ति की एक नई मिसाल कायम की और जिन्होंने अपनी तपस्या से अपने पूजनीय गुरुदेव का मस्तक गर्व से ऊँचा कर दिया, उस महान् विभूति का नाम है-ऋषि ठाकुर दास जी महाराज।

ऋषि ठाकुर दास जी का जन्म आज से लगभग 120-125 साल पहले गाँव शाहपुर तहसील फिल्लौर जिला जालन्धर में पिता श्री सन्त साहिब दयाल जी और पूज्य माता ईशरां जी के घर 12 कार्तिक सन् 1885 ई० में हुआ। जन्म के समय ही इनके नूरी चेहरे पर रुहानियत

चमक रही थी। उनके पाँव में पद्म का निशान किसी महान् देवी घटना की ओर इशारा कर रहा था। अपने समय के उच्च कोटि के संत काहन दास जी द्वारा उनका नाम संत ठाकुर दास रखा गया।

ठाकुर दास जी को शिकार करने में रुचि थी। एक दिन शिकार करते-करते वह पास के गाँव अट्टी पहुँच गए। वहाँ उस समय संत श्रद्धा राम जी तपस्या कर रहे थे। उन्होंने उनसे उनका नाम, उनके पिता का नाम तथा उनके गाँव का नाम पूछा। उनके द्वारा सब प्रश्नों के उत्तर दिए जाने के बाद बापू श्रद्धाराम जी ने उन्हें शिकार खेलने से मना किया और कहा कि यदि शिकार ही करना है तो अपने भीतर के शत्रुओं काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार का शिकार करो। ऐसा सुनने के बाद ठाकुर दास जी ने उसके बाद शिकार खेलना हमेशा के लिए त्याग दिया। अब वह शाहपुर से नित्य अट्टी संत श्रद्धाराम जी की सेवा में जाने लगे, अगर बापू श्रद्धाराम जी उन्हें भोजन के लिए कह देते तो वह भोजन करते, नहीं तो वैसे ही सेवा में मग्न रहते।

ठाकुर दास जी ने संत श्रद्धाराम जी से नामदान के लिए प्रार्थना की और श्रद्धाराम जी ने उन्हें नन्दाचौर जाकर बापू हरनाम जी से नाम दान लेने को कहा और फिर बापू हरनाम जी की आज्ञा अनुसार संत श्रद्धाराम जी ने इनको नामदान दिया। नाम दान की प्राप्ति के बाद इन्होंने दिन-रात घोर तपस्या की। सोना अग्नि में ढल कर ही कुन्दन बनता है

इसी प्रकार ऋषि ठाकुर दास जी ने अपने आप को गुरुबाणी और गुरु उपदेश के सांचे में ढाल कर उस महान् उपाधि को प्राप्त किया जो बीते समय में भी दुर्लभ थी और आने वाले समय में भी दुर्लभ है। जगत स्वामी श्रद्धाराम जी जैसे गुरु और ऋषि ठाकुर दास जी महाराज जैसे शिष्य इस कलियुग की अद्भुत और बेमिसाल अलौकिक घटना है। बापू श्रद्धाराम जी द्वारा नाम दान मिलने तथा श्वास-श्वास सिमरन करते रहने से इन्होंने रूहानियत की अनेकों मंजिलें पार कर, शरीर के पाँचों तत्त्वों को अलग-अलग तत्त्व में मिलाकर, लोगों को कई कौतुक दिखाए। कई बार सुबह जब किसान खेतों में हल चलाने जा रहे होते तो रास्ते में उनके शरीर के अंगों को अलग-अलग पड़े देखते और जब वे घबरा कर पीछे मुड़ते तो स्वयं ठाकुर दास जी खड़े देखते। उनके पूछने पर वह कहते कि यह सब स्वभाविक है। ऐसी लीलाएं उनकी आत्मिक शक्ति के कारण स्वयं ही हो जाती थीं। अगर उनकी सभी लीलाओं का वर्णन

किया जाए तो एक पूरा ग्रन्थ बन जाए। इसलिए यहाँ उनमें से उनके जीवन की कुछ घटनाओं का वर्णन ही किया जाएगा।

नन्दाचौर निवास के दौरान वह जब भी श्री गुरु हरनाम दास जी और संत श्रद्धाराम जी को नमस्कार करने जाते तो उन्हें पुष्प भेंट करते। एक बार की बात है कि एक फकीर जो खुद भी बापू जी के चरणों में फूल भेंट किया करता था और जिसने खुद की बगीची लगा रखी थी, उसीकी बगीची में से फूल तोड़कर जब ठाकुर जी दरबार में हाज़िर हुए

हो बापू हरनाम जी आम चूस रहे थे। उन्होंने खुशी से इनको भी प्रसाद रूप में पाँच सेर आम दिए। ठाकुर दास जी ने न केवल वे सारे आम खाए अपितु उन आमों की गुठलियां और छिलके भी सुखा कर और फिर उन्हें पीस कर वे भी ग्रहण कर लिए। यह देख बापू हरनाम जी ने कहा कि आज तुमने हमें लूट लिया। उसके बाद संत हरनाम जी ने और संत श्रद्धाराम जी ने उन्हें आशीर्वाद दिया कि आप ने सभी कुछ हजम कर लिया है इसलिए बापू जी की आप पर अपार कृपा होगी। गुरु-प्रसाद के लिए उनकी निष्ठा अखण्ड थी।

प्रसाद का सेवन करने के बाद उनकी वृत्ति भजन में जुड़ी और दो दिन और दो रात वह समाधि में लीन रहे। यह घटना उस फकीर ने भी देखी जिसकी बगीची से ठाकुर जी ने फूल लिए थे। ईर्ष्यावश उसने संत श्रद्धाराम जी से कहा कि "ठाकुर जी ने उसकी बगीची से फूल क्यों तोड़े? उन्हें सजा दी जाए।" फकीर का मान रखने और अपने वचन की परीक्षा के लिए बापू श्रद्धाराम जी ने संत ठाकुर दास जी को 14 साल तक नन्दाचौर न आने की आज्ञा सुना दी। गुरु हरनाम जी को जब इस 14 साल के वनवास का पता चला तो उन्होंने संत ठाकुर दास जी को नन्दाचौर रहने के लिए कहा और कहा कि श्रद्धाराम मेरा शिष्य है। आप मेरा हुक्म मानकर नन्दाचौर सेवा करो। परन्तु ठाकुर दास जी ने गुरु के हुक्म को अविनाशी मान कर बाबा गुरु से कहा कि मेरे लिए गुरु सर्वोपरि है। उनका हुक्म मेरे लिए इलाही फरमान है। इस प्रकार आप ने

गुरु की आज्ञा की पालना आरम्भ कर दी। इसी दौरान आप ने गुरु की याद में हरिपुर, ताजपुर, हेलरां, कपूरथला, हरिद्वार में स्थान तैयार करवाए। 14 वर्ष बीत जाने पर जब बापू श्रद्धाराम जी ने ठाकुर दास जी को नन्दाचौर आने का निमन्त्रण भेजा तो नन्दाचौर में दीप माला करवाई गई और संगत को जहाँ तक बस आती थी, वहाँ से बैंड-बाजे के साथ आदर सहित दरबार में लाने की आज्ञा दी। परन्तु जब ऋषि ठाकुर जी ने यह सब देखा तो वह संगत में से चुपचाप निकल कर दरबार पहुँच गए। आप की नम्रता तथा गुरु-भक्ति से प्रसन्न होकर बापू श्रद्धा राम जी और संत हरनाम दास जी ने आप को बहुत सारे आशीर्वाद दिए।

ऋषि ठाकुर दास जी ने हरिपुर आकर अपना आसन लगाया। इसी समय इनको कलकत्ता की यात्रा करने का अवसर मिला। वहाँ इनकी मुलाकात ताजपुर के कुछ सज्जन पुरुषों से हुई। ठाकुर जी की रुहानी शक्ति देखकर उनके मन में इच्छा पैदा हुई कि अगर यह संत उनके गाँव आएँ तो उनके गाँव ताजपुर को लम्बे समय से चल रही दुष्ट आत्मा की विपदा से छुटकारा मिल सकता है। ताजपुर के सेवादारों की विनती सुनकर वह ताजपुर गए। गाँव के लोगों ने उनके विषय में पहले ही सुन रखा था और अब उनके दर्शन करके अति प्रसन्न हुए। उन्होंने गाँव में ठाकुर दास जी को अपना स्थान स्थापित करने के लिए कहा और जिस स्थान पर आसन स्थापित करने को कहा, उस स्थान से अगर कोई पशु पक्षी भी गुजर जाता था तो मृत्यु को प्राप्त हो जाता था। गाँव वाले इसी

बहाने इस मुसीबत से छुटकारा चाहते थे। रात को वहाँ जब ऋषि जी का आसन लगाया गया तो उस आत्मा ने कई तरीकों से उन्हें परेशान करने की कोशिश की। परन्तु उसकी ठाकुर दास जी के आगे एक न चली और अन्त में वह आत्मा ऋषि जी से प्रार्थना करने लगी कि मैं सदियों से यहाँ रह रहा हूँ, कृपा करके मुझे भी आश्रम में स्थान दीजिए। ठाकुर जी ने उसकी विनती मान ली और कहा, "अगर उन्हें दरबार में रहना है तो देवता बनकर रहना होगा और लोग हमारे साथ-साथ तुम्हारी भी पूजा करेंगे।" उसके बाद लोगों को उस आत्मा ने कभी परेशान नहीं किया।

ऋषि ठाकुर दास जी के ताजपुर निवास के दौरान पास-पास के गाँव लाम्बड़ा, रामपुर, लल्लियां, भगवान्पुर आदि सारे गाँवों से लोग उनके दर्शन के लिए आते। उनके अति प्रिय सेवक सुन्दर राम

निवासी रामपुर और संगत ने उन्हें रामपुर में निवास करने की विनती की और वे उनकी प्रार्थना पर वहाँ चले गए। लोग इनके दर्शनों के लिए आते और उनकी लीलाओं की प्रशंसा करते। परन्तु कुछ ईर्ष्यावादी उनकी प्रशंसा को सहन न कर सके। उन में से कुछ द्वारा भड़काए लोगों ने ठाकुर जी से कोई लीला दिखाने की प्रार्थना की। संगत के बार-बार आग्रह करने पर ठाकुर जी ने एक कमरा साफ करने और उसका दरवाजा बन्द करने को कहा और साथ ही यह कह दिया कि इसके बाद वह रामपुर निवास नहीं करेंगे। कमरे की सफाई के बाद कमरे का दरवाजा बन्द कर दिया

गया। उसके बाद वह ईश्वर की भक्ति में लीन हो गए। जैसे ही ठाकुर जी ने ध्यान लगाया, कमरे में से चाँदी के रुपए गिरने की आवाज आने लगी। जब संत समाधि से बाहर आए तो लोगों ने दरवाजा खोल कर देखा, वहां चाँदी के सिक्कों का ढेर लगा था। इसके बाद ठाकुर दास जी वहाँ से चले गए परन्तु जाते-जाते वह उस गाँव को हमेशा के लिए माया से भरपूर रहने का वरदान दे गए। आज तक रामपुर लल्लियां में ठाकुर जी के आशीर्वाद से माया की कोई कमी नहीं है।

ऋषि जी के हेलड़ां निवास के दौरान उन्होंने देखा कि गाँव में खुशहाली नहीं है और लोगों को काफी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। ठाकुर दास जी ने लोगों को कहा कि वे वहाँ के एक महान् संत शंकर दास जी की यादगार में एक स्थान बनवाएं और उनके प्रति श्रद्धा ज्ञापित करें। गाँव वालों ने वैसा ही किया। वहाँ बैठ कर ऋषि ठाकुर दास जी ने तपस्या भी की और उस के उपरान्त गाँव में खुशियाँ वापिस आ गई। जिस गाँव में जाने का कोई सही रास्ता नहीं था, आज वहां चारों तरफ सड़कों का जाल बिछा है और उस गाँव में ऋषि ठाकुर जी के नाम से और संत शंकर दास जी के नाम से सुन्दर मन्दिर बने हुए हैं।

ठाकुर दास जी की महिमा का प्रकाश दूर-दूर तक होने लगा। कपूरथला रियासत के राजा ने भी जब ऋषि ठाकुर दास जी की महिमा

सुनी तब उनका मन ठाकुर जी के दर्शनों के लिए विचलित हो उठा, परन्तु कई बार भाग्य साथ न होने के कारण, नारायण के प्रत्यक्ष सामने होने पर भी, इंसान उन्हें पहचान नहीं पाते। ऐसा ही कुछ

कपूरथला रियासत के राजा जगजीत सिंह के साथ हुआ। ठाकुर जी तीन दिन लगातार उनके दरबार गए परन्तु राजन् उन्हें पहचान नहीं पाए। अंत में राजा के पूछने पर कि ऋषि जी, आप लगातार यहाँ तीन दिन से आ रहे हो, परन्तु कुछ मांगते नहीं। तब ठाकुर जी ने कहा, "राजन्, आप ने लाखों रुपये लगाकर मन्दिर, मस्जिद तैयार करवाए परन्तु क्या आप को ज्ञात है कि आप के राज्य में प्रजा दु:खी है। जो राजा अपनी प्रजा के लिए कुछ नहीं कर सकते वो मेरे लिए क्या करेंगे?"

ज्ञान से भरपूर इन शब्दों को सुनकर राजा को आभास हुआ कि यह ऋषि ठाकुर जी ही हो सकते हैं। अपनी गलती का एहसास होने पर राजा ने उनसे क्षमा माँगी और गरीब लोगों के लिए कपड़े, रजाईयां बंटवाई और राज दरबार से 5 रुपये और लंगर लोगों तक पहुँचाने का प्रबन्ध किया। ऋषि ठाकुर दास जी की प्रशंसा सुनकर महारानी कपूरथला भी उनके दर्शनों के लिए व्याकुल हो उठी और पुत्र प्राप्ति की इच्छा से उनके दर्शनार्थ हेतु उनकी कुटिया नंगे पाँव पहुँच गई और सन्तान के लिए प्रार्थना की। ठाकुर दास जी ने महारानी से कहा कि कुटिया में संगत के लिए पानी की कमी है। आप कुँएं की सेवा करो। जब कुँआं तैयार हो जाएगा उसके नौ महीने बाद आपको पुत्र की प्राप्ति

होगी। ऋषि ठाकुर जी के वचनानुसार ठीक वैसा ही हुआ। पुत्र प्राप्ति के बाद महाराजा जगजीत सिंह तथा महारानी बहुत खुश थे। ठाकुर जी का शुक्रिया अदा करने के लिए महाराज और महारानी पुत्र सहित उनकी कुटिया में आए और इस खुशी के अवसर पर महान् यज्ञ करवाने की अपनी इच्छा ठाकुर जी के समक्ष रखी और साथ ही इस यज्ञ में ठाकुर जी के सद्गुरु बापू श्रद्धाराम जी और दादा गुरु बापू हरनाम जी को भी निमन्त्रण देकर कपूरथला शहर को उनके पावन चरणों से पवित्र करवाने की इच्छा रखी। ठाकुर जी की आज्ञा मिलने पर दूर-दूर से महात्मा, रागी, कीर्तन करने वाले इस यज्ञ में ठाकुर जी के दर्शनों के लिए पधारे।

इस यज्ञ में ठाकुर जी के गुरु बापू श्रद्धा राम तथा बापू हरनाम जी को हाथी तथा शाही पालकी में सवार करके, संगतों का समूह, शब्द-कीर्तन करते-करते राजमहल पहुँचा। यहाँ महारानी और महाराजा ने श्रद्धापूर्वक महापुरुषों को सोने-चाँदी के थालों में कीमती वस्तुएँ अर्पण कर उनका आशीर्वाद प्राप्त

किया। इस सारे नगर कीर्तन में ठाकुर दास जी एक टाँग पर खड़े होकर अपने गुरु और दादा गुरु संत हरनाम जी को चौर करते रहे।

महाराजा और महारानी का इस तरह ठाकुर दास जी के दर्शनों के लिए आना यहां एक तरफ श्रद्धालु संगतों के मन में उत्साह भर रहा था,

वहीं दूसरी तरफ ईर्ष्यालु लोगों के लिए यह दुःख का कारण था। जहाँ ऋषि ठाकुर दास ने अपनी तिनकों की कुटिया तैयार करवाई थी वहीं साथ ही एक मुसलमान फकीर रहता था। उसे मन ही मन महाराज ऋषि ठाकुर जी के प्रति ईर्ष्या थी। वह समय-समय पर ऐसे कार्य करता कि ऋषि ठाकुर जी स्वयं ही कुटिया छोड़ कर वहां से चले जाएँ। कभी वह कुटिया के आगे गन्दगी फैंक जाता और कभी जादू-टोना करता। एक दिन तो उस फकीर ने ठाकुर जी की कुटिया को आग ही लगा दी। उस समय ठाकुर जी अपनी कुटिया में नहीं थे।

जब वह वापिस आए तो उन्होंने देखा कि फकीर ने यह बहुत ही गलत कार्य किया है। फिर भी उन्होंने सहनीय भाव से फकीर से कहा, "इस तिनके की कुटिया की जगह पर तो पक्की कुटिया बन जाएगी परन्तु तेरी फकीरी अब टूट चुकी है।" इसके बाद ऋषि ठाकुर जी के मन्दिर तो फिर से पक्के बन गए परन्तु वह ईर्ष्यालु फकीर का बिल्कुल पता नहीं चला कि वह कहाँ चला गया?

ऋषि ठाकुर दास जी ने काफी प्रयत्नों के बाद पिछड़ी तथा दलित जाति के लोगों के लिए हरिद्वार में जगह भी बनाई। यह बात 1934 ई० की है। जब ऋषि ठाकुर दास जी के हरिद्वार भ्रमण के समय यह बात मन में आई कि हरिद्वार में उच्च वर्ग के लोगों के रहने के लिए तो बहुत से स्थान हैं परन्तु दलित और पिछड़े वर्ग के लिए इन आश्रमों में प्रवेश

निषेध था। इस बात से आप का कोमल हृदय पसीज उठा कि क्यों न हरिद्वार में जगह लेकर इन लोगों के रहने और भक्ति के लिए आश्रम तैयार करवाया जाए। इस आश्रम के निर्माण में एक बड़ी कठिनाई जो सामने आ रही थी, वह यह थी कि "हरिद्वार कन्ट्रोल बोर्ड" के नियमों के अनुसार उस समय कोई भी पिछड़ी जाति का व्यक्ति जमीन लेकर आश्रम बनवाने का सोच भी नहीं सकता था क्योंकि उस समय उनके नाम से रजिस्ट्री नहीं होती थी। परन्तु ऋषि जी ने कोशिश जारी रखी और अंत में हरिद्वार कंट्रोल बोर्ड इस शर्त पर जमीन देने के लिए माना कि उस जगह का हर साल कर देना पड़ेगा।

कर न देने की सूरत में उस जगह पर बोर्ड का कब्जा हो जायेगा। इस समस्या के समाधान के लिए ऋषि ठाकुर दास जी ने सोचा कि भई, हम तो फकीर हैं आज यहाँ और कल वहाँ। परन्तु उनका दलितों के लिए कुछ करने का इरादा पक्का था। इसलिए उन्होंने बोर्ड (कमेटी) का हर साल जितना टैक्स बने, उतनी रकम, जिसका ब्याज हर साल बोर्ड को जाता रहे, बोर्ड के नाम बैंक में जमा करवा दी। इस प्रकार आप ने 4 कनाल जमीन ऋषिकेश रोड पर लेकर आश्रम की स्थापना की और वहां एक कुँआं भी खुदवाया। हरिद्वार जमीन लेने के उपरान्त वे हरिपुर खालसा आए। वहाँ आप ने पंजाब और देश भर के साधुओं के नाम से विशाल संत समागम बुलाया, जिसमें उन्होंने संगत और महापुरुषों को सम्बोधित करते हुए कहा कि हरिद्वार में जो दलितों के लिए आश्रम

बनवाया गया है वह कार्य हरि इच्छा से ही पूर्ण हुआ है और उन्होंने इस कौम के लोगों और महापुरुषों से विनती की कि वह इस आश्रम का अपनी इच्छानुसार उपयोग कर सकते हैं और इसी अवसर पर हरिद्वार आश्रम की सेवा संभाल का कार्य संत चन्दू नाथ जी को सौंपा गया।

1925-30 के आस पास गाँव बडिंग नज़दीक जालन्धर कैंट के लोगों से ऋषि जी का सम्पर्क हुआ। यह गाँव देसी जूतों के लिए प्रसिद्ध था। उन दिनो फौज में भी देसी जूतों को पहनने का रिवाज था। और गाँव के तकरीबन सारे घर जूते बनाने का कार्य करते थे। गाँव के ठेकेदार रूलदा राम, पंजाबा राम, मुन्शी राम, गुलाब दास और जवाहर सिंह पाँच भाई थे। इन में से जवाहर सिंह गाँव अट्टी में विवाहित थे। जवाहर सिंह और गजू राम बापू जी के सेवक बन गए। ऋषि जी का सबके साथ प्रेम बढ़ता ही जा रहा था।

उसी गाँव के गजू राम जो बापू जी के सेवक थे, उनकी तीन लड़कियों की शादी एक साथ होनी नियत हुई। पैसे की कमी के कारण वह काफी चिन्तित थे। ऋषि ठाकुर जी शादी का दिन नियत होने से पहले ही किसी कार्यवश बाहर गए हुए थे और कब तक लौटेंगे किसी को पता नहीं था। गजू राम चिन्तित थे परन्तु वह ठाकुर जी द्वारा दिए गए नाम का हर वक्त जाप करते थे। ऋषि जी तो अन्तर्यामी थे। शादी वाले दिन गाँव पहुँच गए। गजू राम ने बापू जी को देखते ही सारी बात बताई

कि तीन-तीन शादियाँ इकट्ठी हैं। सारा गाँव भी आएगा। परन्तु लंगर का प्रबन्ध पूरा नहीं है।

यह सुनते ही ऋषि ठाकुर दास जी ने गजू राम से कहा कि वह समाधि में जा रहे हैं और जब तक पूरा गाँव लंगर नहीं कर लेता उनकी समाधि भंग न की जाए और इसके साथ ही उन्होंने कहा कि लंगर वितरित करते समय तब तक देग का पूरा मुँह नहीं खोलना है जब तक आए हुए सारे लंगर नहीं कर लेते। गजू राम ने ऐसा ही किया। सारे बाराती, सारे नगर ने लंगर किया। परन्तु देग फिर भी भरे के भरे रहे। गाँव के लोगों में भी लंगर वितरित किया गया। परन्तु देग फिर भी भरे थे। पूरा नगर समझ गया कि यह ऋषि ठाकुर दास जी का ही चमत्कार है इसलिए सेवकों ने ऋषि ठाकुर जी के चरण पकड़ लिए और जयकारे बुलाने लगे। यह घटना 1930-35 के आसपास की है।

एक बार ऋषि ठाकुर दास जी अट्टी यज्ञ पर गए हुए थे। उस समय बापू श्रद्धाराम जी ने गुरु ग्रन्थ साहिब के 101 पाठ रखे थे। एक पाठ 6 दिनों में पूरा होता था। इस प्रकार पाठों को पूरा होने में 606 दिन लगे। जब बापू श्रद्धाराम जी पाठ करते थे तब ऋषि ठाकुर दास जी एक टाँग पर खड़े होकर उन्हें चौर किया करते थे। 101 पाठ पूरे होने के बाद बापू श्रद्धाराम जी ने यज्ञ किया। उस यज्ञ के दौरान किसी कार्य के लिए जब पानी की आवश्यकता पड़ी तब कुछ लोगों ने पिछड़ी जाति के

लोगों को पानी देने से इन्कार कर दिया।

इस पर ठाकुर दास जी ने सेवकों को कहा कि तुम सब एक लम्बी पंक्ति लगा लो और बाहर से बाल्टी भर कर एक दूसरे को पकड़ाते जाओ। सेवकों ने वैसा ही किया और लगभग एक कि॰मी॰ लम्बी पंक्ति में सेवक एक-दूसरे को बाल्टी पकड़ाते रहे और यज्ञ का कार्य करते रहे। जब बापू श्रद्धाराम जी ने यह सब देखा तो ऋषि ठाकुर दास जी से पूछा कि यह सब क्या हो रहा है? ठाकुर दास जी ने बापू जी को कुछ नहीं बताया और कहा कि कुछ लड़कों ने अज्ञानतावश कुँएं में पानी की छींटें मार दिए थे इसलिए मैंने इन्हें दूर से पानी लाने के लिए कह दिया था। बापू श्रद्धाराम जी तो अन्तर्यामी थे।

वे तुरन्त समझ गए कि वहाँ क्या हो रहा था? बापू जी उन लोगों को डाँटते हुए कहने लगे, "यह तुम क्या कर रहे हो? तुम इनकी शक्ति को नहीं जानते। यदि ऋषि ठाकुर दास जी चाहें तो सतलुज, रावी, चिनाब, व्यास और झेलम इन पाँचों के पाँचों दरियाओं का रुख इस तरफ हो जाएगा।" बापू जी की यह बात सुन कर उन लोगों ने ठाकुर दास जी से क्षमा माँगी और यज्ञ के कार्य के लिए जल दे दिया। तत्पश्चात् बापू जी ने ऋषि ठाकुर दास जी को कहा कि इन सभी पाठों का फल मैं तुम्हें प्रदान करता हूँ। ऋषि ठाकुर दास जी ने बापू जी को प्रणाम कर उनका आशीर्वाद लिया। यज्ञ के दौरान प्रवचन करते हुए

ऋषि ठाकुर दास जी ने कहा कि अब यह यज्ञ अट्टी में नहीं होगा। यह यज्ञ अब किसी योग्य तपोस्थान पर होगा।

इसके बाद अट्टी में यह यज्ञ नहीं हुआ। अट्टी का यज्ञ होने के बाद ऋषि ठाकुर दास जी हरिपुर खालसा दरबार में 16 भादों को यज्ञ किया करते थे। ऋषि ठाकुर दास जी इस दिन गुरु ग्रन्थ साहिब जी की वाणी का भोग डलवाते थे। परन्तु तीसरे यज्ञ के समय 16 भादों के भोग के वक्त ऋषि जी ने समूह संगत की हाजिरी में कहा, "साध संगत जी, अगले साल भादों 16 को मेला नहीं मनाया जाएगा। आप सब को भादों महीने की कुदरती जोड़ मेले की तारीख मिल जाएगी।"

यह सुनकर सारी संगत सोच में पड़ गई कि पता नहीं ठाकुर दास जी की क्या इच्छा है? थोड़ा समय तो संगत इस ऐलान से दुःखी रही परन्तु ठाकुर दास जी के प्यार ने संगत के मन से इस बात के भ्रम को

निकाल दिया। उन्हीं दिनों ऋषि ठाकुर जी ताजपुर में निवास करने लगे। आप के प्यारे सेवक संत साधु राम जी और संत धर्म दास जी आप की सेवा में रहने लगे। ऋषि जी ने पता नहीं किस मौज में 60 वर्ष के शरीर को 100 वर्ष शरीर में बदल लिया। संगत दिन-रात उनके दर्शनों के लिए उमड़ पड़ी। संगत के मन में एक बार फिर 16 भादों के यज्ञ के ऐलान के बारे में शंका पैदा हुई। उधर ताजपुर की संगत चाहती थी कि ऋषि जी वहीं ताजपुर में देह त्याग करें। इसी भावना से संगत ने चन्दन

की लकड़ी भी खरीद ली थी। परन्तु संत किसी के मौहताज नहीं होते, जो उनकी इच्छा अनुसार कार्य करें। ऋषि जी महाराज भी यह सारी गतिविधियाँ देख रहे थे।

ताजपुर और आस पास के इलाकों की संगत के अत्याधिक स्नेह के बावजूद भी ऋषि जी की इच्छा थी कि वह हरिपुर खालसा पहुँच कर सच्चखंड जाना चाहते थे। क्योंकि उन्होंने अपने मुख से कई बार कहा था कि उन्होंने हरिपुर की धरती पर पिछले समय में तप किया था। वे कई बार इशारों में लोगों को इस बात से अवगत करा चुके थे कि हरिपुर में किसी संत ने घोर तप किया हुआ है, इसलिए अपनी इच्छा अनुसार इन्होंने ताजपुर की संगत की इच्छाओं के विपरीत हरिपुर खालसा जाने के लिए श्री करम चन्द मल को कहा कि उन्होंने कार में बैठ कर हरिपुर जाना है। वे शीघ्र अति शीघ्र कार का प्रबन्ध करें।

ठाकुर जी की आज्ञा अनुसार कार का प्रबन्ध किया गया। संगत उनके आगे विनती कर रही थी कि वे ताजपुर में ही रहें परन्तु उन्होंने किसी की भी नहीं सुनी बल्कि दवाई के साथ जो खिचड़ी का सेवन उन्होंने करना था वह भी कार में रखवा ली और शीघ्र चलने के लिए कहा तथा साथ ही कहा कि अब दवा भी हरिपुर में ही खाएंगे। इस प्रकार ऋषि जी अपनी प्यारी तपो भूमि हरिपुर आ गए।

भविष्यवक्ता संत ऋषि ठाकुर दास जी महाराज को इस बात का ज्ञान हो गया था कि बाबा गुरु हरनाम जी का अन्तिम समय निकट आ रहा है और ठाकुर जी उनका वियोग सहन नहीं कर सकते थे।

इसीलिए एक दिन उन्होंने अपने गुरु संत श्रद्धाराम और बाबा गुरु संत हरनाम जी से जाने की आज्ञा माँगी परन्तु बाबा हरनाम जी ने बापू श्रद्धाराम जी से कहा कि वह नहीं जानते कि ठाकुर जी जाने की आज्ञा क्यों माँग रहे हैं? बापू हरनाम जी ने उन्हें समझाया कि अपने गुरु तथा बाबा गुरु के वहाँ रहते, वह स्थान छोड़ कर नहीं जा सकते।

यह सुन कर ऋषि ठाकुर दास जी ने प्रार्थना की, "महाराज जी, जब तक मेरा यह शरीर है आप मेरे सद्गुरु हो और मैं आपका सेवक हूँ परन्तु मैं बापू हरनाम जी के ब्रह्मलीन होने से पहले सच्चखंड पहुँच कर उनकी सेवा में हाजिर रहना चाहता हूँ।" इस पर संत हरनाम जी ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा कि आपकी गुरु-भक्ति धन्य है। लोग आपका नाम युगों-युगों तक याद रखेंगे।

किसी मुसलमान फकीर का कथन है "आरिफ दी गल आरिफ ही जाने, क्या जाने नफसानी हूँ।" ऋषि ठाकुर दास जी के मन की हर बात फिल्लौर की एक संत मैया सरकार बहुत अच्छे से समझती थीं। दोनों संत एक दूसरे का बहुत आदर मान करते थे। ऋषि ठाकुर दास जी की इच्छा सच्चखंड जाने से पहले मसतानी के दर्शनों की थी। उनकी

इच्छा अनुसार इनको मसतानी के दर्शनों हेतु ले जाने के लिए पालकी का प्रबन्ध किया गया।

मसतानी (मैया भगवान्) एक ऐसी फकीर थीं जो दुनिया के भोगों से अलग अलमस्त जीवन व्यतीत कर रही थीं और वह अन्तर्यामी भी थीं। जब ऋषि जी के मन में दर्शनों की इच्छा हुई तब मैया सरकार भी जान गई और उन्होंने ठाकुर दास जी के स्वागत के लिए फिल्लौर, जहां आजकल बाईपास का पुल है, से रेलवे स्टेशन तक सेवादारों से कह कर सफाई करवाई और पानी का छिड़काव भी करवाया। जब ऋषि जी की सवारी मैया जी के दर्शनों हेतु उनके निकट पहुँची तो माया जी ने ज़ोर-ज़ोर से बोल कर कहा, "रुको रुको, मैंने पर्दा लेना है।" मैया जी ने अपने तन पर कपड़े का पर्दा करके ऋषि ठाकुर दास जी को कहा कि "ठाकुर जी, आपका समय निकट आ चुका है। ईश्वर की इच्छा अनुसार डेरे पर पहुँच जाएं तथा शरीर त्याग कर सच्चखंड पहुँचें।" ऋषि जी ने सत्य वचन कह कर सेवादारों को दरबार हरिपुर चलने के लिए कहा।

मैया सरकार के दर्शन करने के बाद ऋषि जी हरिपुर दरबार पहुँच गए। यहाँ पहुँच कर उन्होंने अपनी प्यारी संगत को दर्शन दिए और अपने मिशन को आगे बढ़ाने के लिए अपने दो प्यारे सेवकों को पास बिठा कर कहा, "संत साधु राम जी मेरे चेले हैं और संत धर्म दास

जी मेरे सच्चे सेवक हैं। सेवा धर्म दास जी ने भी बहुत की है। सो मेरे सच्चखंड जाने के बाद आप दोनों मिलकर संगतों की सेवा करना। हरिपुर दरबार की सेवा संत धर्म दास जी निभायेंगें।" इस प्रकार भक्तों को सेवा और जप करने का उपदेश दे कर ऋषि ठाकुर दास जी भादो 2002 वि० को सच्चखण्ड विराजे ।

ऋषि ठाकुर दास जी के ज्योति ज्योत समा जाने के बाद ठाकुर जी के दर्शनों के लिए संगत हरिपुर दरबार में एकत्रित होनी शुरु हो गई। गुरु जी के वियोग में संगतों का बुरा हाल था। ऋषि जी के पावन शरीर को स्नान करवा कर सुन्दर पालकी में सजा कर बैंड बाजे तथा शंख घड़ियाल की दर्दमयी आवाज़ में ऋषि जी के प्यारे संत साधु राम जी तथा धर्म दास जी की अगवाई में संगत सारे हरिपुर नगर की परिक्रमा कर रही थी। हरिपुर की परिक्रमा करने के बाद ठाकुर जी की देह के साथ अन्ततः संगत उस स्थान पर पहुँच गई जहां उनके पार्थिव शरीर को अग्नि की भेंट करना था। संत साधु राम जी ने अपने सद्गुरु के फूलों जैसे शरीर को अग्नि भेंट किया। उनके साथ संत धर्म दास जी भी थे। अन्तिम संस्कार के बाद ऋषि ठाकुर दास जी की अस्थियों को हरिद्वार में जल प्रवाहित किया गया।

स्वामी श्रद्धाराम जी की आज्ञा अनुसार ऋषि जी की अन्तिम अरदास के अवसर पर संत साधु राम जी को हरिपुर दरबार की सेवा

सौंपी गई। संत साधु राम जी ने 2 भादों के दिन को हमेशा याद रखने के लिए ऋषि ठाकुर जी की याद में महान नगर कीर्तन आरम्भ किया।

ऋषि ठाकुर दास जी के उपकारों के कारण वह हमेशा संसार के मार्गदर्शक बन कर संसार को राह दिखाते रहेंगे। ऋषि जी की समाधि के कुछ समय बाद श्री साधु राम जी अपने बाबा गुरु श्री श्रद्धाराम जी महाराज के पास नन्दाचौर गए और ऋषि ठाकुर दास जी महाराज और बाबा गुरु श्रद्धाराम जी महाराज की मूर्तियाँ हरिपुर में बनवाने की प्रार्थना की और साथ ही अपनी भी मूर्ति बनवाने की आज्ञा मांगी। बापू श्रद्धाराम जी ने उन्हें तीनों मूर्तियों को बनवाने की इजाजत दे दी और संत साधु राम जी खुशी-खुशी हरिपुर वापिस आ गए।

संत साधु राम जी ने इन मूर्तियों को बनवाने का हुक्म जगत स्टूडियो नवांशहर वालों को सुनाया। उनके मेहनत और लगन से दिन रात कार्य में लगे रहने के कारण शीघ्र ही मूर्तियों का कार्य पूर्ण हो गया। वह स्वयं' डेरे पर मूर्तियाँ लेकर उपस्थित हुए। संत साधुराम जी ने नन्दाचौर सन्देश भेजकर बापू श्रद्धाराम जी को बुलवाया और तीनों मूर्तियां उन्हीं के हाथों से स्थापित की गई। ठाकुर जी की समाधि भी बनवाई गई। आज भी वहाँ संगत आकर नमस्कार कर मुँह मांगी मुराद प्राप्त करती है। चाहे ऋषि ठाकुर दास जी आज शारीरिक रूप से हमारे बीच नहीं हैं, परन्तु उनकी इलाही शक्ति वैसे ही कार्य कर रही है।

सौंपी गई। संत साधु राम जी ने 2 भादों के दिन को हमेशा याद रखने के लिए ऋषि ठाकुर जी की याद में महान नगर कीर्तन आरम्भ किया।

ऋषि ठाकुर दास जी के उपकारों के कारण वह हमेशा संसार के मार्गदर्शक बन कर संसार को राह दिखाते रहेंगे। ऋषि जी की समाधि के कुछ समय बाद श्री साधु राम जी अपने बाबा गुरु श्री श्रद्धाराम जी महाराज के पास नन्दाचौर गए और ऋषि ठाकुर दास जी महाराज और बाबा गुरु श्रद्धाराम जी महाराज की मूर्तियाँ हरिपुर में बनवाने की प्रार्थना की और साथ ही अपनी भी मूर्ति बनवाने की आज्ञा मांगी। बापू श्रद्धाराम जी ने उन्हें तीनों मूर्तियों को बनवाने की इजाजत दे दी और संत साधु राम जी खुशी-खुशी हरिपुर वापिस आ गए।

संत साधु राम जी ने इन मूर्तियों को बनवाने का हुक्म जगत स्टूडियो नवांशहर वालों को सुनाया। उनके मेहनत और लगन से दिन रात कार्य में लगे रहने के कारण शीघ्र ही मूर्तियों का कार्य पूर्ण हो गया। वह

स्वयं' डेरे पर मूर्तियाँ लेकर उपस्थित हुए। संत साधुराम जी ने नन्दाचौर सन्देश भेजकर बापू श्रद्धाराम जी को बुलवाया और तीनों मूर्तियां उन्हीं के हाथों से स्थापित की गई। ठाकुर जी की समाधि भी बनवाई गई। आज भी वहाँ संगत आकर नमस्कार कर मुँह मांगी मुराद प्राप्त करती है। चाहे ऋषि ठाकुर दास जी आज शारीरिक रूप से हमारे बीच नहीं हैं, परन्तु उनकी इलाही शक्ति वैसे ही कार्य कर रही है।

संत श्री साधु राम जी

श्री 108 संत साधु राम जी महाराज ऋषि ठाकुर दास जी के सबसे पहले शिष्य हुए हैं, जिन्होंने ऋषि ठाकुर दास जी से नाम दान लेकर अपने सद्गुरु का नाम सारे संसार में रोशन किया। संत साधु राम जी का जन्म (9 चैत्र) 23 मार्च, 1961 को पिता फकीर चंद और माता गाभी जी के घर बिलगा ग्राम तहसील जालन्धर में हुआ। बचपन में संत साधु राम जी का नाम अर्जुन था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के ही विद्यालय में हुई क्योंकि उनके पिता गाँव बिलगा में ही जूतों की दुकान करते थे। इसी कारण उन्होंने भी तिले की कढ़ाई का काम सीख लिया।

एक दिन 108 श्री ऋषि ठाकुर जी महाराज इनकी दुकान पर जूता खरीदने आए। वह भी उस समय दुकान पर ही थे। ऋषि ठाकुर दास जी का नूरी प्रकाश देख और उनकी ज्ञान भरपूर बातें सुनकर वे उनसे बहुत प्रभावित हुए। ऋषि ठाकुर दास जी कुछ समय दुकान पर ठहरे और फिर वापिस अपने डेरे हरिपुर खालसा आ गए। परन्तु उनका तेजस्वी चेहरा आप के मन में हमेशा के लिए घर कर गया। ऋषि ठाकुर दास जी के चरणों में स्थान पाने की चाह संत साधु राम जी के मन में घर कर गई।

इसी प्रेम में वशीभूत एक दिन वह घर त्याग कर ऋषि ठाकुर जी

के चरणों में उपस्थित हो गए और दिन-रात उनकी सेवा कर अपना जीवन सफल करने लगे। ऋषि ठाकुर दास जी से भेंट से पहले उनका विवाहित जीवन आरम्भ हो चुका था, इसलिए उनके माता-पिता ने उन्हें गृहस्थ जीवन की ओर प्रेरित करने के लिए भरसक प्रयत्न किए परन्तु वे विफल रहे। ऋषि ठाकुर दास जी ने इनकी आजमाईश के लिए इनकी कई कठिन परीक्षाएँ लीं परन्तु उनके मन में गुरु सेवा करने का दृढ़ संकल्प था। गुरु-आज्ञा अनुसार इनको एक वर्ष हरिपुर खालसा न आने का आदेश मिला। इस दौरान उनके माता पिता इनके गृहस्थ जीवन में प्रवेश के लिए प्रयत्न करते रहे परन्तु यह सब व्यर्थ रहा।

गुरु आज्ञा का पालन दृढ़ता से करते हुए वह एक वर्ष बाद फिर से ऋषि ठाकुर दास जी के चरणों में हाजिर हुए। ऋषि ठाकुर दास जी की हर कठिन परीक्षा में वह पास हुए। अंत में उनके आग्रह पर ऋषि ठाकुर दास जी ने उन्हें नाम दान देकर वहाँ से भेजा। अब वे पहले से भी अधिक मस्त होकर गुरु सेवा का आत्मिक आनन्द मानने लगे। इनकी योग्यताओं को देखते हुए ऋषि ठाकुर दास जी ने डेरे की सारी ज़िम्मेवारियाँ उन्हें सौंप दी। ऋषि ठाकुर जी के ज्योति जोत समाने के बाद उन्होंने दरबार के गद्दी नशीन की सेवा भी बखूबी निभाई।

सद्गुरु की याद को हमेशा बनाए रखने के लिए संत साधु राम जी ने ऋषि ठाकुर दास जी की बरसी पर नगर कीर्तन आयोजित करने

की मर्यादा को आरम्भ किया जो आज भी उसी नियम के अनुसार जारी है। उन्होंने ऋषि ठाकुर दास जी की याद में पाँच मंज़िला मन्दिर का निर्माण भी करवाया। संत साधु राम जी 1971 ई० में संगतों की विनती पर संत मत का प्रचार करने इंग्लैंड गए और अगस्त के महीने वहाँ से वापिस हरिपुर खालसा पहुँचे। 12 सितम्बर 1971 ई० को (28 भादों 2028 विक्रमी सम्वत्) को साधु राम जी सच्चखंड जा विराजे। इन के बाद ऋषि ठाकुर दास जी के मिशन को जारी रखने की सेवा संत हरि दास जी ने निभाई जो उनके बाद दरबार के गद्दीनशीन हुए।

संत श्री हरिदास जी महाराज

संत हरिदास जी महाराज का जन्म भानोकी गाँव तहसील फगवाड़ा, जिला कपूरथला में पिता श्री धर्मा राम के घर माता गणेशी के घर हुआ। संत हरिदास जी बचपन से ही शीतल, धैर्यवान और धार्मिक प्रवृत्ति के मालिक थे। वे सांसारिक विद्या से अनजान थे परन्तु रुहानी विद्या के पूर्ण भण्डार थे। संत हरिदास जी का विवाह गाँव खोथड़ा तहसील फगवाड़ा की बीबी राओ देवी के साथ हुआ।

उनके नानके प्रतापपुर में थे। यह स्थान हरिपुर खालसा के निकट होने के कारण उनके पिता श्री धर्मा राम जी ऋषि ठाकुर दास जी की तारीफ सुनकर उन से काफी प्रभावित हुए। संत हरिदास जी भी

अपने पिता के साथ हरिपुर पहुँचकर ऋषि ठाकुर दास जी के दर्शन करते थे। वह ऋषि ठाकुर दास जी की रुहानी ज्योति से इतने प्रभावित हुए कि मन ही मन उनको अपना गुरु धारण कर लिया। जब भी आप को समय मिलता वे ऋषि ठाकुर दास जी की सेवा में उपस्थित हो जाते । इस प्रकार उन्होंने ऋषि ठाकुर दास जी से नाम दान भी प्राप्त किया।

गृहस्थ होते हुए भी उन्होंने ऋषि ठाकुर दास जी के उपदेशों का पालन करते हुए अपनी सारी ज़िम्मेवारियाँ बखूबी निभाई। उन्होंने ऋषि ठाकुर दास जी से उनके गुरु बापू श्रद्धाराम जी की भी काफी प्रशंसा सुनी हुई थी। समय मिलते ही आप कई-कई दिन नन्दाचौर जाकर उनकी सेवा में डट जाते। गृहस्थ जीवन की जिम्मेवारयिाँ निभाने के बाद वे लगातार बापू श्रद्धाराम जी की सेवा में जुट गए और पूरे 12 वर्ष नन्दाचौर रह कर उनकी सेवा की। संत श्रद्धाराम जी भी इनकी सेवा से बहुत प्रसन्न थे।

संत साधु राम जी के ज्योति जोत समा जाने के बाद संत श्रद्धाराम जी ने गुरु गद्दी की ज़िम्मेदारी उन्हें सौंप दी। वह बहुत शांत स्वभाव के मालिक थे। उन्होंने दरबार के सामने दर्शनी डिओढ़ी का निर्माण करवाया। वह हमेशा प्रभु भक्ति में लीन रहते। हरिदास जी को 72 वर्ष की आयु में गुरु गद्दी प्राप्त हुई थी। उनका शरीर वृद्ध हो चुका था परन्तु वह फिर भी सेवा के लिए निरंतर डटे रहते। उनके समय में संगत का

समूह बहुत विशाल हो चुका था। वह जो भी वचन सहज स्वभाव में कह देते वह पूरा हो जाता। वे 11 जुलाई 1982 ई० को गुरु गृह की अथाह सेवा करते हुए पाँच भौतिक तत्त्वों से बने इस शरीर का त्याग कर, सच्चखंड पधारे। इनके बाद संत गोबिन्द दास जी को गुरु गद्दी की सेवा प्राप्त हुई।

संत श्री गोबिन्द दास जी महाराज

संत गोबिन्द दास जी का बचपन का नाम मोहन लाल था। इनका जन्म गाँव रसूलपुर नजदीक लाम्बड़ा जिला जालन्धर में पिता श्री मंगू राम जी और माता कृपाल देवी के घर हुआ। वे बचपन से ही तीक्ष्ण बुद्धि के मालिक थे। प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के विद्यालय से प्राप्त कर उन्होंने लाम्बड़ा के हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा पास की। लाम्बड़ा के हाई स्कूल में आसपास के अन्य गाँवों से भी बच्चे पढ़ने के लिए आते थे जिनसे इन्होंने ऋषि ठाकुर दास जी की बहुत शोभा सुनी और इनके मन में ऋषि ठाकुर दास जी के दर्शनों की अभिलाषा पैदा हुई। उन दिनों ऋषि ठाकुर दास जी ताजपुर में विराजमान थे।

एक दिन वह अपने माता पिता के साथ ताजपुर ऋषि ठाकुर दास जी के दर्शन हेतु गए। दर्शनों उपरान्त वह उन से इतने प्रभावित हुए कि उनका मन उन्हीं के चरणों में रहने को करने लगा, परन्तु उन्होंने अपनी

पढ़ाई जारी रखी और जब भी समय मिलता ऋषि ठाकुर दास जी के दर्शनों के लिए ताजपुर चले जाते। इसी समय के दौरान उनको सरकारी नौकरी भी मिल गई। वह चाहते थे कि उनको गुरु घर से नाम दान मिल जाए ताकि वह नौकरी के साथ-साथ भजन की तरफ भी ध्यान दे सकें। उन्होंने संत धर्म दास से नाम दान प्राप्त किया जो ऋषि ठाकुर दास जी के ताजपुर स्थान की सेवा करते थे।

उनका विवाह खोजेवाली गाँव जिला कपूरथला की बीबी सीब्बो के साथ हुआ इन के घर तीन पुत्रों और चार पुत्रियों ने जन्म लिया। गृहस्थ होते हुए भी गोबिन्द दास जी गुरु घर के अनन्य सेवक थे। उन्होंने

नाम की कमाई कर कई शक्तियाँ प्राप्त की। बिना पूछे ही वे वर्तमान और भविष्य के बारे में बता देते थे। उनका मिलाप हरिपुर दरबार संत हरिदास जी के साथ हुआ जिनकी कृपा से वह और भी धन्य हो गए। वह दिन रात संत हरिदास जी की सेवा करते।

कई-कई महीनें हरिपुर दरबार में आकर रहते और संत हरिदास जी प्रेम से इनको 'अन्तर्यामी' कह कर बुलाते। संत सेवा के लिए उन्होंने नौकरी भी छोड़ दी। संत हरिदास जी के शरीर त्यागने के बाद वह हरिपुर दरबार की गुरु गद्दी पर विराजमान हुए। गोबिन्द दास जी ने संत हरिदास जी द्वारा चलाए कार्यों को जारी रखा और दरबार की अनथक सेवा की। वह 1988 ई० को अचानक संगत को छोड़कर

सच्चखंड विराज गए। इनके ब्रह्मलीन होने के बाद उनके स्थान पर संत राम दास जी ऋषि ठाकुर दास जी महाराज की संगत का नेतृत्व कर सेवा-कार्य कर रहे हैं।

संत श्री रामदास जी महाराज

संत श्री रामदास जी पू० हरिदास जी के सपुत्र हैं जो हरिपुर खालसा दरबार की अनथक सेवा पूरी लगन व श्रद्धा भक्ति से कर रहे हैं। इस दरबार में लंगर की पूरी सेवा हो रही है। इलाके के बच्चों की विद्या के लिए स्कूल दरबार की ओर से चल रहा है। दरबार की ओर से निःशुल्क मैडिकल कैम्प समय-समय पर समाज सेवा हेतु लगाया जाता है। संत रामदास जी की अपार कृपा से अस्पताल व डिस्पेंसरी की व्यवस्था भी की गई है। संतो का आशीर्वाद ग्रहण करने के लिए संगत दरबार की यात्रा दूर-दूर से करने आ रही है और पू० संत रामदास जी महाराज का आशीर्वाद प्राप्त करके धन्य हो रही है।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

संत श्री अमर सिंह जी महाराज

ॐ

संत श्री अमर सिंह जी महाराज

संत श्री अमर सिंह जी का जन्म दिल्ली के एक छोटे से गाँव बूढ़पुर, जो कि दिल्ली से 22 किलोमीटर करनाल की तरफ जी॰टी॰ रोड पर स्थित है, में 15 नवम्बर 1935 को हुआ था। उनके पिता का नाम श्री बृजलाल भारद्वाज व माता का नाम श्रीमती रामकली था। उनके दादा श्री माडूराम जी अपने इलाके के जाने-माने व एक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। गाँव में बहुत समय पहले एक सिद्ध बाबा तप किया करते थे। वे बूढ़ेबाबा के नाम से प्रसिद्ध थे। उन्हीं के नाम पर आज भी हर साल भादों माह की शुक्ल पक्ष की द्वितीया को मेला लगता है जिसके कारण यह गाँव आसपास के इलाके में 'बूढ़पुर' नाम से मशहूर है।

अमर सिंह जी को बचपन से ही भगवद्-भक्ति की लगन थी लेकिन किसी विशेष प्रकार की विधि-विधान का या पूजा-अर्चना का ज्ञान न होने के कारण अपने ही मनमाने ढंग से भगवान शिव का ध्यान तथा पूजा करते थे। कुछ समय बाद एक संत तुलसीदास जी, जो शिव भक्त थे, से उनकी मुलाकात हुई। उन्होंने अमर सिंह जी को शिव-पूजा का तरीका बताया। हर समय शिव के बारे में बातें करते रहने के कारण,

इनका व्यवहार व काम-धन्धा करने का ढंग आम आदमी से भिन्न होता गया। इसलिए कुछ लोग आपको पागल तथा कुछ लोग भोलेनाथ कहकर मज़ाक उड़ाते थे।

एक बार भक्त संतलाल और प्यारेलाल जो आपके परिचित थे, के यह कहने पर कि एक बहुत बड़े संत आये हैं, आप उनके साथ संत श्री श्रद्धाराम जी महाराज के दर्शन करने गाँव-ढक्का, दिल्ली पहुँचे। श्री श्रद्धाराम जी अलौकिक तेज से चमक रहे थे। उनके व्यक्तित्व में दिव्यता की झलक थी। वह उनके दर्शन करते ही उनकी तरफ खिंचते ही चले गये और फूट-फूटकर रोने लगे तथा स्वयं को उनके श्री

चरणों में समर्पित कर दिया। हालाँकि इससे पहले उनकी शादी हो चुकी थी तो भी वह घर बार छोड़कर, श्रद्धाराम जी के मना करने पर भी, उनके साथ उनके स्थान ओम् दरबार नन्दाचौर जिला-होशियारपुर, पंजाब हठपूर्वक चले गये और ढाई साल तक वहीं रहे।

इस दौरान उनके घर वालों को आपकी कोई खबर नहीं थी क्योंकि वह सब कुछ त्याग कर संन्यासी का जीवन जीना चाहते थे। मगर सर्वज्ञ अन्तर्यामी श्री श्रद्धाराम जी कहते थे कि तुम्हें गृहस्थ जीवन भोगना ही पड़ेगा और जब तक तुम यह आज्ञा नहीं मानोगे, हम तुम्हें दीक्षा (नामदान) नहीं देंगे। आखिरकार लगातार ढाई साल की कशमकश के बाद उन्होंने संत श्रद्धाराम जी की आज्ञा शिरोधार्य की।

श्री नारायण चरितामृत

696

चैत्र-मास शुक्ल पक्ष त्रयोदशी विक्रमी संवत् 2011 (सन् 1954) को ब्रह्म स्वरूप श्री श्रद्धाराम जी ने असीम कृपा करते हुए उन्हें दीक्षा दी, और उनको आत्मबोध-साधना की विधि तथा रहस्य बताए। गृहस्थ जीवन का रहस्य बताते हुए कहा कि इस तरह का गृहस्थ जीवन निर्वाह करना संन्यास के बराबर ही है। इसके बाद उन्हें फौरन अपने घर जाने का आदेश दिया। घर आकर गुरु आज्ञानुसार आप गृहस्थ जीवन जीने लगे। उनकी पत्नी इन्द्रावती जी जो कि बहुत सरल स्वभाव व भक्तिभाव वाली स्त्री हैं, उनकी साधना में कभी भी बाधक नहीं बनी बल्कि सहयोग ही करती रहीं।

गुरु-आदेश से उन्होंने भारतीय सेना में नौकरी कर ली। कई साहसिक और सम्मानजनक कार्य करते हुए वह 36 वर्ष की सेवा के बाद आर्मी मेडिकल कोर से लेफ्टिनेन्ट कर्नल के उच्च पद से जनवरी 1991 में सेवानिवृत्त हो गये। इनको एक अच्छी खासी धनराशि सरकार से पेन्शन के रूप में जीवन-निर्वाह के लिए मिलती है अत: वे किसी पर भी आश्रित नहीं हैं। रिटायर्ड होने के बाद घर के एक कमरे में ही उन्होंने अपना आसन जमाया और हर समय साधना में लगे रहने लगे। किसी से मिलना-जुलना, बातें करना सब छोड़ दिया। केवल एक घण्टे के लिए ही बाहर निकलते, उस एक घण्टे में भी ज़्यादातर अपने पिताजी के पास बैठते तथा बातें करते।

श्री नारायण चरितामृत

697

जनवरी 1992 में मेरठ जिले से दो व्यक्ति इनके घर पर आए और कहने लगे कि वे अपनी किसी समस्या के लिए किसी महात्मा के पास गये थे। उस महात्मा ने उन्हें बताया है कि गाँव बूढ़पूर दिल्ली में कर्नल अमर सिंह (रिटायर्ड) रहते हैं। वे बहुत पहुँचे हुए महात्मा हैं, आप उनको माथा टेककर आशीर्वाद ले लो तो आपकी समस्या हल हो जायेगी। वे व्यक्ति आपके पास आए और निवेदन किया कि अब आप हमें कृपा करके आशीर्वाद दें तथा हमारा कष्ट निवारण करें। अमर सिंह जी ने कहा कि मैं एक साधारण व्यक्ति हूँ, मैं क्या आशीर्वाद दे सकता हूँ? मगर उनके पिता जी ने कहा कि यदि इनका ऐसा विश्वास है कि आपके आशीर्वाद से इनका काम हो जायेगा तो इन्हें आशीर्वाद दे दो।

उन्होंने अपने पिताजी की आज्ञा से उनके सिर पर हाथ रख कर कहा कि "मैं अपने पूज्य गुरु जी व परमात्मा से विनती करता हूँ कि आपकी मनोकामना पूरी करें।" गुरु महाराज की कृपा से उनका काम हो गया। उन लोगों ने अन्य कुछ लोगों को बताया कि बूढ़पूर के कर्नल अमरसिंह जी का आशीर्वाद लेने से हमारा काम सिद्ध हो गया। इस तरह से लोगों का आना-जाना शुरु हो गया और कुछ ही दिनों में काफी भीड़ लगने लगी। वह अपने घर पर ही लोगों से मिलते थे। भीड़ अधिक हो जाने से घर में जगह न रहती, यहाँ तक कि गली में खड़े होने तक की जगह न मिलती। गाँव के लोगों को रास्ता मिलने की भी दिक्कत हो जाती थी। इसलिए अपनी ही एक ज़मीन पर, जो कि गाँव

से बाहर की तरफ थी, पर उन्होंने एक आश्रम का निर्माण किया। इस आश्रम का नाम इन्होंने अपने पूज्य गुरु श्री श्रद्धाराम जी के नाम पर "संत श्रद्धाराम आत्मबोध साधना आश्रम" रखा।

मई 1992 में उनके पिता का स्वर्गवास हो गया, माता जी का स्वर्गवास 1985 में ही हो चुका था। अमर सिंह जी के चार लड़के हैं जो अपने-अपने काम-धन्धों में लगे हैं तथा सभी भली प्रकार से स्वावलम्बित हैं। आश्रम बन जाने पर 27 जून 1993 को उन्होंने पूरे ग्रामवासियों को एकत्र करके बताया कि "मैंने अपनी ज़मीन जायदाद अपने बच्चों में बाँट दी है और मैं गृहस्थी छोड़कर आश्रम में जा रहा हूँ, जहाँ संन्यासी जैसा जीवन व्यतीत करूँगा। आज मुझे किसी का कुछ लेना देना नहीं है, अगर

किसी का कुछ है तो वह बता दे, मैं चुका दूँगा।" दूसरे ही दिन इन्होंने घर छोड़ कर आश्रम में प्रवेश किया। इनके अविवाहित छोटे भाई अतरसिंह भी इनके साथ ही आश्रम में सेवा के लिए आ गये।

अमर सिंह जी ने इस आश्रम का उद्घाटन 28 जून 1993 को अपनी गुरुगद्दी पर गद्दीनशीन श्री भानुदत्त महाराज जी से करवाया। इस शुभ अवसर पर उन्हें महन्त दया किशन जी, मंदिर बापू ज्वालासिंह-सहारनपुर, भानुदत्त जी महाराज - ओम् दरबार, नंदाचौर जिला होशियारपुर तथा महन्त श्री करनैल सिंह जी, दरबार श्री ठाकुर दास जी

महाराज-लाम्बड़ा, होशियारपुर वालों ने आशीर्वाद दिया। महन्त श्री सत्य प्रकाश जी, दरबार गो० रामलाल-अमृतसर तथा महन्त श्री श्यामदास जी-डेरा श्री परम हंस बाबा ठाकुर जी महाराज-जालंधर वालों ने अपना आशीर्वाद पत्र द्वारा दिया क्योंकि वे पूर्व नियोजित कार्य में व्यस्त होने के कारण आ नहीं सके।

वे लोक कल्याणार्थ इस आश्रम में रहकर सुबह 7 बजे से दोपहर 12 बजे तक बीमार लोगों का इलाज योग-शक्ति (संकल्प शक्ति) के माध्यम से करते थे। पाठकगण अमर सिंह जी के चमत्कार 'आत्मबोध साधना-एक परिचय' नामक ग्रन्थ में पढ़ सकते हैं। अमर सिंह जी ने जीवन में पाँच बातों पर विशेष बल दिया-

(1) अपने कर्त्तव्य को पूरी निष्ठा और लगन से निभाना। जिस कार्य को हाथ में लेना उसे पूरा करके ही दम लेना और आलस्य को कभी नजदीक नहीं आने देना।

(2) रोजाना कम से कम एक घण्टा स्वाध्याय करना।

(3) साधना में किसी भी सांसारिक, सामाजिक तथा शारीरिक समस्या को बाधक न बनने देना तथा गुरु आज्ञानुसार साधना नित्य प्रति करना।

(4) जब भी समय मिले चाहे देश के किसी भी शहर में रह रहे हों, वहाँ पर साधु महात्माओं का पता लगाकर उनकी संगत करना।

उन्हें कुछ उच्चकोटि के महात्मा मिले जिनके उपदेश, सत्संग तथा आशीर्वाद से उनकी साधना में तीव्रता आई। वे अपने को इन महात्माओं का आभारी समझते थे। उन महात्माओं में देवरा बाबा वृंदावन, दूधाधारी बाबा-हरिद्वार, गीता नन्द महाराज गाँव भाँडसी, जिला-गुड़गाँव, स्वामी आत्मानन्द-पूना (महाराष्ट्र) एक बेनाम बाबा-कालका, आर्य समाज के योगानन्द निरवाणा तथा आनन्द स्वामी, मेरठ की एक मुसलमान स्त्री सूफी संत जो पगली के नाम से प्रसिद्ध थी, उल्लेखनीय हैं।

(5) माँ-बाप की सेवा दिलोजान से करना। उनका कहना था कि माँ-बाप की सेवा से तीन लाभ निश्चित रूप से मिलते हैं-

(1) पितृऋण से मुक्ति

(2) प्रफुल्लित आत्मा से आशीर्वाद, जो जीवन के हर क्षेत्र में सुख शान्ति प्रदान करता है।

(3) माँ-बाप के जीवन के अनुभवों का सार जो हमें मार्ग दर्शन के लिए स्वतः ही मिल जाता है और साथ ही उनकी आशीर्वाद रूपी संपत्ति भी मिल जाती है।

संत अमर सिंह जी ने गुरु आज्ञा में रहते हुए नाम की कमाई की और अपने गुरु तथा गुरु-परम्परा के महापुरुषों का नाम दूर-दूर तक फैला दिया। धन्य हैं आपके सद्गुरु संत श्रद्धाराम जिन्होंने आपको ब्रह्म विद्या का दान देकर, आप में ब्रह्म-ज्योति को प्रगट कर आपको दिव्य

बना दिया। संत अमर सिंह जी ने 2 दिसम्बर 2011 को सुबह 2:50 पर समाधि लगा कर अपना देह-त्याग कर दिया और ब्रह्म-ज्योति में लीन हो गए। आजकल संत अमर सिंह जी के पुत्र श्री सत्य पाल जी मन्दिर की व्यवस्था देख रहे हैं।

संत अमर सिंह जी के सुपुत्र श्री सत्य पाल जी महाराज का जन्म 10 जनवरी 1960 को गाँव बूढ़पुर में हुआ था। इनके पिता संत श्री अमर सिंह जी महाराज व माता जी श्रीमती इन्द्रावती जी के दिए संस्कारों से उनकी अति शीघ्र आध्यात्मिक प्रगति हुई। श्री सत्य पाल जी ने 17 जनवरी 1983 को पू० महन्त दया किशन जी महाराज से 'नाम- दान दीक्षा' प्राप्त की। दिनांक 28.03.2010 जो कि 'संत श्रद्धा राम आत्म बोध साधना आश्रम बूढ़पुर' के 18वें वार्षिक सत्संग यज्ञ के दिन, विधि विधान का ध्यान रखते हुए संत अमर सिंह जी महाराज ने श्री सत्य पाल जी महाराज में अपनी शक्ति संचार प्रतीक स्वरुप पगड़ी को, अपने गुरुस्थान में विराजमान श्री महाराज हरभगवान जी, गद्दीनशीन ओम दरबार नन्दाचौर के शुभ कर-कमलों और, शुभआशीर्वाद से श्री सत्यपाल जी को पहनवाया। आज कल संत सत्यपाल जी महाराज संत श्रद्धाराम आत्मबोध साधना आश्रम बूढ़पुर में रह क आश्रम की सेवा कर रहे हैं।

।। हरि ॐ ।।

ॐ

संत श्री महिन्द्र सिंह जी महाराज

ॐ

संत श्री महिन्द्र सिंह जी महाराज

संत श्री महिन्द्र सिंह जी बापू श्रद्धाराम जी के निर्भीक शिष्य थे जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन बापू जी के दरबार और संगत की सेवा में समर्पित कर दिया। उनका जन्म पथरालियां गाँव में हुआ। जीवन-यापन के लिए वह रेडियो मेकैनिक का कार्य करते थे, परन्तु बचपन से ही ईश्वर के चरणों में प्रीति होने

के कारण वह सदैव प्रभुभक्ति किया करते थे। परमपूजनीय बापू श्री श्रद्धाराम जी महाराज के सम्पर्क में आने के बाद तो इनका जीवन अत्याधिक धार्मिक हो गया।

उनके परिवार वालों ने उनकी सगाई भी कर दी थी, परन्तु संत महिन्द्र सिंह जी तो ईश्वर को प्राप्त करने की इच्छा रखते थे, इसलिए उन्होंने अपने परिवार के सामने सपष्ट कर दिया कि विवाह उनके जीवन में बाधक बनेगा। महिन्द्र सिंह जी ने अपने जीवन का उद्देश्य पहले ही निर्धारित कर लिया था क्योंकि वह गुरु द्वारा दर्शाये गए मार्ग पर चल कर अपना जीवन सफल करना चाहते थे। उन्होंने आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन किया।

संत महिन्द्र सिंह जी महाराज ईश्वर को पाने के लिए नीलकंठ

संत श्री ठाकुर दास जी महाराज

संत श्री देव गिरधारी जी महाराज

संत श्री सन्त राम जी महाराज

माता श्री शान्ति स्वरूप जी महाराज

गोस्वामी श्री रामलाल जी महाराज

संत श्री देसराज जी महाराज

संत श्री सत्य प्रकाश जी महाराज

संत श्री बनवारी लाल जी महाराज

संत पंडित श्री कल्याण दास जी महाराज

संत पंडित श्री हेमराज जी महाराज (अवधूत)

संत पंडित श्री दया किशन जी महाराज

संत पंडित श्री सुभाष जी महाराज

सच्चखण्ड दरबार संत श्री ऋषि ठाकुर दास हरिपुर खालसा

जन्म स्थान दरबार संत श्री ऋषि ठाकुर दास जी शाहपुर

दरबार संत श्री ऋषि ठाकुर दास जी हरिपुर खालसा

दरबार संत श्री ऋषि ठाकुर दास ताजपुर, जालन्धर

संत श्री ऋषि ठाकुर दास जी महाराज

108 संत बापू अरुड़ सिंह जी

श्री श्री 108 परमहंस बाबा ठाकुर जी महाराज

संत बाबा बिशन सिंह जी

संत बापू शाम दास जी महाराज

संत बाबा हीरा सिंह जी

डेरा श्री श्री 108 परमहंस बाबा ठाकुर जी महाराज हीरा

नगर बस्ती नौ, जालन्धर

संत बापू रवान चन्द जी महाराज

संत श्री अमर सिंह जी महाराज

संत श्री महिन्द्र सिंह जी महाराज

ॐ

Holy Jhanda

Shri Om Darbar Nandachaur

Chakka Mandir Notice Board January 2012 Tear 2012 In Nandachaur 107 Jan 2012) andachaur Qute10s Jan 2012)

Darshant

Thet De Deter

Sant Denhan

That Sinh Jhanda Sahih Chansen Pedis Haly Rudo AD Mande Castel Aarti

Bapu World

Om Sandesh Walpapers E-cards SANG

Information

Programmes Notice: Jan 201 Why to Nandachaur Feedback

Website QUIZ Hardachaur QUIZ

ॐ

www.shriomdarbarnandachaur.com

परम वन्दनीय बापू श्री हरभगवान जी महाराज श्री ओम दरबार नन्दाचौर की वैब-साईट के डिजाईनर सौरभ चुघ को आशीर्वाद देते हुए

ऋषिकेश में जाकर तप करने लगे। बाद में अपने गुरु बापू श्रद्धाराम जी की आज्ञा अनुसार माघ और पौष के महीने में दिल्ली ढक्का साहिब में आकर तप करने लगे। प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर हवन करने के उपरान्त वे तप करते थे और उस समय किसी को भी वहाँ आने की आज्ञा नहीं होती थी। वह हमेशा काले वस्त्र धारण किया करते थे। बापू श्रद्धाराम जी उनकी निर्भीकता को देख कर उन्हें बब्बर शेर कहा करते थे। वह शेर की खाल पर बैठ कर ध्यान किया करते थे।

उनके तपोबल को देखकर 1976 में महाराज परमपूजनीय बापू गुरदास राम जी महाराज, बापू दया किशन जी महाराज व बाबा खान चंद जी महाराज जी ने दौरांगला की पावन गद्दी पर संत महिन्द्र सिंह जी को बिठाया और उसके उपरान्त संत महिन्द्र सिंह जी परमहंस बापू ठाकुर जी के दौरांगला मन्दिर में सेवा करने लगे।

उग्रवाद के दिनों में संत महिन्द्र सिंह जी पर गोलियां बरसाई गई थी परन्तु संत जी ने कहा, "कि मुझे डॉक्टर के पास ले जाओ, क्योंकि मुझें अभी मरना नहीं है तथा बापू जी के दरबार की सेवा करनी है।" आपरेशन के समय उन्होंने अपने श्वास ऊपर चढ़ा लिए थे और उन्हें किसी भी प्रकार का ऐनस्थीसिया नहीं दिया गया था। संत जी का ऑपरेशन कर के गोलियाँ निकाल दी गई और गुरु कृपा से वह बच गए और फिर से सेवा में जुट गए।

संत महिन्द्र सिंह जी ने बापू भानुदत्त जी की याद में एक विशाल मन्दिर का निर्माण रुद्रपुर में करवाया और रुद्रपुर की संगत की सेवा भी तन-मन से करने लगे। महिन्द्र सिंह जी आद्रामान और महतपुर जा कर भक्तों को निहाल किया करते थे और अधिकतर सरदार करनैल सिंह जी के घर निवास किया करते थे। उन्होंने करनैल सिंह जी को पहले ही बता दिया था कि वह रुद्रपुर में देह-त्याग करेंगे।

24 मई, 2005 को संत महिन्द्र सिंह जी ने रुद्रपुर में अपनी इच्छा से देह त्याग कर दिया और उसके उपरान्त संगत उनकी देह को अन्तिम संस्कार देने के लिए दौरांगला ले आई क्योंकि पूज्य संत महिन्द्र सिंह जी ने अपने ब्रह्मलीन होने का संकेत पहले ही दे दिया था।

संत महिन्द्र सिंह जी के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् श्री चमन लाल पुजारा जी को दौरांगला गद्दी का व्यवस्थापक बनाया गया। संत चमन लाल जी आरम्भ से ही श्री ओम दरबार नन्दाचौर के अनन्य भक्त और सेवक रहे हैं। उन्होंने परम पूज्य बापू श्रद्धाराम जी से दीक्षा प्राप्त की थी।

श्री चमन लाल जी ने सर्वप्रथम 1978 में 'ओम-संदेश' पत्रिका आरम्भ की थी जिसमें बापू जी और उनके भक्तों की कथाएं दी जाती थीं। आज-कल वह दौरांगला मन्दिर की कार्य-व्यवस्था सुचारु रूप से देख रहे हैं। एक तथ्य विशेष तौर पर वर्णन योग्य है कि दौरांगला दरबार

की सेवा करने वाले बाबा गणेश दास जी, बाबा महिन्द्र सिंह जी व बाबा चमन लाल पुजारा जी ये तीनों संत बापू श्रद्धाराम जी के परम प्रिय शिष्य थे।

दौरांगला दरबार की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस स्थान पर स्वयं परमहंस श्री ठाकुर जी महाराज जी ने घोर तप किया है। इस दरबार में जो भी श्रद्धालु-जन पूर्ण विश्वास के साथ जाते हैं उनकी सभी मनोकामनाएं परमहंस श्री ठाकुर जी महाराज पूरी करते हैं।

।। हरि ॐ ।।

परमहंस श्री ठाकुर जी महाराज दौरांगला दरबार

ॐ

कविताएं

बापू ओम नारायण दत्त जी महाराज

पूर्ण करने जन-जन की चाह, भूले भटकों को दिखाने सच्ची राह निराश्रितों को देने पनाह, दीन-दुखियों की थामने बांह करने माफ पापियों के गुनाह, नारायण आए बन नारायण दत्त

और कहलाए बापू ओम शहनशाह

पाकर जिन्हें धन्य हुई नंदाचौर की धरा, अपने भाग्य पर मानो रही हो इतरा नई उमंग से खेत उठे सभी लहरा, असीम खुशी से चमक, जन-जन का चेहरा हुआ दूर मानो घोर अंधेरा, चमक उठा एक नया सवेरा, सूर्य-चंद्रमा बने गवाह,

नारायण आए बन नारायण दत्त

और कहलाए बापू ओम शहनशाह

विद्वता, भाषा-ज्ञान, विद्या थी खूब पाई, मन में रहती थी हर पल प्रभु नाम की मस्ती छाई सद्गुरु मिलन की तीव्र प्यास मन में थी समाई, भटके जल-चल, जंगल, पहाड़ या हो तराई नूरशाह के नूर से जब नजर मिलाई, क्षणभर में ही प्रेमाभक्ति की ज्वाला अंतर में जलाई मानो पा ली है जैसे सारी खुदाई, मिल गया अलौकिक आनंद और संतोष अथाह

नारायण आए बन नारायण दत्त

और कहलाए बापू ओम शहनशाह।

गुरु आज्ञा से नन्दाचोर को तपोभूमि बनाया, कण-कण में जिसके था ओम बसाया घोर तपस्या को था जीवन ध्येय बनाया, श्री गुरु हरनाम को भी था अनोखा जाम पिलाया मुक्ति का द्वार, ओम दरबार बनाया, लाखों दीन-दुखियों को भव से पार कराया

देवता भी सभी कर उठे वाह-वाह नारायण आए, बन नारायण दत्त और कहलाए बापू ओम शहनशाह।

श्री गुरु हरनाम जी महाराज

स्मरण मात्र से ही जिनके हो जाते हैं पूर्ण काम, ऐसे हैं श्री गुरु हरनाम।

चिन्तन मात्र से ही जिनके, हो जाती चिन्तायें दूर, ऐसे हैं श्री गुरु हरनाम हजूर।

दुःख, दर्द सताते नहीं उन्हें, लेश मात्र, बन जाते हैं जो उनकी कृपा के पात्र, हो जाता उनका उत्थान, पा लें जो उनके चरणों में स्थान, जपते हैं जो उनका नाम, ऐसे हैं श्री गुरु हरनाम।

भर देते सभी घाव नासूर, ऐसे हैं श्री गुरु हरनाम हजूर। आ जाये जो उनके द्वार, हो जाते वे भव सागर से पार। ओम ओम के दिव्य स्वर से, झंकृत होते दिल के तार, पिला देते हरि नाम का जाम, ऐसे हैं श्री गुरु हरनाम।

मिल जाता आनन्द भरपूर, ऐसे हैं हरनाम हजूर, पूर्ण योगी, ज्ञानी, महाबली, तपस्वी महान, करते आये जगत कल्याण, विश्व को दे गये अनमोल वरदान, जिसके हैं साक्षात प्रमाण, जगत् स्वामी महान संत श्री श्रद्धाराम,

ऐसे हैं श्री गुरु हरनाम।

चमक रहा सर्वत्र जिनका दिव्य नूर, ऐसे हैं हरनाम हजूर। कोटि-कोटि हम करें जिन्हें प्रणाम, ऐसे हैं श्री गुरू हरनाम।

बापू श्रद्धाराम जी महाराज

सृष्टिकर्ता, परमपिता भगवान, करने को धर्म का उत्थान रखने को निज भक्तों का मान, आए बनकर नानक, गोबिंद या श्री राम बुद्ध, महावीर या श्री कृष्ण घनश्याम और कभी अवतरित हुए बनकर स्वयं जगत स्वामी बापू श्रद्धाराम

अलौकिक ज्योतिपुंज, असीम तेजराशि, अनूठी भक्ति, दिव्य शक्ति अद्वितीय तप, योग साधना और ध्यान, धैर्य, संयम, दया, सेवा और दान विनम्रता, श्रम और ज्ञान-ध्यान, लिए सभी अपने साथ करुणानिधान, अंतर्यामी नाथ, करने पावन अट्टी ग्राम अवतरित हुए, बनकर स्वंय जगत स्वामी बापू श्रद्धाराम

ठाकुर जी को प्रतिपल रिझाने, प्रेम की ज्वाला अंतर में जलाने रोम-रोम में ओम रमाने, हृदय में हरिनाम बसाने जन-जन पर श्रद्धा बरसाने, होकर पुरुषोत्तम मेहरबान बनाने नन्दाचौर को वैकुंठ धाम

अवतरित हुए बनकर स्वयं, जगत स्वामी बापू श्रद्धाराम

एक नई जागृति लाने, ऊँच-नीच का भेद मिटाने कन्याओं को सुशिक्षित बनाने, दहेज की कुप्रथा मिटाने धर्म-निर्पेक्षता की राह दिखाने, निराश्रितों को आश्रय दिलाने दीन-बंधु, हरि दयावान, करने धर्म, नीति एवं समाज के काम अवतरित हुए बनकर स्वयं, जगत स्वामी बापू श्रद्धाराम

मंदिर ढक्का साहिब बनाने, कल्प-वृक्ष सम झण्डा लगाने अखण्ड पाठ की श्रृंखला चलाने, प्रेम-अंजन की संजीवनी बनाने त्याग-सेवा का आदर्श दिखाने, नारायण, नर-पति कृपा निधान करने मानवता का कल्याण, हरने विश्व के दुःख रोग तमाम अवतरित हुए बनकर, स्वयं जगत स्वामी बापू श्रद्धाराम जिन्हें कोटि-कोटि प्रणाम ।।

बापू गुरदास राम जी

एक अलौकिक दिव्य रत्न, धरा पर उतार लाए जिसे श्री ओम नारायण बापू, और जौहरी बन चुन लाए जिसे संत श्रद्धा राम जी आप, हरने को जग के सभी, तिमिर, रोग और ताप जगमग जगमग नूर का जिसका, किया सभी ने आभास, धन्य-धन्य बापू गुरदास ।

वाणी में थी जिनकी, मिश्री सी अनुपम मिठास, रोम-रोम में था जिनके, हरि कीर्तन का वास, मधुर-मधुर कीर्तन को सुन, झूम उठते थे धरती आकाश निराश, हताश बुझे दिलों में, भर जाता था आनन्द उल्लास कीर्तन के जुदाई धुन सुन, खिचें आते थे सभी अनायास धन्य-धन्य बापू गुरदास ।

मन भावनी सी प्यारी मुस्कान, मानो सुख समृद्धि की थी खान राम चरित मानस का था गूढ़ ज्ञान, श्री राम बने जिनके आदर्श महान विनम्रता, दया, समभाव, लोक-कल्याण, शान्ति, मर्यादा, धैर्य, थे गुण राम समान

अद्भुत प्रेम का दे-देकर दान, बने थे राम सम करुणा निधान पूरी करते सबकी आस, श्रद्धाराम के सच्चे दास धन्य-धन्य बापू गुरदास ॥

बापू भानुदत्त जी महाराज

सूर्य सा तेज, चंद्रमा सी शीतलता, लहरों सा वेग, सागर की गहनता धरती सी सहिष्णुता, गगन सी विशालता, पर्वत सी दृढ़ता, कमल सी विरक्तता सभी गुण थे जिनमें विद्यमान, शेर से निडर ओम दर के प्रहरी जांबाज जय जय हो बापू भानुदत्त जी महाराज ॥

श्रद्धाराम जी में थी जिनकी अटूट आस्था, रोम रोम में समाए थे जिनके ओम पिता दर्शन मात्र से जिनके दूर होती थी सारी चिंता, मिट जाती थी अधीरता और कायरता गा उठता था हृदय बापू के गुणगान, शेर से निडर, ओम दर के प्रहरी जांबाज जय जय हो बापू भानुदत्त जी महाराज ॥

अतिप्रिय थी जिनको स्पष्टवादिता, अद्भुत थी जिनमें विद्वत्ता कंठस्थ थी जिन्हें सारी भगवद्गीता, भानु सम मिटा देते थे अज्ञान तिमिर घना सभी दु:खों, रोगों का कर देते थे निदान, शेर से निडर ओम दर के प्रहरी जांबाज जय जय हो बापू भानुदत्त जी महाराज ॥

निशा तनेजा (ढक्का, दिल्ली)

HEAVENLY ABODE NANDACHAUR

It is the heavenly abode which the trinity themselves created, Here the body is cleansed and the soul become elated, Om Darbar Nandachaur is Baikunth nestled in the land of five lakes, Its job to give, give, give and not to take.

BAPU OM NARAYAN

incarnation of lord Narayana Himself blessed this place, He meditated and preached at the Thara Sahib for night and days, Even fiercest of animals and humblest of species bowed before him, Every breath, every pore of his body was filled with Divine OM till brim. Though born with silver spoon, he left all luxuries for guru Supreme, Serene, polite and humble, Guru Sewa was his ultimate dream, Disease, problems and malice get vanished by mere remembrance of

MAHABALI BAPU HARNAM

He was the one who gave us the precious gift in the form of

BAPU SHARDHARAM

He was God Himself, Jagat Swami, it was Lord's Shardharam was a social activist, reformer and a firm supporter of girl's education, He gave us the 'Kalpvriksha' in the from of 'Jhanda Sahib', started custom of dowryless marriage and langar or common eating He believed in everyone's equal treating.

BAPU GURDAS RAM

was true to his name'guru's dass' and was devotee of Shardharam His melodious voice always sang the praises of SHRI RAM, His magnetic smile, politeness, kindness and charismatic persona

drew attention of one and all, He was a real gem and never let anyone fall.

Similar to sun He removed darkness and filled world with divine light, He was brave, never wanted to differentiate between wrong and right,

BAPU BHANUDUTT

was just like a lion, he was the protector of this holy shrine, showed us the right path to make our lives bright and shine.

Celebratey, enjoy, join your hands and pray: OM BAPU JI KI JAI, OM BAPU JI KI JAI

Prashasti Taneja, Dhakka, Delhi

पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः ।

वेद्यं पवित्रम् ॐकार ऋक् साम यजुरेव च ॥

- श्रीमद्भगवद्गीता ९:१७

मैं इस ब्रह्माण्ड का पिता हूँ, माता हूँ, धारण करने वाला हूँ और पितामह हूँ। मैं ही ज्ञेय हूँ, मैं ही पवित्र करने वाला हूँ और मैं ही ॐकार हूँ। मैं ही ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद हूँ ।

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः

सर्वं प्रवर्तते ।

इति मत्वा भजन्ते मां बुधा

भावसमन्विताः ॥

- श्रीमद्भगवद्गीता १०:८

मैं अखिल विश्व का स्रोत हूँ। सभी वस्तुओं की उत्पत्ति मुझ से ही हुई है। बुद्धिमान व्यक्ति जो यह सब जानते है, वे अपने सम्पूर्ण मन से मेरी भक्ति करते हैं।

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः ।

विस्मयो मे महान्राजन्हृष्यामि च पुनःपुनः ।।

- श्रीमद्भगवद्गीता १८:७७

जैसे जैसे मैं भगवान् के अद्भुत रूपों को बार-बार याद करता हूँ, वैसे-वैसे मैं अत्यधिक आश्चर्यचक्ति हो कर बार-बार प्रफुल्लित हो जाता हूँ।

ॐ भूर्भुवः स्वः

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि

धियो यो नः प्रचोदयात् ।

शान्ति पाठ

ॐ भद्र कर्णेभि : शृणुयाम देवा भद्र पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । व्र्यशेम देवहितं यदायुः ।।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

हे ईश्वर ! हम अपने कानों से केवल अच्छी बातें सुनें, अपने नेत्रों से केवल अच्छी वस्तुएं देखें। हम स्थिर देह-बुद्धि से सदैव आपका स्तवन करें और जब तक प्रभु चाहें तब तक हमारा जीवन चलता रहे।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।।

लेखिका - राशि अमित शर्मा 520-B, आदर्श नगर, सतनामपुरा, फगवाड़ा